प्रकीणक पुस्तकमाला

श्रीनिवास ग्रंथावली

संपादक

डा० श्रीकृष्ण लाल
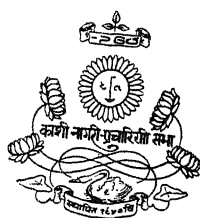
नागरीप्रचारिणी सभा, काशी,

भूमिका

वैराग्य, नीति और श्रृंगार शतकों के स्वनामधन्य कवि भर्तृहरि ने तीन प्रकार की वृत्तियों वाले मनुष्यों की चर्चा की है :

वैराग्ये संचरत्येको, नीतौ भ्रमति चापरः।
श्रृंगारे रमते कश्चित् भूरि भेदाः परस्परम् ॥

हिंदी साहित्य में वैराग्य, नीत्ति और श्रृंगार यही तीन प्रधान वृत्तियाँ हैं जिनमें परस्पर भूरि भेद है। श्रृंगार रस में प्रवृत्त कवि और कोविदों की संख्या अपार है, वैराग्य का संचार करानेवाले साहित्यकार भी हिंदी में कम नहीं हैं, परंतु नीति-साहित्य हिंदी में बहुत ही कम है। कबीर, तुलसी, नरहरि और रहीम के पश्चात् रीतिकाल के पिछले खेवे में वृंद, बैताल, गिरधर कविराय, दीनदयाल गिरि और गिरधरदास के सुभाषित, नीति के दोहे, छप्पय, कुंडलियाँ और अन्योक्तियाँ ही नीति-साहित्य की निधि हैं। यों तो अन्य अनेक कवियों ने भी नीति के दोहे और छंद लिखे हैं और सतसई के रचयिता कवियों ने भी नीति के दोहे कुछ न कुछ अवश्य ही लिखे हैं परंतु सब मिलाकर हिंदी का नीति-साहित्य समृद्ध नहीं कहा जा सकता।

उन्नीसवीं शताब्दी में गद्य साहित्य का प्रचार होने पर जहाँ श्रृंगार और वैराग्य का साहित्य प्रचुर मात्रा में लिखा जाने लगा, वहाँ नीति-साहित्य की उपेक्षा ही दिखाई पड़ती है। गद्य-साहित्य के प्रारंभिक चार महारथियों में लल्लूलाल ने 'राजनीति' के नाम से हितोपदेश का ब्रजभाषा गद्य में अनुवाद कर नीति-साहित्य की नींव अवश्य डाली परंतु अन्य लेखकों द्वारा उसकी उपेक्षा ही हुई। कुछ विद्वानों का अनु-

मान है कि नाटक और उपन्यास उपदेश के लिए ही बने हैं[1], परंतु हिंदी के अधिकांश नाटक और उपन्यास भी श्रृंगार के ही पोषक रहे हैं। श्रृंगार, भक्ति और वैराग्य की धूमधाम में हितोपदेश की परम्परा पर नीति-साहित्य की उत्कृष्ट रचना का एक मात्र श्रेय आधुनिक युग में लाला श्रीनिवास दास को है।

श्रृंगार और वैराग्य के विपरीत जो लाला श्रीनिवास दास ने सदाचार-नीति-प्रधान साहित्य की रचना की उसे बहुत कुछ अँगरेजी साहित्य का प्रभाव माना जा सकता है। अँगरेजी शिक्षा और साहित्य के प्रभाव से १९ वीं शताब्दी के शिक्षितों में श्रृंगार और वैराग्य के प्रति उपेक्षा और नीति तथा चरित्र-शोधन गुण का आग्रह बढ़ रहा था। "अँगरेजी भाषा की अग्रगण्य लेखक-मंडली"[2] अपने चरित्र-शोधन-शिक्षा का बड़ा अभिमान रखती थी और मानती थी कि "मारल प्रीचिंग केवल अंग्रेजी ही में गिरों है"[2] परंतु बालकृष्ण भट्ट ने इस दावे का थोथापन सिद्ध करते हुए लिखा है कि—

"उदार चरितानान्तु वसुधैव कुटुम्बकम्"—इस तरह के सैकड़ों हजारों चोखे से चोखे जिनके एक एक पद में 'मारल्स' टपका पड़ता है विलायत के किस साहब ने उन्हें (भारतीय ऋषिगण को) आकर सिखाया था। तब

---

१. उपदेश जगत् का बहुत बड़ा बोझा साहित्य के इन्हीं दो (नाटक और उपन्यास) अटूट और अजर पहियों पर रहता है। ये दोनों चक्के ऐसे पक्के और प्रौढ़ हैं कि जब से जगत् की सृष्टि हुई और उपदेश का जब से उपयोग होने लगा तब से ये दोनों सदा देश के साहित्य में उपदेश वहन का कार्य निरंतर करते आते हैं किंतु तनिक भी नहीं घिसे न नाकाम हुए। गोपालराम गहमरी, काशी हिन्दी साहित्य सम्मेलन

२. भट्ट निबंधमाला, भाग २, प्रथम सं० २००४, पृ० ६२।

यह कहना कि 'मोरालिटी' सिर्फ अंग्रेजी तालीम के साथ गिरी है, निरा बड़बोल और हिमाकत है[१]—

फिर भी यह तो मानना ही पड़ेगा कि अंगरेजी शिक्षा के प्रभाव से ही लोगों को शृंगार से अरुचि हुई और अपने ऋषिगणों की नीति-शिक्षा की ओर रुचि हुई। उदाहरण के लिए 'हरिश्चंद्र चंद्रिका' भाद्रपद कृष्ण संवत् १९३६ में प्रकाशित चतुर्भुज मिश्र गयावासी का बनाया 'अवधूत' नाटक की प्रस्तावना देखिए:

सूत्रधार—क्या प्यारी अभी तक शिंगार ही करती हो?

नटी—शिंगार क्या—मैं तो योगिन बन बैठी हूँ, प्राणप्यारे! आज आप ही आप नाट्य खेलो, मैं नहीं आऊँगी.

सूत्रधार—क्या प्यारी रूठ गई? नहीं आवेगी?

नटी—नहीं जी नहीं! आजकल नये सभ्य लोग आदि रस से घिनाते हैं, तो हमको देखकर कब आनंदी होंगे—ढके पर्दे यहाँ ही रह जाय तो अच्छा है.

सूत्र०—अरी भोली तू कुछ नहीं समझती. यह ऊपरी बात है. कमल-नैनी को कौन छोड़नेवाला है! क्या हाथी के दाँत तुमने नहीं देखे? वह क्या खाने से लिये हैं?

नटी—स्वामी! क्या समाचार-पत्र नहीं पढ़ते हो? इसी रस के कारण कितना विवाद होता है. भीतरे भीतर चाहे देवता मनावें पर ऊपर से तो मेरा अपमान जरूर ही करेंगे. [पृ० १६८]

इससे जान पड़ता है कि रीतिकालीन शृंगारी साहित्य के प्रति नये सभ्य लोगों में विवाद प्रारम्भ हो गया था और धीरे धीरे नई शिक्षा वाले शृंगार रस से अरुचि रखने लगे थे। शृंगार के उत्कट विरोध

---

१. वही पृ० ६२

का युग अभी आगे आने वाला था, परंतु १९ वीं शताब्दी के तीसरे चतुर्थांश से ही कुछ लोगों में श्रृंगार से अरुचि होने लगी थी और यह अंगरेजी शिक्षा के कारण ही हुआ था। फिर लाला श्रीनिवास दास तो पाश्चात्य साहित्य के बड़े प्रेमी थे और उनकी रचनाओं पर पाश्चात्य साहित्य का पर्याप्त प्रभाव है। अस्तु, लाला श्रीनिवास दास को भारतेन्दु के साथ आधुनिक युग का अग्रदूत माना जा सकता है।

लाला श्रीनिवास दास, भारतेन्दु हरिश्चंद्र के सच्चे समकालीन थे। इनका जन्म भारतेन्दु से कुछ ही महीने पश्चात् सं० १९०७ में हुआ था और मृत्यु भी थोड़े ही समय के अंतर पर सं० १९४४ में हुआ और इन्हें आयु भी भारतेन्दु की अपेक्षा केवल दो वर्ष अधिक मिली। नाटककार के रूप में भारतेन्दु युग में भारतेन्दु के समकक्ष केवल इन्हीं को रखा जा सकता है और उपन्यास-लेखक के रूप में तो ये १९ वीं शताब्दी में अद्वितीय हैं। इनका हिन्दी-प्रेम भी भारतेन्दु के समान ही उत्कट था; भारतेन्दु से इनकी घनिष्ट मित्रता भी थी और उनके पत्रों तथा रचनाओं को ये बड़े चाव से पढ़ते थे[1]। भारतेन्दु को भी इनकी रचनाएँ प्रिय थीं। इनके 'रणधीर और प्रेममोहिनी' नाटक में प्रस्तावना का अभाव देख उन्होंने स्वयं इसकी प्रस्तावना लिखकर इसका अभिनय कराया और इस प्रस्तावना में सूत्रधार के मुख से कहलवाया कि—

उस (रणधीर और प्रेममोहिनी) नाटक में वे सब गुण हैं जो मैं चाहता हूँ.

लाला श्रीनिवास दास माहेश्वरी वैश्य थे और मथुरा-निवासी लाला मंगीलाल के तीन पुत्रों में मध्यम थे। लाला मंगीलाल मथुरा के सुप्रसिद्ध सेठ राजा लक्ष्मण दास, जिनका बृंदावन में विख्यात श्रीरंग जी का मंदिर है, के यहाँ मुनीबी का काम करते थे। इन सेठ जी की एक

---

१. भारतेन्दु मंडल—श्रीब्रजरत्न दास पृ० ४६.

कोठी दिल्ली में भी थी और वहाँ के प्रधान मुनीब लाला मंगीलाल थे। लाला श्रीनिवास दास बचपन से ही बड़े मेधावी और कार्य-कुशल थे। इन्होंने घर पर ही हिन्दी, उर्दू, संस्कृत, फारसी, और अंगरेजी की शिक्षा प्राप्त की और १८ वर्ष की अवस्था में ही महाजनी कारबार और व्यापार में इतने दक्ष हो गए कि उन्हें दिल्ली की कोठी का सारा भार सौंप दिया गया। इनकी योग्यता देखकर पंजाब सरकार ने इन्हें म्यूनिसिपल कमिश्नर और आनरेरी मैजिस्ट्रेट बनाया और अनेक पत्रों ने सं० १९४० में इनका नाम लेजिस्लेटिव कौंसिल के लिए भी प्रस्तावित किया। अपनी योग्यता और कार्य-कुशलता के कारण ये वैश्य-समाज और राजकीय शासकों द्वारा समान रूप से आदृत थे।

व्यापार के कार्य में अत्यंत व्यस्त रहते हुए भी इन्हें अध्ययन की लगन थी और इन्होंने हिंदी, संस्कृत, फारसी, और अंगरेजी में प्रचुर साहित्य का अध्ययन किया था। इनकी रचनाओं से इनके विस्तृत ज्ञान का परिचय मिलता है। अध्ययन के साथ मौलिक रचना की ओर भी इनका ध्यान रहता था। अपने व्यस्त अल्प जीवन में इन्होंने चार नाटक और एक उपन्यास लिखा; 'सदादर्श' पत्र का संपादन किया, साथ ही 'कविवचन-सुधा', 'हरिश्चंद चंद्रिका' तथा 'भारतेन्दु' में लेख भी लिखते रहते थे। 'प्रह्लाद चरित्र' इनकी प्रथम रचना है जो अत्यंत साधारण और कुछ अर्थों में असफल भी कही जा सकती है। सम्भवतः इसी कारण लाला जी इसे अपनी रचना कहने में संकोच करते थे और इसका प्रकाशन इनके जीवन-काल में नहीं हुआ मरने पर सं० १९५२ में हुआ। 'तप्ता संवरण' इनकी दूसरी नाटक-रचना है जो प्रथम बार 'हरिश्चंद्र मैग-जीन' में १४ फरवरी १८७४ तथा १५ मार्च १८७४ में क्रमशः छपा था और १८८३ खड्गविलास प्रेस बाँकीपुर से पुस्तकाकार प्रकाशित हुआ। लेखक ने इसकी भूमिका में लिखा है:

इसमें कुछ लोकोपकारी विषय नहीं पाया जाता, यह केवल शृंगार विषयक पुरानी चाल का एक छोटा सा नाटक है, परंतु सज्जनों ने इसका यहाँ तक आदर किया कि गुजराती भाषा मैं इसका अनुवाद होकर मुम्बई के 'बुद्धिबर्धक' नामी प्रसिद्ध मासिक पत्र मैं प्रकाशित हुआ.

लोकोपकारी विषय न होने से ऐसा जान पड़ता है कि लेखक को यह नाटक बहुत रुचिकर नहीं जान पड़ा क्योंकि लाला श्रीनिवास दास के साहित्य की प्रथम विशेषता उसका लोकोपकारी और शिक्षाप्रद होना है। फिर भी पाठकों ने इसका आदर किया और यह है भी आदरयोग्य. यह ठीक है कि इस पर प्राचीन संस्कृत नाटकों विशेषकर 'शकुंतला' की बड़ी गहरी छाप है, परंतु १८७४ तक इतनी मौलिक नाट्य-रचना भी हिन्दी में नहीं हुई थी। 'नाटक अथवा दृश्य काव्य' शीर्षक पुस्तिका में भारतेन्दु हरिश्चंद्र ने हिन्दी नाटकों का जो क्रम स्थिर किया है उसके अनुसार 'नहुष' हिन्दी का पहला नाटक है, राजा लक्ष्मण सिंह की 'शकुंतला' दूसरा, भारतेन्दु का 'विद्यासुंदर' तीसरा और लाला श्रीनिवास दास का 'तपती संवरण' चौथा नाटक है।[1] इनमें 'नहुष' नाटक के संबंध में कुछ कहा नहीं जा सकता, परंतु 'शकुंतला' और 'विद्यासुंदर' दोनों अनुवाद ग्रंथ हैं, अस्तु 'तप्ता संवरण' अपने युग की प्रथम सफल मौलिक रचना कही जा सकती है।

लेखक की तीसरी रचना 'रणधीर और प्रेममोहिनी' हिन्दी का प्रथम दुःखान्त नाटक है। १९ वीं शताब्दी में भारतेन्दु की 'चंद्रावली' नाटिका और लाला श्रीनिवास दास की 'रणधीर और प्रेममोहिनी' नाटक ही सफल रचनाएँ हैं जिनमें 'चंद्रावली' नाटक की अपेक्षा काव्य ही अधिक है; वास्तविक नाट्य-कला की दृष्टि से 'रणधीर और प्रेममोहिनी' ही भारतेन्दु युग की सर्वोत्तम कृति है। यह १८७८ में लिखी गई और उसी वर्ष

---

१ भारतेन्दु-ग्रंथावली भाग १ प्रथम संस्करण पृ० ७५३

प्रकाशित होकर 'सदादर्श' सम्मिलित 'कविवचन सुधा' के पाठकों को बिना मूल्य वितरित हुई। इस नाटक की पाठकों और आलोचकों ने भूरि भूरि प्रशंसा की। प्रयाग के अंगरेजी पत्र 'इंडियन ट्रिब्यून' ने २३ फरवरी १८७८ में लिखा था कि 'इस रचना में आदि से अंत तक लेखक ने इंगलैंड के कृत्रिम नाट्य-रचनाओं के अस्वाभाविक आडम्बरों के प्रदर्शन के बिना ही निर्बाध रूप से संकलनत्रयी का निर्वाह किया है। किसी काल-दोष से यह भद्दा नहीं हुआ और विषम तत्वों के प्रयोग से कहीं असुंदर नहीं हुआ। इस नाटक में हम परोक्ष रूप से पृथ्वीराज युगीन भारत में पहुंच जाते हैं और चौहान द्वारा कन्नौज की राजकुमारी के हरण का स्वप्न देखने लगते है।'[1] और म्योर सेन्ट्रल कालेज इलाहाबाद के संस्कृत प्रोफेसर पं० आदित्यराम भट्टाचार्य एम० ए० ने लिखा था कि 'हिन्दी रचनाओं के वर्तमान अभावावस्था में कोई भी रचना चाहे वह मौलिक रूपांतर हो अथवा अनुवाद, स्वागत योग्य है; परंतु जब आपकी प्रस्तुत रचना के समान एक कृति उन अनेक गुणों से युक्त है जो एक नाटकीय रचना को सुरुचिपूर्ण पाठकों के पढ़ने योग्य बनाती है—शैली की सुकुमारता, संकलनत्रयी, चरित्रों का चरित्र-चित्रण और इन सबके साथ उद्देश्य में नैतिक सदाचरण से पूर्ण और हृदयस्पर्शी ढंग से दुःखांत हो तो ऐसी

---

१ Throughout the piece, the author maintains all the three unities inviolate without giving it the unnatural appearance of plays of the artificial School in England. It is disfigured by no anachronisms and the beauty is marred nowhere by the introduction of heterogeneous elements. We are imperceptibly transported to the India of Prithi Raj and begin to dream of the Chohan carrying off the princess of Kanauge...

रचना त्रिगुण स्वागत योग्य है।'[१] इतना ही नहीं लन्दन के 'एलेन्स इंडियन मेल' (Allens Indian Mail) ने २८ अगस्त १८८३ में लाला श्री- निवास दास की हिन्दी रचनाओं की प्रशंसा की। हिन्दी के 'सार सुधा- निधि' 'कविवचन सुधा', 'भारतमित्र' 'सज्जन-कीर्ति-सुधाकर' (उदयपुर), 'भारतबंधु' (अलीगढ़) 'शुभचिंतक' (कानपुर) 'हिंदी प्रदीप' (प्रयाग) आदि पत्रोंने इस नाटक की मुक्तकंठ से प्रशंसा की। कलकत्ता के बँगला पत्र 'सोमप्रकाश' और बम्बई के गुजराती पत्र 'रास्तगोफ्तार' ने भी इसकी अनुकूल आलोचना की। प्रयाग की आर्य नाट्य-सभा ने ६ दिसम्बर १८७६ को इसका अभिनय भी किया जिसे देखने अनेक महाशय दूर दूर से आए थे और अभिनय भी अति उत्तम हुआ। इस अभिनय के लिए भारतेन्दु ने एक प्रस्तावना लिखी थी जो इस प्रकार है :

नान्दी

(गाइए गनपति जगबन्दन। चाल में)

गीत

जय जय हरि निज जन सुखदाई। विश्व ब्रह्म विभु त्रिभुवनराई॥
भक्त चकोर चंद्र सुखरासी। घट घट व्यापक अज अविनासी॥

---

१. In the present dearth of Hindi productions any work whether it be an original adaptation or translation, is welcome; but when a production such as that of yours combines in it the many excellent merits that make a dramatic composition readable to readers of taste, the graces of style, the unities, the delineation of character; and withal is really moral in its aims and touchingly tragical, such a work is thrice welcome.

आरज धर्म्म प्रचारक स्वामी । प्रेमगम्य प्रभु पन्नगगामी ॥
करि करुणा प्रभु प्रीति प्रकासौ । भारत सोक मोह तम नासौ ॥

(सूत्रधार आता है ।)

सूत्रधार—हाँ प्रभु ! "भारत सोक मोह तम नासौ". देखो अंगरेजों की दया से पश्चिम से बिद्या का स्रोत प्रवाहित होकर सारे भारतबर्ष को प्लावित कर रहा है परंतु हिन्दू लोग कमल के पत्ते भांति उसके स्पर्श से अब भी अलग हैं . (कुछ सोचकर) सचमुच नाटक के प्रचार से इस भूमि का बहुत कुछ भला हो सकता है . क्योंकि यहाँ के लोग कौतुकी बड़े हैं . दिल्लगी से इन लोगों को जैसी शिक्षा दी जा सकती है वैसी और तरह से नहीं . तो मैं भी क्यों न कोई ऐसा नाटक खेलूँ जो आर्य्य लोगों के चरित्र का शोधक हो . (नेपथ्य की ओर देखकर) प्यारी ! आज क्या यहाँ न आओगी ?

(नटी आती है)

नटी—प्राणनाथ ! मैं तो आप ही आती थी . कहिए क्या आज्ञा है ?

सूत्रधार—प्यारी ! आज इस आर्य्य समाज के सामने कोई ऐसा नाटक खेलो जिसका फल केवल चित्त बिनोद ही न हो .

नटी—जो आज्ञा, परंतु वह नाटक सुखांत हो कि दुःखांत ?

सूत्र०—प्यारी ! मेरी जान तो इस संसार रूपी कपट नाटक के सूत्रधार ने जगत को दुःखांत बनाया है . कैसा भी राजपाट, उत्साह, बिद्या, खेल तमाशा क्यों न हो अंत में कुछ नहीं . सबका अंत दुःख है इससे दुःखांत ही नाटक खेलो .

नटी—मेरी भी यही इच्छा थी . क्योंकि दुःखांत नाटक का दर्शकों के चित्त पर बहुत देर असर बना रहता है .

सूत्र०—और नाटक भी कोई नवीन हो और स्वभाव बिरुद्ध न हो . कहो तुम कौन सोचती हो .

नटी—नाथ ! दिल्ली के रईस लाला श्रीनिवास दास जी का बनाया रणधीर प्रेममोहिनी नाटक क्यों न खेला जाय . मेरे जान तो उसका आज कल हिन्दी समाज में चर्चा भी है इससे वही अच्छा होगा .

सूत्र०—हाँ, हाँ बहुत अच्छी बात है . उस नाटक में वे सब गुण हैं जो मैं चाहता हूँ . तो चलो हम लोग शीघ्र ही वेश सजें . और खेल का आरंभ हो .

नटी—चलिए .

(दोनों जाते हैं)

नट का गान

आवहु मिलि भारत भाई । नाटक देखहु सुख पाई—आवहु मिलि०
जब सों बढ़यौ विषय इत मूरखता सब नैननि छाई ।
तब सों बाढ़े भाँड भगतिया गनिका के समुदाई ।
ऐसो कोउ न बिनोद रह्यौ इन जामैं जीअ लुभाई ।
सज्जन कहन सुनन देखन के लायक दृग सुखदाई ॥
ताही सों यह सब गुन पूरन नाटक रच्यौ बनाई ।
याहि देखि श्रम करहु सफल मम यह बिनवत सिर नाई ॥
आवहु मिलि भारत भाई ॥

श्री हरिश्चंद्र (बनारस)

दु:खांत नाटक लिखना भारतीय नाट्य-परंपरा में नहीं है फिर भी यह नाटक भारतेन्दु को रुचिकर हुआ और सभी पाठक भी इससे मुग्ध रहे, यह इस नाटक की सफलता का सर्वोत्तम प्रमाण है ।

'रणधीर और प्रेममोहिनी' के पश्चात् सन् १८८२ में लाला जी का प्रथम उपन्यास 'परीक्षागुरु' प्रकाशित हुआ जिसे हिंदी का भी प्रथम उपन्यास कहा जा सकता है । अम्बिकादत्त व्यास ने 'गद्य-काव्य मीमांसा' के अंत में ७६ उपन्यासों के नाम और प्रकाशन-तिथि दी है

जिसके अनुसार 'परीक्षागुरु' ही हिंदी का सर्वप्रथम उपन्यास ठहरता है। इससे पूर्व दो उपन्यास-ग्रंथों की रचना का उल्लेख प्राप्त होता है——एक पंजाब के श्रद्धाराम फुल्लौरी की 'भाग्यवती' और दूसरा भारतेन्दु हरिश्चंद्र कृत 'पूर्णप्रभा चंद्रप्रकाश' है, परंतु पिछली कृति गुजराती से अनुवाद मात्र है जिसे मल्लिका देवी ने अनुवादित किया था और भारतेन्दु ने उसे शोधा था। 'भाग्यवती' यदि मौलिक रचना है तो निश्चय ही उसे हिंदी का सर्वप्रथम उपन्यास माना जा सकता है, परंतु हिंदी का प्रथम सफल और मौलिक उपन्यास लाला श्रीनिवास दास का 'परीक्षागुरु' ही है जिसका 'भारतेन्दु' पत्रिका ने 'रणधीर और प्रेममोहिनी' का सहोदर कह कर स्वागत किया था।

लाला जी की अंतिम कृति 'संयोगता स्वयम्बर' एक ऐतिहासिक नाटक है जो चंद बरदाई कृत 'पृथ्वीराज रासो' और आत्माराम केशवजी द्विवेदी कृत 'पृथिराज चहुआण' से कथा-भाग लेकर रचा गया और सार सुधानिधि यंत्र कलकत्ता से १८८५ ई० में प्रकाशित हुआ। लालाजी की ये पाँच ही कृतियाँ हैं, परंतु इन्हीं के बल पर वे १९ वीं शताब्दी के सर्वाधिक सफल नाटककार और उपन्यासकार माने जा सकते हैं. ये कवि नहीं थे परंतु अपने नाटकों और उपन्यास में जहाँ तहाँ इनके रचे कुछ छंद और गीत भी मिलते हैं जो प्रायः प्राचीन ग्रंथों से अनुवादित अथवा रूपान्तरित हुए हैं।

'परीक्षागुरु' के एक प्रधान पात्र लाला ब्रजकिशोर में, ऐसा जान पड़ता है, लेखक ने बहुत कुछ अपना ही चरित्र उतार दिया है। प्रामाणिकता (honesty) को ये सर्वश्रेष्ठ गुण समझते थे और इस गुण की विशेष चर्चा इन्होंने 'परीक्षागुरु' में तो किया ही है अपने 'सदाचरण' शीर्षक लेख में जो 'भारतेन्दु' में सं० १९४० में प्रकाशित हुआ था, इसी प्रमाणिकता की महत्त्व प्रदर्शित किया है। प्रामाणिकता की इतनी महिमा गानेवाले लाला श्रीनिवास दास स्वयं भी एक प्रामाणिक

पुरुष थे और जैसा कि अँगरेजी कवि पोप ने कहा है 'एक प्रामाणिक मनुष्य परमेश्वर की सर्वोत्कृष्ट रचना है' लाला श्रीनिवास दास निश्चय ही परमेश्वर की एक सर्वोत्कृष्ट रचना थे और उन्होंने हिन्दी साहित्य को अनेक सर्वोत्कृष्ट रचनाएँ प्रदान कीं जिनमें 'रणधीर और प्रेममोहिनी' नाटक और 'परीक्षागुरु' उपन्यास उनकी अपूर्व देन हैं ।

नाटक

भारतेन्दु युग मुख्यतः नाटकों का युग था क्योंकि उस काल में जितने भी लेखक हुए हैं सबने प्रायः नाटक अवश्य लिखे हैं । भारतेन्दु हरिश्चंद्र और लाला श्रीनिवास दास के अतिरिक्त बालकृष्ण भट्ट, प्रतापनारायण मिश्र, अम्बिकादत्त व्यास, राधाचरण गोस्वामी, बदरीनारायण चौधुरी 'प्रेमघन', कार्तिकप्रसाद खत्री, काशीनाथ खत्री, रामकृष्ण वर्मा, केशवराम भट्ट, दामोदर शास्त्री सप्रे, तोताराम, राधाकृष्ण दास, खड्ग बहादुर मल्ल, गौरीदत्त, देवकीनंदन तिवारी, किशोरीलाल गोस्वामी, गोपालराम गहमरी, शालिग्राम वैश्य, ज्वालादत्त मिश्र, लाला सीताराम, रायदेवीप्रसाद 'पूर्ण' आदि सबने नाट्य-रचना अवश्य की है ; सम्भवतः अपवाद स्वरूप केवल जगमोहनसिंह का नाम लिया जा सकता है जिन्होंने एक भी नाटक नहीं लिखा । नाटक के इस अत्यधिक प्रचलन का कारण उस युग के कर्णधारों का नाटक विषयक प्रोत्साहन था । भारतेन्दु के पहले और उनके समय में भी नृत्य और संगीत के साथ ही अभिनय भी नीची दृष्टि से देखे जाते थे । 'तप्ता संवरण' नाटक की प्रस्तावना में जब सूत्रधार नाटक की प्रशंसा करता है तो नट कहता है :

यह ठीक, पर अब तो इस देश मैं कोई भलामानस नाटक करै तो उस्की बड़ी चर्चा हो . तप्ता संवरण पृ० १

'मयकमंजरी महनाटक' (१८९१) की प्रस्तावना में भी सूत्रधार कहता है :

'ओ हो ! यह भी समय की खूबी है, जिस देश में इस बिद्या का प्रथम प्रथम प्रादुर्भाव भया और संगीत-साहित्य परिपक्व होकर पृथ्वी भर में व्याप्त गये, आज वहीं के निवासी नाटक का नाम भी नहीं जानते × × (नाटक) खेलना तो दूर रहे, जो नाटक रचे या अभिनय करे वह हास्यास्पद गिना जाता है.

यह केवल कल्पना द्वारा लिखी बात नहीं प्रत्यक्ष सत्य है क्योंकि बालकृष्ण भट्ट को एक नाटक में युधिष्ठिर का अभिनय करने के अपराध में उनके पिता जी ने उन्हें घर से निकाल दिया था। १७ अगस्त १८७८ के 'कविवचन सुधा' में भारतेन्दु ने 'नाटक' शीर्षक लेख में लिखा था :

अब के लोगों को नाटक के अनुशीलन वा अनुकरण करने में उत्साह नहीं होता बरन इसको तुच्छ और बुरा समझ के इससे दूर भागते हैं और नाटक करनेवाले चतुरों को लोग साधारण ढोल बजानेवाले नट जानकर इस काम में अपनी घृणा प्रकाश करते हैं, परंतु बड़े शोच की बात है कि जो सबसे अच्छी वस्तु है और जिसके करनेवाले लोग महा सभ्यता के निकेतन हैं इन्हीं दोनों बातों में देश के कुसंस्कार से लोगों को अरुचि हो गई :

नाटकों के प्रति जनता में जब इतनी भयंकर घृणा और अरुचि फैली हुई थी उस समय भारतेन्दु युग के लेखकों ने बड़े उत्साह से नाटक के गुण गाकर इसके प्रचलन का अथक प्रयास किया। नाटक-प्रचलन के इस पुण्य कार्य में सबसे बड़ा योगदान स्वयं भारतेन्दु का था। अपने 'नाटक' शीर्षक लेख में उन्होंने नाटक की महत्ता और उपयोगिता का परिचय इस प्रकार दिया था :

नाटकों का अभिनय करना सहृदय जनों के समाज को कितनी प्रीति देने वाला, देश की कुचालों को सुधारने वाला और कैसा कुशल

करने वाला है इसका सब गुण उन नाटक देखने ही से उन पर प्रगट हो जायगा और इसी भाँति प्रतिकूलता के बंधन से छूटकर अनुकूलता भूषण से भूषित होकर नाटक-दर्शन रूपी अलौकिक कुसुम कानन में घूमने फिरने से अनिर्वचनीय आनंद पावैंगे और उसके काव्यों के वायु के (की) ठंढी और सुगंधित झकोरों के उनके जी की कली खुल जायगी . नाटकों के अभिनय करने में जो स्वच्छंदता होती है उसे छोड़कर उससे देश का कितना उपकार होता है कि हम लिख नहीं सकते . देखिये जो कि यदि एक बड़ा राजा वा कोई धनी अथवा कोई पंडित किसी बुरे काम में प्रवर्त होय तो उसको हम लोग सभा में कभी शीक्षा न दे सकैंगे और जो कुसंस्कार की दावाग्नि बहुत काल से प्रगट होकर हम लोगों के मंगलमय सभ्यता बन को जला रही है उस महादावाग्नि को हम लोग दोष कथन वारि से घर बैठे बुझाना चाहैंगे तो कभी न बुझैगी . इसमें अब हम लोगों को कुशलता के उद्योग बीजों को अवश्य बोना चाहिए और वह किसी एक मनुष्य के प्रयत्न से अभी अंकुरित न होगी परंतु यदि नाटकों के अभिनय का आरंभ हो जायगा तो यह सब कुचाल आप से आप छूट जायगी और इसी भाँति फिर सब लोग अच्छी बातों से रुष्ट न होकर उसके प्रचार में प्रयत्न करैंगे . 'कवि—वचन सुधा' १७ अगस्त १८७२ पृ० १६७–१६८

कुसंस्कारों और कुचालों को दूर करने के लिए नाटकों के अत्यधिक प्रचलन की आवश्यकता समझ कर भारतेन्दु ने अनेक लेखों द्वारा नाटक रचने और अभिनय करने की प्रेरणा दी है। दूसरे, हिंदी भाषा को पूर्ण समृद्ध करने की दृष्टि से भारतेन्दु ने नाटकों का एकांत अभाव देखकर उसके लिखने का स्वयं प्रयत्न किया और दूसरों को भी प्रेरणा दी . 'रत्नावली' (सं० १८६८) की भूमिका में वे लिखते हैं :

हिंदी भाषा में जो सब भाँति की पुस्तकें बनने के योग्य हैं, अभी बहुत कम बनी हैं, विशेष करके नाटक तो (कुँवर लक्ष्मणसिंह के शकुंतला के सिवाय) कोई भी ऐसे नहीं बने हैं जिनको पढ़ के कुछ चित्त को आनंद और इस भाषा का बल प्रगट हो . इस वास्ते मेरी ऐसी इच्छा है कि दो चार नाटकों का तर्जुमा हिंदी में हो जाय तो मेरा मनोरथ सिद्ध हो . (भारतेन्दु ग्रंथावली भाग १ पृ० ४३)

नाटक को बुरा समझने वालों को निरुत्तर करने के लिए उन्होंने तर्क उपस्थित किया था :

और जो नाटक करना कोई बुरी बात होती तो सभ्य सिरोमणि विद्यासागर अँगरेज़ लोग इसके होने में क्यों प्रयत्न करते और बड़ी बड़ी रंगशालाओं में नित्य नित्य बड़े बड़े अधिकारी लोग क्यों वेश धारण करके नाटकाभिनय करते ? जो कहो कि यह नाटक भारतखंड के हेतु एक नई बात है सो नहीं देखिए पूर्व्व काल में भगवान श्रीकृष्ण चंद्र ने अपने पुत्र शाम्ब और श्री प्रद्युम्न को और अपने छोटे भाई गद को एक बड़े समाज के साथ नाटक करने की आज्ञा दिया था और उन लोगों ने 'रामाभिनय' नाटक किया था और इसी भाँति से भरत-खंड भूषण श्री महाराज विक्रमादित्य और महाराज भोज के समय इसका संपूर्ण रूप से प्रचार था इसमें विशेष प्रमाण का कुछ काम नहीं है; उस समय के शकुंतला और रत्नावली इत्यादि नाटक अब भी प्रमाण आदर्श रूप से वर्तमान हैं और पढ़नेवालों को अपूर्व आनंद देते हैं .

निबंध के उपसंहार रूप में भारतेन्दु ने नाटक-विरोधियों से साग्रह निवेदन किया था कि—

अहा ! हे नाटक विरोधी मानवगण आप लोग इस चमत्कार कार्य्य में क्यों उत्साह नहीं बढ़ाते और इस आनंदमय रस-समुद्र में क्यों नहीं

स्नान करते और बड़े बड़े महात्मा वीर रसिक शिरोमणि दुष्यंत, युधिष्ठिर, राम और वत्सराज ऐसे लोगों के साक्षात् दर्शन और उनके गुण स्वभाव श्रवण की इच्छा क्यों नहीं करते ? इस हेतु अब यही हमारी प्रार्थना है कि आप लोग इस बात को सुन कर कान में रुई दे के न बैठें जहाँ तक हो सकै इसकी उन्नति में प्रयत्न करें जिससे हमारे देश बासियों का उपकार हो . (कविवचन-सुधा, १७ अगस्त, १८७२ पृ० १६८)

इसके अतिरिक्त 'रणधीर प्रेममोहिनी' की प्रस्तावना के अंत में भारतेन्दु जी ने जो गीत दिया है उसमें भी नाटक रचने और देखने का आग्रह स्पष्ट है । भारतेन्दु के साथ ही अन्य लोगों ने भी नाटक-प्रचलन के लिए नाटकों के गुण प्रदर्शित किये । 'तप्ता संवरण' भी प्रस्तावना में नट और सूत्रधार की बातें सुनिये :

नाट—आज तो लाला श्रीनिवास दास रचित 'तप्ता संवरण' नाटक करिये और यह भी बतलाइये नाटक करने से क्या लाभ होता है .

सूत्रधार—क्या तुम नहीं जान्ते ? प्रथम तो मन बहलाने के लिए यह बहुत उत्तम उपाय है, दूसरे नाटककार समय पर अपना रूप वाणी स्वभाव बदल सक्ता है, तीसरे नाटक के द्वारा सैकड़ों हजारों वर्ष की बातें प्रत्यक्षवत् दृष्टिगोचर हो जाती हैं इसलिए राजा लोगों को इस्का अभ्यास करना अत्यंत आवश्यक है .

नट—यह ठीक, पर अब तो इस देश मैं कोई भलामानस नाटक करै तो उस्की बड़ी चर्चा हो .

सूत्र०—हाँ, अब तो ऐसे ही है, पर पहले यह बात न थी, क्योंकि होती तो कालिदासादि महाकवि नाटक न रचते और नाटक उत्तम काव्यों की गणना मैं न होता . देशांतर मैं तो इस्का अब भी बड़ा प्रचार है . ईश्वर करै यहाँ के मनुष्य भी इस्का आनंद लें .

तप्ता संवरण—प्रथम संस्करण, पृ० १–२,

'रणधीर और प्रेममोहिनी' के निवेदन में भी लाला जी लिखते हैं :

पुस्तकों में पीट्रार्क के लेखानुसार 'जामे जमशेद' की तरह संसार की सब चीजें दिखाई देती हैं, परंतु जो लोग पुस्तक पढ़कर उस्की राह से उन चीजों का रूप अपने मन मैं नहीं बना सक्ते उनके लिए नाटक की रीति बहुत हितकारी है. 'सर टाम्स ओवरबरी' लिखता है कि संसार में 'पाठ-शाला की अपेक्षा भी नाटकशाला ज्यादा जरूरी है क्योंकि पढ़ने की अपेक्षा अनुभव सै लोग ज्यादा सीखते हैं.' देखो नाटक मैं बर्तमान अथवा हजारों वर्ष पहले की चाहे जिस बात को इस समय अपनी आँखों सै देख सक्ते हो.

और 'संयोगता स्वयंबर' में भी नाटक के प्रचार की ही भावना को सामने रखकर नट और सूत्रधार से इस प्रकार का संवाद कराया गया है :

नट—नाटकों के अभिनय करने में चित्त बिनोद के सिवाय और क्या गुण है, और इसका प्रचार शिष्ट जनों में कब से पाया जाता है?

सूत्रधार—इसमें सबसे विशेष गुण तो ये प्रतीत होता है कि अभिनय कर्त्ता अपने चित्त पर पूरा अधिकार रख सक्ता है और उसका भाव चाहै जिस रीति सै प्रगट कर सक्ता है. अभिनय देखनें से दर्शकों के चित्त पर उस चरित्र के प्रत्यक्ष देखनें का सा अनुभव हो जाता है. बहुत प्राचीन काल से देवता स्वर्ग में इसका सुखानुभव करते आए हैं जैसे विक्रमोर्वशी में लक्ष्मी स्वयंबर वृत्तांत लिखा है और 'उत्तर राम-चरित्र' में तो श्री रामायन के अभिनय से साक्षात् सर्वेश्वर रामचंद्र जी के चित्त पर बड़े भारी असर होने का भाव दरसाया गया है.

संयोगता-स्वयंबर पृ० ४.

भारतेन्दु, लाला श्रीनिवास दास और अन्य अनेक 'समकालीन' लेखकों के प्रयास से नाटकों का प्रचलन भी पर्याप्त हुआ। 'सत्य हरिश्चंद्र' की प्रस्तावना में भारतेन्दु ने बड़े संतोष से लिखा है :

धन्य है विद्या का प्रकाश कि जहाँ के लोग नाटक किस चिड़िया का नाम है इतना भी नहीं जानते थे, भला वहाँ अब लोगों की इच्छा इधर प्रवृत्त तो हुई।

और सं० १९४० में लिखी अपनी 'नाटक' पुस्तिका में उन्होंने तब तक बने लगभग ५० नाटकों की सूची भी प्रस्तुत की। भारतेन्दु की मृत्यु के पश्चात् भी नाटक-रचना का क्रम उसी वेग से चलता रहा और १९०० ई० तक सैकड़ों नाटकों की रचना हो गई। इन नाटकों से हिंदू समाज में प्रचलित कुसंस्कारों, अज्ञानजनित कुचालों और कुरीतियों के निवारण का सफल प्रयत्न हुआ, हिन्दी साहित्य का भंडार भरा और हिंदी भाषा को बल प्राप्त हुआ। अस्तु, भारतेन्दु युग को नाटकों का युग कहना युक्तिसंगत और समीचीन है।

इस नाटक-युग में जहाँ भारतेन्दु ने अनुवाद और मौलिक सब मिलाकर लगभग डेढ़ दर्जन रूपक लिखे, बालकृष्ण भट्ट ने लगभग बीस रूपक और राधाचरण गोस्वामी ने सात-आठ, वहाँ लाला श्रीनिवास दास ने केवल चार ही नाटक लिखे। परंतु इन चार ही नाटकों के बल पर ये भारतेन्दु युग के किसी भी नाटककार से पीछे नहीं हैं। इन चार नाटकों में भी 'रणधीर और प्रेममोहिनी' उनकी सर्वोत्तम रचना है और यद्यपि इस पर शेक्सपीयर के 'रोमियो जूलिएट' तथा संस्कृत के नाटकों की छाया अवश्य पड़ी है, फिर भी इस रचना में लाला श्रीनिवास दास की प्रतिभा पूर्ण रूप से प्रस्फुटित हुई है। इस मौलिक नाटक का जितना आदर हुआ, उतना भारतेन्दु के भी किसी नाटक का नहीं हुआ।

'रणधीर और प्रेममोहिनी' में दो राज परिवारों की कथा कही गई है। एक परिवार सूरत के महाराज का है जिसमें महाराज के अतिरिक्त उनका पुत्र रिपुदमन सिंह और कन्या प्रेममोहिनी है। प्रेममोहिनी के साथ उसकी दो सखियाँ मालती और चम्पा हैं। दूसरा परिवार रणधीर सिंह

का है जो पाटन का निर्वासित राजकुमार है और सूरत में आकर राजमहल के पास ही अपरिचित परदेशी बनकर ठहरा है। निर्वासित होने पर भी इस परदेशी क्षत्रिय के पास विदूषक के रूप में चौबे जी, कारिन्दा के रूप में सुखबासीलाल, मोदी के रूप में नाथूराम, भृत्य जीवन और गुरु तथा पुरोहित के रूप में पंडित सोमदत्त हैं। दैवयोग से शिकार खेलने में रिपुदमन और रणधीर सिंह की मित्रता हो जाती है और सखियों के द्वारा रणधीर की धीरता, वीरता और सौन्दर्य आदि गुणों की चर्चा सुन प्रेममोहिनी भी उसकी ओर आकृष्ट होती है। परंतु उन दोनों के पिता सूरतपति का रणधीर के प्रति अकारण द्वेष भाव है, संभवतः इसलिए कि इस अभिमानी राजा को रणधीर के राजकुमार होने की बात ज्ञात नहीं है, वे उसे एक साधारण परदेशी क्षत्रिय मात्र जानते हैं। प्रेममोहिनी के स्वयंबर में रणधीर के अनाहूत प्रवेश और निर्भीक व्यवहार से सूरतपति का क्रोध और प्रेममोहिनी का प्रेम द्विगुणित हो उठता है और स्वयंबर में आए हुए नरेशों की कायरता तथा रिपुदमन के मैत्री-निर्वाह और रणधीर की वीरता के कारण नाटक का दुखद अंत होता है। कथा का विकास सरल रेखा में हुआ है जिसमें दैव-संयोग और आकस्मिक घटनाओं का पूरा योग है. दैवयोग से रणधीर पाटन से सूरत आकर राजमहल के पीछे ठहरता है जहाँ प्रेममोहिनी की सखियाँ उसे और उसके करतब देख देखकर मुग्ध हो राजकुमारी से उसका गुण वर्णन करती हैं। दैवयोग से ही जब रिपुदमन को मारने के लिए सिंह पंजा उठाता है तभी अचानक रणधीर आकर सिंह के पेट में कटार मार रिपुदमन के प्राण बचाता है और दोनों में मैत्री स्थापित हो जाती है; फिर दैवयोग से ही सूरतपति की स्वयंबर-सभा में सरोजनी नृत्य करती हुई गाती है और रणधीर पिछले दिन की भूल सुधारने के लिए गले से मोतियों का हार निकाल कर देता है और इसी के कारण सारा बखेड़ा खड़ा होता है जिसमें रिपुदमन, रणधीर और अन्य अनेक लोगों

की मृत्यु का योग उपस्थित होता है। किंतु केवल इन आकस्मिक घटनाओं एवं दैव-संयोग से ही नाटक का दुखद अंत नहीं होता, सूरतपति के अहंकार और रणधीर तथा रिपुदमन की राजपूती आन-बान-शान के कारण भी अनेक लोगों को व्यर्थ प्राण देने पड़ते हैं। सब मिलाकर 'रणधीर और प्रेममोहिनी' का कथानक अत्यंत सरल है और इसमें आकस्मिक घटनाओं के सहारे ही कथानक आगे बढ़ता है।

इस नाटक की सबसे बड़ी विशेषता इसका चरित्र-चित्रण है। नाटक का नायक रणधीर एक शूर वीर क्षत्रिय राजकुमार है जो अपने विविध गुणों में अद्वितीय दिखाया गया है। धीरोदात्त नायक के इसमें सभी गुण हैं—यह सत्यवादी, आचारवान्, विद्याव्यसनी और अद्वितीय रूपवान् तथा योद्धा है, जिसमें यश की कामना और निःस्वार्थ भावना कूट कूट कर भरी हुई है। उसका सौन्दर्य अपूर्व है। प्रेममोहिनी की सखी मालती चंपा से उसके रूप-गुण का वर्णन करती हुई कहती है :

सखी उसको स्मर्ण करते ही शरीर के रोम खड़े होते हैं, उसका सब अंग साँचे ढला बना है, मैंने तो ऐसी सजधज का जवान सब उमर में कभी नहीं देखा है जिस समय वो अपने "पवन वेग" घोड़ों को किले के मैदान में फेरकर अपना कर्तब दिखाता है, उस समय और राजकुमार उस्की फुर्ती देख चकित हो, चित्र बन जाते हैं, उसके शरीर में चुस्त पोशाक ऐसी जमकर बैठती है कि बहुत से राजकुमार उस्की नकल करते हैं; जिस समय उस्के मनोहर मुख की रसभरी मुसकान और शरमाते नेत्रों की मदमाती चितवन मेरे ध्यान में आती है, मेरी तो सुधबुध ठिकाने नहीं रहती, मैं उस्की अलबेली छबि कहाँ तक बर्णन करूँ, सब नगर उस्की मोहिनी मूरत देख मोहित हो रहा है.

वीरता में भी वह अद्वितीय है। सूरत का सेनापति जब उसे युद्ध के लिए ललकारता है तब वह बिना फल का एक भाला मारकर सेनापति को पाँच सात गज ऊँचा उछाल देता है और सूरत के महाराज

जब घबड़ा कर स्वयंबर सभा में आए हुए सभी राजाओं को सम्बोधित कर कहते हैं :

जो वीर इस समय हमारे सेनापति को बचावेगा वोही आज की शस्त्र बिद्या में जीतनेवाला समझा जायगा।

तब अन्य राजाओं के उठने से पहले ही वह घोड़े समेत उछल-कर सेनापति को गिरते गिरते रोक लेता है और सूरतपति के आगे लाकर खड़ा कर देता है। उसी सभा में जब उसकी निर्भीकता और दृढ़ता के लिए दंड देने को नगर का राजा उसके ऊपर झपटता है तब वह बड़ी आसानी से उसका कटार छीन अपने दुपट्टे से उसकी मुसकें बाँधकर सभी राजाओं को चुनौती देते निर्भय सभा से निकल जाता है और फिर अपने मित्र रिपुदमन की मृत्यु का समाचार पा शस्त्र लेने के लिए भी नहीं ठहरता और रिपुदमन के धनुष से ही असंख्य राजाओं से युद्ध करने लगता है। उस युद्ध में अकेले ही उसने जो वीरता प्रदर्शित की उससे लव और अभिमन्यु की याद आ जाती है। म्योर सेन्ट्रल कालेज के संस्कृत प्रोफेसर आदित्यराम भट्टाचार्य ने रणधीर सिंह की वीरता के लिए लिखा था कि यह नाटक का एक दोष है क्योंकि कलियुग में इस प्रकार के वीर के पैदा होने की सम्भावना नहीं है, त्रेता में ही ऐसे वीर होते थे जो अकेले अक्षौहिणी सेना से युद्ध कर सकते थे। रणधीर की वीरता वास्तव में कलियुग में आश्चर्यजनक ही है।

परंतु रूप और वीरता से भी अधिक उल्लेखनीय उसका शील स्वभाव है। रिपुदमन के प्राण बचाकर वह अपना उपकार जताने के लिए रुकता नहीं वरन् यह सोचकर कि मुझे देख यह वीर बृथा ही लज्जित होगा वह जाने लगता है। आचारवान् तो वह इतना है कि स्त्रियों की परछाईं से भागता रहता है। सरोजनी जब रणधीर से अपना नृत्य और गान का गुण दिखाने की प्रार्थना करती है तब वह मन ही मन कहता है :

न मेरी इन बातों में रुचि, न ये काम मेरे करने लायक, मैं अब तक एकांत के सहारे बचा हूं, नहीं कुसंग से बड़े बड़े तपस्वियों का तप भंग हो गया, तब मेरी क्या गिन्ती थी.

और जब प्रेममोहिनी अपने स्वप्न में देखे हुए हंस की चर्चा करती हुई कहती है कि उसने चुगे पर चोंच भी न डाली तब मालती हँसकर कहती है :

वो भी रणधीर की तरह स्त्रियों से लजाता होगा.

लोभ तो उसे जैसे छू भी नहीं गया है। सूरतपति की स्वयम्बर-सभा में प्रवेश करते समय जब बात ही बात में सेनापति से विवाद उपस्थित हो जाता है और वह उसे छः सात हाथ ऊपर फेंक देता है उस समय सूरतपति घोषणा करते हैं कि जो कोई सेनापति को बचावेगा वही आज की शस्त्र-विद्या में सफल माना जायगा, तब वह घोड़े समेत उछलकर सेनापति को गिरते गिरते बचाकर सूरतपति के सामने ला खड़ा करता है, परंतु उसके इस कार्य से जब सूरतपति प्रसन्न होने के बदले उदास हो जाते हैं तो वह मन ही में कहता है :

तुम्हारे उदास होने से मेरा क्या नुक़सान? मैंने किसी तरह के लालच से ये काम नहीं किया मैं तो केवल जस चाहता हूँ.

और उसका निर्लोभ तो इस सीमा तक पहुँचा हुआ है कि प्रेम-मोहिनी जैसी सुंदरी को अपने पास एकांत में पाकर भी वह लुब्ध नहीं होता और जब प्रेममोहिनी उसपर अनेक प्रकार से अपना प्रेम प्रकट करती है तब वह दो टूक जवाब देकर चला जाता है कि :

ऐसी बातों से तो कामी पुरुष मोहित होते हैं, मेरे ऊपर तुमारा मोहिनी मंत्र नहीं चल सक्ता.

पिता, सौतेली माता, मित्र और आज्ञाकारी भृत्य जीवन सबके साथ उसका शील-निर्वाह उत्तम कोटि का है। जिस पिता ने उसकी

सौतेली माता के बहकाने पर उसे निर्वासित किया था, वही उसकी मृत्यु पर विलाप करता है :

हा ! रणधीर ! प्राण जीवन ! आज्ञाकारी ! शीलसिंधु बेटा ! ऐसे अमोघ बली होकर सदा मेरी आज्ञा में रहते थे, मेरे डर से थर थर काँपते थे× × × × × × × मेरी आज्ञा से प्रसन्न होते थे, अपनी सौतेली मा को निज माता से बढ़कर मान्ते थे .

जीवन तो अपने स्वामी के वियोग में संसार-त्यागी बन जाता है। वह रणधीर सिंह को तपस्वी समझता था। सुखबासीलाल को उसने चेतावनी दी थी :

रणधीर सिंह तपस्वी था उस्का माल कच्चे पारे की तरह तुमको कभी नहीं पचेगा .

वह सदाचारी व्यक्तियों का आदर करता था, परंतु सुखबासीलाल जैसे धूर्त और बेईमानों पर दया करना नहीं जानता था। उसके चरित्र में दृढ़ता थी, सरोजनी के प्रेम-निवेदनों की उसने बड़ी दृढ़ता से अवहेलना की।

परंतु शक्ति, शील और सौन्दर्य की अपेक्षा कहीं अधिक रणधीर सिंह में नीतिमत्ता का प्रभाव है। रिपुदमन जब उससे मित्रता करना चाहता है तब पहले तो वह जैसे आनाकानी करता सा दिखाई देता है, वह स्पष्ट कहता है :

संसार में किसी तरह के प्रयोजन बिना कोई किसी काम में प्रवृत्त नहीं होता, पर जो लोग लौकिक चतुर हैं, वे आदि में दूसरे से मिल्ती बार अपना कुछ प्रयोजन नहीं जताते, प्रीति हुए पीछे दूसरे पर सब तरह का बोझा डालकर अपना प्रयोजन प्रगट करते हैं, उस्समय संकोच में आकर या तो दूसरे को उनका प्रयोजन सिद्ध करना पड़ता है या दोनों में परस्पर बिगाड़ हो जाता है . ऐसे संकोच अथवा बिगाड़ होनें के बदले आदि में प्रीति करनें वाले का प्रयोजन समझ लिया जाय, और उस्का

काम हो सके तो उस्के कहनें से पहले कर दिया जाय, न हो सके तो उस्को पीछे के लिये धोखे में न रक्खा जाय; ये बात मेरी राह में अच्छी हैं.

परंतु जब रिपुदमन आग्रह करता है कि उसे केवल उसकी प्रीति चाहिये, उसका अन्य कोई प्रयोजन नहीं है तो वह उसकी मित्रता स्वीकार कर लेता है परंतु फिर भी उसे ठोंक बजाकर समझ लेना चाहता है कि वह कैसा व्यक्ति है। वह मन में सोचता है :

जब इनसे प्रीति करनी ठैरी तो पहले इन्का सुभाव जान्ना चाहिये क्योंकि जिस्का सुभाव मिल्ता है उस्से उसको प्रीति होती है. आज इनके आगे हँसी चोहल की बातें कर, गानें की चर्चा छेड़, शास्त्र का प्रसंग ला, इनके मन की रुचि परख लें.

इस परीक्षा में वह रिपुदमन को अपने से भी अधिक नीतिवान् और सतर्क पाता है, क्योंकि सरोजनी से बात करनेवाले व्यक्ति का पता लगाने में जब उसे धोखा हो जाता है और चौबेजी को ही वह दोषी समझ लेता है तब रिपुदमन की प्रेरणा से वह फिर से उखाड़ पछाड़ करके ठीक बात का पता लगाता है। इसके लिए वह रिपुदमन का कृतज्ञ होता है और आज के न्याय से प्रसन्न होकर कहता है :

शरीर के सुख से मन का सुख बिल्कुल अलग है. मन के सुख बिना शरीर के सुख कुछ काम नहीं आते. शरीर के दुख से मन व्याकुल होय तो शरीर के सुख से मन को संतोष आ जाता है परंतु शरीर के सुख से मन सुखी नहीं होता. मन सब बातों में शरीर का सहायक है परंतु मन की शक्ति से (जिस्में शरीर नाम मात्र सहायक हो) आज के इन्साफ़ का सा कोई अलौकिक काम बन जाता है तब मन को असली सुख होता है और इस्के आगे शरीर का सुख कुछ नहीं जचता.

रणधीर सिंह की नीतिमत्ता का इससे भी उत्कृष्ट उदाहरण उस समय प्राप्त होता है जब प्रेममोहिनी और उसकी सखियाँ उसे विश्राम

करने के लिए निमंत्रित करके अपना सब समाचार सुनाने का लोभ देती हैं। उस समय वह उनसे अलग होने की इच्छा से दो टूक जवाब देता है:

न हमको किसी का डर न किसी के चरित्र जान्ने की इच्छा. हम कभी स्त्री के बचन पर नहीं चले हमको क्षमा करो.

और जब सखियाँ अनुनय-विनय और छल-कपट से रणधीर सिंह को प्रेममोहिनी के प्रति अनुरक्त कराने के लिए किसी बहाने से चली जाती हैं और प्रेममोहिनी अनेक वाक् कौशल से अपना प्रेम प्रकट करती है तब वह सोचता है :

इस्की कल्पलता सी बाणी से प्रेम सुगन्धित पुष्प तो जरूर झड़ते हैं परंतु इस्के आगे से हटकर इस्की परीक्षा लेनी चाहिये.

और परीक्षा लेने के लिए उसे झिड़क कर वह एक वृक्ष की ओट में खड़ा होकर उसका प्रलाप सुनता और प्रेम-चेष्टाओं का निरीक्षण करता है और जब उसे उसके निष्कपट प्रेम का पूर्ण प्रमाण मिल जाता है तभी उससे प्रेम करता है।

रणधीर सिंह की इस छोटी अवस्था में इतनी अधिक नीतिमत्ता और सतर्कता कुछ अस्वाभाविक सी जान पड़ती है। उसकी सारी नीतिमत्ता पर शेक्सपीयर के 'हैमलेट' नाटक के वृद्ध नीतिज्ञ पोलोनियस और 'टेम्पेस्ट' के प्रास्पेरो की छाया स्पष्ट दिखाई पड़ती है। पोलोनियस ने अपने पुत्र लायरटीज़ को फ्रांस की यात्रा करते समय कुछ नीत्युपदेश किया था जिसका पालन लायरटीज़ ने तो संभवतः नहीं किया था परंतु रणधीर ने अच्छी तरह से किया। उसी प्रकार प्रास्पेरो अपनी पुत्री और उसके प्रेमी के प्रेम की परीक्षा के लिए एक वृक्ष की आड़ में छिपकर उनके प्रेम-संलाप सुनता था और उनके सच्चे प्रेम का प्रमाण पाकर ही उसने दोनों को विवाह-सूत्र में बँधने की अनुमति दी परंतु यहाँ तो रणधीर सिंह स्वयं प्रेममोहिनी के प्रेम की परीक्षा लेता है। नीतिमत्ता एक अच्छा गुण है, परंतु रणधीर सिंह जैसे एक शील, शक्ति, सौन्दर्य से युक्त

नवयुवक में वह सीमा को पार कर गई है इसी कारण वह अस्वाभाविक हो उठी है। 'परीक्षागुरु' में भी लाला श्रीनिवास दास ने सावधानी और सतर्कता की श्रेष्ठतम गुणों में गणना की है, परंतु रणधीर की इतनी अधिक सतर्कता एक राजपूती आन, बान, शान वाले व्यक्ति में शोभा नहीं देती। सच तो यह है कि नीतिमत्ता के प्रीति लेखक के विशेष आग्रह ने ही रणधीर सिंह को इतना अधिक सावधान और सतर्क बना दिया कि वह अस्वाभाविक सा दिखाई पड़ने लगा है।

मित्रता और प्रेम के सम्बन्ध में यह सतर्कता और सावधानी जहाँ अस्वाभाविक सी जान पड़ती है वहाँ अपने कर्तव्यों के प्रति उसकी सावधानी और सतर्कता उसकी बुद्धिमत्ता का द्योतक है। उसे विद्या का व्यसन है और रिपुदमन जैसे मित्र के आ जाने पर भी वह नियमित विद्याभ्यास नहीं छोड़ता और पंडित सोमदत्त से प्रश्न कर करके ज्ञान और नीति की शिक्षा प्राप्त करता है। चौबे जी से परिहास की बातें करने में कुछ समय नष्ट हुआ उसका उसे पश्चाताप होता है कि :

देखो आज हँसी हँसी की बातों में इतना समय वृथा चला गया. इतनी देर विद्या पढ़नें में मन लगाते तो कितना लाभ होता. कालिदास और भवभूत्यादि कवियों की आयु साधारण लोगों से अधिक न थी, परंतु वे समय की महिमा जान्ते थे, इस कारण उनका नाम आज तक अमर है.

परंतु ऐसे सतर्क और सावधान व्यक्ति से भी एक भूल हो ही गई जिसका बहुत बड़ा मूल्य उसे और उसके मित्रों को चुकाना पड़ा। स्वयम्बर-सभा में सरोजनी को नाचते और गाते देखकर रणधीर सिंह को सहसा स्मरण हो आता है कि उसने पिछले दिन के बखेड़े में सरोजनी को कुछ पुरस्कार नहीं दिया और पिछले दिन की भूल का परिमार्जन करने के लिए स्थान और काल की बात सोचे बिना ही वह अपने गले से मोतियों की माला निकाल कर सरोजनी को देता है। उसके इस

कार्य को स्वयं रिपुदमन भी अच्छा नहीं समझता और जब सूरत के महाराज ने कहा:

कहो ये इस काम से कलंकी हुआ कि नहीं ?

तो रिपुदमन को भी विवश होकर कहना पड़ा :

कलंकी तो चंद्रमा भी है, मैं इतने अंश में रणधीरसिंह की बड़ाई नहीं करता.

परंतु उसे कलंक ही मात्र लगा हो ऐसी बात नहीं, इसी एक छोटी सी घटना ने भविष्य की सभी दुखदं घटनाओं का बीज बोया। उसके इसी कार्य से अपमानित अनुभव कर सब राजा उसके विरुद्ध हो जाते हैं और इसके फलस्वरूप जो युद्ध होता है उसमें रिपुदमन और रणधीर की मृत्यु होती है और उन्हीं के वियोग में प्रेममोहिनी और पाटनपति का भी अंत होता है।

रणधीर सिंह की अपेक्षा रिपुदमन अधिक गम्भीर और सरल है। वह रूपवान्, गुणवान्, शीलवान् और वीर योद्धा है। राजाओं की संपूर्ण सेना से वह अकेले अपनी सेना ले युद्ध करता है। जीवन उसकी वीरता का वर्णन करता है :

रिपुदमन की बीरता देखकर मैं तो चकित हो गया. आपके लिए वो बीर अपनें मरनें का डर छोड़कर लड़ता है. उस्के हात से कितनेक राजा और सेनापति मारे गए उस्के वेग से बैरी की सेना काई सी फटती चली जाती है, पहाड़ से हाथियों पर उस्की तरवार बिजली सी गिरती—

परंतु उसकी वीरता से कहीं बढ़कर उसकी मित्रवत्सलता है जिसके कारण वह अकेले जान पर खेलकर अपने मित्र की रक्षा करता है। मित्र के लिए वह पिता से भी कह बैठता है:

मैंने आज तक आपकी आज्ञा बिना कभी किसी काम का मनोर्थ भी नहीं किया और आगे को आपकी आज्ञा पालन करने का निश्चय बिचार है परंतु जिस विषय में आज्ञा न निभ सके उस्में प्रथम ही

आपको आज्ञा देनी मुनासिब नहीं . आप जान्ते हैं कि मन अपनी पूर्ति हुए बिना किसी के भय अथवा लिहाज़ से नहीं बदल सक्ता .

रणधीर जब उसकी परीक्षा लेता है तब उसे आश्चर्य सा होता है कि

इनके मन का भेद लेने वास्ते मैंनें ये उपाय किए थे परंतु इन्को सब बातों में एक सा पाया .

वह रणधीर का योग्य सखा है, उसमें रणधीर के समान ही नीतिमत्ता और बुद्धिमानी है। रणधीर कहीं कहीं धोखा भी खा जाते हैं परंतु रिपुदमन सर्वत्र सतर्क और सावधान रहता है। मित्र का रहस्य जानते हुए भी वह अपने पिता पर प्रकट नहीं करता क्योंकि मित्र से उसे रहस्य प्रकट करने की अनुमति नहीं मिली। वह रणधीर का योग्य सखा और प्रेममोहिनी का योग्य सहोदर है।

नाटक की नायिका प्रेममोहिनी का चरित्र भी नाटककार ने बड़े कौशल से चित्रित किया है। उसकी अनुपम सुंदरता का परिचय तो प्रारंभ में ही चम्पा और मालती के वार्तालाप से मिल जाता है। स्वयम्बर-सभा के लिए सूरतपति ने प्रेममोहिनी की जो प्रतिमा बनवाई है उसे देखकर चम्पा मुग्ध भाव से चित्रकार की प्रशंसा करती हुई कह उठती है :

सखी ! इस्का रचनेंवाला ब्रह्मा से क्या कम है ! इसकी लाज भरी चितवन, रस भरे होट और हास्य भरे कपोल कैसे सुहावनें लगते हैं !!

तब मालती कहती है:

बस बहन ! क्षमा करो, तुमारी परख मैंनें देख ली, तुम इसकी इतनी बड़ाई करती हो पर मुझको तो प्रेममोहिनी के आगे ये कुछ भी नहीं जचती. उसको दैव नें अनुपम बनाया है उसके सुभाव की लायकी और चतुराई तो अलग रही, उसके मुख की ज्योति पल पल में चंद्रकला सी बढ़ती है, इसके शरीर की लावण्यता (के लावण्य) से एक एक गहने के, तीन

तीन, चार चार रूप दिखाई देते हैं, उसके शरीर की सुगंधि से भौंरे मतवाले होकर गूँजते हैं . सो इसमें कहाँ से आवेंगे ?

नाटकों की परम्परा के अनुसार प्रेममोहिनी भी अनुपम रूपवती है और परम्परा के अनुसार वह भी नायक के रूप-गुण की प्रशंसा सुनकर मोहित होती है और उसके लिए वन-उपवन में भटकती फिरती है, परंतु साथ ही वह बुद्धिमती है और नीति-पथ का अनुसरण करने का प्रयत्न करती है। अपनी सखियों की बातचीत के बीच में वह जाना मुनासिब नहीं समझती क्योंकि यह कार्य नीति-विरुद्ध है, परंतु फिर भी यौवन के स्वभाव से विवश हो अपने स्वयम्बर की चर्चा करती हुई दोनों सखियों की बात वह छिपकर सुनती है। मालती द्वारा रणधीर के रूप-गुण की चर्चा सुनकर उसके हृदय में एक हलचल सी मच जाती है, परंतु वह बुद्धिमती नायिका जानती है कि वह पराधीन है, पिता की इच्छा से उसे चलना है, इसी कारण उन बातों के सुनने का उसे दुःख है। वह मन में सोचती है:

ये बातें मैंनें क्यों सुनी ! मनुष्य का मन एक सरोवर के समान है, जैसे सरोवर में तारे, आकाश, चंद्रमा, वृक्ष और पर्वतादिक की अनेक परिछाहीं पड़ती हैं, इसी तरह मनुष्य के मन में भी अनेक बातों का ध्यान बना रहता है; और जैसे सरोवर मैं एक कंकरी डालनें से वे परछाहीं बिगड़ जाती हैं इसी तरह मनुष्य के मन में भी किसी बात का नया बिचार आनें से पहले सब बिचारों में हलचल पड़ जाती है; हा ! ये सब जाननें का दुख है, जो इस बात की भनक मेरे कान तक न पहुँची होती, तो मुझको इस पंचायत से क्या काम था .

उसके हृदय में एक संघर्ष की सृष्टि होती है। एक ओर तो रणधीर के रूप-गुण की प्रशंसा सुन वह उसपर आकृष्ट होती है दूसरी ओर अपनी पराधीनता के बोध से संकुचित होती है। मालती जब उसका रहस्य समझकर कहती है:

मुझको नहीं मालुम था कि तुमारे मन को भी उस चंद्रमा ने "चंद्र-कांति मणि" बना लिया .

तब वह लज्जित होकर अपना संघर्ष प्रकट करती है :

नहीं सखी मैं मोहित नहीं हुई, जैसे दूज के चंद्रमा को संसार "पुण्य दर्शन" समझ कर देखता है, तैसे रणधीर सिंह को एक बार देखनें की मेरे मन में इच्छा है, परंतु मैं सुभाव की परीक्षा हुए बिना प्रीति नहीं किया चाहती; क्योंकि गुण की प्रीति के समान रूप की प्रीति मन में नहीं होती केवल आँखों में रहती है, और रूप घटनें अथवा उस्से अधिक मिलनें पर वो तत्काल घट जाती है .

वह केवल रूप ही नहीं चाहती गुण भी चाहती है, फिर भी रणधीर सिंह के प्रति उसके हृदय में पूर्वानुराग का उदय अवश्य हो गया, इसी कारण वह रणधीर के देखने का प्रयत्न करती है और जब पहली बार उसे देख नहीं पाती तो सम्भवतः उसकी उत्कंठा और बढ़ जाती है । स्वयम्बर-सभा में रणधीर की निर्भीकता और कौशल देख उसे बिना पहचाने वह उससे प्रेम करने लगती है । दूसरी ओर रणधीर के रूप-गुण की प्रशंसा सुन उसके हृदय में पहला प्रेम था ही, अस्तु इस दुविधा में कि जिसके रूप-गुण की प्रशंसा पहले सुनी थी उस रणधीर से प्रेम करे, अथवा प्रथम दर्शन में ही मुग्ध कर देनेवाले इस शूरवीर से, वह कह उठती है:

आज समुद्र ने अपनी मर्जादा छोड़ दी, सूर्य चंद्रमा की चाल बदल गई, अग्नि में दाहक शक्ति नहीं रही, पवन की वाहक शक्ति जाती रही .

मालती उसे सुझाती है कि हो सकता है ये दोनों व्यक्ति एक ही हों और प्रेममोहिनी इसका विश्वास करके प्रसन्न हो जाती है । फिर तो उसका प्रेम उमड़ कर सभी मर्यादाएँ भंग कर देती है । प्रथम दर्शन से पूर्व ही पूर्वानुराग उसके अंतर को विकल कर चुका था, अब वह विकलता सीमा पार कर उसे अपने प्रियतम की खोज के लिए प्रेरित

करता है और वह हार खोजने के बहाने नजर बाग में पहुँचती है। उसका रहस्य सखियों से छिपा नहीं रह पाता। मालती कह उठती है :

मेरे जान तो तुम हार ढूँड़ने का मिस करके रणधीरसिंह को ढूँड़ने यहाँ आई हो.

और प्रेममोहिनी के पूछने पर कि तूने यह बात कैसे जानी वह कहती है:

इस समय तुम पत्तों की आहट सुनकर चारों तरफ़ देखने लगती हो.

प्रेममोहिनी को स्वीकार करने के अतिरिक्त और कोई चारा ही नहीं। उसे स्वयं इसका आश्चर्य है कि उसकी प्रकृति एकाएक कैसे बदल गई, वह नीतिवती बुद्धिमती होकर भी कैसे अपना धैर्य खो बैठी। वह स्वयं सोचती है:

मेरा सुभाव एक संग कैसे बदल गया? प्रेम की वर्षा से अनुराग की 'नदी' पल पल में बढ़ती है, तरह तरह के मनोर्थ 'भंवर' और मिलाप की तरंगें 'लहर' के समान उठ रही हैं, कुल मर्जाद के बृक्ष बिना परिश्रम बह गए, धीरज की नाव हात नहीं आती, इंद्रियाँ 'परदेशी' की भाँत दूर हुई जाती हैं, उस शोभा 'समुद्र' से मिले बिना इस (नदी) के शांत होने का कोई उपाय नहीं दिखाई देता. हाय ये नदी रुकने से पल, पल में दुगनी होती है.

प्रेम के इसी अप्रतिहत वेग के कारण रणधीर और प्रेममोहिनी के प्रथम मिलन के समय रणधीर की रुक्षता के विपरीत प्रेममोहिनी का कातर प्रेम-निवेदन अस्वाभाविक नहीं जान पड़ता। जब वह व्याकुल होकर कहती है:

हे जीवितेश्वर आपके वियोग से मैं प्राण छोड़ती हूँ पर आपके चरण मुझसे नहीं छोड़े जाते. मैंनें जब से आपका नाम सुना मन बचन कर्म से आपको स्वामी समझा, आपके सिवाय कभी किसी पुरुष को पुरुष भी समझा हो तो सूर्य चंद्रमा साक्षी हैं. आपनें मुझको त्याग दिया परंतु

आपकी तरफ से मुझको कुछ खेद न हुआ क्योंकि पति को स्त्री पर सब तरह का अधिकार होता है. हा ! इस अभागी देह से आपकी कुछ सेवा न बनी ये बात मेरे मन में खटकती है, अच्छा अब भगवान से ये प्रार्थना है कि जो मेरा दूसरा जन्म होय तो आपकी दासी होकर जन्म सफल—
(रुक गई)

तब रणधीर सिंह का भी हृदय पिघल उठता है और अपनी रुक्षता पर पश्चाताप करता हुआ वह उसका सच्चा प्रेमी बन जाता है।

प्रेममोहिनी की प्रथम मिलन की यह कातरता सहसा द्वितीय मिलन की प्रगल्भता में परिणत हो जाती है। रणधीर द्वारा प्रेमपत्र लिखवा कर उसी को उसे पास रखने को देकर वह अपनी चतुरता का परिचय देती है जो एक रीतिकालीन नायिका को ही शोभा देता है। यह प्रगल्भता सचमुच ही अस्वाभाविक जान पड़ती यदि इसमें पीछे दो सौ वर्षों तक व्याप्त रीतिकालीन काव्य की भूमिका न होती। कालि-दास (कालिदास हजारा के संग्रहकर्त्ता) की नायिका की प्रथम समागम में ही प्रगल्भता देखकर जब उसके प्रीतम को कुछ संदेह होने लगता है तब वह चतुर नायिका देखिए किस प्रकार उसका संदेह मिटाती है :

प्रथम समागम के औसर नवेली बाल,
सकल कलानि पिय प्यारे को रिझायो है।
देख चतुराई मन सोच भयो प्रीतम के,
लखि पर नारि मन संभ्रम भुलायो है॥
कालिदास ताही समै निपट प्रबीन तिया,
काजर ले भीतिहू मैं चित्रक बनायो है।
व्यात लिखी सिंहनी निकट गजराज लिख्यो,
योनि से निकसि छौना मस्तक पै आयो है॥

रीतिकालीन नायिका की प्रतिनिधि-स्वरूपा प्रेममोहिनी की प्रगल्भता इसीलिए आश्चर्यजनक नहीं जान पड़ती।

प्रेममोहिनी की प्रेम की प्रगल्भता के साथ ही प्रेम की प्रौढ़ता भी कुछ काम आश्चर्यजनक नहीं है क्योंकि वह शीघ्र ही रणधीर के लिए अपने पिता से आग्रह और अनुरोध करती है और रणधीर की मृत्यु के साथ ही स्वयं भी अपना प्राण त्याग देती है। प्रेममोहिनी के प्रेम का विकास इतने वेग से और इतने कम समय में हुआ है कि सहसा आश्चर्य होता है कि पूर्वानुराग से लेकर मृत्यु तक प्रेम का पूरा प्रसार इतने अल्प समय में संभव कैसे हुआ। परंतु नाटक में यह देखने का अवकाश ही कहाँ है। घटनाएँ इतनी वेग से आगे बढ़ती हैं और कथा का अंत इतने अप्रत्याशित ढंग से होता है कि प्रेममोहिनी के प्रेम का उदय, विकास और अंत अचानक ही घटित हो जाता है। इसीलिए प्रेममोहिनी के चरित्र का पिछला भाग उतना स्पष्ट और स्वाभाविक नहीं बन पड़ा है।

रणधीर, प्रेममोहिनी और रिपुदमन के अतिरिक्त चौबे जी, सुखबासी-लाल, जीवन, नाथूराम और सूरतपति का चरित्र भी स्पष्ट रेखाओं में बड़ी निपुणता से चित्रित हुआ है। ये सभी चरित्र प्रकार विशेष (Types) हैं, व्यक्ति नहीं और इनके चित्रण में लेखक के सूक्ष्म निरीक्षण और लौकिक ज्ञान का पता चलता है। इस नाटक के सभी चरित्रों में नीति-मत्ता और लौकिक ज्ञान का प्रकाश है। जीवन भृत्य होकर भी नीति-वान् है। जब रणधीर सिंह स्वयंबर-सभा से हताश सा होकर लौटता है और फिर सभा में जाने की इच्छा रहते हुए भी केवल इसलिए नहीं जाना चाहता कि उसके पास सूरतपति का निमंत्रण नहीं आया उस समय जीवन ही उसे बताता है कि सब राजाओं के निमंत्रण में आपका भी निमंत्रण हो गया और इसीलिए वह निस्संकोच स्वयंबर-सभा में जाता है। फिर रिपुदमन से जब सभी राजाओं का युद्ध हो रहा था उस समय रणधीरसिंह को जीवन जाने देना नहीं चाहता, परंतु जब वह कर्तव्य की दुहाई देकर पूछता है कि क्या

ऐसे अवसर पर मेरा मित्र की सहायता के लिए न जाना उचित है तब जीवन उसे रोक नहीं पाता। उसका कर्तव्य-ज्ञान बहुत ही उत्कृष्ट कोटि का है। इसी प्रकार सुखबासीलाल की धूर्तता, चौबेजी का सरल विनोद और नाथूराम का काइयाँपन सभी इस नाटक में अपूर्व हैं।

नाटकत्व की दृष्टि से 'रणधीर और प्रेममोहिनी' में आदर्शवाद और नीतिवाद परम्परावाद और कौतुकवाद का अद्भुत सम्मिश्रण है। एक ओर रणधीर सिंह और रिपुदमन आदर्श योद्धा, अपूर्व रूपवान् और नीतिवान् हैं वहाँ उनमें कौतुकप्रियता भी कुछ कम नहीं है। पूरे नाटक में रीतिकालीन छेड़छाड़ और कौतुकप्रियता का एक ऐसा वातावरण है जिसे आज के पाठक समझ नहीं सकेंगे। रिपुदमन के प्राणों की रक्षा कर जब रणधीर सिंह जाने लगता है तब रिपुदमन को छेड़छाड़ की सूझती है। वह सोचता है:

मेरे मन में इस वीर से प्रीति करने की बड़ी चाहना है पर ऐसे सज्जन खुशामद की बातों से कभी प्रसन्न नहीं होते, इस्कारण पहले इनसे छेड़छाड़ की बातें करूँ .

यह छेड़छाड़ और कौतुकपूर्ण वार्तालाप सिंह के पंजों की छाया में दो अपरिचित व्यक्तियों में कुछ अद्भुत सा जान पड़ता है इसी प्रकार रणधीर द्वारा नए मित्र के लिए यह सोचना :

जब इनसे प्रीति करनी ठैरी तो पहले इन्का सुभाव जान्ना चाहिये क्योंकि जिस्से जिस्का सुभाव मिलता है उस्से उसको प्रीति होती है . आज इनके आगे हँसी चोहल की बातें कर, गाने की चर्चा छेड़, शास्त्र का प्रसंग ला, इनके मन की रुचि परख लें .

भी विचित्र सा जान पड़ता है। परंतु इससे भी विचित्र है रणधीर और प्रेममोहिनी के प्रथम प्रेम-मिलन का प्रथम सम्भाषण। तृतीय अंक का प्रथम गर्भांक देखिए :

प्रेममोहिनी (मुस्कराती हुई, लाज से नीची आँख करके) प्यारे प्राणनाथ ! मुझको अपने प्रिय मित्र के नाम एक प्रेम-पत्रिका लिखानी है, आपको अवकाश हो तो कृपा करके लिख दीजिये . आप सा चतुर लिखने वाला मुझे कहाँ मिलेगा ?

रणधीर (अचरज से, मन में) इसने ये कैसी आश्चर्य की बात कही . मैं इसकी मीठी बातों में आकर ठगा तो नहीं गया? घड़ी भर पहले ये मेरे वियोग से शरीर छोड़ती थी . अब ये मुझसे अपने मित्र के नाम चिठ्ठी लिखाती है . ईश्वर जाने इसकी बातों में क्या क्या भेद होगा . (प्रगट) अच्छा तुम अपना प्रयोजन बता दो .

प्रेम०—प्रेम स्वाभाविक प्रेम, सच्चा प्रेम, अचल प्रेम और कुछ नहीं .

रण०—हमको तुम्हारी तरह प्रेम जताना नहीं आता, पर तुम्हारे लिये पुस्तकों के बल से कुछ लिखते हैं . (प्रेममोहिनी ने दवात कलम कागज ला दिया .)

रण०—(लिखकर) सुनो—

"प्रेम जल की वर्षा से प्यासे पपहिये की प्यास हरनेवाले जलधर, प्रेम-प्रफुल्लित पुष्पों की सुगंधि से संसार को सुगंधित करनेवाले तरुवर, प्रेम-भूमि में वियोग की वायु झेलकर अचल रहनेवाले भूधर प्रेम-पियूष के सिंचने से मुरझाई लता को हरे करनेवाले हिमकर ! आपका चंद्रमुख निहारने की मेरे नयन-चकोरों को बान पड़ गई है, इस कारण पल भर के वियोग से ये व्याकुल हो जाते हैं . आपको ऐसा चुम्बक कहाँ मिला जिसके बल से आप दूर बैठकर मेरा मन खैंचते हो . कोई प्राणी बंधन में रहने से प्रसन्न नहीं होता पर मैं आपके प्रीति-जाल में प्रसन्न हूँ . आपने ये विद्या कहाँ सीखी ? जो हमको सिखा दो तो हम भी आपके ऊपर आजमायें . संसार के विष वृक्ष में एक प्रीति ही अमृत फल है . संसार-सागर के पैरने वालों में थके हुओं को एक प्रीति ही सहारा देने

वाली नौका है . संसार की पुष्प-बाटिका में ये ही सज्जनों के सुगंध लेने लायक है . बहुत क्या लिखें बिचार कर देखो तो संसार के सब कामों का ये ही मूल कारण ठैरता है ."

प्रेम०—आपने मेरे कहने से इतना श्रम किया, इसलिये मैं आपका बहुत उपकार मानती हूँ .

रण०—मैं तुम्हारे मित्र को नहीं जानता, इस कारण ये चिठी अच्छी तरह नहीं लिखी गई .

प्रे०—आप ऐसी बात मत कहो ? आपसे मेरा कौन सी बात का अंतर है . आपने ये चिठी बहुत अच्छी लिखी . अब मेरे कहने से आप ही अपने पास रक्खो .

रण०—क्यों, क्या ये तुमको अच्छी नहीं लगी ?

प्रेम०—अच्छी लगी, जब तो आपको देती हूँ .

रण०—ये तुम्हारी है .

प्रेम०—ना ना आपकी है . मेरे कहने से आपने लिखी इस वास्ते आपका बड़ा उपकार हुआ, पर कुछ और भी प्रेम-भाव से लिखी गई होती तो अच्छा था .

रण०—कहो तो दूसरी लिख दूँ .

प्रेम०—अच्छा, जब आपकी इच्छानुसार लिख जाय तो आप मेरी तरफ़ से पढ़कर अपने पास रखना, मेरे ऊपर आपका बड़ा उपकार होगा .

रण०—(हँसकर) मैंने अब तुम्हारा भाव समझा, तुम मेरे हाथ से मेरे ऊपर तीर छुड़ाया चाहती हो . (प्रेममोहिनी ने हँस कर सिर झुका लिया .)

संसार के किसी भी कोने में दो प्रेमियों के प्रथम-मिलन में ऐसा प्रेम-संभाषण नहीं सुना गया । भारतेन्दु हरिश्चंद्र की 'चंद्रावली' नाटिका में भी इस प्रकार की कौतुकप्रियता और चतुराई के दर्शन होते हैं ।

रीतिकालीन काव्य की परंपरा में पला हुआ भारतेन्दु युग इस प्रकार की छेड़छाड़, चुहलबाजी, कौतुकप्रियता और चतुराई का युग था। भारतेन्दु और उनके समकालीन कवियों के काव्य में इस प्रकार की चुहलबाजी और चतुराई के अनेक उदाहरण हैं। मुंशी विश्वेश्वर प्रसाद की 'चुरिहारिन लीला', (कवि-वचन-सुधा, नवम्बर १८७० ई०) भारतेन्दु की 'देवी छद्म लीला' तथा 'रानी छद्म-लीला' में इसी प्रकार की कौतुक-प्रियता और चतुराई मिलती है। भारतेन्दु का एक गीत देखिए कैसी चुहलबाजी और कौतुकप्रियता से पूर्ण है:

तुम सुनो सहेली सँग की सखी सयानी।
पिय प्यारे की मैं कहँ लौं कहौं कहानी॥
एक दिन मेरे घर जोगी बनकर आये।
सिर जटा बढ़ाये अंग भभूत लगाये॥
चढ़ सिढ़ी नाम लै हर को अलख जगाये।
मैं भिच्छा ले गई तब मुख चूमि लुभाये॥
बोले भिच्छा थी मुझे यही मेरी रानी।
पिय प्यारे की मैं कह लौं कहौं कहानी॥

यह छेड़छाड़, यह चतुराई उर्दू कविता की देन है। पारसी थियेटर्स के नाटकों में भी इस छेड़छाड़ की कमी नहीं है। रीतिकाल में सम्भवतः फारसी साहित्य के प्रभाव से हिन्दी कविता में इसका प्रवेश हो गया था जो भारतेन्दु काल में विशेष रूप से प्रकट हुआ। 'रणधीर और प्रेममोहिनी' में लेखक की कौतुकप्रियता का एक उदाहरण प्रेममोहिनी के प्रेम में भी मिलता है। रणधीर सिंह के रूप-गुण की प्रशंसा सुनकर प्रेममोहिनी उसे अपने हृदय में स्थान देती है और उस 'पुण्यदर्शन' को देखने के लिए सखियों के साथ उपवन में भटकती भी है, परंतु उसके दर्शन उसे नहीं होते। उसके दर्शन प्रथम बार उसे तब होते हैं जब स्वयंबर-सभा में वह

सेनापति तथा अन्य राजाओं का मान-मर्दन करता है। उस समय प्रेम-मोहिनी उसे रणधीर सिंह के रूप में नहीं जानती और प्रथम दर्शन में ही उससे प्रेम करने लगती है। परंतु जिसका रूप-गुण सुनकर हृदय में स्थान दिया और प्रथम दर्शन में जिसकी छबि अपने नेत्रों में भर ली वे दोनों एक ही व्यक्ति हैं इसका ज्ञान न होने से प्रेममोहिनी एक उलझन में पड़ जाती है जो पाठकों और दर्शकों के लिए एक कौतुक का विषय बन जाता है।

इसी प्रकार चौबेजी की हास-परिहास और चोज भरी बातें भी भारतेन्दु युग की अपनी विशेषता थी। 'हरिश्चंद्र चंद्रिका' में प्रायः प्रत्येक मास 'चोज की बातें' शीर्षक स्तम्भ में छोटे छोटे चुटकुले रहते थे जिनमें विनोद की सामग्री पूर्ण मात्रा में होती थी। इन चोज की बातों में 'चौबे जी' पर प्रायः चुटकुले निकलते रहते थे। दिसम्बर १८७८ में 'चौबे जी' के सम्बंध में दो चोज की बातें प्रकाशित हुई थीं। पहली बात में मथुरा के एक चौबे जी ने किसी संस्कृत पाठशाला के विद्यार्थियों को हिल-हिल झूम-झूम पढ़ते देख किसी पंडित से प्रश्न किया था:

> झुकत झुकत विद्यारथी कहा बूढ़े कहा बार।
> मैं तोहि पूछूँ हे सखे, याको कौन बिचार॥

इसके उत्तर में पंडित जी ने बताया था कि:

> आगे समुद अगम्य है अपने बैठ करार।
> रतन लेन को झुकत हैं झिझकत देख अपार॥

दूसरे चुटकुले में कहा गया है कि एक बार मिर्ज़ा राजा जयसिंह ने मथुरा में अब्दुन्नबी खां की मसजिद की ऊँची गुमटी देखकर घोषणा की कि जो इस गुमटी से कूदेगा उसे एक सहस्र मुद्रा पुरस्कार में मिलेंगे। मथुरा के एक चौबे जी ने यह घोषणा सुन अपनी मृतप्राय जरा-जीर्ण

माँ को ला उपस्थित किया कि यह गुमटी से कूदेगी आप मुझे सहस्त्र मुद्रा दें। मिर्ज़ा राजा ने कहा कि इस बूढ़ी के कूदने से पुरस्कार नहीं मिलेगा क्योंकि यह तो गिरते ही मर जायगी। चौबे जी ने कहा कि आप एक आदमी की मौत चाहते हैं और मैं एक सहस्त्र मुद्रा इसीलिए इस बूढ़ी को मरने के लिए ले आया। यह चोज की बात मार्च १८७६ में फिर उद्धृत की गई। जनवरी १८७९ में भी मथुरा के चौबे जी के संबंध में एक चोज की बात प्रकाशित हुई थी कि एक मथुरा का चौबे कहीं बैल पर चढ़ा पूरियाँ खाता चला जाता था। किसी कान्यकुब्ज पंडित ने यह देखकर ठट्ठे से पूछा 'चौबे जी तुम जो चौके में न बैठ बैल पर बैठे पूरियाँ खा रहे हो सो इसका प्रमान क्या है ?'

चौबे जी ने उत्तर दिया 'प्रसिद्ध कौं प्रमान कछु नहीं चाहियतु।'

कान्यकुब्ज पंडित बोला 'सो क्या ?'

चौबेजी ने कहा 'कि चौका याही के मार्ग सों निकर्यौ है।'

इस बात के सुनते ही वह पंडित हँसकर रह गया।

अस्तु, जान पड़ता है कि भारतेन्दु युग में चोज की बातों का खूब प्रचलन था और सम्भवतः इन चुटकुलों में मथुरा के चौबे प्रधान पात्र थे। 'रणधीर और प्रेममोहिनी' में चौबे जी की चोज की बातें युग की ही देन हैं जिन्हें हास्य रस की अवतारणा के लिए लेखक ने स्थान दिया है।

लेखक ने जान बूझकर नाटक को दुःखांत बनाया है। नाटक के दुःखांत होने की प्रारम्भ से कोई सम्भावना नहीं जान पड़ती। रणधीर-सिंह और रिपुदमन जैसे दो अद्भुत योद्धा और बुद्धिमान् नीतिज्ञ सरलता से राजाओं की सम्मिलित सेना को परास्त कर सकते थे, परंतु नाटक को दुःखांत बनाने के लिए ही रिपुदमन पहले अकेले ही सारी सेना से युद्ध करता दिखाया गया है और उस समय रणधीरसिंह निद्रा में मग्न

पड़ा है और जागने पर भी वह शीघ्र मित्र की सहायता को नहीं दौड़ पड़ता, जीवन से तर्क-वितर्क में लग जाता है और जब उसे रिपुदमन की मृत्यु का समाचार ज्ञात होता है तब शीघ्रता से बिना अपना शस्त्र लिए दौड़ पड़ता है जिसका परिणाम मृत्यु के अतिरिक्त और कुछ हो ही नहीं सकता। रिपुदमन जैसे मरने के लिए ही रणधीर को सूचना दिए बिना अकेले लड़ने को चल पड़ता है। यदि दोनों वीर मिलकर अस्त्र-शस्त्र से सुसज्जित हो युद्ध करते तो उनकी विजय निश्चित थी। फिर सूरतपति ने कैसे अपने इकलौते पुत्र को अकेले लड़कर मर जाने दिया यह बात भी समझ में नहीं आती।

दुःखांत नाटकों के नायक में स्वभावगत स्वच्छंदता और बाहरी परिस्थितियों का संघर्ष जो होना चाहिए वह 'रणधीर और प्रेममोहिनी' नाटक में अवश्य है परंतु बाह्य परिस्थितियों का संघर्ष बहुत कुछ कृत्रिम सा जान पड़ता है। रिपुदमन मित्र होकर भी रणधीर से पूर्णतः परिचित नहीं है क्योंकि रणधीर सिंह ने अपना परिचय तो अवश्य दिया परंतु ऐसी पहेली के रूप में जिसे रिपुदमन समझ नहीं सका। रिपुदमन और रणधीर सिंह की पूरी बातचीत ही एक पहेली है:

रिपुदमन—ये तो चंदन की बड़ाई है जो अपने आसपास के वृक्षों को अपनी बराबर के बना लेता है; भला ये सुखदाई चंदन कौन से बाग की रमणीय भूमि में शोभायमान है (अर्थात् आप कहाँ रहते हैं)

रणधीर—(मन में) अब क्या जवाब दूँ; झूँठ बोलना मुनासिब नहीं और सच कहने में बिगाड़ होता है; (बिचार कर, प्रगट) पाटल की पिछली तिहाई न होने से उसका नाम आपको मालूम होगा.

रिपुदमन—(मन में) इन्के इस बचन का अर्थ इस्समय समझ में नहीं आता, कदाचित बिचारने से आ जाय, पर न आवै तौ भी इन्से पूछना तो मुनासिब नहीं, क्यौंकि इन्को समझा कर कहना होता तो पहले ही लपेट कर क्यौं कहते.

नाटक पढ़ने से यह पता तो नहीं चलता कि रणधीर सिंह के सच कहने में किस बिगाड़ की सम्भावना थी, परंतु पहेली के रूप में परिचय देने से उसे झूठ भी नहीं बोलना पड़ा और नाटक भी लेखक के विचारानुसार दुःखांत हो गया। यदि उसने अपना समझ में आनेवाला परिचय दिया होता तो नाटक सम्भवतः दुःखांत न हो पाता। परंतु उस युग में इस वियोगांत नाटक ने अच्छा प्रभाव डाला। 'सार-सुधानिधि', १ नवम्बर १८८० ई० में इस नाटक की आलोचना करते हुए लिखा गया था:

इसकी रचना प्रणाली से ग्रंथकर्त्ता की बहुदर्शिता और योग्यता का परिचय होता है, प्रथम तो इस नाटक को बियोगांत रखने से साहित्यशास्त्र का पूरा शासन दिखाया है. क्योंकि बहुतों को यह बिश्वास है कि साहित्य द्वारा उपदेश तो क्या होना है, बरन् रस की बातों में और भी लोगों का चित्त बिगड़ जाता है और अंत को लम्पट हो जाते हैं, परंतु यह नहीं जानते कि जब इस की भी शास्त्र संज्ञा है तब इस द्वारा अवश्य शासन होता है। जिन लोगों के (की) समझ में साहित्य का प्रेमाभिषिक्त उपदेश नहीं आता है उनके लिये बियोगान्त काव्य विशेष उपदेशक है, क्योंकि × × × × × × जितना साहित्य अलंकार है वह सब बिप्रलम्भ (बियोग) ही में निःशेषित हुआ है, और श्रृंगार का यावत सुख है, वह सब बिरह ही में दिखाया गया है जिसकी अंतिम दशा मरण है। × × × × × जिसके अंत में श्रृंगार करुणा में परिणत हो चिरकाल तक अपना स्वाभाविक आधिपत्य दर्शकों पर जमाये रहता है, इसी अभिप्राय से यह भी बियोगान्त रक्खा गया है।

शैली की दृष्टि से भी यह नाटक अत्यंत कृत्रिम है। यह सच है कि इसमें पात्रों के अनुरूप ही भाषा का प्रयोग हुआ है, जैसे चौबे जी की ब्रजभाषा, नाथूराम की मारवाड़ी, सुखबासीलाल की फ़ारसी मिश्रित हिन्दुस्तानी तथा अन्य पात्रों की हिन्दी भाषा, परंतु बीच बीच में जो पहेलियाँ, जो चोहलबाजी तथा चतुरई की बातें मिलती हैं वे नाटक की

स्वाभाविकता पर कुठाराघात करनेवाली हैं। फिर लम्बे लम्बे स्वगत भाषण और पृथक् भाषणों के कारण सम्पूर्ण नाटक बहुत ही कृत्रिम हो गया है, परंतु जब हम इस तथ्य पर विचार करते हैं कि यह नाटक उस समय लिखा गया था जब हिन्दी का अपना रंगमंच था ही नहीं, हिन्दी में नाटकों का जन्म हो ही रहा था और इससे पूर्व मौलिक नाटक केवल इने-गिने ही थे तथा उसकी पृष्ठभूमि में दो-ढाई सौ वर्षों का विचित्र मार्ग का अनुयायी रीतिकालीन साहित्य था, तो उसकी कृत्रिमता समझ में आ जाती है। इन कृत्रिमताओं से युक्त भी यह नाटक अपने युग का भूषण है।

उपन्यास

आधुनिक युग में जिस साहित्य-रूप ने शिक्षित जनता पर दिग्विजय प्राप्त किया है, भारतेन्दु युग के आरम्भ में उस साहित्य-रूप का अस्तित्व भी नहीं था। यद्यपि भारतेन्दु इस साहित्य-रूप से अपरिचित नहीं थे और इसके प्रचार और प्रसार की इच्छा उनके मन में बहुत पहले से ही विद्यमान थी, क्योंकि अक्टूबर १८७३ में 'हरिश्चंद्र मैगज़ीन' का प्रारम्भ करते हुए उन्होंने उसके मुखपृष्ठ पर छपवाया था:

Published in connection with the Kavi-Vachan-Sudha, containing articles on literary, scientific, political and religious subjects; antiquities, reviews, dramas, history, novels, poetical selections, gossip, humour and wit, edited by Harish Chandra.

परंतु फिर भी मौलिक उपन्यासों की रचना बहुत देर में हुई। 'भारतेन्दु' की ही प्रेरणा से संस्कृत, बँगला और मराठी उपन्यासों का अनुवाद प्रारम्भ हुआ था। बाबू गदाधरसिंह ने १८७३ में संस्कृत से कादम्बरी

और बँगला से 'दुर्गेशनंदिनी' का अनुवाद प्रस्तुत किया। १८७५ में किसी के पूछने पर भारतेन्दु ने अनुवाद के लिए कुछ पुस्तकों की सूची प्रस्तुत की थी जिसमें फ़ारसी से आईने अकबरी, संस्कृत से राजतरंगिणी, विक्रमचरित्र, ललित विस्तर; यास्क, वात्स्यायन, गौतम आदि के सूत्र और बँगला से विधवार दांते सिसी, नवीन तपस्विनी, कृष्णाकुमारी, दुर्गेशनंदिनी, नवनारी आदि अच्छे अच्छे नाटक और प्रबंध थे। परंतु उनकी इच्छानुसार नाटकों और उपन्यासों का समुचित प्रचार न हो सका इसीलिए राधाकृष्ण दास ने 'नाटकोपन्यास' पाक्षिक पुस्तिका निकालने का विचार किया जिसका विज्ञापन नवम्बर १८७८ के 'हरिश्चंद्र चंद्रिका' में इस प्रकार प्रकाशित हुआ था :

हिन्दी भाषा में नाटक और उपन्यास का सम्पूर्ण रूप से अभाव है विशेष कर के अँगरेजी और बंगभाषा के अनुसार उत्तम नाटक आज तक बहुत ही कम प्रकाशित हुए हैं और उपन्यासों के तो अभी तादृश स्वाद से भी हमारे देश बांधवगण वंचित हैं, इस हेतु ऐसा विचार किया है कि एक पाक्षिक पुस्तिका २० पृष्ठ की हिन्दी भाषा की पूर्वोक्त नाम की प्रचलित हो और इसमें केवल मनोहर उपन्यास और नाटक रहै. अनेक कृतविद्यों ने बँगला और अंगरेजी से अच्छे अच्छे नाटकों और उपन्यासों (नाबेल्स) का अनुवाद करना भी स्वीकार किया है.

परंतु इस प्रकार की पाक्षिक पत्रिका सम्भवतः नहीं निकल सकी, परंतु कृतविद्यों ने अनुवाद अवश्य किया जो 'हरिश्चंद्र चंद्रिका' और 'भारतेन्दु' पत्रिकाओं में धारा प्रवाह प्रकाशित हुआ। साथ ही कुछ अर्द्ध मौलिक कहानियाँ भी पुस्तकाकार प्रकाशित होने लगीं। इन कहानियों को लक्ष्य कर 'हरिश्चंद्र चंद्रिका, मोहन चंद्रिका' सं० १९३८ में 'नाटक वा उपन्यास' शीर्षक लेख में लिखा गया था :

जब से हमारे आधुनिक शिक्षितों की रुचि इधर हुई तबसे इनके लेखक भी बहुत हुए. हम यह नहीं कहते कि उनके लेख रसीले वा

हृदयबेधक नहीं होते, परंतु हमें इतना तो जान पड़ता है कि 'गतानुगतिको लोकः'—इस कहावत के अनुसार सब ही, जिन्हें नाटक क्या चिड़िया होती है वा उपन्यास कितना वजनदार रहता है यह मालूम नहीं, नाटक वा उपन्यास लिखने लगे . वस्तुतः नाटक वा उपन्यासों का आशय यही रहता है कि लोगों को जो उपदेश वा शिक्षा की जाती है, जिसके तरफ़ किसी का ध्यान नहीं जमता, वह इस मिष से और रंगीन बातों से जमाना. परंतु आजकल के नाटक वा उपन्यासों से वह आशय तो बहुत ही कम क्या निकलता है—उलटी और लोगों की विषयासक्ति बढ़ती जाती है .

ऐसे विषयासक्ति बढ़ानेवाले उपन्यासों और अनुवादों के युग में पहला 'वजनदार' मौलिक और सफल उपन्यास लाला श्रीनिवास दास का 'परीक्षागुरु' था । जैसा कि लेखक ने भूमिका में लिखा है:

अब तक नागरी और उर्दू भाषा में अनेक तरह की अच्छी अच्छी पुस्तकें तैयार हो चुकी हैं, परंतु मेरे जान इस रीति से कोई नहीं लिखी गई. इसलिए अपनी भाषा में यह नई चाल की पुस्तक होगी .

'परीक्षागुरु' नई चाल की पुस्तक है, परंतु इसमें नवीनता किस प्रकार की है इसका स्पष्टीकरण भी स्वयं लेखक ने भूमिका में इस प्रकार किया है:

पहलै तो पढ़नेवाले इस पुस्तक मैं सौदागर की दुकान का हाल पढ़ते ही चकरावैंगे क्योंकि अपनी भाषा मैं अब तक वार्ता रूपी जो पुस्तकें लिखी गई हैं उन्मैं अक्सर नायक नायका वगैरे का हाल ठेठ सिलसिलेवार लिखा गया है जैसे 'कोई राजा, बादशाह, सेठ, साहूकार का लड़का था उस्के मन मैं इस बात सै यह रुचि हुई और उस्का यह परिणाम निकला.' ऐसा सिलसिला इस्मैं कुछ भी नहीं मालूम होता .

इससे पूर्व जो उपन्यास लिखे जाते थे वे पुरानी कहानियों के अनुरू राजा और उसकी थीं कई रानियाँ' आदि से प्रारम्भ

होता था, परंतु 'परीक्षागुरु' का प्रारम्भ बड़े ही सुंदर नाटकीय ढंग से एक अंगरेजी सौदागर की दूकान में एकत्र हुए तीन मित्रों के साथ लाला मदनमोहन द्वारा काच की जोड़ी का सौदा करते हुए हुआ है। इस नाटकीयता के प्रवेश से उपन्यास में एक अपूर्वता आ गई है। अपनी इसी नाटकीयता के कारण यह 'रणधीर और प्रेममोहिनी' का सहोदर कहा गया।

यह अपूर्वता और नवीनता लेखक ने अंगरेजी से ली थी और अपनी इस नवीनता के कारण यह उपन्यास अपने युग की सभी रचनाओं से विशिष्ट है। 'परीक्षागुरु' के बाद भी अनेक उपन्यास लिखे गए, परंतु प्रेमचंद से पहले 'परीक्षागुरु' जैसी विशिष्ट रचना हिन्दी में दूसरी नहीं थी। जैसा कि पदुमलाल पुन्नालाल बख्शी ने लिखा है, 'परीक्षागुरु' हिन्दी की एक स्थायी निधि है।

'परीक्षागुरु' एक धनी मानी लाला मदनमोहन के पतन और उद्धार की कहानी है। १९ वीं शताब्दी में लाला मदनमोहन जैसे अमीरों की कमी नहीं थी। 'हरिश्चंद्र चंद्रिका' ज्येष्ठ शुक्ल १९३७ वि० में 'पंच का प्रपंच' शीर्षक स्तम्भ में पंच और चंडूलचाई की बातचीत में उस युग के अमीरों की एक झांकी देखने योग्य है। अमीरों के यहाँ जो पासवान होते हैं जिनकी बातों से अमीर प्रसन्न रहते हैं और जिनसे भले का बुरा और बुरे का भला झट बन जाता है उन्हें चंडूलचाई कहते हैं। पंच महराज चंडूलचाई से पूछते हैं:

क्यौं भाई, तो क्या इनमें (अमीरों में) इतनी भी समझ नहीं है कि ये अपना लाभ नफा देख सकते ?

इसके उत्तर में चंडूलचाई कहता है:

यदि ये ऐसे सच्चे अकलमंद होते तो क्यौं ऐसे काम करते ? क्यौं लोगों को मुँह पर स्तुति और पीठ पर गालियाँ खाते ? क्यौं इन्हें

अक्ल का इतना अजीर्ण होता कि जिसके मारे अपरम्पार द्रव्य के भस्म भी किसी एक कोने में भस्म होते ? हम सरीखे लोगों का गुजारा कैसे चलता ? बात की बात में हाँ और बात ही बात में ना कौन करता ? गरीबों को ऐश व आराम के सुख कैसे मालूम होते ? सीधे भोले इस शब्द का उपयोग मूर्खताबोधक कहाँ होता ? घर वालों को रोने पीटने की क्यों नौबत आती ? अमीर शब्दका अर्थ भी लोगों को कैसे मालूम पड़ता ? इन अमीरों को अक्ल का अजीर्ण था, इसका उल्लेख भारतेन्दु ने भी 'अंधेर नगरी' प्रहसन में किया है । चूरन वाला कहता है:

चूरन खाते लाला लोग । जिनको अकिल अजीरन रोग ।

लाला मदनमोहन भी इसी प्रकार के एक अमीर हैं जिनको अकल का अजीर्ण है और मुंशी चुन्नीलाल, मास्टर शिंभूदयाल आदि 'चंडूलचाइयों' की कृपा से उनका अपरम्पार धन विनष्ट हो रहा है । एक ओर मास्टर शिंभूदयाल का कहना था कि 'अमीरों को ऐश के सिवाय और क्या काम है ?' (पृ० १८३) और पंडित पुरुषोत्तमदास राजनीति का प्रमाण देकर समझाते थे कि:

राजा सुख भोगहिं सदा मंत्री करहिं सम्हार ।
राजकाज बिगरे कछू तो मंत्री सिर भार ।। (पृ० १८४)

दूसरी ओर बिहारी बाबू लाला जी को जुए की आदत दिलाने के लिए किस सफाई से निवेदन करते हैं :

भोजला पहाड़ी पर एक बड़े धनवान् जागीरदार रहते हैं उन्को ताश खेलनें का बड़ा व्यसन है वह सदा बाजी बदकर खेल्ते हैं और मुझको इस खेल के पत्ते ऐसी राह से लगाने आते हैं कि जब खेलैं तब अपनी ही जीत हो, मैंने उन्को कितनी ही बार हरा दिया इसलिये अब वह मुझको नहीं पतियाते परंतु आप चाहैं तो मैं वह खेल आप को सिखा दूँ फिर आप उन्सै निधड़क खेलैं आप हार जायँगे तो वह रकम मैं दूंगा और जीतें तो उस्मैं सै मुझको आधी ही दें . (पृ० २४५–२४६)

एक ओर पंसारी का लड़का हरगोविंद बारह बारह रुपए मूल्य की लखनऊ की बनी टोपियाँ अठारह अठारह रुपए में लाकर लालाजी की प्रशंसा का पात्र बनता है (पृ० १७३), दूसरी ओर हकीम अहमद हुसैन झूठे किस्से गढ़ गढ़ कर एक शीशी अतर के लिए पच्चीस रुपए का नोट प्राप्त करता है । मुंशी चुन्नीलाल और मास्टर शिंभूदयाल तो मिस्टर ब्राइट, मिस्टर रसल और घोड़ों के व्यापारी आग़ा हसन जान से मिलकर दलाली और कमीशन के हज़ारों रुपए स्वयं खाते हैं और लाला जी को दिवालिया बनाते रहते हैं । इस प्रकार लाला मदनमोहन अपने सभासदों की खुशामद की बातों में पड़ पड़कर अपने सच्चे शुभ-चिंतक लाला ब्रजकिशोर से खिंचते जाते हैं और स्वयं दिवालियेपन की ओर गिरते जाते हैं । एक दिन जब सचमुच ही लाला मदनमोहन दिवा-लिया बन गये उस समय उनके सभी खुशामदी मित्र एक एक कर छोड़ जाने लगे । मास्टर शिंभूदयाल को स्कूल में काम बढ़ गया, मुंशी चुन्नी-लाल जाते जाते भी गहनों की पेटी ले जाने की तरकीब सोचते हैं । मित्रों ने अलग रंग बदले । लाला हरदयाल ने तो एक स्वांग ही रच डाला । वह स्वयं तो अपने मित्र को देने के लिए गहनों का कलमदान उठा लाया और एक एक कर सब गहने अपने मित्र को देने लगा परंतु इसी समय उसके पिता ने आकर सब गहने छीन लिए और हरदयाल के साथ ही लाला मदनमोहन को भी अच्छी तरह डाटा । मेरठ के एक मित्र ने दश हजार की दर्शनी हुंडी भेजी परंतु साथ ही एक तार भेजकर हुंडी खड़ी रखवा दी । अन्य मित्रों ने भी इसी प्रकार टालमटोल कर लाला मदनमोहन की सहायता से मुँह मोड़ लिया ।

लाला मदनमोहन की इस बिगड़ी दशा में दो व्यक्तियों ने उसकी पूरी सहायता की । एक तो उसकी पतिव्रता पत्नी थी जिसे उसने अपने खुशामदी मित्रों के साथ ऐश व आराम में बिलकुल ही उपेक्षित बना रखा था और दूसरे लाला ब्रजकिशोर जिन्होंने प्रारंभ से ही उसे सदु-

पदेश देकर सुधारने का प्रयत्न किया था और उसपर विपत्ति आने पर धैर्यपूर्वक उसकी पूरी सहायता कर विपत्ति से उद्धार किया। लाला ब्रजकिशोर एक आदर्श मित्र हैं जिन्होंने तन, मन, धन से अपने उपकारी के पुत्र की रक्षा के लिए मानापमान की कुछ परवाह न कर उसे ठीक रास्ते पर लाने का प्रयत्न किया। वे केवल आदर्श मित्र ही नहीं बड़े ही दूरदर्शी बुद्धिमान् पुरुष हैं और उन्हीं की कार्य-कुशलता से लाला मदनमोहन विशेष क्षति उठाये बिना ही संकट से पार लग गए।

'परीक्षागुरु' का कथानक लेखक ने बड़ी निपुणता से गूँथा है। जहाँ तक घटनाओं के क्रमिक विकास का प्रश्न है, इस उपन्यास का कथानक बहुत सफल नहीं कहा जा सकता और न तो हिन्दी के प्रथम उपन्यास में इस प्रकार के कौशल की आशा ही की जा सकती है, परंतु विविध चरित्रों के उद्घाटन और विविध विषयों के सारभूत तथ्यों और रहस्यों के उद्घाटन के लिए एक श्रृंखलाबद्ध कथानक की कल्पना करना ही उस युग की सबसे बड़ी सफलता थी। लाला मदन-मोहन, लाला ब्रजकिशोर, मुंशी चुन्नीलाल, मास्टर शिंभूदयाल, लाला हरदयाल और लाला हरकिशोर के विशिष्ट चरित्रों के उद्घाटन करने वाले यथार्थवादी वार्तालाप तथा सुख-दुःख, प्रामाणिकता, सावधानी, सज्जनता, भले-बुरे की पहचान जैसे विषयों पर गम्भीर विचार-विमर्श करने वाले संवादों की योजना के लिए एक श्रृंखलाबद्ध कथा की आव-श्यकता थी और उस आवश्यकता की पूर्ति के लिए एक कथा को सूत्रबद्ध करना साधारण कौशल का काम नहीं है। 'परीक्षागुरु' का महत्व उसके कथानक में नहीं उसके विविध चरित्रों के रेखाचित्र उपस्थित करने और उन चरित्रों का पूर्णरूप से उद्घाटन करने के लिए नाटकीय ढंग के यथार्थवादी वार्तालाप उपस्थित करने में है। लाला श्रीनिवास दास के ये रेखाचित्र और नाटकीय ढंग के ये वार्तालाप अद्भुत हैं। उपन्यास के नवें प्रकरण—सभासद—में लाला जी ने मुंशी

चुन्नीलाल, मास्टर शिंभूदयाल, पंडित पुरुषोत्तम दास, हकीम अहमद हुसैन तथा बाबू बैजनाथ का जो रेखाचित्र उपस्थित किया है वह उनके सूक्ष्म मनोवैज्ञानिक विश्लेषण की अद्भुत प्रतिभा का द्योतक है। बालकृष्ण भट्ट ने अपने प्रसिद्ध प्रबंध 'सौ अजान एक सुजान' में अनेक सुंदर रेखाचित्र उपस्थित किए हैं। उदाहरण के लिए सेठ हीराचंद के पुरोहित बसंतराम का एक रेखाचित्र देखिए :

पाठकजन, यह सेठजी के पूज्य पुरोहित के घराने का था। नाम इसका बसंतराम था, पर सब लोग इसे बसंता-बसंता कहा करते थे। नाक फसड़ी, होठ मोटे, आँख घुच्चू-सी, माथा बीच में गड्ढेदार, चेहरा गोल, रंग काला मानों अंजन गिरि का एक टुकड़ा हो। पढ़ना-लिखना तो इसके लिए काला अक्षर भैंस बराबर था। जब यह मा के गर्भ में था तभी इसके बाप ने यमपुर की राह ली। केवल नाम मात्र के ब्राह्मण इन पुरोहितों की पहले तो सृष्टि ही निराली होती है कि पुरोहिती कर्म से जीनेवाले सौ पचास इकट्ठे किये जायँ तो बिरले एक दो उनमें ऐसे निकलेंगे जो आवारगी, उजड्डुपन, छिछोरेपन से खाली होंगे। विद्या, गुण अथवा किसी प्रकार की योग्यता का तो जिक्र ही क्या, उनमें साधारण रीति की मनुष्यता ही हो तो मानो बड़ी कुशल है। तब इस रण्डापुत्र का कहना ही क्या! इस अभागे को तो जन्म ही से कोई कुछ कहने सुननेवाला न था।

एकेनापि कुपुत्रेण कोटरस्थेन वह्निना;
दह्यते तद्वनं सर्वं कुपुत्रेण कुलं यथा।

कुपुत्रों में भी यह उस तरह का कुपूत न था कि खोड़र में रक्खी आग के समान केवल अपने ही कुल को भस्म करे, अपिच जहाँ जहाँ इसकी थोड़ी भी पैठ या संचार हो गया, वहाँ वहाँ इसने भरपूर अपना-सा उन घरानेवालों को कर दिखाया। यह सदा इसी ताक में रहा करता था कि किस घराने में कौन कौन नये केड़े हैं। उन्हें किसी-न-किसी तरह अपने

ढंग पर चढ़ाय खातिरखाह गुलछर्रे उड़ाया करता, जब देखा यहाँ कुछ सार न रहा, तो निर्गंधोज्झित पुष्प के समान उसे त्याग भ्रमर के समान दूसरा ठौर ढूँढ़ने लगता। [सौ अजान एक सुजान—पंचमावृत्ति सं० १९८५ पृ० २८-२९]

भाषा के चमत्कार, व्यंग्य और स्पष्टता में यह रेखाचित्र अपूर्व है और लाला श्रीनिवास दास के रेखाचित्र इसकी तुलना में नगण्य हैं, परंतु व्यक्तित्व-प्रदर्शन के लिए सूक्ष्म दृष्टि से स्वभाव का निर्देश जितनी गहराई में लाला श्रीनिवास दास ने किया है उतना भट्ट जी नहीं कर सके हैं। पंडित पुरुषोत्तम दास का एक रेखाचित्र देखिए :

पंडित पुरुषोत्तम दास भी बचपन सै लाला मदनमोहन के पास आते जाते थे इन्को लाला मदनमोहन के यहाँ सै इन्के स्वरूपानुरूप अच्छा लाभ हो जाता था परंतु इन्के मन मैं औरों की डाह बड़ी प्रबल थी. लोगों को धनवान, प्रतापवान, विद्वान, बुद्धिमान, सुंदर, तरुण, सुखी और कृतिकार्य देखकर इन्हैं बड़ा खेद होता था. यह यशवान मनुष्यों सै सदा शत्रुता रखते थे, अपनें दुखिया चित्त को धैर्य देनें के लिए अच्छे अच्छे मनुष्यों के छोटे छोटे दोष ढूँढ़ा करते थे, किसी के यश मैं किसी तरह का कलंक लग जानें सै यह बड़े प्रसन्न होते थे, पापी दुर्योधन की तरह सब संसार के विनाश होनें मैं इन्की प्रसन्नता थी, और अपनी सर्वज्ञता बतानें के लिए जानें बिना जानें हर काम मैं पाँव अड़ाते थे. मदनमोहन को प्रसन्न करने के लिए अपनी चिड़ करेले की कर रक्खी थी. चुन्नीलाल और शिंभूदयाल आदि की कटती कहनें मैं कसर न रखते थे परंतु अक़ल मोटी थी इसलिये उन्होंनें इन्हें खिलोना बना रक्खा था, और परकैंच कबूतर की तरह वह इन्हैं अपना बसवर्ती रखते थे.

इसमें न वह भाषा का चमत्कार है न व्यंग्य, परंतु लेखक की सूक्ष्म दृष्टि और मनोवैज्ञानिक विश्लेषण की क्षमता अपूर्व है। परंतु इस रेखा-चित्र से भी कहीं अधिक चमत्कारपूर्ण इस उपन्यास के वार्तालाप हैं

जिनसे चरित्रों की विशेषता अच्छी तरह जानी जा सकती है। द्वितीय प्रकरण के प्रारम्भ का वार्तालाप सुनिये :

"हैं अभी तो यहाँ के घंटे मैं पोनें नो ही बजे हैं तो क्या मेरी घड़ी आध घंटे आगे थी ?" मुंशी चुन्नीलाल नें मकान पर पहुँचते ही बड़े घंटे की तरफ़ देखकर कहा . परंतु ये उस्की चालाकी थी उस्नें ब्रजकिशोर सै पीछा छुड़ानें के लिये अपनी घड़ी चाबी देनें के बहानें सै आध घंटे आगे कर दी थी .

"कदाचित् ये घंटा आध घंटे पीछे हो" मास्टर शिभूदयाल नें बात साध कर कहा .

"नहीं, नहीं ये घंटा तोप से मिला हुआ है" लाला मदनमोहन बोले .

"तो लाला ब्रजकिशोर साहब की लच्छेदार बातैं नाहक अधूरी रह गईं ?" मुंशी चुन्नीलाल नें कहा .

"लाला ब्रजकिशोर की बातैं क्या हैं चकाबू का जाल है वह चाहते हैं कि कोई उन्के चक्कर सै बाहर न निकलने पाये ." मास्टर शिभूदयाल नें कहा .

"मैं यों तो ये काच न लेता पर अब उन्की ज़िद सै अदबद कर लूँगा ."

"निस्संदेह जब वे अपनी ज़िद नहीं छोड़ते तो आपको अपनी बात हारनी क्या ज़रूर है " मुंशी चुन्नीलाल ने छींटा दिया .

"हितोपदेश मैं कहा है

"आज्ञालोपी सुतहु को क्षमैं न नृपति विनीत।
को विशेष नृप, चित्र मैं जो न गहे यह रीत ॥"

पंडित पुरुषोत्तम दास ने मिल्ती मैं मिलाकर कहा .

इस प्रकार के यथार्थवादी वार्तालाप हिन्दी में पहली बार देखने को मिलते हैं और प्रेमचंद से पूर्व इस प्रकार के यथार्थवादी और सूक्ष्मदर्शिता के द्योतक वार्तालाप किसी नाटक अथवा उपन्यास में देखने को नहीं मिलते।

इस प्रकार के वार्तालाप की तत्कालीन पत्र-पत्रिकाओं में चर्चा भी खूब चली क्योंकि लोगों को अंगरेजी ढंग के ये वार्तालाप रुचिकर नहीं थे। 'हरिश्चंद्र चंद्रिका और मोहन चंद्रिका' सम्मिलित पत्रिका के पौष शुक्ल १९३९ वि० अंक में जहाँ इसकी प्रशंसा में लिखा गया था :

ऐ धनिकों, ऐ राजगणों, हे निरक्षरों, हे कर्ज्जेदलालों, हे प्रेम के फँसे जवानों, हे बजाजो वा बाजार के बैठने हारो, दुनिया का मजा चीखने चाहो, कठपुतलियों का तमाशा देखने चाहो, खुशामदियों के गुण देखने चाहो, रंडियों का गाना सुनने चाहो, मामलेमुकद्दमों में बहस सीखने चाहो या अपनी मूर्खता को झींखने चाहो, तो परीक्षागुरु का आश्रय करो. वहीं अंत में यह भी लिखा गया था :

ग्रंथकर्ता नें जो अंग्रेजी प्रणाली इसमें रक्खी है वह पढ़ने वालों को अर्थानुसंधान में विघ्नकारक हैं, वैसे ही कितनेक स्थानों में लेखनावेश में आगा पीछा भी भूलना योग्य नहीं. जैसे प्रथम ही प्रथम काच की जोड़ी खरीदने का समय और गुलाब फूटने का समय ठीक नहीं मिलता.

वार्तालाप की भारतीय प्रणाली नाटकों के समान रही है जिसमें पहले कहने वाले का नाम-संकेत देकर तब कही हुई बात लिखी जाती है। परंतु अंगरेजी प्रणाली में उद्धरणी चिह्न लगा कर बात प्रारम्भ कर दी जाती है और कहने वाले का नाम संकेत मध्य में अथवा अंत में होता है। कभी कभी केवल बात ही कह दी जाती है, कहनेवाले का नाम नहीं दिया जाता परंतु संदर्भ से पता लग जाता है कि कहनेवाला कौन व्यक्ति है। लाला श्रीनिवास दास ने 'परीक्षागुरु' में अंगरेजी प्रणाली ही रखी है और बड़ी सफलतापूर्वक उसका निर्वाह किया है। केवल वार्तालाप की प्रणाली ही नहीं उपन्यास में वार्तालाप की शैली और आत्मा भी अंगरेजी साहित्य से प्रभावित रही है।

परंतु 'परीक्षागुरु' का वास्तविक महत्त्व उसके रेखाचित्रों तथा अभिनव प्रणाली के वार्तालापों में उतना नहीं है जितना गम्भीर विचार-

विमर्श और व्यापक ज्ञान से परिपूर्ण उन लम्बे लम्बे संवादों में है जहाँ प्रतिदिन के जीवन की छोटी बड़ी समस्याओं की विविध उदाहरणों द्वारा विशद व्याख्या और विवेचना हुई है। यों तो सम्पूर्ण उपन्यास में अनेक विषयों पर गम्भीर विचार-विमर्श मिलते हैं, परंतु बारहवें प्रकरण में 'सुख दुःख' पर जो विवेचन है वह अपनी स्पष्टता में अद्वितीय है। मुंशी चुन्नीलाल, मास्टर शिंभूदयाल और लाला मदनमोहन के संशयों और शंकाओं का समाधान तर्क और उदाहरणों द्वारा करके लाला ब्रजकिशोर सुख और दुःख की स्पष्ट व्याख्या करते हैं। मुंशी चुन्नीलाल पहले अपना संशय उपस्थित करते हैं :

सुख दुःख तो बहुधा आदमी की मानसिक वृत्तियों और शरीर की शक्ति के आधीन है एक बात सै एक मनुष्य को अत्यंत दुःख और क्लेश होता है वही बात दूसरे को खेल तमाशे की सी लगती है, इसलिए सुख दुःख होनें का कोई नियम नहीं मालूम होता.

फिर मास्टर शिंभूदयाल सुख दुःख की अपनी व्याख्या उपस्थित करते हैं:

मेरे जान तो मनुष्य जिस बात को मन सै चाहता है उस्का पूरा होना ही सुख का कारण है और उस्मैं हर्ज पड़नें ही सै दुःख होता है.

इस पर लाला ब्रजकिशोर अपने तर्क उपस्थित करते हैं :

तो अनेक बार आदमी अनुचित काम करके दुःख मैं फँस जाता है और अपनें किये पर पछताता है इस्का क्या कारण? असल बात यह है कि जिस्समय मनुष्य के मन मैं जो बृत्ति प्रबल होती है वह उसी के अनुसार काम किया चाहता है और दूरअंदेशी की सब बातों को सहसा भूल जाता है परंतु जब वो बेग घटता है तबियत ठिकानें आती है तो वो अपनी भूल का पछतावा करता है और न्याय बृत्ति प्रबल हुई तो सबके साम्हनें अपनी भूल अंगीकार कर कै उस्के सुधारनें का उद्योग करता है पर निकृष्ट प्रवृत्ति प्रबल हुई तो छल करके उस्को छिपाया चाहता है अथवा अपनी भूल दूसरे के सिर रक्खा चाहता है और एक अपराध छिपानें के

लिए दूसरा अपराध करता है परंतु अनुचित कर्म से आत्मग्लानि और उचित कर्म से आत्मप्रसाद हुए बिना सर्वथा नहीं रहता.

कितना अनुभव और ज्ञान भरा है लाला ब्रजकिशोर की इन बातों में ! इस प्रकार के एक दो नहीं सैकड़ों अनुभव, ज्ञान और सदाचरण के उपदेश इस पुस्तक में भरे पड़े हैं। ज्ञान और तर्क की पुष्टि के लिए सैकड़ों उदाहरण महाभारत, हितोपदेश, गुलिस्ताँ, शेक्सपीयर के नाटक, इंगलैंड, रोम और ग्रीक के इतिहास तथा बेकन के निबंध, स्पेक्टेट, स्त्री बोध आदि पत्र-पत्रिकाओं एवं अन्य ग्रंथों से उद्धृत किए गए हैं। जीवन को सफल और सदाचारी बनाने के लिए जिन उपदेशों की आवश्यकता है प्रायः वे सभी उपदेश इस उपन्यास में यथास्थान रख दिए गए हैं। नीति-शिक्षा का इतना सफल प्रयास अन्य किसी उपन्यास में मिलना कठिन है। लाला मदनमोहन के पूछने पर लाला ब्रजकिशोर स्वाभाविक और बनावटी सज्जनता का भेद समझा रहे हैं :

हां सज्जनता के दो भेद हैं एक स्वाभाविक होती है जिसका वर्णन मैं अब तक करता चला आया हूँ. दूसरी ऊपर से दिखानें की होती है जो बहुधा बड़े आदमियों मैं और उन्के पास रहनेंवालों मैं पाई जाती है. बड़े आदमियों के लिए वह सज्जनता सुंदर वस्त्रों के समान समझनी चाहिए जिस्को वह बाहर जाती बार पहन जाते हैं और घर में आते ही उतार देते हैं. स्वाभाविक सज्जनता स्वच्छ वर्ण के अनुसार है जिस्को चाहे जैसे तपाओ, गलाओ परंतु उस्मैं कुछ अंतर नहीं आता ऊपर से दिखानेंवालों की सज्जनता गिल्टी के समान है जो रगड़ लगते ही उतर जाती है ऊपर के दिखानेंवाले लोग अपना निज स्वभाव छिपाकर सज्जन बन्नें के लिये सच्चे सज्जनों के स्वभाव की नक़ल करते हैं परंतु परीक्षा के समय उनकी कलई तत्काल खुल जाती है ; उन्के मन मैं विकास के संकुचित भाव, सादगी के लिए बनावट, धर्म प्रवृत्ति के बदले स्वार्थ-

परता और धैर्य के बदले घबराहट इत्यादि प्रगट दिखनें लगते हैं, उन्का सब सद्भाव अपनें किसी गूढ़ प्रयजन के लिये हुआ करता है परंतु उन्के मन को सच्चा सुख इस्सै सर्वथा नहीं मिल सक्ता. [पृ० २२४—२२५]

आज की उपन्यास-कला की दृष्टि से 'परीक्षागुरु' के लम्बे-लम्बे व्याख्यान सौर उपदेशात्मक वार्तालाप बहुत कुछ असंगत से जान पड़ते हैं क्योंकि इनके कारण कथा की प्रगति रुक जाती है और कथा के प्रति पाठकों का कुतूहल कुंठित हो जाता है; परंतु लाला श्रीनिवास दास की दृष्टि में नाटक और उपन्यास यदि लोकोपकारी नहीं हुए तो उनकी कोई सार्थकता नहीं। इसी लोकोपकार को दृष्टि में रखकर ही लाला मदनमोहन ने लाला ब्रजकिशोर से निवेदन किया था कि :

मैं चाहता हूँ कि सब लोगों के ही निमित्त इन दिनों का सब बृत्तांत छपवा कर प्रसिद्ध कर दिया जाय.

और जब लाला ब्रजकिशोर ने आपत्ति की कि :

इस्की क्या ज़रूरत है? संसार मैं सीखनेंवालों के लिए बहुत से सतशास्त्र भरे पड़े हैं.

तब लाला मदनमोहन ने बड़े उमंग से कहा :

नहीं सच्ची बातों में लजाने का क्या काम है? मेरी भूल प्रगट हो तो मैं मन सै चाहता हूँ कि मेरा परिणाम देखकर और लोगों की आँखैं खुलैं. इस अवसर पर जिन जिन लोगों सै मेरी जो, जो बातचीत हुई है वह भी मैं उस्मैं लिखनें के लिए बता दूँगा.

अस्तु, 'परीक्षागुरु' की कथा को लेखक एक सच्ची घटना का रूप देता है। लेखक ने इस कौशल से कथा को उपस्थित किया है कि उसके सच होने में संदेह नहीं रहता और अंत में लाला मदनमोहन की उपर्युक्त बात से रहा सहा संदेह भी दूर हो जाता है।

'परीक्षागुरु' के लाला ब्रजकिशोर एक अमर चरित्र हैं। ऐसा सज्जन, सतर्क, सावधान, बुद्धिमान, नीतिज्ञ, कृतज्ञ और सबसे बढ़कर प्रामाणिक

चरित्र हिन्दी साहित्य में दूसरा ढूँढ़ने पर भी नहीं मिलेगा । हिन्दी उपन्यासों के अमर चरित्र—सूरदास, होरी, शेखर, सुमन, भूतनाथ आदि के साथ लाला ब्रजकिशोर भी एक ऐसे चरित्र हैं जिन्हें आसानी से भुलाया नहीं जा सकता । सूरदास, होरी और सुमन आदि चरित्रों का निर्माण जैसे प्रेमचंद की लेखनी से ही सम्भव हुआ है, भूतनाथ की कल्पना जैसे केवल देवकीनंदन खत्री ही कर सके हैं, उसी प्रकार लाला ब्रजकिशोर की सृष्टि लाला श्रीनिवास दास ही कर सके हैं ।

'परीक्षागुरु' में कथा कहने की शैली तटस्थ भाव की ऐतिहासिक शैली नहीं है जैसा प्रेमचंद आदि परवर्त्ती उपन्यासकारों में मिलती है; वरन् इसमें ऐसा जान पड़ता है कि किसी सच्ची घटना का लेखक अपने पाठकों से बातें कर रहा है । नाटकों के सूत्रधार की भाँति लेखक भी बीच बीच में जैसे प्रकट हो जाता है और अपना तटस्थ भाव छोड़ कर पाठकों से प्रत्यक्ष बातें करने लगता है । अस्तु, तेईसवें प्रकरण में लेखक अचानक प्रकट हो पाठकों से प्रश्न कर बैठता है :

ब्रजकिशोर कौन हैं ? मदनमोहन की क्यों इतनी सहानुभूति करते हैं ? और विस्मित पाठकों की जिज्ञासा दूर करने के लिए जैसे स्वयं कह उठता है:

अच्छा ! अब थोड़ी देर और कुछ काम नहीं है जितनें थोड़ा सा हाल इन्का सुनिये .

इसी प्रकार चौबीसवें प्रकरण के अंत में लेखक पाठकों की कुतूहल वृत्ति जगाने के लिए ही मानों कह उठता है :

अब आज हरकिशोर और ब्रजकिशोर दोनों इज्जत खोकर मदनमोहन के पास सै दूर हुए हैं इन्मैं सै आगै चलकर देखैं कौन कैसा बरताव करता है ? इसी प्रकार नवें प्रकरण में जब लेखक लाला मदनमोहन के कुछ सभासदों का रेखाचित्र उपस्थित करता है, परंतु लाला ब्रजकिशोर और हरकिशोर का रेखाचित्र उपस्थित नहीं करता तब पाठकों के हृदय की सहज जिज्ञासा समझ कर वह अपना खेद प्रकट करता है :

खेद है कि लाला ब्रजकिशोर और हरकिशोर आदि के वृत्तांत लिखनें का अवकाश इससमय नहीं रहा . अच्छा फिर किसी समय विदित किया जायगा पाठकगण धैर्य रक्खें . (पृ० २१४)

इस प्रकार लेखक कभी कभी कथा को आगे बढ़ाने, बीच बीच में आई हुई गुत्थियों को सुलझाने और अस्पष्ट बातों को स्पष्ट करने के लिए जैसे अपना तटस्थ भाव छोड़ प्रकट हो जाता है। एक स्थान पर तो वह चुन्नीलाल की धूर्तता को धिक्कारने के लिए भी प्रकट हो गया है। छब्बीसवें प्रकरण के अंत में जब निहालचंद मोदी अन्य लेनदारों के साथ लाला मदनमोहन से तकाजे के लिए आ पहुँचता है और सभी लेन-दार अपनी अपनी बात करते हैं उस समय जब मुंशी चुन्नीलाल लाला ब्रजकिशोर को निर्दोष समझते हुए भी उसे अपराधी ठहराने का प्रयत्न करता है तब लेखक जैसे इस धृष्टता को सहन नहीं कर पाता और प्रकट होकर कह उठता है :

अफसोस ! जो दुराचारी अपने किसी तरह के स्वार्थ सै निर्दोष और धर्मात्मा मनुष्यों पर झूठा दोष लगाते हैं अथवा अपना क़सूर उन्पर बरसाते हैं उन्के बराबर पापी संसार मैं कौन होगा ? [पृ० ३२१]

लाला श्रीनिवास दास जैसे नीतिज्ञ लेखक से ऐसी ही आशा थी। इसी प्रकार चौदहवें प्रकरण में लाला मदममोहन के पास जब एक अखबार के एडीटर का पत्र अपनी विपत्ति-कथा और सहायता की प्रार्थना लेकर आता है तब लेखक भारत में पत्र-पत्रिकाओं की इस दुर्दशा से व्यथित हो अपने को सम्हाल नहीं पाता और एकदम प्रकट हो एक भाषण-सा दे डालता है :

एक अखबार के एडीटर की इस लिखावट सै क्या क्या बातैं मालूम होती हैं ? प्रथम तो यह कि हिंदुस्थान मैं विद्या का सर्वसाधारण की अनु-मति जान्नें का देशांतर के वृत्तांत जान्नें का और देशोन्नति के लिये देश हितकारी बातों पर चर्चा करनें का व्यसन अभी बहुत कम है,

बलायत की बस्ती हिंदुस्थान की बस्ती से बहुत ही थोड़ी है तथापि वहाँ अखबारों की डेढ़ दो लाख कापियाँ निकलती हैं, वहाँ के स्त्री, पुरुष, बूढ़े, बालक गरीब, अमीर सब अपने देश का बृत्तांत जान्ते हैं और उस्पर वादा विवाद करते हैं, किसी अखबार मैं कोई बात नई छपती है तो तत्काल उस्की चर्चा सब देश मैं फैल जाती है और देशांतर को तार दोड़ जाते हैं, परंतु हिंदुस्थान में ये बात कहाँ ? यहाँ बहुत सी अखबारों की पूरी दो दो सौ कापियाँ भी नहीं निकलतीं, और जो निकलती हैं उन्मैं भी जान्नें के लायक बातैं बहुत ही कम रहती हैं क्यौंकि बहुत से एडीटर तो अपना कठिन काम संपादन करनें की योग्यता नहीं रखते और बलायत की तरह उन्को और विद्वानों की सहायता नहीं मिल्ती; बहुत से जान बूझ कर अपना काम चलानें के लिए अजान बन जाते हैं, इसलिये उचित रीति सै अपना कर्तव्य संपादन करनें वाले अखबारों की संख्या बहुत थोड़ी हैं पर जो है उस्को भी उत्तेजन देनें वाला और मन लगाकर पढ़नें वाला कोई नहीं मिल्ता . (पृ० २४२)

अस्तु, 'परीक्षागुरु' में लेखक का व्यक्तित्व भी पूर्ण रूप से व्यक्त हुआ है । सच तो यह है कि पूरी पुस्तक में लेखक का ही व्यक्तित्व—उसके व्यापक अध्ययन के फल-स्वरूप विविध विषयों का ज्ञान, उसकी मनुष्यों को पहचानने की सूक्ष्म दृष्टि, उसकी नीतिज्ञता और कार्यकुशलता आदि—पूर्ण रूप से उभड़ आया है ।

इस उपन्यास का नाम 'परीक्षागुरु' रक्खा गया है जिसका अर्थ है परीक्षा ही गुरु है । लाला ब्रजकिशोर मन में विचार करते हैं कि :

जो बात सौ बार समझाने सै समझ में नहीं आती वह एक बार की परीक्षा सै भली भाँति मन मैं बैठ जाती है और इसी वास्तै लोग 'परीक्षा' को 'गुरु' मान्ते हैं . (पृ० ३६१ ऊपर)

इसी परीक्षा रूपी गुरु के द्वारा ही मदनमोहन का सुधार हुआ और

उसे घर बैठे ही सारे सुख प्राप्त हो गए। जैसा कि लेखक ने पुस्तक के अंत में लिखा है :

जो सच्चा सुख, सुख मिलनें की मृगतृष्णा सै मदनमोहन को अब तक स्वप्न मैं भी नहीं मिला था वही सचा सुख इससमय ब्रजकिशोर की बुद्धिमानी सै परीक्षागुरु के कारण प्रामाणिक भाव सै रहनें मैं मदन-मोहन को घर बैठे मिल गया.

इसी कारण इस पुस्तक का नाम भी परीक्षागुरु रक्खा गया।

लालाजी की भाषा

लाला श्रीनिवास दास की भाषा जैसा कि उन्होंने 'रणधीर और प्रेममोहिनी' की भूमिका में लिखा है 'हिन्दी' है जिसे 'दिल्ली सै बनारस के परे तक किरोड़ों आदमी बोलने वाले हैं' परंतु यह खड़ी बोली हिन्दी आज की हिन्दी से बहुत कुछ भिन्न है। इसके मूलतः कई कारण हैं। भारतेन्दु युग में जो बोलचाल की भाषा थी वही लिखित रूप में भी प्रयुक्त होती थी। इसका एक प्रमुख कारण हिन्दी का वह दावा था कि इसमें जो लिखा जाता है वही पढ़ा जाता है और जैसा उच्चरित होता है ठीक वैसा ही लिखा जाता है। इस सिद्धान्त के अनुसार बोलचाल की भाषा में जिस शब्द का जैसा उच्चारण होता था लिखने में भी वही रूप रखा जाता था। अस्तु, 'कौन सा' का उच्चारण बोलचाल में 'कौन् सा' होता था और भारतेन्दु युग में इसी रूप में 'कौन्सा' लिखा भी जाता था। इसीलिए भारतेन्दु युग के लेखक प्रायः उस्का, इन्का, इस्समय, कौन्सा, इस्पर, ठैरना (ठहरना), मनोर्थ (मनोरथ), झर्ना (झरना), इन्कार, सुन्ना (सुनना), जान्ना (जानना), साम्नें (सामने), पहचान्ता (पहचानता), सक्ता (सकता) आदि लिखते थे। बीसवीं शताब्दी के प्रारम्भ में महावीरप्रसाद द्विवेदी ने जब व्याकरण-सम्मत भाषा लिखने की प्रथा चलाई तब इनका, उनका, इस समय, इस पर, जानना, सामना आदि लिखा जाने लगा। भारतेन्दु युग की

दूसरी विशेषता, तद्भव और प्रांतज अथवा स्थानीय शब्दों का व्यापक प्रयोग था। दूषण देना के लिए 'दूसना' शब्द का प्रयोग 'हरिश्चंद्र चन्द्रिका' कार्तिक शुक्ल सं० १९३७ के एक निबंध के शीर्षक में इस प्रकार मिलता है 'दूसरे को दूसना दूर नहीं।' 'साँजी' शब्द का प्रयोग विनायक शास्त्री 'बेताल' ने अपने एक लेख ('हरिश्चंद्र चंद्रिका' ज्येष्ठ सं० १९३८) के शीर्षक में इस प्रकार किया है 'लिखना तो साँजी और कहना तो हाँजी'। भारतेन्दु की एक कविता का शीर्षक है 'मुँह दिखावनी'। इसी प्रकार 'प्रेमघन' की एक कविता है :

अँगरेजन के हित चित चाय। ब्रह्मा में बाजे अरराय॥
करें हाकिमी गोरा जाय। खर्चा भारत सीस बिसाय॥

इसमें अरराय, बिसाय शब्द प्रांतज हैं। भारतेन्दु युग की हिन्दी का एक नमूना 'भारतमित्र' के प्रथम अंक में उपक्रम में देखिए :

बड़े आश्चर्य की बात यह है कि आज तक ऐसा कोई समाचार पत्र नहीं प्रचारित हुआ जिससे हियाँ के हिंदुस्तानी लोग भी पृथ्वी के दूसरे लोगों की तरह अपने अक्षर और अपनी बोली में पृथ्वी की समस्त घटना को जान सकें. क्या यह बड़ी पछतावे की बात नहीं है जब कि इस १९ वीं सदी में बंगाली तथा अन्यान्य जाति के आदमी अपनी अपनी बोली में केवल एक समाचार पत्र की उन्नति से विद्या में, ज्ञान में, दिन दिन उन्नत हुए जाते हैं और हमारे हिंदुस्तानी भाइ केवल अज्ञान खटिया पर पैर फैलाए हुए पड़े हैं.

अथवा अम्बिकादत्त व्यास के 'आश्चर्य वृत्तांत' से देखिए :

मैं चकचिहा का लगढग एक मिनट तक यों ही पत्थर की मूर्ति की भाँति ठठका रहा—फिर देखा कि वह एक ओर चला औ मुझे अपने साथ ले चलने की सूचना की. (पृ० ९)

इसमें हियाँ, खटिया, चकचिहा, लगढग (लगभग) ठठका आदि शब्द तद्भव और प्रांतज हैं। इसी प्रकार बालकृष्ण भट्ट ने महाचंट, खुचुर, डाँक जाना, आदि शब्दों का व्यवहार किया है। महाबीर प्रसाद

द्विवेदी ने आगे चल कर इन तद्भव और प्रांतज शब्दों के स्थान पर तत्सम और व्यापक क्षेत्र में समझे जाने वाले शब्दों के व्यवहार पर बल दिया। अस्तु, द्विवेदी युग की भाषा भारतेन्दु युग की प्रतिमित भाषा से कहीं अधिक व्याकरणसम्मत, संस्कृत-परिष्कृत और गम्भीर साहित्यिक भाषा बन गई।

भारतेन्दु युग की उस तद्भव तथा प्रांतज शब्द-प्रधान, स्थान स्थान के उच्चारण के आधार पर लिखित अव्यवस्थित भाषा में भी लाला श्रीनिवास दास की भाषा अपनी अलग विशेषता रखती है। एक तो उनके प्रयुक्त शब्दों में कहीं कहीं निष्प्राणीकरण की प्रवृत्ति विशेष देख पड़ती है, अर्थात् उन्होंने अनेक महाप्राण ध्वनियों को अल्प प्राण बना दिया है। उदाहरण के लिए इनकी रचना में हाथ के स्थान पर हात, झूठा के स्थान पर झूंटा (पृ० २१५) हठ के स्थान पर हट (पृ० ३२२), पिघलना के स्थान पर पिगलना, ढूँढ़ना के स्थान पर ढूँड़ना (पृ० १६०), ढिठाई के स्थान पर ढिटाई (पृ० २३२), चिढ़ के स्थान पर चिड़, बग्घी के स्थान पर बग्गी प्रायः सभी जगह मिलता है। इतना ही नहीं कहीं कहीं पर 'ह' की ध्वनि का भी लोप हो गया है। अस्तु, उन्होंने घबराहट के स्थान पर घबराट (पृ० ३२१) लिखा है। कहीं कहीं इसके विपरीत अल्पप्राण ध्वनि को महाप्राण भी कर दिया गया है जैसे उकताना के स्थान पर उखताना (पृ० १९०) परंतु यह केवल अपवाद-स्वरूप है। यह निष्प्राणीकरण सम्भवतः पैशाची के प्रभाव के कारण हुआ है। भारतेन्दु युग के अन्य लेखकों में निष्प्राणीकरण की यह प्रवृत्ति या तो मिलती ही नहीं या मिलती है तो बहुत ही कम।

फिर इनके शब्दों के कुछ प्रयोग भी विचित्र से हैं। उदाहरण के लिए देखिए :

इसकी पेचीली कहन से दर्पन की परछाईं के समान अर्थ समझ में आता है, पर यह पकड़ में नहीं आती. (पृ० ८)

ये बातें मेरी राह में अच्छी हैं . (पृ० १४)

अच्छा ! फिर आप खुलकर क्यों नहीं कहते आपके निकट लाला साइब को बहकानें वाला कौन कौन है . (पृ० १८६)

जो लोग असली बात निश्चय किए बिना केवल अफ़वा के भरोसे किसी के लिए मत बाँध लेते हैं वह उस्के हक् मैं बड़ी बेइंसाफ़ी करते हैं . (पृ० ३२६)

ऐसे जीतब पर धिक्कार है . (पृ० ८४)

वह समझवार होकर मेरी अन्समझ क्यौं बन्ती हैं . (पृ० ३६५)
उपर्युक्त उदाहरणों में कहन (उक्ति) मेरी राह (मेरी राय), आपके निकट (आपकी समझ में), मत बांध लेना (मत स्थिर कर लेना), हक् मैं, जीतब (जीवित रहने) समझवार आदि प्रयोग कुछ विचित्र हैं। फिर 'दोड़' गए (दौड़ गए) 'नो' बजे (नौ बजे) नोकर (नौकर) मैं (में) सै (से) बलायत, महनत, महरबानी, रुपे (रुपए), खातर (खातिर) मोज (मौज) आदि प्रयोग भी आज की भाषा की दृष्टि से विचित्र जान पड़ेंगे । कुछ अशुद्ध प्रयोग भी बीच बीच में मिलते हैं जैसे अधीन के लिए आधीन, नीरोग के लिए नैरोग्य (पृ० १६६ नीचे), वाद विवाद के लिए वादा विवाद (पृ० २४२ मध्य) लावण्य के लिए लावण्यता, अज्ञान के लिए अज्ञानता, (पृ० २९४) आदि, परंतु यह अशुद्धि केवल लाला श्रीनिवास दास ही की रचना में मिलती हो ऐसी बात नहीं है उस युग के प्रायः सभी लेखक इस प्रकार की अशुद्धियाँ करते थे । लाला जी में ये अशुद्धियाँ अपेक्षाकृत कम हैं ।

लाला श्रीनिवास दास कई भाषाओं के विद्वान् थे, इसीलिए उनकी भाषा में गति और शब्द-भंडार में विविधता मिलती है । उसमें तत्सम, तद्भव, देशी और विदेशी सभी प्रकार के शब्द और मुहावरों का प्रयोग हुआ है। केवल एक उदाहरण पर्याप्त होगा :

"इस्में कुछ संदेह नहीं" हरकिशोर हुज्जत करनें लगा. "मैं ठेठ सै देखता आता हूं कि आप मुझको देखकर जल्ते हैं, मेरी और मदनमोहन की मित्रता देखकँर आपकी छाती पर साँप लोटता है, आपनें हमारा परस्पर बिगाड़ करानें के लिये कुछ थोड़े उपाय किये ? मदनमोहन के पिता को थोड़ा भड़काया ? जिस दिन मेरे लड़के की बरात मैं शहर के सब प्रतिष्ठित मनुष्य आए थे उन्को देखकर आपके जी मैं कुछ थोड़ा दुःख हुआ ? शहर के सब प्रतिष्ठित मनुष्यों सै मेरा मेल देखकर आप नहीं कुढ़ते ? आप मेरी तारीफ़ सुन्कर कभी अपनें मन मैं प्रसन्न हुए ? (पृ० २९५–२९६)

लाला श्रीनिवास दास के उपन्यास और नाटकों में बीच-बीच में पद्य भी पर्याप्त मात्रा में मिलते हैं। लाला जी कवि नहीं थे, परंतु आवश्यकतानुसार प्राचीन संस्कृत के सुभाषितों तथा अंगरेजी की उक्तियों का अनुवाद अवश्य कर सकते थे । बायरन के 'चाइल्ड हेरोल्ड' के कई छंदों का अनुवाद, शेक्सपीयर की विविध उक्तियों तथा विलियम कूपर के पद्यों का छंदबद्ध अनुवाद 'परीक्षागुरु' में स्थान स्थान पर मिलते हैं। प्राचीन छंदों को भी उन्होंने स्थान स्थान पर आवश्यकतानुसार उद्धृत किया है । गंग, घनानंद, तुलसीदास वृंद, गिरिधर कविराय और अन्य कवियों का उनका अध्ययन उनके उद्धरणों से स्पष्ट है । संस्कृत से विदुर नीति, चाणक्य नीति, नीति और वैराग्य शतक, महाभारत, मनुस्मृति, हितोपदेश आदि के अनेक श्लोकों का भावानुवाद ग्रंथमें पर्याप्त मात्रामें मिलते हैं । भर्तृहरि का एक श्लोक है :

अम्भोजिनीवननिवासविलासमेव, हंसस्य हंति नितरां कुपितो विधाता ।
नत्वस्य दुग्धजलभेदविधौ प्रसिद्धां, वैदग्धकीर्तिमपहर्तुम्सौ समर्थः ।

इसका भावानुवाद 'रणधीर और प्रेममोहिनी' में इस प्रकार है :

बिधना कोपै हंस पर, हरै कमल बन बास ।
पै जल दुग्ध बिभेद गुण, किंहिं बिधि करै बिनास ?

कहीं कहीं लेखक ने प्राचीन छंदों को भी थोड़ा बहुत रूपांतरित कर

अपने काम का बना लिया है। सूरदास से बाँह छुड़ाकर जब उनके श्यामसुंदर भाग निकले थे तब सूरदास ने कहा था :

बाँह छुड़ाये जात हौ, निबल जानि कै मोहिं।
हिरदै ते जब जाइहौ, मर्द बदौंगो तोहिं ॥

इसी को रूपांतरित कर प्रेममोहिनी रणधीर से कहती है :

कर छुटकाए जात हौ, मोहि निबल जिय जान।
पै हियरे से जाहु जब, तब जानों बलवान ॥

इसी प्रकार बीरबल के मरने का समाचार सुनकर, कहा जाता है कि सम्राट् अकबर ने अत्यंत दुखी हो यह सोरठा पढ़ा था :

दीन देखि सब दीन, एक न दीन्हैं दुसह दुख।
सो अब हम कहँ दीन, कछुक न राख्यो बीरबर ॥

इसी के स्वर में स्वर मिलाकर पाटनपति ने रणधीर सिंह की मृत्यु का समाचार पा रोकर यह सोरठा कहा :

सब काहू सुख दीन, दुख न दियो काहू कबहुँ।
सो मर मोकों दीन, भली करी रणधीरसिंह ॥

इसी प्रकार बहुत से पुराने भाव लेकर लाला श्रीनिवास दास ने उसे पद्य-बद्ध कर दिया है। लाला जी कवि नहीं थे परंतु काव्य-रसिक अवश्य थे। उन्होंने हिन्दी साहित्य की समृद्धि करने में कुछ उठा नहीं रखा।

× × × × × ×

प्रस्तुत पुस्तक में लाला श्रीनिवास दास की केवल दो पुस्तकें संगृहीत हैं क्योंकि यही दोनों कृतियाँ स्थायी महत्व की हैं। शेष कृतियों का उल्लेख मात्र कर दिया गया है। लाला श्रीनिवास दास की पुस्तकें अत्यंत उपयोगी और शिक्षाप्रद हैं। यद्यपि उनकी उपयोगिता आज की दृष्टि से उतनी नहीं हैं, फिर भी उनका ऐतिहासिक महत्व है।

दुर्गाकुंड, बनारस
२५-१२-१९५३

श्रीकृष्ण लाल

रणधीर

और

प्रेममोहिनी

DEDICATION

To

Colonel W.G. Davis C.S.I.
Commissioner and Superintendent,
Delhi Division,

Sir,

You have been Commissioner and Superintendent of the Delhi Division for about two years. During this period, you have done your best to promote good feelings and friendly intercourse not only among the different sections of the Native Community, but also between Europeons and our countrymen. Your efforts in both directions have been attended with the happiest results. If all Europeans out here followed your noble example and mixed familiarly with Natives, the gulf that unfortunately separates the rulers from the ruled in this country would be bridged over. I have much pleasure in dedicating this small volume to you as a token of respect and admiration and as an acknowledgment of the good work done by you.

Delhi
The 1st January, 1878.

Your sincere admirer,
Shri Niwas Dass

निवेदन

जगत मैं सबके बढ़ने का मूल विद्या है। माता की तरह रक्षा करनेवाली, पिता की तरह हित करनेवाली, गुरु की तरह उपदेश देनेवाली, स्त्री की तरह दुख हरनेवाली, मित्र की तरह सहायता करनेवाली, लक्ष्मी की तरह जस फैलानेवाली विद्या है। विद्या को चोर चुरा कर नहीं ले सक्ता, लुटेरा लूटकर नहीं ले सक्ता, हिस्सेदार बाँटकर नहीं ले सक्ता, राजा दबाकर नहीं ले सक्ता, विद्या बिना मनुष्य और पशु एक से हैं।

ईसवी संवत् के चौदवें (१४) शतक मैं इटली के बीच 'पीट्रार्क' नामी एक मनुष्य महाकबि हुआ है। ये कवि पहले 'लोरा' नाम स्त्री पर मोहित था परंतु पीछे से संसार छोड़कर 'स्विटजरलैंड' की जनीवा झील के किनारे 'वाईक्लूज' गाँव मैं रहने लगा। ये जगह झील और हरियाली के कारण बहुत सुहावनी है। 'पीट्रार्क' को रोमन कैथलिक मत के गुरु 'पोप' से महाकविराज की पदवी मिली और यूरुप के अनेक राजों ने इस्को अपना मंत्री बनाने के लिए बुलाया परंतु इसने किसी के पास जाना मंजूर न किया। एक बार इस्के एक मित्र ने गाँव छोड़कर नगर मैं रहने वास्तै इस्को बहुत दबाकर लिखा था जिस्का इस्ने शुद्ध भाव सै ये जवाब दिया कि "आप संसार की झूठी बातों को बड़ी वस्तु समझते हैं" उनका छोड़ना आपके विचार मैं मुनासिब नहीं। यहाँ मेरे पास ऐसे सच्चे मित्र मौजूद हैं जिनका सत्संग मुझको बहुत प्यारा लगता है। ये लोग अनेक युगों मैं पैदा हुए और अनेक देशों के रहनेवाले हैं। इनमैं सै कोई रणभूमि मैं, कोई राजकाज मैं, कोई प्रजा पालन मैं और कोई अपने बुद्धि बल सै विद्या की चर्चा फैलाने मैं बड़ाई पा चुका है। इनके मिलने मैं डोढ़ी पहरा नहीं लगता। ये हर घड़ी मेरे मिलने को तयार

रहते हैं जब चाहता हूँ इन्हें बुला लेता हूँ जब चाहता हूँ बिदा कर देता हूँ। ये मुझको कभी दुःख नहीं देते वरन् मेरे प्रश्नों का जवाब देकर मेरे मन का संतोष कर देते हैं। इनमैं से कोई महात्मा मुझको पुराने इतिहास सुनाता है, कोई ईश्वर की माया का भेद बताता है, कोई सुख चैन सै समय बिताने का रास्ता दिखाता है, कोई मुझको लोक मैं सुयश और परलोक मैं सुख मिलने का उपाय बताता है, कोई अपने मीठे बचनों की रचना सै मेरा मन प्रसन्न कर मेरी चिंता मिटाता है, कोई संसार का दुख और पीड़ा झेलने के लिए मुझको धीर्य बँधाता है, कोई दूसरे का आसरा छोड़कर अपने बाँह बल से जीविका करने की रुचि बढ़ाता है, कोई गूढ़ विद्या और कलाओं का दर्शनालय (१) मेरी आँखों के साम्हने खोल देता है। इनके बचनों पर मुझको पूरा भरोसा है और ये मुझ से इन बड़े उपकारों के बदले कुटी के एक कोने सिवाय कुछ नहीं चाहते, जहाँ ये आनंद से रहते हैं।" 'पीट्रार्क' के ये मित्र और कोई नहीं पर केवल पुस्तक ही पुस्तक थे।

(सदादर्श संमिलित क० व० सुधा)

पुस्तकों मैं 'पीट्रार्क' के लेखानुसार 'जामे जमशेद' की तरह संसार की सब चीजें दिखाई देती हैं परंतु जो लोग पुस्तक पढ़कर उसकी राह से उन चीजों का रूप अपने मन मैं नहीं बना सक्ते उनके लिए नाटक की रीति बहुत हितकारी है। 'सर टाम्स ओवरबरी' लिखता है कि 'संसार मैं पाठशाला की अपेक्षा (२) भी नाटकशाला ज्यादा जरूरी है क्योंकि पढ़ने की अपेक्षा अनुभव (३) सै लोग ज्यादा सीखते हैं।' देखो नाटक मैं वर्तमान अथवा हजारों वर्ष पहले की चाहे जिस बात को इस समय अपनी आँखों सै देख सक्ते हो।

---

(१) नुमायशगाह (२) निसबत (३) तजर्बे।

दर्पण', गुजराती मैं 'जमशेद' और 'रुस्तमसोहोराब' वगैरे बहुत भाषाओं मैं ट्रेजूडी नाटक मिलते हैं। नाटक का खेल पूरा हुए पीछै ट्रेजूडी का असर बहुत देर तक देखनेवालों के मन मैं बना रहता है। नाटक करने वालों को देखनेवालों के मन पर पूरा असर करने के लिए पहले अपने मन पर असर पैदा करना चाहिए, और संभव (१) बातों को साधारण बोल चाल मैं भाव सहित कर दिखाने सै देखनेवालों के मन पर पूरा असर होता है। परंतु यै काम करने मैं ऐसे सहज नहीं जैसे कहने मैं जाने जाते हैं।

पहले तो संभव बात का निश्चै होना ही कठिन है। संभव बात क्या? जिसने जिन चीजों को देख कर समझ लिया, देखने वालों की बात पर भरोसा किया, अथवा और किसी तरह मान लिया उसको वे संभव, बाकी असंभव मालुम होती हैं और सब लोग सब बातों के जान्ने वाले नहीं हो सक्ते। एक आदमी एक बात को सबसे अच्छी जान्ता है परंतु दूसरी में बच्चे सै भी गया बीता है। फिर सब लोगों के विचार सै क्योंकर कोई बात संभव वा असंभव निश्चै हो सकै? हाँ जो चीजें दिखती हों, दिखने और समझ में आने के लायक हों अथवा जिनको उस विषय के जान्ने वाले अच्छे अच्छे आदमी मान्ते हों वे संभव बाकी असंभव ठैर सक्ती हैं और इसी बात को मुख्य मानकर अब हम संभव, असंभव बातों की चर्चा छेड़ते हैं। दो ढाई हज़ार वर्ष पहले सै देव और परियों के दिखाई देने, नाचने, मोहित होकर आदमियों को उड़ा लै जाने, अथवा जादूगरों के जादू सै देव हाजिर होने, मकान वगैरै के उड़ने की बात सब लोग झूठी जान्ते हैं परंतु नाटक के सुधरे हुए खेल मैं सै अब तक ये बातें दूर नहीं हुईं। नाटक करने वाले इन बातों को अपना हुनर दिखाने के लिए, नाटक को सुहावना बनाने के लिए चाहे अलिफलैला (Arabian

---

(१) मुश्किल।

nights) वगैरे के किस्सों से सहायता लेने के लिए करते हों परंतु इन बातों से देखने वालों के मन मैं अच्छा असर नहीं होता। इनके बदले ये लोग स्वाभाविक (१) बातों (Naturalism) के दिखाने मैं मेहनत करें तो सबके लिए अच्छा हो। 'रणधीरसिंह और प्रेममोहिनी' के नाटक मैं स्वयंवर का मूल मात्र गुजराती 'राजवाडानीकथा' पर सै लिया गया है परंतु देव परियों के असंभव रोग सै ये बिलकुल बचा हुआ है। हाँ इसमें मेज़, कुरसी, लंप, घड़ी, इक्का आदि इस समय के पदार्थों का विषय आ गया है परंतु ये सब चीजें असंभव पदार्थों की गिन्ती मैं नहीं हैं।

अब साधारण बोलचाल का वार आया। इसका फैलाव भी ऐसा ही लंबा चौड़ा है। हिंदुस्थान मैं हिंदी, उर्दू, ब्रजभाषा, मारवाड़ी, मरहटी, गुजराती, बंगाली, पंजाबी, पूरबी, तैलंगी, तामली, उड़िया, मैथिली आदि अनेक भाषा बोली जाती हैं और उनमैं भी एक, एक भाषा के अनेक, अनेक भेद हो गए हैं। इनमैं की बहुत भाषा संस्कृत बिगड़ कर बनी हैं परंतु अब इनमैं ऐसा अंतर पड़ गया कि एक देश के रहने वाले दूसरे देश की भाषा नहीं समझते, फिर नाटक किस भाषा मैं लिखा जाय, सब भाषा मिलाकर तो लिखने सै रहे। दिल्ली सै बनारस के परे तक किरोडों आदमी हिंदी बोलने वाले हैं और गुजरात, बंगाल, पंजाब वगैरे और देशों के लोग भी इस भाषा सै अपना काम निकाल लेते हैं इसलिए 'रणधीरसिंह और प्रेममोहिनी' के नाटक की निज भाषा हिंदी रक्खी गई। इस देश मैं हिंदी के सिवाय कहीं उर्दू, कहीं ब्रजभाषा और कहीं मारवाड़ी बोली जाती है, इस कारण इस नाटक मैं सुखबासी लाल (कारंदे) की भाषा उर्दू, निरंजन चौबे की बोली ब्रजभाषा और नाथूराम (सेठ) के बचन मारवाड़ी बोली मैं लिखे गए हैं, परंतु इन इकट्ठी चार भाषाओं के समझने वाले भी इस देश मैं बहुत कम दिखाई देते हैं। उर्दू बोलने-

(१) कुदरती।

वाले ब्रजभाषा और मारवाड़ी सुनकर, ब्रजभाषा बोलनेवाले मारवाड़ी और उर्दू सुनकर, मारवाड़ी बोलनेवाले उर्दू और ब्रजभाषा सुनकर मुँह देखते रह जाते हैं। इस कारण उर्दू, ब्रजभाषा और मारवाड़ी के कठिन वचनों का हिंदी भाषा मैं तर्जुमा करके हर पन्ने के नीचे लिख दिया गया। अब नाटक करने वालों को अखतियार है कि सब नाटक हिंदी भाषा मैं करें चाहे हिंदी, उर्दू, मारवाड़ी और ब्रजभाषा मैं करें। यद्यपि हिंदी भाषा दिल्ली सै बनारस तक किरोडों आदमियों मैं बोली जाती है परंतु ये भाषा ऐसी अधूरी है कि संस्कृत वा फारसी की सहायता लिए बिना इसका काम नहीं चलता। इस भाषा के लिखने वालों मैं कितने ही संस्कृत और कितने ही फारसी की सहायता लेकर काम चलाते हैं परंतु 'रणधीर और प्रेममोहिनी' के नाटक मैं दोनों की तरफदारी छोड़कर साधारण बोल चाल पर बरताव किया गया। हाँ, कहीं बहुत जरूरत पड़ी तो दूसरी भाषा का सहज सै सहज बचन लेकर काम चला लिया और उसमैं जिस शब्द के समझने का धोका रहा उसका अर्थ उस सफे के नीचै वा उस शब्द के आगै ऐसे ( ) गोलाकार (Parenthesis) मैं लिख दिया, परंतु फिर भी हिदी भाषा के संकोच सै बहुत सै भाव सोच समझ कर छोड़ने पड़े। इस नाटक मैं कहीं, कहीं कविता की लटक और अन्योक्ति (दूसरे पर धर कर बात जताने की) लपेट आ गई है पर उसको एक नज़र देखकर कोई सज्जन साधारण बोलचाल की रीति सै बाहर न बतावें। जिन लोगों के रूप सै ये बचन कहे जाते हैं (सब नाटक को आदि सै अंत तक पढ़ कर) उनके स्वरूप का विचार किया जायगा तो कदाचित ये कविता और अन्योक्ति उनकी साधारण बोलचाल सै बढ़कर न जचेगी।

भाव दिखाना नाटक करनेवालों के आधीन है, और संकोच विस्तार के कारण सै इसी को हाव, हेलादि भी कहते हैं। ये संगीत का एक अंग है। संयोग, वियोग, हानि, लाभ वा सुख, दुःख को स्वाभाविक

रीति से जता देने का नाम भाव है। हँसना, रोना, चकित होना, क्रोधित होना, उदास होना, व्याकुल होना, मतवाले होना, अचेत होना, बुलाना, भेजना, ठैराना, याद करना, प्रणाम करना, धमकाना इत्यादि बचन के अनुसार कर दिखाने को भाव बतानेवालों का काम कहते हैं। स्वर, नेत्र, मुख के आकार और शरीर से भाव बताया जाता है। स्वर से सुख दुःख आदि का जताना स्वर भाव है। नेत्रों से सुख दुःख आदि जताना, बाकी शरीर को जैसे का तैसा रखना, नेत्र भाव है। मुख के आकार से सुख दुःख आदिका जताना, बाकी भौं, नेत्र वगैरे को जैसे का तैसा रखना मुख के आकार का भाव है, और हात, पांव, कमर, छाती आदि से जो भाव बताए जायँ उनको शरीर का भाव कहते हैं। शरीर का भाव पहले तीन भावों से सहज है परंतु भाव बतानेवाला जितना चतुर और अनुभवी(१) होगा उतना ही जैसे का तैसा रूप दरसा कर देखनेवालों के मन पर ज्यादा असर कर सकेगा। (रास्तगुफ्तार मुंबई के एक प्रसिद्ध वर्तमान पत्र देखनें से मालुम होता है कि) थोड़े दिन पहले 'केमिंगटन पार्क' (लंदन के एक विभाग) की नाट्यशाला मैं गूंगे बहरे का एक नया नाटक हुआ। ये नाटक एक गूंगे बहरे का बनाया हुआ था और इस्के करनेवाले भी गूंगे बहरे थे। इसै देखने के लिए बहुत से गूंगे बहरे इकट्ठे हुए थे। ये नाटक ऐसी अच्छी तरह किया गया कि देखनेवाले नाटककारोंके हात की अंगुलियें, गर्दन की मरोड और शरीर की हलचल से उनका भाव तुरत समझ गए !!!

जैसे हिंदुस्थान आश्चर्य की बातों का भंडार है। इसमैं एक तरफ़ को बर्फ के हिमालय पर्वत, तो दूसरी तरफ़ गर्म देश की फलदायक भूमि अपने हरे हरे वृक्षों से मन को हरा करने के लिए मौजूद है, एक तरफ को सैकड़ों कोस मैं रेत के टीले, जल का संकोच, तो दूसरी तरफ को

---

(१) आजमूदःकार।

हजारों कोस मैं कदम, कदम पर जल की सरसाई और खेती बाड़ी का धंदा दिखाई देता है। एक तरफ को टूटी फूटी झोंपड़ी, फूस के छप्पर तो दूसरी तरफ को आगरे का ताजगंज, मथुरा वृंदाबन के मंदिर, देवगढ़ (वा दौलताबाद) का किला, इलरू (वा इलेरा) के मकान मन हरनें को तयार हैं, एक तरफ को जंगली रस्मैं दक्षण मथुरा (वा मीनाक्षी) की तोतियार जाति के सब कुनबे का एक स्त्री से ब्याहना, पलीवार, कलि-कोट, तेल्लिचेरी, मैं ब्याही स्त्री को स्वतंत्र(१) करके बापके घर छोड़ देने की रीति है। तो दूसरी तरफ को यहाँ के बुद्धिमान, धर्मात्मा, पराक्रमी, एक पत्नीव्रत वाले पुरुष और पतिव्रता स्त्रियों का जस सारे भूमंडल मैं विख्यात है। एक तरफ को यहाँ के लोग निरुद्यमी, कंगाल और दुर्बल होते जाते हैं तो दूसरी तरफ को काश्मीर के दुशाले और बनारस के कमख्वाब वगैरे अब तक सब देशों मैं प्रसिद्ध हैं। हिंदुस्थान मैं सब तरह की हवा, सब तरह के मोसम, सब तरह की बस्ती, सब तरह के आदमी, सब तरह के जानवर और सब तरह की जड़ी बूटी मौजूद हैं। बहुत क्या कहैं एक पर्वत के देखने मात्र से तीनों ऋतु आँख के सामने आ जाती हैं एक पहाड़ को जड़ मैं से देखो तो गर्म देश के आम, इमली आदि पेड़ मौजूद हैं। बीच मैं से देखो तो सर्द देश के बान, बरास, चील, देवदारू आदि दिखाई देते हैं और ऊपर बर्फ की हद के पास जाकर देखो तो भोजपत्र के सिवाय कुछ भी नहीं दिखाई देता। भावार्थ(२) ये कि जैसे हिंदुस्थान आश्चर्य की बातों का भंडार है इसी तरह इस हिंदुस्थानी नाटक मैं भी अनेक आश्चर्य की बातें, अनेक तरह के सुख दुःख, अनेक तरह के चाल चलन, अनेक तरह के सुभाव और अनेक तरह से सुभाव बदलने की रीति लिखी गई है, एक बात से अनेक आदमियों के मन मैं अनेक तरह के असर पैदा होने का रूप दरसाया है और अपनें बस पड़ते सर्व हितकारी (Public

---

(१) खुदमुख्त्यार (२) खुलासा।

spirit) भाव सै संसार के चित्र दिखानें का मुख्य बिचार रक्खा है। 'रणधीरसिंह' और 'प्रेममोहिनी' बिना सब नाम कल्पित (१) हैं। इसके किसी लेख को कोई मनुष्य या जाति अपनें ऊपर न समझे, सब जातों मैं सब तरह के आदमी होते हैं इस कारण इस्सै किसी खास मनुष्य या जाति को नीचे दिखाने या दुखी करने का हरगिज़ बिचार नहीं। हाँ अपने दोष (२) को इस नाटक मैं दोष रूपी देखकर किसी का जी दुखी होय तो उसे बेन् जान्सन, जगत प्रसिद्ध नाटककार का ये बचन पढ़ना चाहियै—

If any here chance to behold himself
Let him not dare to challenge me of wrong
For, if he shame to have his follies known,
First he should shame to act them.

अर्थ—जो कोई यहाँ (अर्थात् नाटकशाला मैं आकर) अपना मुख आप देखे तो मेरे ऊपर बुरे काम करने का दोषारोप (३) न करना क्योंकि जो उस्को अपनें दोष प्रगट होनें सै लाज आती हो तो उन दोषों के करनें सै प्रथम लजाना चाहियै।

जैसे अब तक कोई पुस्तक और पुस्तकों की थोड़ी बहुत सहायता लिए विना नहीं रची गई इसी तरह इस नाटक मैं भी तुलसीकृत रामायण, रामकलेवा, भूगोल हस्तामलक, शकुंतला नाटक, हरिश्चंद्र नाटक, विद्या-सुंदर नाटक, बिहारी सतसई, स्त्रीबोध, विषवृक्ष, हरिश्चंद्र मेगजीन और मनोरंजक रत्न वगैरे अनेक पुस्तकों की छंद वा आशय सै कहीं कहीं सहायता ली गई है और ग्रंथकर्ता उन सबका सच्चे मन सै उपकार मान्ता है।

ये नाटक इस समय प्रसिद्ध, प्रसिद्ध वर्तमान पत्रों के संपादक और अनेक विद्वान, बुद्धिमानों के पास भेजा जाता है परंतु इस्के पढ़ने सै उन्का कुछ हित होगा ये विचार कर नहीं भेजा जाता किंतु दर्पण के

(१) फर्ज़ी (२) ऐब (३) इलजाम रखना।

सामने जानें सै सबको अपना रूप दिखाई देता है इसी तरह उनकें दिखानें सै इस्का गुण दोष दिखाई देगा ये समझकर भेजा जाता है।

कवि दो तरह के होते हैं एक बचन का सिंगार करनेवाले, दूसरे भाव मैं चोज (१) रखनेवाले। वचनका सिंगार करनेवाले अपने लेख को अनुप्रास (२) अलंकारादि (३) सै हर तरह विचित्र (४) बनाया चाहते हैं उनकी कविता बहुधा संयोग, वियोगादि एक, एक बात पर हुआ करती है और उनमैं सै कोई पुस्तक रचने का साहस करता है तो उस्की बुद्धि लौकिक चतुर (५) न होने सै उस्के भाव बड़े बेढंगे हो जाते हैं—जब उन्हैं किसी की तारीफ करनी होती है तो राजा को इंद्र, हाती को ऐरावत, घोड़े को उच्चैश्रवा, गौ को कामधेनु, स्त्री को अप्सरा, वृक्ष को कल्पवृक्षादि बना देते हैं। जब निंदा करनी होती है तो राजा को यमराज, हाती को भैंसा, घोड़े को गधा, गौ को बकरी, स्त्री को चुडेल, वृक्ष को बबूल आदि लिख देते हैं परंतु इन बातों सै पढ़नेवालों को कुछ फायदा नहीं होता। भाषा मैं चोज रखने वाले केवल भाव पर दृष्टि रखते हैं उनकी रचना मैं साधारण रीति सै रूपक, उपमा, अनुप्रासादि आ जायँ तो भलेंई आ जाओ पर वे अपने मन मैं संसार की दशा दिखा कर लोगों को अनेक तरह के दुःख सुख का अनुभव कराया चाहते हैं, कोई मन पर असर होने की रीति, कोई मन बदलनें का समय, कोई भले बुरे कामों का परिणाम, कोई खोटे खरे आदमियों का चाल चलन वगैरे दिखाता है। इस रचना सै देखनेवालों के मन पर थोड़ा बहुत असर होना तो कवि की बुद्धि के आधीन रहा परंतु भाव मैं चोज रखनेवाले लौकिक चतुर होने के कारण पुस्तक आरंभ करने से पहलै परिणाम तक का पेच तो जरूर सोच लेते हैं। ये कविता रचनेवाले को कठिन पर पढ़नेवालों को बड़ी हितकारी है। इस रीति सै भाव मैं चोज

(१) सारांश (२) काफियेबंदी (३) शायरी की सनत (४) रंगीन (५) मामलेफहम।

रखना नाटक रचने वालों का मुख्य काम है परंतु मुझको इस नाटक मैं अपने पार लगने की कुछ आस नहीं।

सब तरह के रचना करनेवालों सै प्राय (१) तीन तरह की भूल हुआ करती है-एक लिपि दोष (ककार की जगह खकार और बकार की जगह वकार आदि लिखना। ये मूल ग्रंथ कर्त्ता के बदले लेखक सै बहुधा होती है)। दूसरा बचन दोष (पहले बचन को पीछे और पिछले बचन को पहलै लिख कर उलट पलट कर देना अथवा एक बचन मैं एक शब्द को अनेक बार लाकर बचन का रूप बिगाड़ देना अथवा साधारण बोलचाल मैं कठिन, कठिन शब्द डालकर उसै पेचदार बना देना अथवा स्त्रीलिंग की जगह पुल्लिग, एकबचन की जगह बहुबचन, और वर्तमान की जगह गत कालादि लिखकर व्याकरण की रीति सै वचन को अशुद्ध कर देना अथवा छंद की रीति सै विपरीत छंद रचकर छंद भंग कर डालना।) तीसरा भाव दोष (हरेक बात की उठान का अंत तक एक सा न निभना जैसे एक मनुष्य को आदि सै लोभी दिखाते चले आए हैं पर उसके सुभाव बदलने का कुछ कारण दिखाए बिना एक दम उस्को उदार बना देना अथवा पहलै सै एक मनुष्य को विचारवान् बनाते चले आए हैं पर उसके सुभाव बदलने का कुछ कारण जताए बिना उस्को अबिचारी बना देना इत्यादि) पुस्तक रचनेवाले को अपनें बस पड़ते इन सब दोषों सै बचना चाहियै परंतु लिपि दोष अथवा वचन दोष की साधारण भूल सै इतना बिगाड़ नहीं होता जितना भाव दोष सै सहज मैं हो जाता है। मुझको अपने अज्ञान सै 'रणधीर और प्रेममोहिनी' के नाटक मैं ऐसी अनेक भूल होने का भय है इस कारण मैं दीन होकर सब सज्जन पुरुषों सै अपनी भूल क्षमा कराता हूँ और ये निवेदन करता हूँ कि द्वेश वा वैर भाव सै निंदा करने वालों के सिवाय जो सज्जन अपक्षपात(२) होकर इस विषय मैं अपनी राय प्रगट करैंगे मैं उनका बड़ा उपकार मानूंगा और जो लोग

---

(१) अकसर। (२) बेरूरिआयत।

प्रीतिभाव से अपनी लिखी अथवा छपी हुई राय मेरे पास भेज देंगे उन्का मेरे ऊपर और भी ज्यादे उपकार होगा ।

अंत मैं ईश्वर के अगणित उपकारों को भूल कर केवल इस नाटक के निर्विघ्न पूरे होने का उपकार माना जाय तो बड़ी कृतघ्नता है इसलिए ईश्वर की अकारण कृपा का अमित उपकार मान कर "बररुचि" के इस बचन पर मैं ये निवेदन समाप्त करता हूँ ।

इतरकर्मफलानियदृच्छया विलिखितानिसहेचतुरानन
अरसिकेषुकवित्वनिवेदनं शिरसि मालिख मालिख मालिख"

दिल्ली १ जून, १८७७ ईस्वी । ग्रंथकर्ता

श्रीनिवास दास

—:※:—

संकेत

इस देश मैं नाटक का प्रचार बहुत कम है और नाटक मैं ऐसे अनेक संकेत आते हैं जो साधारण बाचने को पुस्तकों मैं नहीं होते; इस कारण नाटक करने और पढ़ने वालों की सुगमता (आसानी) के लिए उन संकेतों का कुछ मतलब यहाँ लिखा जाता है :

आदि मैं किसी मनुष्य के नाम से आगे ऐसा—चिन्ह हो तो इस चिन्ह से अगले बचन को उस मनुष्य का बचन समझना और ये—चिन्ह बीच मैं आ जाय तो यहाँ रुक कर पढ़ना। इसी तरह दो, तीन जगह एक, एक अक्षर के बीच मैं ये—चिन्ह आ जाय तो वहाँ बोलते, बोलते ऐसे रुक जाना जैसे कोई बात कहते, कहते किसी कारण से अचानक रुक जाता है।

जो बात ( ) गोलाकार के भीतर लिखी गई वो किसी नाटककार की तरफ से कहने की नहीं है किंतु नाटक करने और पढ़ने वालों को समझाने के लिए ग्रंथकार की तरफ से है। जहाँ इस रीति से (मन मैं) लिखा हो उसके अगले बचन को नाटककार इस ढब से कहै कि मानों अपने मन मैं कह रहा है जहाँ (मन मैं) अथवा (प्रगट) कुछ न लिखा हो उस वचन को भी प्रगट मैं कहने का ही समझै। जहाँ इस रीति से (गया) अथवा (आया) लिखा हो वहाँ उस नाटक पात्र का रंगभूमि से नेपथ्य मैं जाना अथवा नेपथ्य से रंगभूमि मैं आना समझै; जहाँ इस तरह से (नेपथ्य मैं शब्द हुआ) लिखा है वहाँ परदे के भीतर की आवाज़ जानो, जहाँ इस रीति से बैठना, उठना, हँसना, रोना आदि लिखा है वहाँ नाटक पात्र को उसी तरह का भाव दिखाना चाहियै और जहाँ इन बातों के सिवाय किसी बचन के बीच मैं गोलाकार के भीतर और कोई

शब्द आ जाय तो उस्को पहले शब्द का अर्थ समझना जैसे ऊपर "सुगमता" के आगे गोलाकार मैं "आसानी" लिखी गई है।

. और चिन्हों मैं ऐसा, (.कोमा) किंचित विश्राम, ऐसा; (सिमीकोलन) अथवा ऐसा : (कोलन) अर्ध विश्राम; ऐसा. (फुलिस्टोप) पूर्ण विश्राम, ऐसा ? (इंट्रोगेशन) प्रश्न की जगह, ऐसा ! (एक्सक्लमेशन) आश्चर्य अथवा संबोधन वगैरे के जो शब्द जोर देकर बोलनें चाहियें उनके आगे और ऐसे " " (इनवरटेड कोमा) दूसरी पुस्तक के लिखे हुए, अथवा दूसरे के कहे हुए बचन पर उसको अलग दिखाने के लिए लगाए जाते हैं।

रंगभूमि, नाटक अथवा तमाशे होने की जगह, जवनिका, रंगभूमि मैं स्थान का रूप दिखाने वाला परदा और नेपथ्य जवनिका सै पीछै रूप बन्नै वगैरे की जगह को कहते हैं।

प्यारे, सदादर्श सम्मिलित क० व० सुधा (१) के पढ़ने वाले!

जब मैं सदादर्श अपनी जन्मभूमि छोड़ कर काशी वास करने चला गया अथवा यों कहो कि सदादर्शने कवि बचन सुधा सै मिल कर काशी को प्रयाग बना दिया तब मैं आप लोगों का वियोग मेरे मन को बेचैन करता था, आपसै मिलने को हर घड़ी जी भटकता था पर खाली हात जाना अनुचित मालूम हुआ इस कारण ये "रणधीर और प्रेममोहिनी" का नाटक आपके पास लाया हूँ यदि इस्के देखनें सै "सदादर्श सम्मिलित क० व० सुधा" मैं आप की कुछ प्रीति बढेगी तो मैं ईश्वर की कृपा सै अपना परिश्रम सफल समझूँगा।

सदादर्श का प्रथम सम्पादक

श्री निवास दास

(१) कवि वचन सुधा—भारतेंदु बाबूहरिश्चंद्र द्वारा स्थापित पत्रिका।

नाटक पात्रों के नाम।

पुरुष

रणधीरसिंह—नायक

रिपुदमन—रणधीरसिंह का मित्र

सोमदत्त—रणधीरसिंह का पंडित

सुखबासी लाल—रणधीरसिंह का कारिंदा

नाथूराम—रणधीरसिंह का मोदी

निरंजन चौबे—विदूषक

जीवन—रणधीरसिंह का सेवक

सूरत के महाराज अथवा सूरतपति

पाटन के महाराज अथवा पाटनपति

स्त्री

प्रेममोहिनी—नायका

मालती—प्रेममोहिनी की सखी

चंपा—प्रेममोहिनी की सखी

सरोजिनी—वेश्या।

अनेक राजा, सूरत का मंत्री, पाटन का मंत्री, सूरत का सेनापति, पाटन का सेनापति, सेना, और सेवक इत्यादि।

नगर सूरत।

रणधीर और प्रेममोहिनी

नाटक

प्रथम अंक

प्रथम गर्भांक

स्थान—सूरत का राजमहल

[चंपा पान लगाकर पानदान में रखती है और मालती प्रेममोहिनी की रत्नजटित प्रतिमा लेकर आती है ।]

चंपा—(देखकर) प्यारी ये क्या लाई ? क्या प्रेममोहिनी की प्रतिमा है ? आहा ! ये तो बड़ी सुंदर ! इसका मुख देखो मानों अभी हँस पड़ेगी, देखें, इसको यहाँ लाना । (हाथ में लेकर) सखी ! इसका रचनेवाला ब्रह्मा से क्या कम है । इसकी लाज भरी चितवन, रस भरे होठ और हास्य भरे कपोल, कैसे सुहावने लगते हैं !!!

मालती—बस बहन ! क्षमा करो, तुम्हारी परख मैंने देख ली । तुम इसकी इतनी बड़ाई करती हो पर मुझको तो प्रेममोहिनी के आगे ये कुछ भी नहीं जँचती । उसको दैव ने अनुपम बनाया है । उसके सुभाव की

लायकी और चतुराई तो अलग रही, उसके मुख की ज्योति पल पल में, चंद्रकला सी बढ़ती है। उसके शरीरकी लावण्यता (१)से, एक एक गहने के, तीन तीन, चार चार रूप दिखायी देते हैं। उसकी शरीर की सुगंधि से भौंरे मतवाले होकर गूँजते हैं, सो इसमें कहाँ से आवेंगे ?

प्रेममोहिनी—(आकर, दूर से इनको देख मन में) सखी है तो क्या हुआ, दो जनों के बतलावन (२) के बीच जाना मुनासिब नहीं। (कुछ हटकर खड़ी हुई)

चंपा—भला प्यारी ! तू जीती, मैं हारी; पर ये तो बता, महाराज ने ये प्रतिमा किस लिए बनावायी है ?

मालती—बलिहारी ! अब तक यह नहीं मालूम ! प्रेममोहिनी के स्वयंबर में शस्त्र विद्या की परीक्षा के बीच जो वीर रणधीर ठहरेगा उसको उसी समय ये प्रतिमा दी जायगी।

प्रेममोहिनी—(सुनकर मन में) यह तो मेरे स्वयंवर की चर्चा कर रही हैं, इन बातों के सुनने में क्या डर है ! हाँ मैं इनके पास जाऊँगी तो ये चुप हो रहेंगी या मेरी मन सुहाती बातें करने लगेंगी, इसलिए छिप कर इनके मन की बातें सुनूँ। (एक किनारे खड़ी हो गई)

चंपा—भला, परीक्षा में तो कोई न कोई अवश्य जीतेगा पर राज-कुमारी के समान बर मिलना तो बहुत कठिन है।

मालती—सखी ! यह न कहो, परमेश्वर की माया अपरंपार है, उसने चंद्रमा को तारों से अधिक बनाया, पर सूरज से नहीं।

चंपा—सखी ! राजकुमारी से अधिक रूपवान और गुणवान भी कोई होगा ?

मालती—क्यों नहीं। मेरा तेरा जो एक है, इसलिये कहती हूँ तू ने रणधीर कुमार को देखा है ? सखी ! उसको स्मरण करते ही शरीर के

---

(१) 'उसके शरीर के लावण्य से' होना चाहिए था। (२) बातचीत

रोम खड़े हो जाते हैं। उसका सब अंग सांचे ढाल बना है। मैंने तो ऐसी सजधज का ज्वान सब उमर में कभी नहीं देखा था। जिस समय वह अपने 'पवनवेग' घोड़े को किले के मैदान में फेरकर अपना कर्तब दिखाता है, उस समय, और राजकुमार उसकी फुर्ती देख, चकित हो, चित्र बन जाते हैं। उसके शरीर में चुस्त पोशाक ऐसी जमकर बैठती है कि बहुत से राजकुमार उसकी नकल करते हैं। जिस समय उसके मनोहर मुख की रसभरी मुसकान और झलकते नेत्रों की मदमाती चितवन मेरे ध्यान में आती है, मेरी तो सुध बुध ठिकाने नहीं रहती। मैं उसकी अलबेली छबि कहाँ तक वर्णन करूँ; सब नगर उसकी मोहिनी मूरत देख मोहित हो रहा है।

चंपा—इसमें संदेह नहीं, सब नगर निवासियों के मन में उसकी प्रेम छाप हो गयी, परंतु राजकुल निश्चय हुए बिना तो वह राजकुमारी के लायक नहीं ठहर सकता।

प्रेममोहिनी—(मन में) यह बातें मैंने क्यों सुनी! मनुष्य का मन एक सरोवर के समान है, जैसे सरोवर में तारे, आकाश, चंद्रमा, वृक्ष और पर्वतादिक की अनेक परछाँही पड़ती है, उसी तरह मनुष्य के मन में भी अनेक बातों का ध्यान बना रहता है और जैसे सरोवर में एक कंकरी डालने से वह परछाँही बिगड़ जाती है इसी तरह मनुष्य के मन में भी किसी बात का नया विचार आने से पहले के सब विचारों में हलचल पड़ जाती है। हा! यह सब जानने का दुःख है, जो इस बात की भनक मेरे कान तक न पहुँची होती, तो मुझको इस पंचायती से क्या काम था। (आगे बढ़कर प्रकट में) सखी, क्या कर रही हो?

मालती—तुम्हारी चर्चा।

प्रेममोहिनी—ठीक, 'मेरा तेरा जी एक' थोड़े ही है, जो तू मुझसे अपने मन की बात कहेगी।

मालती—(मन में) इसने हमारी बातें सुन ली या यों ही मेरी कहन इसके मुँह से निकल गयी। कुछ भी हो, अब इस ढब से बात करनी चाहिए, जिसमें पीछे झूठा न होना पड़े। (प्रकट में) राजकुमारी हम तुम्हारे आधीन (१) हैं। तुम्हारे दुःख सुख से हमको दुःख सुख होता है, पर हमको 'एकजी' कहने का अधिकार नहीं; (मुस्कुराकर) हाँ, भगवान करेगा तो थोड़े दिन में ही यह कहलाने वाला भी मिल जायगा!

प्रेममोहिनी—चल, हँसी में बात न डाल। सच कह तू किसकी "चर्चा" कर रही थी।

मालती—तुम्हारी और तुम्हारी प्रतिमा की।

प्रेममोहिनी—(मन में) प्रतिमा के बहाने से यह उसे जताती है पर संकोच के मारे खुलकर नहीं कहती, अच्छा अब इसे भुलावा देकर पूछना चाहिए। (प्रकट में) क्यों सखी! यहाँ इस समय कितने राज-कुमार आए हैं?

मालती—क्या कहूँ? सैकड़ों (राजकुमार) आ चुके हैं, और अब तक आने के तार (२) में हैं।

प्रेममोहिनी—भला, इनमें कोई मेरे लायक भी है?

मालती—सो मैं नहीं कह सकती। शोभा का एक आकार नहीं हो सकता, जो जिसको सुहावना लगता है, वह उसी को रूपवान समझता है।

प्रेममोहिनी—अच्छा, तुझको कौन सुहावना लगता है?

मालती—तुम।

प्रेममोहिनी—और रणधीर?

मालती—सो तो परीक्षा के दिन निश्चय होगा।

प्रेममोहिनी—(मन में) इसकी पेचीली कहन से दर्पन की परछांई के समान अर्थ समझ में आता है, पर यह पकड़ में नहीं आती।

---

(१) अधीन (२) ब्योंत।

(प्रकट में) सखी ! चंद्रमा छिपाये से नहीं छिपता ? मैं तेरे मुख से 'रणधीर' का सब हाल सुन चुकी हूँ ।

मालती—मुझको नहीं मालूम था कि तुम्हारे मन को भी उस चंद्रमा ने 'चंद्रकांति मणि' बना लिया ।

प्रेममोहिनी—(लजाकर) नहीं सखी, मैं मोहित नहीं हुई; जैसे दूज के चंद्रमा को संसार 'पुराय दर्शन' समझ कर देखता है, वैसे ही रणधीर को एक बार देखने की मेरे मन में इच्छा है । परंतु मैं सुभाव की परीक्षा किये बिना प्रीति नहीं किया चाहती; क्योंकि गुण की प्रीति के समान रूप की प्रीति मन में नहीं होती, केवल आँखों में रहती है, और रूप घटने अथवा उसके अधिक मिलने पर वो तत्काल घट जाती है ।

मालती—भगवान करें, यह इच्छा यों ही रहे ।

चंपा—क्यों सखी क्यों ? तू क्या राजकुमारी की प्रसन्नता से दुःखी होती है ?

मालती—ना, दुःखी नहीं सुखी होती हूँ; पर सची प्रसन्नता से सुखी होती हूं । राजकुमारी रणधीर को देख कर मोहित हो जाय और महाराज किसी दूसरे राजकुमार का निश्चय करें तो अच्छा नहीं । रणधीर निःसंदेह रणधीर है और उसकी फुर्ती से उसकी यह विद्या द्रोणाचार्य ने सिखायी हो ऐसा जाना जाता है । परंतु जीत किसी के हात नहीं, यह बहुधा (१) नालायकों को मिल जाती है और लायक मुँह ताकते ही रह जाते हैं, इससे कोई बात निश्चय न हो तब तक राजकुमारी की इच्छा यों ही रहे तो अच्छी बात है ।

प्रेममोहिनी—हाँ मालती, सच कहती हो । भली बुरी दरसावे सो ही हितू गिना जाता है । इसने मुझे चेताया तो मुझको रणधीर की धीरता से क्या ? मैं तो पराधीन हूँ ।

---

(१) अकसर ।

चंपा—राजकुमारी ! पूजन का समय हो गया, चलो इसमें देर न होनी चाहिए। देवताओं की कृपा से तुम्हारी सब इच्छाएँ पूरी होंगी।

मालती—(घंटे की टकोर सुनकर) देखो घंटा भी गवाही देता है।

प्रेममोहिनी—(मन में) ऐसा ही हो। मैं पिता की आज्ञा को उच्च मानती हूं। पर मेरा मन भूल से एक बार रणधीर की तरफ जा चुका, इस कारण अब मुझको औरों से प्रीति करते लज्जा आती है।

(सब जाती हैं)

इति प्रथम गर्भांक।

द्वितीय गर्भांक।

स्थान, पर्वत की कंदरा

(रिपुदमन वीर वेश से आया।)

रिपुदमन—(मन में) इस सुहावने पर्वत में पक्षियों के कोलाहल से कान पड़ी आवाज़ भी नहीं सुनायो देती, और वृक्षों की हरियाली के बीच निर्मल झरनों का जल सूर्य की किरणों से मिलकर नई शोभा दिखाता है, चारों तरफ पशु-पक्षी आनंद से किलोल कर रहे हैं, पर अब तक कोई सिंह शिकार के लिए मेरे सन्मुख नहीं आया; (आगे सिंह को सोते देख, पैर से पूँछ दबाकर) उठ गीदड़, बैरी के आये पीछे निशंक होकर क्या सोता है !

(सिंह क्रोध से उठकर रिपुदमन की तरफ झपटा, रिपुदमन ने फुर्ती से तलवार निकाल उस पर वार किया पर दो वार खाली गया और वह अपने जोर से आप धरती पर गिर पड़ा ।)

रिपुदमन—(**मन में शोक से**) मुझे अपने मरने का कुछ भय नहीं, जिसने जन्म लिया है वह एक दिन अवश्य मरेगा, पर मनुष्य देह पाकर जो काम करना चाहिए सो मुझसे नहीं बन पड़ा, यह पछतावा मैं अपने संग ले जाता हूं । अच्छा, अब तो केवल ईश्वर के स्मरण करने का समय है ।

(सिंह ने पंजा उठाया पर अचानक रणधीर ने एक कोने से निकल कर सिंह के पेट में ऐसी कटार मारी जिससे वह बेसुध होकर गिर पड़ा ।)

रणधीर—(**मन में**) भगवान् की कृपा से इस वीर के प्राण बचे सो अच्छा हुआ । पर अब यह मुझको यहाँ देखकर वृथा लजावेगा ।

(जाने लगा)

रिपुदमन—(**आश्चर्य से मन में**) मैंने कैसी अचरज की बात देखी । क्या अब तक मेरा मन ठिकाने था, इस वीर ने किस कारण अपने प्राण झोंक कर मेरी रक्षा की ? और रक्षा भी की तो मुझसे बिना मिले क्यों चला ? इस कलिकाल में किसी से कोई अच्छा काम बन जाता है, तो वह जन्म भर अपनी बड़ाई मारता है । फिर जो मनुष्य इतना बड़ा काम करके कुछ न जतावे, उसको साधारण आदमी कैसे समझूँ ! मेरे मन में इस वीर से प्रीति करने की बड़ी चाहना है, पर ऐसे सज्जन खुशामद की बातों से कभी प्रसन्न नहीं होते । इस कारण पहले इनसे छेड़छाड़ की बातें करूँ ; (**प्रकट में रणधीर से**) आपके काम से आप क्षत्री जाने जाते हो, पर आपने मेरे निशाने पर शस्त्र चलाया सो अच्छा नहीं किया ।

रणधीर—(**फिरकर मुसकुराते हुए**) मेरा ध्यान इस बात पर न था ।

रिपुदमन—तो इसके बदले में आप को अपना निशाना बनाऊँ ?

रणधीर—निःसंदेह ।

रिपुदमन—अच्छा, तो मैं आपके मन को अपना निशाना बनाकर प्रेमबाण छोड़ता हूँ ।

रणधीर—पर ये शिकार तो शिकारी के शिकार हुए बिना हात नहीं आती । (**अर्थात् दूसरे के मन में अपनी प्रीति उत्पन्न करने के पहले अपने मन में उसकी प्रीति करनी चाहिए ।**)

रिपुदमन—सो मैं तो पहले ही अपने शिकार के साथ आपका शिकार हो चुका, पर आपके मन को अपना शिकार बनाने के लिये मेरी सामर्थ्य नहीं है ।

रणधीर—समर्थवानों के कहने की यही रीति होती है—

दोहा—गरजै सो बरसै नहीं, शरद जलद अनुमान ।
बरसै सो गरजै नहीं, वर्षा मेघ समान ॥ १ ॥

रिपुदमन—यह तो चंदन की बड़ाई है जो अपने आस पास के वृक्षों को अपनी बराबर के (१) बना लेता है; भला यह सुखदाई चंदन कौन से बाग की रमणीक भूमि में शोभायमान है । (**अर्थात् आप कहाँ रहते हैं ।**)

रणधीर—इसकी पोद (२) थोड़े दिन पहले एक मनोहर बाग से उखाड़ कर सूरत में लगाई गई थी ।

रिपुदमन—अच्छा, उस बाग का नाम क्या है ?

रणधीर—(**मन में**) अब क्या जवाब दूं; झूंट बोलना मुनासिब नहीं और सच कहने में बिगाड़ होता है; (**विचार कर प्रकट**) पाटल की पिछली तिहाई न होने से (३) उसका नाम आपको मालूम होगा ।

---

(१) का (२) पौध सं० पोत (३) पाटन ।

रिपुदमन—(**मन में**) इनके इस वचन का अर्थ इस समय समझ में नहीं आता, कदाचित विचारने से आ जाय, पर न आवे तो भी इनसे पूछना तो मुनासिब नहीं, क्योंकि इनको समझाकर कहना होता तो पहले ही लपेट कर क्यों कहते; (**प्रकट**) मुनासिब हो तो कृपा करके आप अपना नाम और बता दें।

रणधीर—अच्छा, इस अंगूठी से आपको मेरा नाम मालूम होगा। (**अपनी अंगुली से अंगूठी उतार दी।**)

रिपुदमन—(**अंगूठी ले, रणधीर का नाम बांच हर्ष से**) आहा! बड़ा अच्छा हुआ "यथा नामः तथा गुणः" के सिवाय इसमें आदि और अंत का एक सा आकार देख कर मेरा मन हर्ष से उछलता है, मैं भी ऐसे ही सज्जन से प्रीति किया चाहता था। (**अंगूठी पहर ली**)

रणधीर—और प्रीति हो भी गयी!

रिपुदमन—निःसंदेह, जब आपने कृपा करके अपनी अंगूठी मुझको दे दी, तो प्रीति करने में क्या संदेह रहा।

रणधीर—पर मैं तो अब तक आपके नाम गाम से अजान हूँ।

रिपुदमन—अच्छा, ये मेरी अँगूठी आप लीजिए। (**अपनी अँगूठी के बदले भूलकर रणधीर की अँगूठी उतार दी।**)

रणधीर—(**अपनी अँगूठी देखकर मन में**) यह बड़ी अच्छी बात हुई जो इन्होंने भूलकर अपनी अँगूठी के बदले मेरी अँगूठी उतार दी, इनका नाम तो अब नहीं, दो घड़ी पीछे मालूम हो जायगा पर ये अँगूठी किसी समय बड़े काम आवेगी; (**प्रकट**) किसी काम में जल्दी करनी अच्छी नहीं होती, देखो, जो लोग जल्दी कर कच्चा फल तोड़ लेते हैं, उनको फल का तो स्वाद मिलता ही नहीं पर बीज का नाश बृथा हो जाता है।

रिपुदमन—(**उदास होकर**) आप जानों आपका काम जाने मैंने तो अपने मन में आपसे सच्ची प्रीति कर ली।

रणधीर—यही तो पेंच है, जबतक आपके मन में मेरी तरफ से कुछ संदेह रहे, अथवा आप मुझसे कठोर और कपटी रहे, तब तक मैं आप से अंतर रक्खूँ, अपना भेद छिपाऊँ तो चिंता नहीं, पर आप मुझसे निरंतर प्रीति करें और मैं आपसे अपने मन की बात न कहूँ; ये बातें मेरे स्वभाव से उल्टी हैं।

रिपुदमन—तो आप विश्वास रक्खें जो लोग बिना जानें पहचानें आपस में मिल बैठते हैं, उनसे मैं ज्यादा सच्चा निकलूँगा।

रणधीर—संसार में किसी तरह के प्रयोजन बिना कोई किसी काम में प्रवृत्त नहीं होता, पर जो लोग लौकिक चतुर हैं, वे आदि में दूसरे से मिलते ही अपना कुछ प्रयोजन नहीं जनाते, प्रीति हुए बाद दूसरे पर सब तरह का बोझ डाल कर अपना प्रयोजन प्रकट करते हैं, उस समय संकोच में आकर या तो दूसरे को उनका प्रयोजन सिद्ध करना पड़ता है या दोनों में परस्पर बिगाड़ हो जाता है। ऐसे संकोच अथवा बिगाड़ होने के बदले आदि में प्रीसि करने वाले का प्रयोजन समझ लिया जाय, और उसका काम हो सके तो उसके कहने से, पहले कर दिया जाय, न हो सके तो उसको पीछे के लिए धोखे में न रखा जाय; ये बातें मेरी राय में अच्छी हैं। आप इस बात को कैसी समझते हैं?

रिपुदमन—आपका यह बिचार बहुत अच्छा है परंतु मैं इस समय तक आप की सच्ची प्रीति सिवाय और कुछ नहीं चाहता, आपने मेरी प्राण-रक्षा की और आप के स्वाभाविक गुण देखकर मन मोहित हो गया, इस कारण मैं आपसे केवल प्रीति चाहता हूँ।

रणधीर—निस्संदेह, आपकी लायकी देख कर मेरे मन में भी प्रीति उत्पन्न होती है।

रिपुदमन—हँसी में कोई बात मेरे मुख से निकल जाय तो आप क्षमा करें।

रणधीर—यह विचार तो दोनों तरफ रहना चाहिये क्योंकि स्नेह (१) से भरे हुए दीपक को भी पवन से बुझने का डर रहता है।

रिपुदमन—आपका इस पर्वत पर आना कैसे हुआ था ?

रणधीर—मुझको अवकाश होता है तब वृक्षावली में ईश्वर की रचना देखने के लिए मैं यहाँ चला आता हूँ। एक बीज से वृक्ष उत्पन्न होना, उसमें एक तरह के हजारों पत्तों का लगना, फूलों का खिलना, बीज का मिलना, कुछ थोड़े अचरज की बात नहीं है !

रिपुदमन—(एक गुलाब के पुष्प की तरफ देखकर) देखो ! यह गुलाब का फूल अपने रूप रंग के अभिमान से ऐसा खिल रहा है मानों अपनी भेद (२) मुस्कान से बन के सब फूलों की हँसी सी करता हो !

रणधीर—यह तो इसकी जड़ बुद्धि है क्योंकि ईश्वर के बाग में एक से एक अच्छा फूल दिखायी देता है और इसी रंग के बहुत से गुलाब लग लग कर सूख चुके हैं, फिर इसकी सुगंधि से पवन सुगंधित न हुई तो इसने दो दिन की अनित्य शोभा पर वृथा अभिमान करके क्या किया ?

रिपुदमन—आहा ! बातों ही बातों में संध्या हो गई, देखो वह सामने का वृक्ष जो घड़ी भर पहले सूर्य के तेज से झलक रहा था, सूर्य के अस्त होने से अपने आप मलीन हो गया।

रणधीर—मनुष्य के उदय अस्त का भी यही हाल है वह सदा अपनी बढ़ती चाहता है पर उसका नफा नुकसान होनहार के अधीन रहता है, ओ हो ! (मुख पर उदासी छा गयी)

रिपुदमन—देखो, संसार दुःख रूप है, इसमें कोई दुःख नहीं चाहता, परंतु दुःख बारंबार सबके ऊपर आ पड़ता है और दुःख का अभाव मात्र सुख समझा जाता है। होनहार किसी के रोके नहीं रुकती, इस कारण

---

१ तैल। २ भेद भरी

बुद्धिमान दुःख सुख को अनित्य समझ कर सदा एक से रहते हैं। चलिये अब साँझ हुई, मैं आपके स्थान पर होकर अपने मकान को जाऊँगा।

रणधीर—(**मन में**) हमारी मर्जी बमूजब तो इनका सत्कार यहाँ कहाँ बन पड़ेगा ? (**प्रकट**) अच्छा, चलिये मित्र को अपने घर जिमाने और आप उसके घर जीमने, अपने सुख दुःख की बात उससे कहने और उसके सुख दुःख की बात सुनने से सदा प्रीति बढ़ती है; (**मन में**) जब इनसे प्रीति करनी ठैरी (१) तो पहले इनका स्वभाव जानना चाहिये क्योंकि जिसमें जिसका स्वभाव मिलता है उससे उसको प्रीति होती है, आज इनके आगे हँसी चोहल (२) की बातें कर, गाने की चर्चा छेड़, शास्त्र का प्रसंग ला, इनके मन की रुचि परख लें; (**चलते हुए प्रकट**) हमारे यहाँ एक चौबे हास्यरस में बड़े कुशल हैं उनकी बातें सुनकर आप हँसते हँसते लोट जाँयगे।

[**दोनों गये**]

इति द्वितीय गर्भांक

---

(१) ठहरी (२) चुहल—मनोरंजन।

तृतीय गर्भांक

स्थान, रणधीरसिंह का महल

(सुखवासी लाल और नाथूरामबैठे हैं)

सुखवासीलाल—सेठ जी ! तुम्हारे किन लोगों की रहंटी हैं ? (१)

नाथूराम—(हात जोड़ कर) अन्दाता जी ! मैं तो माल्यांरी बली करूँ छूँ । (२)

सुखवासीलाल—ब्याज क्या लेते हो ?

नाथूराम—दस का बारा कर, रप्या महीना री खंदी, लिया कराँछा । (३)

सुखवासीलाल—लेकिन चार उतरे पीछे दो देकर दस के बारह कर लेते हो, इसके गायले की क्या हद !

नाथूराम—(सिटपिटा कर) हैं अन्दाता यो तो म्हरो धँदोई ठैरो । (४)

सुखवासीलाल—तुम्हारा यह धंधा है कि भोले आदमियों को फुसलाकर दो के चार कर लो । (५)

नाथूराम—(मन में) आप तो मूंडा मैं मूँग घाल्या बैठा छै ।

---

(१) तुम्हारे किन लोगों का लेन देन है ?

(२) अन्नदाता ! मैं मालियों का लेन देन करता हूँ ।

(३) दस के बारह करके रुपये महीने की किश्त लिया करते हैं ।

(४) अन्नदाता यह तो हमारा रोजगार ही ठैरा ।

(५) तुम्हारा यह रोजगार है कि भोले आदमियों को बहका कर दो के चार कर लो ।

(प्रकट) मैं अन्दाता देसी स अपनी गरज सै देसी म्हारा कह्याँ कुण देवै छै। (१)

सुखबासीलाल—तुमको देश से आए कितने बरस हुए ?

नाथूराम—हणैं कोई साढीक बारा वर्ष हुआ होशी। (२)

सुखबासीलाल—तुम्हारे बाल बच्चे कहाँ हैं ?

नाथूराम—देस मैं, अठै ल्याऊँ तो उठारो रहवास छूट जाय। (३)

सुखबासीलाल—(मन में) ये लोग भी एक किस्म के वहशी हैं, इनसे दुनियाँ के लोगों को किसी तरह का फायदा नहीं पहुँचता और ये दुनियाँ के लोगों से कुछ हज नहीं उठाते, नाशिस्त बरखास्त और खुरो नोश की इनको मुतलक तमीज नहीं, बस तमै की अंधेरी चढ़ाकर, तेली के बैल की तरह, तमाम उम्र गैर मुल्कों में फिरते हैं और हशरातुल अर्ज की तरह हर शहर व कस्बे में नजर आते हैं; सर्राफी, बजाजी, गुमश्तहगरी, दल्लाली, गल्ले फरोशी वगैरह हर किस्म के रोजगार में इनका कदम अड़ रहा है, मगर दुनियाँ के मुल्की व खानगी मामलात से ये महज नावाकिफ हैं और इल्म की रहनुमाई बगैर, गोहरे मुराद का दस्तयाब होना भी आसान नहीं; (प्रकट) तुम अपनी औलाद को बचपन में इल्म सिखाने की कोशिश क्यों नहीं करते ? (४)

---

(१) (मन में) आप तो मुँह में मूँग (**इस तरफ वाले कहते हैं 'सोना'**) डाले बैठे हैं (प्रगट) नहीं अन्नदाता देगा सो अपनी गर्ज से देगा हमारे कहने से कौन देता है।

(२) अब तक कोई साढ़े बारह बरस हुए होंगे।

(३) देश में (हैं) यहाँ लाऊँ तो वहाँ का रहना छूट जाय।

(४) (मन में) ये लोग भी एक तरह के जंगली हैं इनसे संसार के लोगों का कुछ हित नहीं होता और ये संसार के लोगों से कुछ सुख नहीं उठाते, बैठने उठने और खाने पीने का इनको कुछ विचार नहीं, बस लालच की अँधेरी चढा कर तेली के बैल की तरह जन्म भर परदेश में

नाथूराम—कागद पत्तर, लेखो, जोखो, नकल जमा खर्च तो शग-लाई भणैं छै, पिण जिकेरी बुद्ध तीखी हुवे सो तो गीता और सहस्सर नांव भी भण लेवै छै, इणसे बिसेस भणकर क्या करां ? टीपणों बाचणों नहीं, कथा सुनाणी नहीं, मौलवी बणनों नहीं, खत लिखणों नहीं; म्हारे भाणजारो सालो हिम्मतराम चौरटियो सैंस्कृत भण गयो, छोस रुजगार धन्दाई सै जातो रह्यो (१)।

सुखबासीलाल—(**मन में**) ऐसे जाहिलों का खुदा हाफिज (२) (**प्रकट**) क्यों तुम्हारी तरह वह झूठे बही खाते तो न बनाता होगा ?

नाथूराम—(**कुछ तेज होकर**) अन्दाता जी ! या बात आप का फुर्माबा लायक नहीं छै, गाँव गोठांरा बोरा मैं कोई धरम हार, इश्यो काम भलां ही कर लो, म्हे लोग मरता मरज्याश्यां तो पण, म्हासै खोटो कागद कदे नहीं बणायो जासी। सोदो सही करां पीछै हजारां रुप्यांरो घाटो होसी

फिरते है और चौमासे के जीव जन्तु की तरह हर एक नगर और गाँव में दिखायी देते हैं; सराफी, बजाजी, गुमास्तगीरी, दलाली नाज की बिक्री आदि हर तरह के रूजगार में इनका पांव अड़ रहा है, परंतु संसार में देश और गृहस्थ के काम काज से ये लोग बिलकुल अजान हैं और विद्या के मार्ग बताये बिना कामना के मोती का हाथ लगना भी सहज नहीं (**प्रकट**) तुम अपनी संतान को बालकपन में विद्या ही पढ़ाने का उद्योग क्यों नहीं करते।

(१) कागज पत्र, हिसाब किताब, नकल जमा खर्च तो सब पढ़ते हैं; जिसकी बुद्धि तीक्ष्ण हो सो तो गीता और सहस्रनाम भी पढ़ लेता है, इसमें विशेष पढ़ कर क्या करें। पंचांग बाचना नहीं, कथा सुनानी नहीं, मौलवी बनना नहीं, खत लिखना नहीं। हमारे भानजे का साला हिम्मत-राम चौरटिया संस्कृत पढ़ गया था, सो रोजगार धंदे ही से जाता रहा।

(२) ऐसे मूर्खों का परमेश्वर रक्षक।

तोही कच्ची जबान कदी नहीं निकालांगा, इश्यो काम करां तों म्हारी एक दिन मैं साख जाती रहै। (१)

सुखबासीलाल—नहीं सेठ जी, खफा न हो; मैंने यह बात तो दिल्लगी के वास्ते कह दी थी, लेकिन आप यह बताइये कि आपके भांजे का साला रोजगार धंधे से क्यों जाता रहा ?

नाथूराम—उणनैं पहली तो पोथी पानडासै ही मौसर नहीं, फिर मीनत मजूरीरा कामसूं घबरावै, जिद रुजगार धंदों कांकर होय ! मैं तो उणरो यो बिर्तात देख, अपना टाबरनै गुरू जी री पोशाल मांही नहीं जाणँ दीनो छै। (२)

सुखबासीलाल—(मन में) यह हमारे समझाने से समझने लायक नहीं हैं, (प्रकट) अच्छा, हमारी सरकार का हिसाब लाये हो ?

नाथूराम—हाँ अनूदाता लायो हूँ। (३)

सुखबासीलाल—कुल कितने रुपये जुड़े ?

नाथूराम—हणे घडो नहीं लगायो, (मन में) पहली ही घडो बता देस्यूं तो पछै बडावारी गुंजास कठै रहसी (४)।

---

(१) अन्नदाता ! यह बात आपके फर्माने लायक नहीं है, गाँव गवइं के व्यवहारियों में कोई बेईमान ऐसा काम भले ही कर ले, हम लोग मरते मर जांयगे तो भी झूठा कागज कभी नही बनावेंगे, सौदा सही किये पीछे हजारों रुपयों का नुकसान होगा तो भी कभी नहीं मुँह मोड़ेंगे; ऐसा काम करें तो एक दिन में हमारी साख जाती रहेगी।

(२) उसको प्रथम तो पुस्तक पत्रों के बाचने से ही अवकाश नहीं, फिर मिहनत मजदूरी के काम से घबरावे तब रोजगार धंधा क्योंकर हो। मैंने तो उसका यह हाल देख, अपने लड़के को गुरू की पाठशाला में ही नहीं जाने दिया है।

(३) हाँ अन्नदाता लाया हूँ।

(४) अब तक जोड़ नहीं लगाया (मन में) पहले ही जोड़ बता दूँगा तो फिर बड़ाने की गुंजायश कहाँ रहेगी।

सुखबासीलाल—अच्छा चिट्ठियाँ लाओ; अव्वल मुकाबला कर लें।

नाथूराम—हाजर छै (**चिट्ठियाँ सुखबासीलाल को देता है**)

सुखबासीलाल—रोगन दर्ज कितना है ? (१)

नाथूराम—छम्मण, पान्सेर, पांच्छटांक । (२)

सुखबासीलाल—कैसे निर्ख लगाया ?

नाथूराम—अठैकी तोलसै सवा छः सेर, (**मन में**) दो एक चीज मैं क्यूंक मंदो भाव लगा दूं, आगानै भरोसो पड़ जासी, जिद बाकीरा सोदा मैं मनमाण्यो नफो ले लेस्यूँ। (३)

सुखबासीलाल—(**मन में**) इसने इसमें तो बाजार के निर्ख से पाव सेर ज्यादः दिया। (**प्रकट**) अच्छा, आटा ?

नाथूराम—छत्तीस मण, दो सेर, तेरो छटांक । (४)

सुखबासीलाल—इसका निर्ख ?

नाथूराम—येरो भाव दो मण पनरा सेर। (५)

सुखबासीलाल—(**मन में**) इसमें भी बाजार के निर्ख से पाँच सेर ज्यादः आया। (**प्रकट**) बाकी चीजों की कीमत एक मुश्त लिखा दो तुम्हारे हिसाब में हमको कुछ शक नहीं है। (६)

---

(१) घृत कितना है।

(२) छः मन, पांच सेर, पांच छटांक ?

(३) यहाँ की तोल से सवा छः सेर, (**मन में**) दो एक चीज में कुछ मंदा भाव लगा दूं आगे को भरोसा पड़ जायगा जब बाकी सौदे में मनमाना नफा ले लूँगा।

(४) छत्तीस मन, दो सेर, तेरह छटांक।

(५) इसका भाव दो मन, पंद्रह सेर।

(६) (**प्रकट**) चीजों के दाम इकट्ठे लिखा दो तुम्हारे हिसाब से हमको कुछ संदेह नहीं है।

नाथूराम—(मन में) अब दाव लगाणेरो वखत आयो, (प्रकट) जिसी मर्जी मालकांरी । (१) (सुखबासीलाल लिखता है)

नाथूराम—चारसो पैंतीस रूप्या, साढा पाँच आनारो सोदो, मैं पनरा सै रूप्या रोकड़ी (२) ।

सुखबासीलाल—इसमें हमारी क्या नजर करोगे ?

नाथूराम—(मन में) गायलो तो घणोही छै, पिण पहली ही देणो मंजूर कर लेवां तो इयरे मन मैं सक पड़ जासी, (प्रकट) हैं अन्‌दाता इयमैं तो म्हारै उलटो घाटो जासी पिण । (३)

सुखबासीलाल—नहीं सेठ जी ! यह कुछ बात नहीं है, हमारा हक न दोगे तो तुम्हारे हिसाब में झमेला पड़ जायगा ।

नाथूराम—इसीई मर्जी होय तो शगलाई आप राखो, अठै तो आछो परताप आपरो छै । (४)

सुखबासीलाल—नहीं, हम सबका क्या करें, हमको तो हमारा हक मिलना चाहिये ।

नाथूराम—(उसकी मुट्ठी में कुछ देकर) आपरे लायक तो नहीं छै पिण अब के समझ लीजो । (५)

---

(१) (मन में) अब दाव लगाने का वक्त आया (जैसी मर्जी मालिकों की)

(२) चार सौ पैंतीस रुपये, साढ़े पांच आने का सौदा और पंद्रह सौ रुपये नकद ।

(३) गुंजायश तो बहुत है परंतु पहले ही से देना मंजूर कर लें तो इनके दिल में शक पड़ जायगा । (प्रकट) हैं अन्नदाता ! इसमें तो हमारे उलटा नुकसान पड़ेगा परंतु

(४) ऐसे ही मर्जी होय सब (रुपये) आप रखो यहाँ तो अच्छा प्रताप आपका है ।

(५) आपके लायक तो नहीं है परंतु अबके समझ लेना ।

सुखवासीलाल—अच्छा, लेकिन किसी से जिक्र न हो। रणधीरसिंह के मिजाज को तो तुम जानते ही हो, उनके आने का समय हो गया चलो अब तुम्हारे हिसाब का जमा खर्च करा दें।

(दोनों गये)

[इति तृतीय गर्भांक।]

—:※:—

अथ चतुर्थ गर्भांक।

स्थान, रणधीरसिंह का महल

(बीच में गोल मेज पर एक दर्पण रखा है, लंप जल रहा है, चारों तरफ मखमली कुर्सियाँ रखी हैं, दर्पण के सन्मुख चौबे जी एक कुर्सी पर रज लगाये बैठे हैं।)

चौबे जी—(दर्पण में दूसरा चौबे समझ कर) चोबे जू तुम राजी हो, मधुपुरी ते आये किते दिन भये? हमारे घरहू गये हे, हमारे छोरानैं तुमको अपनों बाबा तो नांय समझ लिओ, (डरकर मन में) इनको यहाँ रहवो अच्छो नांहिं। (प्रकट) भैय्या यहां का तंत है तुम कहो तो हमहूँ तुमारे संग परदेस चलैं, तुमनैं भांगहू पीईके नांहिं? नांहिं पीई होइ तो हमारे पास लुगदी तय्यार है; छान डारैं। (१)

(रणधीर और रिपुदमन का प्रवेश)

---

(१) चौबे जी तुम राजी हो, मथुरा से आए कितने दिन हुए? हमारे घर भी गये थे। हमारे लड़के ने तुमको अपना बाबा तो नहीं समझ लिया। (डरकर मन में) इनका यहां रहना अच्छा नहीं। (प्रकट) भाई यहां क्या सार है, तुम कहो तो हम भी तुम्हारे साथ परदेश चलें,

रणधीर—(आते ही शीसे को पलटकर) चौबे जी किससे बात कर रहे थे ?

चौबे जी—(चौंक कर) आपनैं भलो संदेह मिटाइ दिओ मैं तो जाकों दूसरो चोबे समझै हो ! (१)

रणधीर—कहो भंग बूटी छन गयी ?

चौबे—हां धर्म्मूरत ? मूंजी के नाम फोक फैंके बड़ी बेर भई । (२)

रणधीर—तो अब किस विचार में हो ?

चौबे जी—कछु नांय तूमको आइबे में अबेर भई तब मेरे मन मैं जे संदेह भयो जो कहुं अपने घर को रस्ता तो नांय भूल गये । (३)

रणधीर—नहीं चौबे जो, मैंने क्या भंग पी थी ?

चौबे जी—ना जिजमान, आपनै भांग तो नांहि पी पर मोकों भांग के चढ़ाव मैं जे सूझी कि ज्वानी और धन के मद लों आप कहूं सरमदार को तमाशो देखवे तो नांहि चले गये ! (४)

रणधीर—आज तो आपने गहरे अमल पानी किये, कहिये इस समय आप में और गऊ के जाये में कितना अंतर है ?

तुमने भंग भी पिया । नहीं, नहीं पिये हो तो हमारे पास नुगदी (अर्थात् घुटी घुटाई भंग) तय्यार है छान डालें ।

(१) आपने अच्छा संदेह मिटा दिया मैं तो इसको दूसरा चौबे समझा था ।

(२) हां धर्ममूर्ति ! मूजी के नाम फोंक (भंग छने पीछे का फोक) फेके बड़ी देर हुई ।

(३) कुछ नहीं तुम्हारे आने में देर हुई, इससे मुझको यह शक हुआ कि कहीं अपने घर का रस्ता तो नहीं भूल गये !

(४) नहीं जजमान, आपने भंग तो नहीं पी; परंतु मुझको भंग के चढाव में यह बिचार आया कि जवानी और दोलत के मद से आप कहीं शर्मदार का तमाशा देखने तो नहीं चले गये ।

चौबे जी—जित्तो आप के और मेरे बीच में। (१)

रिपुदमन—भला महराज शर्मदार के तमाशे का भेद तो बताइये ?

चौबे जी—जामैं का भेद है, देखो एक लुगइय्या ससुरार मैं लाज के मारैं अपनों बोलहू काहू को नांहि सुनावै पर गारी गाइबे बैठै तब सास ससुर को सैंकरन् गारी मोह की मोंपै सुनाइदे। (२)

रिपुदमन—महाराज ! आप का नाम क्या है ?

चौबे जी—(**कुए की गूंज के समान**) महाराज ! आप का नाम क्या है ?

रिपुदमन—मेरा नाम प्रसन्न मन रिपुदमन।

चौबे जी—मेरा नाम लड्डुआ भंजन, चौबे निरंजन। (३)

रणधीर—चौबे जी, कुछ मेवा मिष्टान्न खाओगे ?

चौबे जी—भला भैय्या, ऐसो बातन को पूछबो का ! (४)

(**जीवन ने अंगूर के तीन गूच्छे लाकर रिपुदमन, रणधीर, और चौबे जी को दे दिये**)

रणधीर—(**अपने आगे के बीज चौबे जी के आगे खसका कर हंसी से**) चौबे जी, ऐसी क्या जल्दी पड़ी थी जो बीजों का इतना ढेर लगा दिया !

चौबे जी—तोहू आपकी भांति बीज समेत तो न खाये। (५)

(**जीवन आकर स्थान शुद्ध कर गया**)

---

(१) जितना आप के और मेरे बीच में।

(२) इसमें क्या भेद है, देखो एक स्त्री ससुराल में लज्जा की मारी अपना बचन भी किसी को नहीं सुनाती पर गीत गाने बैठती है तब सासु सुसर को सैकड़ों गाली मुंह की मुंह पर सुना देती है।

(३) मेरा नाम लड्डू भंजन चौबे निरंजन।

(४) भला भाई, ऐसी बातों का पूछना क्या ?

(५) तो भी आप की तरह बीज सुद्धा तो नहीं खाये।

रणधीर—(**रिपुदमन से प्रीतिपूर्वक**) अभी थोड़ी रात गई है मर्जी हो तो सितार से थोड़ी देर मन बहलावें।

रिपुदमन—बहुत अच्छा, मैं ताल देता जाऊंगा।

रणधीर—(**सितार लेकर**)

राग कल्याण

देख्यो प्रेम को पंथ जुदोही। टेक।
जानैं प्रीति रीति रस चाख्यों, ताहि न भावत कोई,
दीपक की छबि लख पतंगनै, पंख आपनी खोई।
बेधत मधुप काठ पर हित बस, कमल न छेदत सोई,
जाकी प्रीति लगी काहू सों, याकों जानत वोई ॥ देख्यो० ॥

(**चौबे जी के नेत्रों में आंसू भर आये**)

रणधीर—(**चौबे जी से**) आज तो कुछ बड़ा प्रेम आया!

चौबे जी—ना जिजमान, प्रेम तो कछू भी नाँहि आयो, तुमारी नार हलती देख कर मोको अपने बकरा की सूध आइ गई ही, ताते आखन् मैं अंसुआ भर आये। (१)

रिपुदमन—चौबे जी! तुम भी तो कुछ गाओ।

चौबे जी—भैय्या हमपै का गाइबो बजाइबो आवै है पर तुम कहो हो तो ल्यो एक धुरपद सुनाई दैं। (२)

ध्रुपद।

पंडितन काजै सीखे भागवत ज्ञान गीता,
श्रोता हेत साध्यो सार वेदन को बांचवो।

---

(१) ना जजमान, प्रेम तो कुछ नहीं आया, तुमारी गर्दन हिल्ती देखकर मुझको अपने बकरे की याद आ गयी थी इससे आंखों में आंसू भर आये।

(२) भाई हमें क्या गाना बजाना आता है परंतु तुम कहते हो तो लो एक धुरपद सुना देते हैं।

कविन के काजै सीखे पिंगल पुरान छुंद
दोहा गाइ चौपाई कवित्तन कों सांचवो ॥
कलाउन्त काजै भजन बारहमासी सीखलीनै
आय मुख गावैं राग रागिनी न राचवो ।
देवेके काजै राजा इतनें कसब सिखे
कसर रही है एक ताता थेई नाचवो ॥१॥

जीवन—(आकर) महाराज ! पंडित सोमदत्त जी आ गये क्या आज्ञा है ?

रणधीर—अच्छा उनको सत्कार से ले आ। (उसके गये पीछे) देखो आज हँसी हँसी की बातों में इतना समय वृथा चला गया, इतनी देर विद्या पढ़ने में मन लगाते तो कितना लाभ होता। कालिदास और भवभूत्यादि कवियों की आयु साधारण लोगों से अधिक न थी, परंतु वे समय की महिमा जानते थे, इस कारण उनका नाम आज तक अमर है और असंख्य मनुष्य प्रतिदिन जन्म लेकर मरते हैं जिनका नाम कोई नहीं जानता। हाँ, आठ पहर की महनत करने से बुद्धि शिथिल हो जाती है, इस कारण आठ पहर में घड़ी दो घड़ी मन बहलाने के वास्ते ऐसी भी चाहिये ; परंतु सब लोगों के आगे ऐसी बातें करने से तेज जाता रहता है।

(पंडित सोमदत्त को आते देख, सबने उठकर प्रणाम किया और रणधीरसिंह ने सत्कार करके उनको बीच की कुर्सी पर बिठाया।)

रणधीर—(पंडित जी से हात जोड़कर) आज हमारे ये मित्र (रिपुदमन की तरफ देखकर) कृपा करके यहाँ आए हैं इस कारण बहुत चर्चा तो न हो सकेगी, परंतु नित्य का नेम निबाहने के लिए थोड़े से प्रश्न करता हूँ।

रिपुदमन—मेरे लिए आप कुछ संकोच न करें, विद्या तो मनुष्य की आत्मा का भूषण है इसकी बराबर आनंद और कौन सी बात में होगा।

रणधीर—(पंडित जी से) ईश्वर के मिलने का मूख्य उपाय क्या ?

सोमदत्त—श्रद्धा।

रणधीर—प्रधान धर्म कौन सा ?

सोमदत्त—स्वधर्म।

रणधीर—अधर्म क्या है ?

सोमदत्त—प्राणीमात्र को पीड़ित करना।

रणधीर—संसार क्या है ?

सोमदत्त—द्रव्य, गुण, कर्म, सामान्य, विशेष, समवाय, अभाव।

रणधीर—सुखी कौन है ?

सोमदत्त—परोपकारी।

रणधीर—दुःखी कौन है ?

सोमदत्त—अज्ञानी

रणधीर—सम कौन है ?

सोमदत्त—ज्ञानी

रिपुदमन—(चौबे जी से) महाराज ! क्या बजा होगा ?

चौबे जी—मेरे गरे मैं घंटा बँध रह्यों होई तो देखल्यो। (१)

रणधीर—नहीं चौबे जी, भीतर जाकर देख आओ।

चौबे जी—अब तो भांग के तार मैं उठवोई परो। (२)

(चौबे जी भीतर जाकर घटा देख आए)

रिपुदमन—क्यों क्या देखा ?

चौबे जी—(भोजन की याद आने से) दस सेर मैं पांच लड्डुआन् की कसर हैं भरोसो न होइ और कों भेज के दिखाइल्यो। (३) (सब हँस पड़े।)

---

(१) मेरे गले में घंटा बँध रहा होय तो देख लो।

(२) अब तो भंग के तार में उठना ही पड़ा।

(३) दस सेर में पाँच लड्डुओं की कसर है। (अर्थात् दस बजने में पाँच मिनट की देर है।) भरोसा न हो, तो और को भेजकर दिखा लो।

चाहिये, आज आप की बातें सुनकर रिपुदमन सिंह ने अपने जी में क्या समझा होगा !

चौबे जी—अच्छी आगे से याद रक्खूँगो। पर भूलहू जाऊँ तो आप चेताय दैवो करो। (१)

रणधीर—(पंडित जी से) महाराज रात बहुत गई, सोने का समय हो गया आप शयन करें; मैं भी जाऊँगा। दण्डौत महाराज !

(सब गये)

इति चतुर्थ गर्भांक

अथ पंचम गर्भांक।

स्थान राजमार्ग।

सुखबासीलाल—(आकर) रणधीरसिंह ख्वाबगाह में तशरीफ ले गए, अब मैं अपनी माशूक दिल्रुबा के पास जाता हूँ, (कुछ ठैर कर) आज तो हमारे खुदावन्द न्यामत शिकारगाह से एक नया पंछी लाये थे देखें इसका क्या ढंग रहे। चौबे जी तो सवा पा घी के सोधे में निहाल हैं, लेकिन हमारे दिल की ख्वाहिश कभी पूरी न हुई। हमारी बिरादरी के लोग हजारों का फायदा उठाते हैं, मगर हमारी बदकिस्मती से हमको ऐसा मालिक मिला है जिसके सौदे सुलफ में दस्तूरी तक हाथ नहीं लगती। इज्जत बड़ी, खातिर बड़ी, देने लेने के नाम छदाम नहीं। हमारी महबूबा

---

(१) अच्छा आगे से याद रक्खूँगा, पर भूल भी जाऊँ तो आप जता दिया करें।

के वास्ते हर रोज जेवर चाहिये, अयालदारी का खर्च जुदा सिर पर घूमता है। रिश्तेदारों की ब्याह शादी में न शरीक हों तो यों नाक कटी। दो दिन पीछे लड़कों का मक्तब करना, भांजी को भात देना, कर्ज मिलता था उस वक्त तक हमको कुछ फिक्र न था, लेकिन अब क्या करें? (विचार कर) हमने अब तक अपनी मतलब बरारी के वास्ते सदहा तदबीरें कीं, मगर कोई तीरे-तदबीर निशाने पर न पहुँचा। असल तो ये है कि, जब तक इनके पीछे शराब और रण्डी की लत न लगेगी, हमारी मतलब बरारी निहायत दुशवार है। मगर इनको इस राह पर लाने के वास्ते कौन सी तदबीर अमल में लाऊँ? क्या हम खुद इस मामले में इससे कुछ जिक्र करें; (विचार कर) हमको रूबरू तो इस मामले में कुछ तहरीक न करनी चाहिये क्योंकि हमारे कहने से इनके दिल पर पूरा असर न हुआ, तो आयंदः बड़ी खराबी की सूरत पैदा होगी। दिल पर असर होने का ये क़ायदा है कि आदमी का दिल बेहोशी की हालत सिवाय हर वक्त किसी बात के ख्याल में मशगूल रहता है और उसका खास ये काम है कि वो अपने मुतल्लिकी तमाम बातों के वास्ते कुछ न कुछ राय कायम करे। जब ये राय कायम हो जाती है तो आदमी उसी के बमूजिब अमल्दरामद करता है चूँकि कम्फहम आदमी की राय मुस्तहकिम नहीं होती। इस सब से उसकी कारवाई में अक्सर खलल वाकै होते रहते हैं। मगर हमको यहाँ इस बात से कुछ बहस नहीं है। जिस वक्त आदमी का दिल किसी बात के खयाल में महब हो, और वो उसकी निस्बत अपनी अकल से कुछ राय भी कायम कर चुका हो, उस वक्त उसका कोई मोतबिर आदमी उसके खयाल बमूजिब अपनी खास गर्ज बिना उसकी राय से मिलती हुई बात कहे तो उस बात का सुननेवाले के दिल में पूरा असर होता है। मगर इन बातों में जिस कदर तफर्का पड़ता जायगा सुननेवाले के दिल का असर बदलता चला जायगा। इस वास्ते हर शख्स को बात कहने से पहले इन तमाम बातों पर गौर करना

चाहिये; चुनांचे मैं खुद गौर करता हूँ तो मुझे रणधीरसिंह की तबियत शराब और रण्डी से निहायत मुतनफ्फिर मालूम देती है। पस मैं क्योंकर अपना दिली मंशा उनके रूबरू जाहर करूँ। (बहुत विचार कर) अच्छा कल बाग में इस पेचीदा मामले की दुरुस्ती करने वास्ते मैं अपनी माशूके दिलरुबा को बुलाता हूँ। मुझको यकीन है कि रणधीरसिंह उसको देखते ही एक बार हिरन की तरह चोकन्ने होकर चौकड़ी भरेंगे। मुमकिन नहीं कि आखीर में इसका जादू उनपर असर न करे। हर काम के आगाज में चंद दरचंद नुक्सनुमायाँ होते हैं मगर कोशिश व तन्दिही करने से वह सब आसानी रफा हो सकती है—

बहरकारे कि हिम्मत बस्तः गर्दद।
अगर खारे बुवद गुल्दस्तः गर्दद॥

(**सामने से जीवन को आते देख**) ये कहां की आफत आई। इस वक्त ये मुझ से यहां आने का सबब दर्याफ्त करेगा तो मैं इससे क्या जवाब दूंगा। अच्छा देखो, इसे बातों में लगाता हूँ। (१)

---

(१) रणधीरसिंह सोने के मकान में पधारे अब मैं अपनी प्यारी मनमोहिनी के पास जाता हूँ। (**कुछ ठैर कर**) आज तो हमारे स्वामी शिकार के मैदान से एक नया पंछी (रिपुदमनसिंह) लाये थे देखें इसका क्या ढंग रहे। चौबे जी तो सवा पा घृत के सीधे में भरपाई कर देते हैं, परंतु हमारे मन की इच्छा कभी पूरी न हुई हमारी जात के लोग हजारों का लाभ उठाते हैं पर हमारे मंद भाग्य से हमको ऐसा मालिक मिला है जिसकी चीज वस्तु में छूट तक नहीं लगती; आदर बहुत, सत्कार बहुत, देने लेने के नाम कौड़ी नहीं। हमारी प्यारी के वास्ते प्रति दिन आभूषण चाहिये, कुटुम्ब का खर्च जुदा सिर पर फिर रहा है। संबंधियों के विवाह में न जाँय तो यों नाक कटी, दो दिन पीछे लड़कों को पाठशाला में बिठाना, भांजी को भात देना, उधार

जीवन—(पास आकर) ये कौन ! लाला सुखबासीलाल जी !

सुखबासीलाल—हाँ भाई, मैं तुमसे तख्लियें में गुफ्तगू करने का

मिलता था जब तक हमको कुछ चिंता न थी परंतु अब क्या करें (विचार कर) हमने अब तक अपना मतलब निकालने के लिए सैकड़ों उपाय किये परंतु कोई उपाय का बाण निशाने पर न पहुँचा। सच तो ये है कि जब तक इनके पीछे मदिरा और वेश्या का रोग न लगेगा हमारा मतलब निकलना बहुत कठिन है, परंतु इनको इस मार्ग में लाने के लिये क्या तजबीज करें क्या हम आप इस विषय में इनसे कुछ चर्चा छेड़ें (विचार कर) हमको तो इस विषय में कुछ न कहना चाहिये क्योंकि हमारे कहने से इनके मन पर पूरा असर न हुआ तो आगे को बड़े बिगाड़ की सूरत पैदा होगी। मन पर असर होने की यह रीति है कि मनुष्य का मन अचेत दशा के सिवाय हर पल किसी न किसी बात के विचार में लगा रहता है और उसका मुख्य ये काम है कि अपने से संबंध रखनेवाली सब बातों के लिए कुछ न कुछ राह निश्चय करता रहे। जब राह निश्चय हो जाती है तो मनुष्य उसी के अनुसार बरताव करता है; जैसे कि मूर्खों की राह मजबूत नहीं होती, इस कारण उनके कामों में अकसर बखेड़े रहते हैं, परंतु यहां हमको इस बात के खुलासा करने से कुछ मतलब नहीं है, जिस समय मनुष्य का मन किसी बात के विचार में लगा हो और वो उसके लिए अपनी बुद्धि से किसी तरह की राह निश्चय कर चुका हो उस समय उसका कोई विश्वासपात्र मनुष्य उसके विचार में खास अपने मतलब बिना उसकी राह से मिलती हुई बात कहे तो उस बात के सुननेवाले के मन में पूरा असर होता है परंतु इन बातों में जितना अंतर पड़ता जायगा सुननेवाले के मन का असर बदलता चला जायगा। इस वास्ते सब मनुष्यों को बात कहने से पहले इन सब बातों का विचार करना चाहिये सो मैं आप विचार करता हूँ तो मुझको रणधीरसिंह के मन में मदिरा और बेश्या की अत्यंत

कई रोज से मौका देख रहा था अच्छा हुआ तुम यहाँ मिल गये। कहो तुम्हारा मिजाज तो खुश है ? (१)

जीवन—आप की दया से।

सुखबासीलाल—देखो जरा दूरंदेशी को काम में लाओ। नौकरी की जड़ जमीन से सवा हाथ ऊंची है, इसके ऊपर नाज करना दानिश्मंद का काम नहीं। तुम नाहक महनत करके जान देते हो। मालिक के रोबरू कोशिश और तन्देही करके कारगुजारी दिखलाना, पीछे से दोस्त आश्नाओं में बैठ गुलछर्रे उड़ाना, बातों बातों में गैरकी कारगुजारी धूल करके अपनी खैरख्वाही जताना! अरे मियां दौलत बड़ी चीज है इससे दुनियाँ के सारे काम निकलते हैं देखो जवानी का कमाया जईफी में काम आयगा ? (२)

अरुचि मालूम होती है फिर मैं किस तरह अपने मन का भाव प्रकट करूँ; (**बहुत विचार कर**) अच्छा कल बाग में इस पेचदार बात की मिसल बैठाने के वास्ते मैं अपनी प्यारी मनमोहिनी को बुलाता हूँ। मुझको विश्वास है कि रणधीरसिंह उसको देखते ही एक बार चौकन्ने होकर हिरन की तरह चौकड़ी भरेंगे परंतु संभव नहीं जो अंत में इसका मोहिनी मंत्र उन पर असर न करे। हर काम के आरंभ में अनेकानेक विघ्न होते हैं परंतु उपाय और परिश्रम करने से वह सहज में दूर हो सकते हैं। जिस काम में साहस से कमर कसी जाय वह कांटा होगा तो भी गुलदस्ता हो जायगा (**सामने से जीवन को आते देख**) ये कहाँ की आपत्ति आई। ये इस समय मुझसे यहाँ आने का कारण पूछेगा तो मैं क्या उत्तर दूंगा। अच्छा, देखो बातों में तो लगाता हूँ।

(१) भाई मैं तुमसे एकांत में बातचीत करने का कई दिन से औसर देख रहा था। अच्छा हुआ तुम यहाँ मिल गये। कहो तुम्हारा मन तो प्रसन्न है।

(२) देखो कुछ दूर की बातों का विचार करो नौकरी की जड़ धरती से सवा हाथ ऊंची है। इसके ऊपर भूले रहना बुद्धिमान का काम

जीवन—क्या मैं रणधीरसिंह से बेइमान हो जाऊँ, एक को मालिक बनाकर दूसरे की आस करूँ, झूठी महनत दिखाकर मालिक को धोखा दूँ, मुझसे तो यह नहीं हो सकता। मैं तो सच्ची महनत भी नहीं जताया चाहता, जताऊँ क्या ? जिसके अन्न से इस देह का पालन होता है उसके काम में इस देह को लगाना चाहिये, उसके कोसने से मेरा सत्यानाश हो जायगा, आगे को मालिक की नौकरी में मन न लगेगा और ये पाप मेरे सिर चढ़ेगा, ना भाई ना। ऐसा काम मुझसे तो नहीं हो सकता, धन की क्या ? जिसके हाथ गया, उसका हो गया, धन के लिए मैं अपना धर्म कैसे छोड़ दूँ।

दांत न थे जब दूध दियो अब दांत दिये कहा अन्न न दैहैं,
जो जल में थल में पंछी पशु की सुध लेत सु तेरी हु लैहैं।
काहे को सोच करै मन मूरख सोच करे कछु हाथ न ऐहैं,
जान कूँ देत अजानकूं देत जहान कों देत सो तोकुं हुं दैहैं॥१॥

सुखबासीलाल—(मन में) ये तो उल्टी चाल पड़ी। (प्रकट) मैंने तुम्हारा दिल देखने के वास्ते ये बात कही थी, तुम्हारी राय दुरुस्त है।

जीवन—अच्छा, आप इस अँधेरी में इतनी रात कहाँ चले गये ? आपका घर तो यहाँ नहीं है।

नहीं। तुम नाहक महनत करके जान देते हो। मालिक के आगे उपाय और महनत करके कारगुजारी दिखाना, पीछे से यार दोस्तों में बैठकर आनंद करना, बातों बातों में दूसरे की कारगुजारी धूल करके अपनी खैरख्वाही (शुभचिंतकपना) दिखाना। साहब ! रुपया बड़ी चीज है इससे संसार के सब काम निकलते हैं, देखो जवानी की कमाई बुढ़ापे में काम आती है।

सुखबासीलाल—आज इस महल्ले में एक जगह मशायरा होगा इस वास्ते दो घड़ी वहाँ जाने का इरादा है ।

जीवन—साहब, मशायरे में क्या होता है ?

सुखबासीलाल—शायर कवि लोग खड़े हो, अपने शेर औरों को सुनाते हैं ।

जीवन—तो मैं भी आपके साथ चलूँगा ।

सुखबासीलाल—हमारे नजदीक तो वहाँ तुम्हारी दिल्लगी की कोई बात नहीं है ।

जीवन—कुछ गांठ का तो नहीं जाता ?

सुखबासीलाल—(मन में) अब इससे क्योंकर पीछा छुड़ाऊँ । (प्रकट) लेकिन भाई मैं तो अभी कई यार दोस्तों से मिलता मिलता कोई रात के बारह एक बजे वहाँ पहुँचूँगा ।

जीवन—(मन में) बनावट की बात में कभी झोल पड़े बिना नहीं रहता । (प्रकट) अच्छा आप यार दोस्तों से मिलने जायँगे, तब तक मैं उनके दरवाजे पर बैठा रहूंगा ।

सुखबासीलाल—(मन में) अब जिद करने से राज अफशा होता है मगर क्या करें ? (१) (प्रकट) अब तो रात ज्यादा गई किसी रोज श्याम से ले चलकर तुमको वहाँ की सब सैर दिखायंगे ।

जीवन—(मन में) ये इनकी आलाटाली है पर अपनी बात का प्रमाण देने के लिये मैं इनसे पहले कोई चीज ले लूँ फिर इनके पीछे जाकर इनका सब हाल अपनी आँख से देख आऊँगा । (प्रकट) बहुत अच्छा, आप सच कहते हैं, हम लोग मशायरे में क्या समझें । हमको

---

(१) (मन में) अब हट करने से गुप्त भेद प्रकट होता है परंतु क्या करें ।

तो आपकी महर्बानी चाहिये। आप चाहें तो एक दिन में हमारा दलिद्दर दूर कर सकते हैं।

सुखबासीलाल—हम तेरी दानाई से निहायत खुश हुए। ले, ये दस रुपये तुझे इनाम तरीक देते हैं, मगर खबरदार किसी से कुछ जिक्र न हो। (१) (मन में) ये दस रुपये आज नाथूराम से आये थे सो यों चले गये।

जीवन—(रुपये लेकर) भगवान् आपका भला करे, हमारा तो आप पालन करते हो।

[आगे आगे सुखबासीलाल पीछे पीछे जीवन गया]

इति पंचम गर्भांक।

प्रथम अंक समाप्त।

---

(१) हम तेरी बुद्धिमानी से बहुत प्रसन्न हुए, ले ये दश रुपये तुझको पारितोषक की भाँत देते हैं परंतु सावचेत, किसी से कुछ चर्चा न हो।

अथ द्वितीय अंक

प्रथम गर्भांक ।

स्थान सूरत का राजमहल ।

(प्रेममोहिनी मालती और चंपा का प्रवेश)

प्रेममोहिनी—सखी ! मैंने तेरे कहने से वहाँ जाकर वृथा परिश्रम उठाया, मैं गई जब तो वहाँ किसी का नाम भी नहीं था ।

चंपा—मैं क्या करूँ, तुमने चलने में देर कर दी ।

मालती—(जल्दी से आकर) क्यों राजकुमारी, हमारा बचन कैसा सफल हुआ ।

प्रेममोहिनी—(लजाकर) क्या ?

मालती—तुम्हारी "इच्छा यो हीं रही ।"

चंपा—तेरे कहे ।

मालत—क्यों ?

चंपा—आज से कल पास है ।

मालती—राजकुमारी के मन से भी पूछा ।

प्रेममोहिनी—(हँसकर) मेरा मन तेरा सा नहीं है ।

मालती—हाँ, मुझको तुम्हारी तरह अपने मन की बात छिपानी कहाँ आती है ।

प्रेममोहिनी—चल हमसे मत बोल, हमको तेरी हँसी अच्छी नहीं लगती ।

मालती—(प्रेममोहिनी को सुनाकर चंपा से) वसंत के आते ही अपनी सेना साथ ले, पाँचों शस्त्र सजा कर विरही जनों को जीतने के लिये कामदेव बड़ी सजधज से केसर बाग की ओर जाने लगा।

चंपा—(प्रेममोहिनी की तरफ देखकर) पर मेरे जान तो रति बिना उसकी कोई कामना पूरी न होगी।

प्रेममोहिनी—तुम इन बातों को रहने दो, मैंने तो आज एक ऐसा सुपना देखा है जिसके कारण अब तक मेरी छाती धड़क रही है।

मालती—क्या ? क्या ?

प्रेममोहिनी—सूर्यास्त से पीछे जाने से मैं एक मनोहर बाग में गई। उसकी शोभा कहाँ तक वर्णन करूँ। उसकी हरियाली देखने से आँखों में तरी आती थी। तरह तरह के पक्षी किलोल कर रहे थे। बरहों में (१) चारों तरफ को जल बहता था। कहीं चद्दर, (२) कहीं फुआरे।

मालती—ऐसी शोभा तो हमने बहुत बार देखी है, आगे क्या हुआ ?

प्रेममोहिनी—(मन में) ये नहीं जानती दूसरे की बात के बीच में बोलने से उसको कैसा बुरा लगता है। (प्रकट) मैं ये शोभा देखती हुई आगे बढ़ी तो निर्मल सरोवर के किनारे श्वेत रंग का एक बहुत सुंदर पक्षी दिखाई दिया। उसके पंख चंद्रमा से अधिक उज्जल थे। उसको देखते ही मेरा जी ललचाया पर वो दो घंटे तक किसी तरह मेरे हाथ न आया। अंतमें जब वो इश्कपेचे की बेल पर जाकर बैठा तब मुझको उसके पकड़ने का समय मिला और वो भी निडर हो मेरे हाथ पर आ बैठा।

---

(१) खेतों या बागों में सिचाई के लिए बने नालों में।

(२) तेज बहाव में वह अंश जिस की सतह कभी २ बिल्कुल समतल हो जाती है।

चंपा—तुम्हारे कमल से हाथ पर हंस सरीखा वो पक्षी बहुत अच्छा दिखाई देता होगा।

मालती—भला फिर?

प्रेममोहिनी—फिर मैं उसे लेकर महल में चली आई पर उसने किसी तरह के चुगे (१) पर चोंच न डाली!

मालती—(हँसकर) वो भी रणधीर की तरह स्त्रियों से लजाता होगा।

प्रेममोहिनी—चल आगे सुन, जब उसने किसी तरह के चुगे पर चोंच न डाली तो मुझको उसका मोती सा रंग देख, हंसों के मोती चुगने की याद आई। मैंने उसके आगे बहुत से मोतियों का ढेर लगा दिया और वो उनको चुगने लगा।

चंपा—मोती चुगने से ही उसका रंग मोती सा चमकता होगा।

मालती—सखी! इनके कोमल हाथ से भोजन करने को किसका जी न ललचेगा।

प्रेममोहिनी—अब उसके ऊपर मेरी प्रीति बढ़ने लगी। उसको पल भर न देखती तो मेरा जी व्याकुल हो जाता।

चंपा—आगे?

प्रेममोहिनी—एक दिन मैं उसको सीस महल में छोड़कर स्नान करने गई थी पीछे से किसी दुष्ट ने उसकी संकल खोल दी और वो निर्मोही प्रेम का तिनका तोड़कर उसी समय मानसरोवर को चला गया।

मालती—परदेशी की प्रीति का ये ही तो दुःख है।

प्रेममोहिनी—सखी! मैं उसके वियोग में रोते रोते बेसुध हो गई पर वो फिर मेरे पास न आया; हा, इस दुःख से मेरी आँख खुल गई तो मुझको ये बात सुपने की मालूम हुई परंतु उस (हंस) का ध्यान मेरे मन से न हटा।

---

(१) चारे

मालती—राजकुमारी ! तुम उसकी याद भूल जाओ। सुपने की बात पर इतना मन लगाओगी तो काम कैसे चलेगा।

प्रेममोहिनी—सखी ! किसी बात की याद भूलना क्या अपने हाथ है ? जैसे सच्ची प्रीति अलग रहने से बढ़ती है इसी तरह जिस बात को मनुष्य भूला चाहता है वो अधिक याद आती है और तुमने सुपने की बात जताकर मन समझाने के लिए कहा सो संसार भी तो एक स्वप्न है इसमें स्वप्न से अधिक तुमको क्या दिखाई देता है।

मालती—सखी ! तुम्हारी विद्या के आगे मेरी बुद्धि नहीं चलती पर तुम्हारा मन बहलाने के लिए मैंने ये बात कही थी।

चंपा—चलो राजकुमारी साँझ हो गई, आपके पिता महल में पधारे होंगे।

प्रेममोहिनी—अच्छा सखी चलती हूँ। (मन में) देखें इस सुपने का क्या फल होता है। (सब गईं)

इति प्रथम गर्भांक

द्वितीय गर्भांक

स्थान—केसरबाग

(बीच में एक सरोवर है, उसके किनारे रणधीर, रिपुदमन, सोमदत्त, नाथूराम, सुखबासीलाल कुर्सियों पर बैठे हैं, जीवन रणधीरसिंह की कुर्सी के पीछे खड़ा है।)

रणधीर—देखो, वृक्षों में नई नई कोंपल आने लगी। इनके देखने मात्र से वसंत का आरंभ जाना जाता है।

रिपुदमन—जैसे इन वृक्षों के फूलने से बसंत ऋतु जानी जाती है, वैसे ही मनुष्य की बुद्धि से उसका होनहार भी मालूम हो जाता है।

सुखवासीलाल—बेशक, अब्र से बारिश के आसार पाये जाते हैं, और गुल के बाद समर आता है।

रणधीर—देखो, इस सरोवर के निर्मल जल में रंग रंग के कमलों की झाँईं कैसी सुंदर दिखाई देती है।

चौबे जी—(जल्दी जल्दी आकर सोमदत्त से) आज हमैं कौन सो चंद्रमा है?

रणधीर—क्यों, क्या हुआ?

चौबे जी—(बैठकर) भयो का, मेरो माथो! मैंने पहलै बहुत से पेड़न सों छत्ता तोर तोर के सहत खायो हो, वाही लालच से आजहू एक पेड़ पै चढ़ गयो पर न जानैं वो कैसो नसा उतार सहत हो, जाइ मोमैं डारत ही मो चिपचिपावे लगो और जी मिचराइ कै उल्टी आइ गई। (१)

रणधीर—हमने आती बार रास्ते में एक वृक्ष पर गोंद बहते देखा था, कहीं तुम उसको तो शहत नहीं समझे हो?

चौबे जी—ठीक है, गोंदई होइगो।

रणधीर—तो तुमने विचार कर हाथ क्यों नहीं डाला? रूप मिलने से सब चीज एक सी नहीं होती! (२) देखो, पन्ना और हरे काँच का रूप एक सा है पर उनके मोल में बड़ा अंतर है।

रिपुदमन—(चौबे जी से) आपने रास्ते में अपनी पोटली कंधे पर क्यों डाल रखी थी?

---

(१) हुआ क्या मेरा सिर! मैंने पहले बहुत से वृक्षों से छत्ते तोड़ तोड़ कर शहत खाया था। इस लालच से आज भी एक वृक्ष पर चढ़ गया परंतु न जाने वो कैसा नशे उतार शहत था जिसके मुँह में डालते ही मुँह चिपचिपाने लगा और जी मिचलकर उलटी आ गई।

(2) मिलाइये–Everything that glitters is not gold.

चौबे जी—टटूआ पै मेरे बैठे पीछे पुटरिआ को बोझ कैसे धरतो?

सोमदत्त—महाराज! इनकी जन्म पत्रिका में ही ऐसा जोग पड़ा है।

रणधीर—मुझको ज्योतिष में फलादेश के बदले गणित पर अधिक विश्वास है।

सोमदत्त—क्यों?

रणधीर—फलादेश की विधि पूरी नहीं मिलती।

सोमदत्त—ये बताने वाले का दोष है।

रिपुदमन—बतानेवाले क्या करें? इस देश में अच्छे गुण छिपाने की ऐसी चाल है कि गुरु मरते मरते मर जायँ पर अपनी निज विद्या अपने शिष्यों तक को न सिखावें। इसका मूल स्वार्थपरता है, इसी से यहाँ की विद्या नष्ट हो गई।

सोमदत्त—आप को ज्योतिष में कुछ संदेह हो तो मुझसे प्रश्न करिये।

रणधीर—आज यहाँ क्या होगा?

सोमदत्त—(**विचार कर मन में**) इस समय के देश काल से तो इस प्रश्न का कुछ मेल नहीं मिलता परंतु शास्त्र के अनुसार कहने में हमको क्या दोष है? (**प्रकट**) महाराज! लग्न की संधि से इस समय कुछ निश्चय तो नहीं हुआ पर इस प्रश्न में शुक्र पंचमेश होकर लग्नमें लग्नेश से मिलता है इस कारण इसके अनुसार तो यहाँ आप का किसी वेश्या से मिलाप होना चाहिए।

सुखबासीलाल—(**मन में**) वाह! नजूम भी मुफातिउलकजा है। (१)

रणधीर—इन बातों ने तो फलादेश से मेरा विश्वास उठा दिया।

चौबे जी—महाराज! इनकी विधि तो मिल गई।

---

(१) वाह! ज्योतिष भी होनहार की ताली है।

दोहा—गणिका गणिक समान हैं, निज पंचांग दिखाय।
जन मन मोहन धन हरण, बिधिने दिये बनाय॥

फिर आप वातें नाहिं इनते मिला लिये। (**सोमदत्त की तरफ देखकर**) आप की बिध को तो भोरे बनियान को भलो भरोसो होइ है। (१)

सोमदत्त—अजी, उनकी कुछ मत कहो, वे अपने मतलब में बड़े पक्के होते हैं। हमारे मामा के एक बड़े साहूकार की जीविका थी पर उससे उनको जन्म भर में एक कपर्दिका भी नहीं मिली! और कहाँ तक कहें, एक बार सब घरकों ने महाभारत की कथा सुनी थी परंतु भेंट पूजा का क्या काम। जब कथा पूरी हुई तो हमारे सामने उदास होकर बैठे सेठ जी से पूछा "आप इसका कुछ अर्थ समझे" सेठ जी ने कहा "हाँ, मरते मर जाना पर एक कौड़ी न देनी।"

रिपुदमन—कंचन के स्थान में मूसा बिल ही ढूँढ़ता है।

नाथूराम—ना, अन्नदाता! आपनै इणतरां फुर्माणो जोग नहीं! शगरी जाता मैं शगरी तरांका आदमी हुवै छै, इयांई म्हारी जात मैं भी कोई कुपातर निकल गयो तो कांई एकरे कारण शगरो देश खोटो हो जासी। (२)

सुखबासीलाल—तुम्हारे फंदे से खुदा बचावे।

---

(१) महाराज! इनकी विधि तो मिल गई। (दोहा) फिर आप उसमें नहीं इनसे मिला लिये (**सोमदत्त की तरफ देखकर**) आप की विधि का तो भोले बनियों को अच्छा भरोसा होता है।

(२) ना अन्नदाता, आप को इस तरह फर्माना मुनासिब नहीं। सब जातों में सब तरह के आदमी होते हैं; इसी तरह हमारी जात में भी कोई कुपात्र निकल गया तो क्या एक के कारण सब देश बुरा हो जायगा।

नाथूराम—म्हांरो फंदो कांई छै ? (१)

सुखबासीलाल—कर्जदार, जो लोग इसमें फँस जाते हैं उनका दिल ही जानता होगा।

नाथूराम—म्हे कांई कोई नैं देवा जावां छां, इण फन्दारा पासा तो घणासा खोटा चाला अथवा खोठी बड़ाईरा लोभरो अणहूतो खर्च छै। (२)

रणधीर—तुम लोग और बातों में चाहे जैसे हो, परंतु बिना विद्या नये रोजगार से दौलत पैदा करने की हिम्मत तुम्हारे साथ में किसी को नहीं होती ! इस कारण पुराने धंधे में बहुत लोगों को एक रीति होने से तुम लोगों का नफा तो प्रतिदिन निःसंदेह घटता जाता है।

(**सरोजनी वेश्या का प्रवेश**)

रणधीर—(**मन में**) ये तो पंडित जी के प्रश्न मिलाने को आ पहुंची। इस समय मुझको अपने विचार पर दृढ़ रहना चाहिये।

नाथूराम—(**मन में**) कांई फूटरो रूप छै ! (३)

सुखबासीलाल—(**मन में**) इसको देखते ही मेरे जिस्म में ताजी जान आ गई। ओहो ! आज इसने क्या नफीस पोशाक पहनी है। इसकी पुरपेंच जुल्फें दिल को बेताब किए डालती हैं, मगर ऐसा न हो कि बेहोशी की हालत में कहीं मेरी जुबान से कोई राज की (**भेद**) बात निकल जाय।

सरोजनी—(**मन में**) मैं दूसरे के कहने से यहाँ आई हूँ। परंतु इस गबरू जान को देखकर तो मेरा मन आप से आप इसके आधीन हुआ जाता है। (**प्रकट में रणधीर से लज्जित होकर**) राजकुमार—

---

(१) हमारा फंदा क्या है !

(२) हम क्या किसी को देने जाते हैं। इस फंदे के फाँसे तो बहुधा दुर्व्यसन अथवा झूठी बड़ाई के लालच की फिजूलखर्ची है।

(३) कैसा सुंदर रूप है।

रणधीर—सुंदरी ! तुमको कहना हो सो डर छोड़कर कह दो, परंतु मेरा स्वभाव तो तुमने सुना होगा।

सरोजनी—मैं कुछ धन दौलत नहीं चाहती। मैं तो बहुत दिन से आ...प...प...। (**आँख नीची कर ली**)

रणधीर—(**मन में**) ये इन लोगों के फुसलाने का ढंग है। (**प्रकट**) नहीं ऐसी बातों की चर्चा यहाँ मत करो। मैं अपना स्वभाव तुमको पहले जता चुका हूँ।

सरोजनी—(**मन में**) अब दबाकर कहने से जिद बढ़ेगी। (**प्रकट में पहले बचन को पूरा करती हुई**) मैं बहुत दिन से आप को अपना गुण दिखाया चाहती हूँ।

सुखबासीलाल—(**मन में**) नए पंछी को जाल में फँसाने के वास्ते इसने खूब ल्हासा लगाया।

रणधीर—(**मन में**) न मेरी इन बातों में रुचि, न ये काम मेरे करने लायक, मैं अब तक एकांत के सहारे बचा हूँ। नहीं तो कुसंग से बड़े बड़े तपस्वियों का तप भंग हो गया तो मेरी क्या गिनती है। वेश्या की प्रीति धन के लालच से बताते हैं इस वास्ते ये कुछ ले तो कुछ देकर पीछा छुड़ाऊँ। (**प्रकट**) बस, सुंदरी क्षमा करो। काजल की कोठरी में गये पीछे किसी के स्याही लगे बिना नहीं रहती। हाँ, तुमको कुछ धन का लालच हो तो कह दो।

सरोजनी—मैं तो रूपरस की भूखी हूँ।

रणधीर—सो यहाँ न मिलेगा।

सरोजनी—हे राम !

सोमदत्त—स्वर्ग में अर्जुन ने उर्वशी का निरादर किया तब उर्वशी का भी ये ही हाल हो गया था !

सुखबासीलाल—(**धीरे से सुनाकर**) ए तेरी शान !

रणधीर—क्या है ?

सुखवासीलाल—कुछ नहीं। जिसके दरवाजे से आज तक कोई नाउम्मेद होकर नहीं गया, उसके दरवाजे से आज ये बदबख्त मायूस (निराश) होकर जायगी।

रणधीर—कोई जीते जी स्वर्ग जाने का मन करे तो कैसे जाय?

रिपुदमन—(**मुसकुराकर**) जैसे विश्वामित्र के बल से त्रिशंकु गया।

रणधीर—(**हँसकर**) आपको सब सामर्थ्य है!

रिपुदमन—चतुर जनों को प्रमाण पाये बिना कोई बात मुख से नहीं निकालनी चाहिये।

रणधीर—(**हँसकर**) अच्छा, मेरी अंगूठी आप के पास थी सो कहाँ है?

रिपुदमन—ये रही। (**अँगुली से अँगूठी उतारती बार रणधीर के बदले अपनी अँगूठी देख, देता रह गया।**)

रणधीर—लाइये, लाइये।

रिपुदमन—आप मेरी अँगूठी दिखा दोगे तब मैं आप की अँगूठी दिखाऊँगा।

रणधीर—ऐसे बहानों से काम नहीं चलता। देखो आपने जिसको मेरी अँगूठी दी थी उससे मेरे पास आ गई (**अपनी अँगूठी दिखाई**)

रिपुदमन—(**हँसकर**) अच्छा, इससे तो उसके साथ आप की प्रीति भी पाई जाती है।

रणधीर—निःसंदेह।

रिपुदमन—तो फिर चिंता नहीं। "समानशीलेन सखित्वमस्ति"

सुखवासीलाल—(**मन में**) इन लोगों की दिल्लगी में मेरा मतलब फ़ौत हुआ जाता है। (**पंडित जी से धीरे धीरे**) इसमें और तो कुछ नुक्स नहीं, लेकिन ये कम्बख्त खाली जायगी तो तमाम शहर में बदनामी फैलायगी।

रणधीर—(**सुनकर**) अच्छा, इसको कुछ दे दो।

सरोजनी—मैं कुछ नहीं चाहती, मेरा एक मुजरा हो जाय।

सुखबासीलाल—(धीरे) जब आपको देना मंजूर है तो इसकी राजी के वास्ते घड़ी भर गाना सुन लीजिये।

रणधीर—ना ना, मैं अपने समय को कभी ऐसे कामों में नहीं खोया चाहता। बस, आग से घी का अलग रहना ही अच्छा है।

सुखबासीलाल—क्या सांप के पास रहने से उसकी मणि को ऐब लगता है?

सोमदत्त—कभी नहीं।

संग दोष ते साधु जन, परत न दूषण मांहि।
विषधर लिपटे रहत तउ, चंदन मैं विष नाहिं॥

चौबे जी—हाँ ब्यारते कहूँ पहार उड़ैं हैं। (१)

रणधीर—(मन में) ये खुशामद मेरे लिये मीठा विष है। इसी के भुलावे में आकर बहुत से धनवान नष्ट होते हैं, अपना निज रूप भूल जाते हैं और हितकारियों के बचन कडुए लगते हैं। मैं ऐसा रोग अपने पीछे नहीं लगाया चाहता। इससे जुए के नफे की भाँत कभी सुख नहीं मिलता। खोटे लोगों की संगति से तो एकांत में रहना हर भांत अच्छा है। (प्रकट) आज तुम बिना पूछे राइ क्यों देते हो?

सुखबासीलाल—(हात जोड़कर) कसूर माफ, जब हजूर अपने दिल को घड़ी भर के वास्ते कायम नहीं रख सकते तो ता हयात उसके मुस्तहकिम रहने की क्या उम्मेद? (२)

रणधीर—जो मैं किसी के कहने से अपना विचार बदल डालूँ तो तुम्हारा कहना सच्चा हो।

---

(१) कहीं पवन से पर्वत उड़ते हैं।

(२) अपराध क्षमा, जब आप अपने मन को घड़ी भर स्थिर नहीं कर सकते तो जन्मभर उसके दृढ़ रहने की क्या आस।

रिपुदमन—इससे तो आप किसी की अच्छी बात भी न मानेंगे।

रणधीर—अच्छी बात जरूर मानेंगे, पर किसी के कहने सुनने से नहीं; हमारी राह में अच्छी होगी तो मानेंगे।

सरोजनी—(आँखों में आँसू भर कर, दाहना हाथ छाती पर धर) संसार में मेरे बराबर दुःखिया कौन होगा! मुझको अपनी मौत भी मांगी नहीं मिलती। न जाने मैं कौन से पापों का फल भोगती हूँ। देखो! मैंने पहले तो स्त्री का चोला पाया, फिर उसमें पति-सेवा का बड़ा धर्म था सो मेरे हाथ न रहा। जिस काम से मेरी जीविका हुई, इसमें कोई सज्जन मनरंजन मुझको न मिला और दैवयोग से दशहरा के नीलकण्ठ की भाँत एक दिखाई भी दिया तो उसका मिलाप कठिन हो गया। मैंने अपनी लाज छोड़कर अपने मुख से कहा तो भी उसने कुछ न सुना। हाय! दुःखिया को सब जगह दुःख है!

चौबेजी—(भोले भाव से) नीलकंठ के लिए इत्ती फिकर मत करो। देखो, मैंने बड़ी कठिनाई सै एक पिंडुकिया पकरी ही सोहु दो तीन दिन रहकै आप ते आप उड़ गई। अपन को पंछी पखेरू ते लहनो नांय हैं। (१)

(सब हँसने लगे)

रणधीर—(मन में) वेश्या की बात का भरोसा न करना चाहिये पर इसके मन में कुछ न कुछ दर्द तो पाया जाता है। (प्रकट) ऐसी बातों में कुछ सार नहीं। आँसू डालकर धिक्कार सहना, दुर्लभ चीज के लालच से दुर्लभ देह को जोखों में डालना, तीस रात जग कर पल भर

---

(१) (भोले भाव से) नीलकंठ के लिए इतना फिकर मत करो। देखो, मैंने बड़ी कठिनता से एक गुरसल पकड़ी थी सो भी दो तीन दिन रह कर आप से आप उड़ गई। अपने को पत्ती, पखेरुओं से लहना ही नहीं है।

का सुख भोगना, जिसमें भी मिलाप हुआ तो थोथा लाभ, न मिलाप हुआ तो थोथी महनत। बुद्धि बेच कर मूर्खता खरीदनी, अथवा मूर्खता के आगे बुद्धि से पानी भराना, ऐसी प्रीति का फल है।

सुखबासीलाल—हजूर, इन जरा जरा सी बातों पर इतना माम्मुल करेंगे तो काम क्यों कर चलेगा? (१)

रणधीर—दोष छोटे से छोटा और गुप्त से गुप्त बनकर मन में प्रवेश करता है परंतु प्रवेश पीछे दृढ़ हो जाता है इस कारण इसको कभी छोटा न गिनना चाहिये।

सोमदत्त—(**रणधीर से**) आप के मन में इतनी अरुचि है, तो क्या घड़ी भर में आप का मन बदल जायगा?

रणधीर—जब आप भी ये बात कहने लगे तो मैं लाचार हूँ पर और लोग सुनेंगे तो क्या कहेंगे?

रिपुदमन—किसी के भय वा प्रीति से धर्म छोड़ना अच्छा नहीं, क्योंकि वो भय और प्रीति घट जायगी, तब अपने मन को अधर्म से रोकने का कुछ हेतु न रहेगा इस कारण अपना धर्म विचार कर अपने मन को अधर्म से रोकना चाहिये।

सुखबासीलाल—(**रिपुदमन से**) ऐसी बातों का खयाल करें तो दुनियाँ में पैर रखने की जगह न मिले।

रणधीर—चलो, सब बखेड़े को दूर करो, विवाद करने से क्या लाभ।

सुखबासीलाल—(**सरोजनी से**) जल्हदी अपने सफरदाइयों को बुला। (**मन में**) आखिरकार पिगले, कहिये अब इनकी वो तेजी कहाँ है!

---

(१) प्रभु, इन जरा जरा सी बातों में इतना बिचार करेंगे तो काम कैसे चलेगा।

(सरोजनी नाचकर ताल से गाने लगी)

"यद्यपि हम अबला नृप नंदन, नीच जाति सब भांति ।
पै लग जाय प्रीति उर जासों हाथ बिकाति ॥
अति निर्दई हृदय स्वारथ रत, सब दिन चलैं अनीती ।
पै हिय कपट न राखैं तासों, बांधैं जासों प्रीती ॥
हम तिय नीच मीच की मूरत, सदा असांचहि भाखैं ।
पै लग प्रीति करैं हम जासों, तिहिं तन मन दे राखैं ॥
पति, पितु, पुत्र, बंधु, परकर जन, रहैं सबनते न्यारी ।
पै कछु बीच न राखैं तासों, बांधैं जासों यारी ॥
हमते नीच न जग नृप नंदन, तुमते ऊँच न कोई ।
पै हिय प्रीति तोल जो देखो, गरू हमारी होई ॥"

नाथूराम—या तो बाट ताखड़ी लार म्हारोई काम खोसबा लागी आच्छी आडै पालडै तोलश्यां (१) ।

दूसरा छंद ।

जिन, जिन प्रेमिन केर जगत मैं, सुनियत बड़ी बड़ाई ।
तिन, तिन मैं विचार जो देखो, सबमैं एक खुटाई ॥
हिम तन दहै न कहै कबहुं कछु, पुनि तिहिं लख सुख मानैं ।
ऐसी पीर कमल के मन की, कहो भानु कहा जानैं ॥
तरसत रहत दरस बिन पाए, नित ताकत तिन पांहीं ।
अस चकोर की प्रीति चन्द्र के, नैक चुभी चित नाहीं ॥
घुमड़ी घटा देख प्रीतम की, नाचत दादुर मोरा ।
तिनकी ओर तनक नहिं ताकै, ऐसो मेघ कठोरा ॥
पिउ, पिउ करत पपीहा अपनों, प्राण त्याग कर दीन्हों ।
पिउ के जीव दया नहिं आई, बर पातक शिर लीन्हों ॥

---

(१) ये तो बाट तराजू लाकर हमारा ही काम छीनने लगी, अच्छा खड़े पलक से तोलेंगे ।

सर्बस त्याग परी तिहिं के बश, छांड़त नहिं दिन राती।
ऐसी प्रीति मीन की देखत, जल की फटी न छाती॥
जात पतङ्ग समीप दीप के, जरत परत तिहिं मांहीं।
ऐसी प्रीति निहार दीप कै, भई दया कछु नाहीं॥
ऐसी बहुत प्रीतिवालन की, देखी चाल अधीरा।
एकै प्राण देत तिहिं ऊपर, एक न जानंत पीरा॥"

चौबे जी—(सरोजनी से) तुम्हारो शरीर सिथलसो दिखाई देहै, सो का तुमारो पाऊं भारी है?

सरोजनी—(हंसकर) हां बेटा, होगा।

नाथूराम—(सरोजनी से) थारी जोड़ी कठै छै? (१)

सरोजनी—(रणधीर की तरफ देखकर) ये रही, पर आप की किसके पास है।

(सब हंसने लगे)

रणधीर—सांझ हो गई, जिसको स्नान ध्यान करना हो, कर आओ। हम इतने रिपुदमन सिंह के साथ बाग की सैर करते हैं। फिर यहां से भोजन करके मकान को चलेंगे।

(सब उठ खड़े हुए)

इति द्वितीय गर्भांक।

---

(१) (सरोजनी से) तुम्हारी जोड़ी कहां है।

अथ तृतीय गर्भांक।

स्थान, केसरबाग का एक विभाग।

(अंगूर की टट्टियों के ओझल, एक पुरुष सरोजनी को गलबाँही डाले खड़ा है।)

[रिपुदमन और रणधीर वहाँ आते हैं]

रणधीर—देखो सांझ होते ही चकवे चकई का वियोग हो गया।

रिपुदमन—और सूर्य के विरह से कमलनी कुम्हला गई। पक्षी अपने अपने बसेरे को चले। कुमोदिनी वासकसय्या की तरह चंद्रमा की बाट देखने लगी। और—

रणधीर—(चौंककर) देखो तो, इन टट्टियों के पीछे से किसी मनुष्य की आवाज आती है!

रिपुदमन—हाँ, आती तो है, पर समझ में नहीं आती। चलो पास चलकर सुनें।

टट्टी की ओझल वाला पुरुष—(इन्हें देख सरोजनी से) हैं! रणधीर और रिपुदमन तो यहाँ आ पहुँचे। अब मैं यहाँ ठहरूँगा तो ऐंठे का चोर बन जाऊँगा। तुम इनके आगे मेरा नाम न लेना। अंधेरे के पर्दे से ये मेरा मुँह नहीं देख सकते। (नेपथ्य की तरफ दौड़ा)

रणधीर—(उसे जाता देख) ये तो अपने ही साथ का कोई आदमी है। इसने अपने यहाँ की वर्दी पहन रखी है, इसे जरूर पकड़ना चाहिये।

रिपुदमन—मैं चला। (उसके पीछे पीछे नेपथ्य में जाता है।)

रणधीर—(आगे बढ़ कर सरोजनी से) ये कौन था?

सरोजनी—मैंने नहीं पहचाना। इसने अभी आकर मुझसे कुछ कहा था पर मैंने उसकी बात पूरी नहीं सुनी। इतने में वो किसी की आवाज सुनकर इधर को दौड़ गया।

सोमदत्त—(आकर इनको बतलाते देख मन में) ये कौन ! रणधीर और सरोजनी ! तो क्या हमको दिखाने ही के लिए ब्रह्मचर्य था ! भला इनकी थोड़ी सी बातें सुन लें, किसी समय कहने के काम आवेंगी । (वृक्ष की ओट में बैठ गया)

रणधीर—क्या तुम इसी (बनावट रूपी) मोम के फूल पर (मेरे मन रूपी) ऐसे चंचल भौंरे को लुभाया चाहती हो ?

सरोजनी—ना ! इसके लिए तो मेरा हृदय कमल हाजिर है ।

सोमदत्त—(मन में) अब हमको किसी तरह का संदेह नहीं रहा, पर बड़े आदमियों के दोष देखने में सदा प्राण का भय रहता है, इस कारण इस समय यहाँ से टल जाना चाहिये । (जाने को तैयार हुआ)

रिपुदमन—(आकर, हास्यपूर्वक रणधीर से) क्या इसी एकांत मिलाप के लिए आपने मुझको भेजा था ? तो मेरी भूल हुई जो मैं जल्दी आया ।

रणधीर—हँसी की बात पीछे करना, पहले उस पुरुष का हाल कहो ।

सोमदत्त—(मन में) इन दोनों की एक मट मालूम होती है ।

रिपुदमन—मैं गया जब वो बहुत दूर निकल गया था, इस कारण हाथ नहीं आया । पर मैंने बरहे की थोड़ी सी गीली मट्टी फेंककर उसके अंगरखे में दाग लगा दिया है । इसमें अब वो नहीं छिप सकता ।

सोमदत्त—(मन में) इसमें तो कुछ और ही भेद मालूम होता है, क्या ये मतवाले हाथी की तरह इस समय जिसको देखेंगे, मार डालेंगे ।

रणधीर—(सरोजनी से) तुम उसका पता बता दो तो सब संदेह मिट जाय ।

सरोजनी—मैंने पहचाना होता तो मैं आपसे कभी नहीं छिपाती ।

सोमदत्त—(मन में) भला इन दोनों में से किसी ने उसको नहीं पहचाना तो सरोजनी कैसे पहचान लेती ।

रिपुदमन—(रणधीर से) ये कहो चाहे न कहो, वो अंगरखे के दाग से ज़रूर पकड़ा जायगा।

रणधीर—तो चलो, उसका पता लगावें। (आगे बढ़े)

सरोजनी—(मन में) मेरे मन में बालकपन से सुख भोगने की बड़ी लालसा थी। इसी लालच से मैंने अनेक पुरुषों को रिझाया, बहुत सा धन इकट्ठा किया, अनेक तरह से इंद्रियों को सुख दिया पर अब तक मेरे मन की लालसा पूरी न हुई। मेरे मन को क्षण भर सुख न मिला, मेरे मन का लालच प्रति दिन बढ़ता रहा। मैं चाहूँ तो अब भी बहुत लोगों को रिझाकर धन इकट्ठा कर सकती हूँ पर करने से लाभ क्या? इनसे सुख होता तो अब तक क्यों न होता। जो सुख इन चीजों से स्वप्न में दुर्लभ था सो आज रणधीरसिंह के देखने से पलभर में मिल गया, निःसंदेह मिल गया। पर क्यों? रणधीरसिंह भी तो एक मनुष्य है—मनुष्य है परंतु मैं उसको मन से चाहती थी, मन का सुख ऊपर की बातों से कभी नहीं होता।

(गई)

रणधीर—(चलते चलते) इस समय मेरे मन में अनेक तरह के संदेह उठते हैं। कहीं चौबे जी को रास्ते में इसी कारण देर लगी हो, अथवा पंडित जी ने जान बूझ कर इसके आने की विघ्न मिलाई हो, अथवा सुखबासीलाल ने मुझको जाल में फँसाने के लिये ये चाल चली हो, अथवा इन सबने मिल मिलाकर ये करतूत रचा हो कुछ नहीं जाना जाता। जब तक चोर न मिलेगा, मेरे चित्त की शांति न होगी।

रिपुदमन—जैसे दूध को आग पर रखते ही उफान आता है तैसे मनुष्य का मन ऐसी बात जानने से एक बार चंचल हो जाता है परंतु दूध के उफान की भाँत ये चंचलता थोड़ी देर की है। जो लोग इस (चंचलता) के बस होकर आपे से बाहर हो जाते हैं, दूध की तरह उनका पता नहीं लगता। इस कारण आप से बुद्धिमानों को वो चंचलता दूर हुए पीछे अपने हानि लाभ का विचार करना चाहिये। आप इस समय इस बात

को पी जाओ, सबके आए पीछे अचानक उनके अंगरखे को देख कर निश्चय कर लेंगे।

(दोनों कुर्सियों पर बैठ गए।)

सोमदत्त—(मन में) जो मैं उस समय इनको पापी समझ कर चला जाता तो कैसी भूल होती? मनुष्य को सब काम विचार कर करना चाहिये। (आगे बढ़ कर प्रकट) महाराज अब तक और लोग नहीं आए?

रणधीर—(उदास भाव से) आते होंगे। (सोमदत्त बैठ गया)

चौबे जी—(झूमते झूमते आकर मन में) आज तो सरोवर में भले न्हाये! भांग के ज़ोर से जा समें सरीर सन्न सन्न कर रह्यो है। चलो लडुआ निधान के पास चलके भोजन की ठैरावें। का मोए भोजन के लिये कोऊ टेरे है? अच्छी आयो। (रणधीर के पास जाकर) धरम्मूरत मैं तो आवैई हो। (१)

रणधीर—(अरुचि से) बैठ जाओ।

चौबे जी—(भोजन की आज्ञा समझकर) पातर कहाँ है।

रिपुदमन—(पातर का अर्थ वेश्या समझकर) आपका अब तक जी नहीं भरा?

चौबे जी—कोरी बातन ते जी भरत होइगो?

रिपुदमन—तो उसका क्या करोगे?

चौबे जी—जो सब करत हैं। (बैठ गये)

रणधीर—(मन में) इन बातों से बढ़कर और क्या प्रमाण होगा।

(सुखबासीलाल और नाथूराम का प्रवेश)

---

(१) (झूमते झूमते आकर मन में) आज तो तालाब में अच्छे नहाए। भंग के जोर से इस समय शरीर में सन्नाटा हो रहा है। चलो लडुआ निधान के पास चलकर भोजन की ठैरायें। क्या मुझको भोजन के वास्ते कोई पुकारता है? अच्छा, आया (रणधीर के पास जाकर) धर्ममूर्ति मैं आता ही तो था।

रणधीर—(**संदेह करके**) तुम इतनी देर से कहाँ थे ?

सुखवासीलाल—सेठ जी ने चौबे जी की भंग पी ली इस सबब से कई बार कै कर चुके हैं और अब तक बेहोसी बदस्तूर बन रही है।

रणधीर—(**मन में**) इन लोगों ने मुझको भुलावा देने के वास्ते ही ये भूलभुलैयां बनाई हो तो क्या आश्चर्य !

रिपुदमन—(**मन में**) नशे से लोग इतना दुख पाते है, अचेत हो जाते हैं, पर न जानें क्यों इसका पीछा नहीं छोड़ते !

नाथूराम—(**रोती सूरत बनाकर**) बापजी हूं तो मारियो गयो कुत्तारी मोत मारियों गयो। म्हारी शगरी उघराणी डूब जासी, नोकर जठारो जठै माल दबा बीमारी पैड़ी गैणा गाठारो, लेण देण, माल तालरो धंदो, आडतियांरो काम काज, कुण भुगतासी ? अजी और तो हुई स हुई, पिण म्हारा घरनैं कुण ढाबसी, टाबरानैं कुण परणासी, आंवद सै थोड़ा खर्चरो बनोबस्त कर दियो होतो तो इण बखत काम आतो, पिण (**रणधीर की तरफ देखकर**) अब तो म्हारी शगरी लाज आपनैं छै। (१)

सोमदत्त—गवैया गिरा तो भी ताल सुर से।

सुखवासीलाल—गरीबपरवर ! चौबे जी नें तालाब में आज बड़े बड़े तमाशे किये।

---

(१) (**रोती सूरत बनाकर**) बाबा मैं तो मारा गया, कुत्ते की मौत मारा गया मेरी सब उगाही डूब जायगी, नौकर जहाँ का तहाँ माल दबा बैठेंगे। बीमा (जोषों) की दूकान, गहने गांठे का लेन देन, माल-ताल का रोजगार, आढ़तियों का काम काज कौन भुगतायगा ? अजी और तो हुई सो हुई, परंतु मेरे घर को कौन सम्हालेगा, बालबच्चों का ब्याह कौन करेगा, आमदनी से कम खर्च का बंदोबस्त कर दिया होता तो इस समय काम आता, परंतु (**रणधीर की तरफ देखकर**) अब तो मेरी सब लाज आप को है।

चौबे जी—और अपनी न कहोगे जो पानी में पांव धरत ही कमल की नाल ते डर कर निकर भागे !

रणधीर—(रूखे होकर) क्यों थोथी बातें कहते हो ।

सुखवासीलाल—(मन में) जिस वक्त आदमी का दिल उछांट होता है उस वक्त उसको किसी की बात अच्छी नहीं लगती ।

चौबे जी—अच्छी, मैं एक बात और कहलऊँ, फिर बस्स । (विचार कर) बखत पै रांड याद ही नांय आवै । (सुखवासीलाल की तरफ देखकर) क्यों जी मैं का कह्यो चाहै हो ? जाईबे द्यौ, नांय याद आवै तो न सही पर अब भोजन मैं कित्ती देर है । (१)

रणधीर—जरा ठैरो !

चौबे जी—भोजन के लिए तो आप कहोगे जित्ती देर ठैरो रहोंगो पर वामैं ते थोरो सो सरोजनी को जरूर दीजो नहिं तो वाकी नजर लग जायगी । (२)

रणधीर—(तेज होकर) तुमसे नाहीं कर दी तो भी तुम अपनी दंत-कथा नहीं छोड़ते ।

चौबे जी—अच्छी अच्छी, अब कछू न बोलोंगो पर यहाँ के मालिन को तो कछू न कछू जरूर दियो चाहिये ।

रणधीर—(सुनी बात अनसुनी करके) अच्छा, सब लोग एक एक करके हमारे आगे से निकल जाओ ।

---

(१) अच्छा, मैं एक बात और कह लूँ फिर बस । (विचार कर) समय पर रांड याद ही नहीं आतो । (सुखबासीलाल की तरफ देखकर) क्यों जी मैं क्या कहा चाहता था ! जाने दो नहीं याद आती तो न सही, पर अब भोजन में कितनी देर है ?

(२) भोजन के वास्ते तो आप कहोगे जितनी देर ठहरा रहूँगा परंतु उसमें थोड़ा सा सरोजनी को जरूर देना, नहीं तो उसकी नजर लग जायगी ।

चौबे जी—(आश्चर्य से) जाते का होइगो ?

रणधीर—सो अपनी आँख से देख लेना।

(सुखबासीलाल, नाथूराम, सोमदत्त और चौबे जी आगे पीछे होकर चलते हैं)

रिपुदमन—(चौबे जी की पीठ पर मट्टी का दाग देखकर) आहा ! इस काम में भी आपने बहादुरी की।

चौबे जी—हाँ तो बहादर बिना बहादरी कौन करै ?

रणधीर—परंतु अब तक तुम पुष्प में कीड़े की भांत भले छिपे रहे।

चौबे जी—भला समंदर की गहराई कों ऊपर के फिरन हारे खेबट कहा जानैं। (१)

रणधीर—आज तो आप का सरोजनी से बड़ा गहरा मिलाप हुआ !

चौबे जी—चमक पत्थरते लोह्यो आप मिल जात है। (२)

रिपुदमन—तुम्हारे अँगरखे में मिट्टी का दाग कैसे लगा ?

चौबे जी—(हँसकर) काहू छोरा छापरेने लगाय दियो होइगो, मैं ऐसी बातन कों का गिनों हों !

सुखबासीलाल—(मन में) ऐब करने को भी हुनर चाहिये।

रणधीर—(रिपुदमन से) देखो, पाप सिर पर चढ़कर अपने आप बोल दिया। (चौबे जी से) बस, अब आप यहाँ से अपने मकान को पधारिये।

चौबे जी—तो का बिना ही भोजन करे चलो जाऊँ ?

रिपुदमन—(रणधीर से) ब्राह्मण का ऐसा निरादर मत करो।

रणधीर—(चौबे जी से) अच्छा भोजन करके चले जाना।

चौबे जी—फिर तो सबी चलेंगे।

इति तृतीय गर्भांक।

---

(१) भला समुद्र की गंभीरता को ऊपर के फिरनेवाले मल्लाह क्या जाने। (२) चुम्बक पत्थर से लोहा आप मिल जाता है।

अथ चतुर्थ गर्भांक

स्थान, रणधीर का महल

(बीच में गोल मेज पर लंप जलता है, रणधीर और रिपु-
दमन कुर्सियों पर बैठे हैं)

रणधीर—इस समय मेरा मन बड़ा उदास हो रहा है। मेरे जान अच्छे आदमियों को कभी कोई काम छिपकर न करना चाहिये। जिस काम में कुछ पाप, डर, दगा, लिहाज वा संदेह रहता है उसको आदमी छिपकर किया चाहते हैं परंतु जिन लोगों का मन साफ है, जिनकी नियत अच्छी है, जो किसी से बनावट की बात नहीं किया चाहते, जो परिणाम सोचकर काम करने वाले हैं, उनको कभी छिपकर कोई काम करने की जरूरत नहीं पड़ती। संसार में ऐसे आदमी बहुत कम हैं इस कारण उनकी बातें प्रकट में अनोखी सी लगती हैं परंतु उनका मन छिप कर काम करनेवालों की अपेक्षा सदा प्रसन्न रहता है। उनको अपने वाजबी हक प्राप्त करने का पूरा अवकाश मिलता है। किसी मनुष्य को अपनी गर्ज बिना दूसरे की भलाई के लिए कोई बात किसी समय तक गुप्त रखना, अथवा किसी बात के तत्काल प्रकट करने में अकारण अपना नुकसान होता होय तो अपने बचाव का उपाय करने तक उस बात का स्पष्ट न कहना, अथवा किसी की कोई बुरी बात जान कर निश्चै होने तक निश्चे होने के विचार से छिपाना, अथवा किसी सच्ची बात को सुनने वालों के मन में असर पैदा करने के लिए चतुराई से कहना, अथवा किसी लज्जा की बात को ऐसे अक्षरों में जिनसे और का और मतलब समझा जाय कह देना, छिप कर काम करने की गिन्ती में नहीं है। परंतु और सब तरह से छिप कर काम करने को अनीति की जड़ समझना चाहिये। वोई अनीति का बीज सरोजनी अपने हाव, भाव द्वारा

मेरे मन में डाला चाहती है। इस कारण सरोजनी का नाच देखने से आज मेरा मन बड़ा उदास हो गया। मैं अच्छी तरह जानता हूँ कि अंत में येही बातें मेरा सुभाव बिगाड़ छिपकर काम करनेवाली हो जायँगी। ऐसे मौकों पर बहुधा मनुष्य का सुभाव इस रीति से बदलता है कि उसको अपने सुभाव बदलने की आप खबर नहीं रहती, परंतु बदले पीछे वो अपना हाल देखकर आप चकित रह जाता है। हमारे देश में एक बड़ा लायकीवाला, सीधा सच्चा आदमी तीन सौ रुपये महीने में नौकर हुआ था परंतु नौकर होते ही खुशामदी उसके पीछे लगे, खर्च बढ़ गया रुपये की जरूरत हुई, तनखा से काम न चल सका, कर्ज काढ़ने का समय आया, कर्ज उतारने के लिए रिशवत सिवाय कोई रस्ता न था अंत में छिपकर रिशवत ली। रिशवत लेना साबत हुआ और वो अपनी पहली चाल को पिछली चाल से मिलाकर आप चौंक उठा, सब इज्जत धूल में मिल गई। उस दिन से मैंने सब बातों में अपना स्वरूप देखकर हद बांध रक्खी है और हर घड़ी अपने सुभाव को जाँचता रहता हूं। आमदनी से कम खर्च रखने की प्रतिज्ञा है, परंतु आज सरोजनी का नाच देखने से मेरा मन भंग हो गया।

रिपुदमन—(मन में) रणधीरसिंह का मन दृढ़ करने के लिए ये समय बहुत अच्छा है। क्योंकि लाख पिगले (१) बिना उस पर मोहर नहीं लगती। (प्रकट) निसन्देह मनुष्य मात्र के मन में काम, क्रोध, लोभ, मोह का सोत रहता है और समय पाकर वो अपना वेग प्रकट भी करता है। परंतु ज्ञानी अपने विचार से उसका वेग रोक लेते हैं और अज्ञान (२) उसके भंवर जाल में पड़कर अपना विचार भूल जाते हैं, ज्ञानी को अपने विचार से उसका वेग रोकने में कुछ परिश्रम पड़ता है, परंतु अज्ञान (२) उसकी कटीली धार में पड़ कर आप बह जाते हैं। काम, क्रोध का वेग रोकना मन की मजबूती के आधीन(३)

१ पिघले २ अज्ञानी ३ अधीन

है और वेग रोकने की रुचि उपदेश से उत्पन्न होती है। रुचि बिना मन की दृढ़ता कुछ काम नहीं आती। इस कारण काम क्रोध का वेग रोकने के लिए उपदेश मुख्य समझना चाहिये, परंतु गुरु के उपदेश को ही उपदेश नहीं कहते; मन के लिए दुःख भोगना सबसे अच्छा उपदेश है। ये उपदेश कदाचित आपको हुआ होगा क्योंकि भगवान ने आपको सज्जन बनाया है। आप का सा सुंदर रूप, निरोगी देह, अलौकिक बुद्धि, अमित बल, उपस्थित विद्या, सद्व्यवहार संसार में कम दिखाई देता है। आप में मिठाई के साथ सच बोलना, परोपकार के साथ इंसाफ पर रहना, उदारता के साथ अंदाज से खर्च करना, प्रीति के साथ धर्म पर दृढ़ रहना, पराक्रम के साथ नरमाई रखना, संसार में रहकर विरक्त रहना, दृष्टि आता है। आपके इन गुणों ने आप को दुःख से अवश्य बचाया होगा परंतु आप से मनुष्यों के मन में केवल सुख भोगने से काम क्रोध के वेग बढ़ने का मुझको अब तक बड़ा भय रहता था सो आज आपकी अरुचि देखकर मिट गया। आपसे बुद्धिमानों को दूसरों के दुःख सुख से अपने दुःख का विचार करके काम क्रोध का वेग सदा रोकना चाहिये।

रणधीर—बहुत अच्छा, आपके कहने को मैं अंगीकार करता हूँ और मेरा पहले से यही विश्वास है पर अब दूसरे झगड़े का क्या करें? तहकीकात की राह से चौबे जी पर अपराध साबित हो गया परंतु हमारा मन इस बात को नहीं मानता।

रिपुदमन—मनुष्य देह में और प्राणियों से अधिक क्या है?

रणधीर—बुद्धि।

रिपुदमन—और वो बुद्धि कैसी अच्छी होती है।

रणधीर—सारग्राहिणी।

रिपुदमन—तो आप को उसी बुद्धि के बल से इस बात का निर्णय करना चाहिये।

रणधीर—मेरी बुद्धि में इस गोरखधंदे के खोलने का अब तक कोई सुगम उपाय नहीं दिखाई दिया।

रिपुदमन—तो आप अपने किसी विश्वासपात्र से सम्मति करके इसको खोलिये।

रणधीर—(मन में) जैसे हर किसी की बातों में आकर उसके आगे अपने दुःख सुख की पसारठ खोल बैठना बुरा है तैसे ही सबको कपटी और मूर्ख समझकर किसी से बात न करना बुरा है। (प्रकट) आपसे बढ़कर भरोसेवाला और कौन मिलेगा।

रिपुदमन—तो मेरे विचार में आग बिना धुँआ नहीं होता।

रणधीर—इससे क्या?

रिपुदमन—पापी पाप करके गुप्त रहने से भी सुख नहीं पाता। उसको सबसे अधिक दुःख अपने मन की व्याकुलता का है। इस लोक में पाप प्रकट होने से दुर्गति और परलोक का नर्कभोग प्रति पल उसकी दृष्टि के सन्मुख बना रहता है। वो अपनी प्रतिष्ठा जताने के लिये भले ही कुछ न कहे पर उसके मुख पर उसके भय की झलक प्रकट दिखाई देती ही है वो झलक उस समय सुखबासीलाल के मुख पर थी, उस समय की हर एक बात से सुखबासीलाल का रंग गिरगट की तरह बदलता था।

रणधीर—ऐसे मौके पर कलंकी होने के डर से निर्दोष भी काँपने लगते हैं।

रिपुदमन—श्वेत रंग होने से कपूर, कपास एक भाव नहीं बिकता।

रणधीर—मुझको पहले सुखबासीलाल पर संदेह था परंतु चौबे जी के अंगरखे में दाग निकलने और उनके मंजूर करने से अब नहीं रहा।

रिपुदमन—हमारी नजर में दोनों एक से हैं परंतु ऐसे मामले में केवल अपराधी के कहने पर विश्वास न करना चाहिये क्योंकि बहुत से निरपराधी घबराहट, दबाव, दुख दर्द, दया अथवा नशे से बावले होकर

अपने आप मरने को तयार हो जाते हैं, इसी तरह चौबे जी ने भी हमारी कहन को अपनी बड़ाई समझ कर मंजूर किया हो तो अचरज नहीं। मैंने ऐसे बहुत अविचारी मनुष्य देखे हैं जो अपनी बड़ाई के लालच से ऐसे अनेक उपाय किया करते हैं। जिन चिलबिले लड़कों से महनत नहीं होती वो अपने मा बाप को अपनी सुकुमारता का धोका देकर ठगते हैं और जिन मूर्खों को विद्या नहीं आती वो विद्यावान बन कर छोटे रुजगार में अपनी स्वरूप हानि बताते हैं जिन छिचोरों की तरफ कोई स्त्री प्रीति से नहीं देखती वो अपने संगातियों में बैठकर झूंठी बातें बनाने में अपनी बड़ाई समझते हैं, जिन दरिद्रियों के पास धन नहीं होता वे धनवानों के पास बैठ कर झूठी दौलत दिखाने का रूप बनाते हैं।

रणधीर—आपकी कहन मेरे मन पर असर करती है और मैं ये भी जानता हूं कि बहुधा इस तरह की बनावट और चालाकी सुखबासीलाल सरीखे अधकच्चे मनुष्यों से होती है। जो लोग बिल्कुल अजान हैं उनको तो ऐसी बातें उपजती ही नहीं, जो पूरे हैं वे परिणाम सोचकर ऐसी बातों से बचते हैं पर अधूरे परिणाम तक तो पहुँच नहीं सकते और जीविका करने का साहस करते हैं इस कारण उनसे बहुधा ऐसी बनावट और चालाकी होती है परंतु सुखबासीलाल के अपराध पर हरताल की तरह बरहे की मट्टी लग गई। (हंसकर) आप मेरे कहने का कुछ बुरा न मानें जिससे मेरी प्रीति होती है उससे मैं भीतर, बाहर एक सा रहता हूँ।

रिपुदमन—ये ही बात मेरे मन की बढ़ानेवाली है, मुझको बड़ा अचरज है कि आप से बुद्धिमान ऐसी मोटी बात में धोका खाते हैं पर अपने बचाव के लिए दूसरी बात नहीं सोचते!

रणधीर—अच्छा, आपके कहने से मैं फिर उखाड़ पछाड़ करता हूं। सब काम क्रम से करने चाहिये। (पुकार कर) अरे जीवन यहाँ आना। (धीरे रिपुदमन से) इस पर मुझको बड़ा भरोसा है।

रिपुदमन—घर गृहस्थ के काम में तो ये लोग अकसर गड़बड़ कर जाते हैं।

रणधीर—किसी थोक (१) के सब आदमी एक से नहीं होते !

(जीवन का प्रवेश)

रणधीर—(गंभीर स्वर से) क्यों रे ! हमारे पास इतने दिन रहा तो भी तेरी चाल न सुधरी। कुत्ते की पूँछ को बारह बरस दबाकर रक्खा तो भी टेढ़ी की टेढ़ी ही रही, जेवड़ी जल गई पर बल न गया। सच कह तेरी इस वेश्या से कितने दिन की जान पहचान है ?

जीवन—(मन में) लालाजी बुरा मानें तो भलेई मानें मैं ये हकीकत कहने के लिए पहले से औसर देख रहा था परंतु जिस समय मुझसे कोई धमकाकर पूछता है उस समय डर के मारे मेरी घिग्गी (२) बँध जाती है (कँपकँपा कर, भयभीत स्वर से) ये दश रुपे आज सबेरे से मैं आपको दिया चाहता था पर एकांत का समय नहीं मिला।

रणधीर—हमारी बात का जवाब दे, बीच में दूसरी बात क्यों मिलाता है ?

रिपुदमन—डर के मारे इसके मुख से कुछ का कुछ निकलता है। इसको धीरज से कहने दीजिए। (जीवन से) कह रे कह।

जीवन—आपने पूछा सोई कहता हूँ। हम लोगों को भरपेट अन्न नहीं मिलता। हम वेश्या रांड को क्या जाने।

रणधीर—तेरी एक बात दूसरी बात से नहीं मिलती। क्या चौबे जी ने तुझको भंग पिला दी। बता ये दश रुपे कैसे हैं ?

जीवन—नहीं अन्नदाता, मैंने भंग नहीं पी। मैं नौकर होकर भंग कैसे पीता। ये दश रुपे आपके हैं मुझको ऐसी कौड़ी अपने अंग नहीं लगानी।

---

(१) स्तोमक, समूह (२) घिग्घी

रणधीर—अच्छा, कहाँ से, किस बात के, कब आये ?

जीवन—(घबरा कर) क्या पूछा।

रिपुदमन—(धीरज से) बता ये दश रुपे कहाँ से आये ?

जीवन—लाला सुखवासीलाल जी से।

रिपुदमन—किस बात के ?

जीवन—इनाम के नाम से घूँस के।

रिपुदमन—कब ?

जीवन—कल रात को, वे वेश्या के जाते थे जब।

रणधीर—तैनें कैसे जाना कि वेश्या के जाते हैं ?

जीवन—मैं उनके पीछे पीछे जाकर अपनी आँख से देख आया।

रणधीर—देख, झूंट न हो ?

जीवन—झूंट निकले तो मेरी नाक काट लेना !

रणधीर—अच्छा, जा सुखवासीलाल को बुला ला।

(जीवन गया)

रणधीर—यहाँ तो हाथ लगाने ही की देर थी।

रिपुदमन—पर अभी अँगरखे के धब्बे का धोखा बाकी है।

रणधीर—(विचार कर) ओहो ! न्हाने के समय छल करके सुखवासीलाल ने चौबे जी से अँगरखा बदल लिया होगा, नहीं तो उस समय सुखवासीलाल के न्हाने का क्या काम था ? और न्हाने गया तो कमलनाल से डरकर निकल भागने की कौन सी बात हुई।

रिपुदमन—(मन में) मनुष्य के हृदय में क्रोध का अंधकार होते ही अपराधी के अगले पिछले सब अपराध तारागण की तरह क्रोधी की दृष्टि से साम्हने आ जाते हैं इस कारण बुद्धिमान को छोटी से छोटी बात के लिए भी उसी समय सफाई कर लेनी चाहिये।

रणधीर—ये आदमी पहले भी कई बार मुझको धोका दे चुका है, अपना असली सुभाव कोई नहीं छोड़ता। कोयल के बच्चों को पक्षी

समझ पालते हैं पर वे बड़े होकर अपनी जात में आप से मिल जाते हैं।

(सुखबासीलाल और जीवन का प्रवेश)

सुखबासीलाल—(धीरे जीवन से) तैनें ये बात अच्छी नहीं की, धी के बाप आपस में सुलूक रखना चाहिये।

जीवन—(पुकार कर) मैं अपनी भुगत लूँगा।

रणधीर—(सुखबासीलाल से रूखे होकर) कल रात को तुम सरोजनी के घर गए! आज अंगूर की टट्टियों में उससे बतलाए (१) तालाब में न्हाने का मिस करके चौबे जी से अंगरखा बदला ये सब हाल हमको अच्छी तरह मालुम हो चुका है। अब तुम अपनी भलाई चाहते हो तो एक दम अपनी भूल मजूर करो।

सुखबासीलाल—(मन में) नौकरी की क्या? ये तो मजदूरी है। नान पारचे का काम हर तरह चला लेंगे मगर जब ये बात पोशीदा नहीं रह सकती तो थोड़ी जिंदगी के वास्ते कौन लग्वगोई करके दोज़ख में जाने का काम करे। (प्रकट) कसूर हुआ तो हुआ, न हुआ तो हुआ, इस वक्त में आप की नजर में बेशक कसूरवार हूं।

रणधीर—अच्छा, तुमको अपने बचाव के लिए कुछ कहना हो तो कह लो।

सुखबासीलाल—कुछ नहीं।

रणधीर—तो जाओ।

(सुखबासीलाल और जीवन गये)

रिपुदमन—अब इससे सब तरह सावचेत (२) रहना चाहियें, "बेदिल नौकर दुश्मन बराबर" होता है।

---

(१) बातचीत की (२) सचेत, सावधान

रणधीर—मैं अब इसको घड़ी भर अपने पास नहीं रखना चाहता, परंतु दूसरा आदमी न मिलेगा तब तक लाचारी से रखना पड़ेगा।

रिपुदमन—देखो, जिसकी प्रसन्नता और अप्रसन्नता का कुछ फल नहीं मिलता उसका काम कोई मन लगाकर नहीं करता। सब उससे निर्भय हो जाते हैं और वो सबकी नजर में हल्का जँचने लगता है।

रणधीर—ओहो! आज आप न होते तो कैसी बेइन्साफी हो जाती।

रिपुदमन—इन्साफ में सदा इसी तरह सोचना चाहिये। अपराधी पर दया करने की बहुत लोग सूचना करते हैं और अपराध निश्चय हुए बिना किसी को दंड देना मेरे विचार में भी अनुचित है, परंतु अपराध निश्चय हुए पीछे अपराधी पर दया करना निरपराधियों को दंड देने से कम नहीं। अपराधी को यथायोग्य दंड देना चाहिये, क्योंकि अपराधी पर दया करने से लोगों के मन में अपराध करने का साहस होता है। एक दो मनुष्य को दंड देने से सब देश का उपकार हो तो दंडकर्ता को निर्दय कैसे समझें? अजान कुछ कहो, मान की दृढ़ता इंतजाम की दृढ़ता का मूल है और इंसाफ में दया करनेवालों के मन की दृढ़ता संभव नहीं।

रणधीर—मैं तो पहले ही सुखबासीलाल के निकालने का विचार कर चुका हूँ।

रिपुदमन—हमको सुखबासीलाल और चौबे जी से कुछ विशेष संबंध नहीं है, परंतु इस समय के इंसाफ से हमारे मन को बड़ा सुख होता है।

रणधीर—शरीर के सुख से मन का सुख बिलकुल अलग है। मन के सुख बिना शरीर के सुख कुछ काम नहीं आते। शरीर के दुःख से मन व्याकुल हो तो शरीर के सुख से मन को संतोष आ जाता है, परंतु शरीर के सुख से मन सुखी नहीं होता। मन सब बातों में शरीर का सहायक है परंतु मन की शक्ति से (जिसमें शरीर नाममात्र सहायक हो) आज के

इंसाफ का सा अलौकिक काम बन जाता है तब मन को असली सुख होता है और इसके आगे शरीर का सुख कुछ नहीं जँचता।

रिपुदमन—अच्छा अब रात बहुत गई मुझको आज्ञा हो।

रणधीर—मैंने भी आज इस मामले को बड़े एकाग्रचित्त से विचारा था इस कारण इस समय नींद की गहल सी आ रही है।

रिपुदमन—(जाते जाते) कल आपको वहीं आना चाहिये।

[गया]

इति चतुर्थ गर्भांक।

द्वितीयांक समाप्त।

———

अथ तृतीयांक प्रारंभ

प्रथम गर्भांक

स्थान, राजमहल के पास रंगभूमि

(बीच में रत्न-जटित चौकी पर प्रेममोहिनी की प्रतिमा रक्खी है और उसके सामने अनेक देश के राजा धनुषाकार बैठे हैं। प्रेममोहिनी अपने महलों में से ये उत्सव देख रही है और सूरत का सेनापति रंगभूमि के दरवाजे पर खड़ा है।)

(सूरत के महाराज और मंत्री का प्रवेश)

सूरत के महाराज—सब राजा आ गये ?

मंत्री—हाँ महाराज ! इस समय उनके रत्नों की झलक से रंगभूमि दिवाली की रात के समान जगमगा रही है।

× × ×

प्रेममोहिनी—(मालती से) क्यों सखी ! सब राजकुमार आ गये ?

मालती—हाँ, अभी मंत्री ने महाराज से कहा था।

प्रेममोहिनी—तो रणधीर क्यों नहीं आया ?

मालती—तुम क्या उसको पहचानती हो ?

प्रेममोहिनी—मैंने उसको देखा नहीं, पर उसकी छबि मेरे मन में बस रही है।

मालती—इन राजकुमारों में तुमको कोई सुहावना नहीं लगता ?

प्रेममोहिनी—क्या चंद्रमा बिना कमोदनी को कोई खिला सकता है ?

मालती—भला मकरंद (रस) के लालच से भौंरा उसके पास चला जाय तो ?

प्रेममोहिनी—कमोदनी को जल में डूबने सिवाय कुछ उपाय नहीं।

मालती—ये सब बातें पिता के आगे भूल जाओगी।

× × ×

(सूरत के महाराज कुछ आगे बढ़े और सेनापति ने झुककर राम राम की)

सूरत के महाराज—(सेनापति से) भीड़ का बंदोबस्त अच्छी तरह कर दिया ?

सेनापति—आपके प्रताप से सब हो रहा है।

सूरतपति—(आगे बढ़कर, राजाओं से) आप लोगों ने यहाँ आकर मेरे ऊपर बड़ी कृपा की।

सब राजा—(खड़े होकर, एक स्वर से) ये आपकी बड़ाई है। फलदार वृक्ष सदा नवते हैं, अब हम आप की कौन सी आज्ञा पालन करें ?

सूरत के महाराज—आज आप अपनी शस्त्र - विद्या दिखाइये, जो वीर शस्त्र - विद्या में जीतेगा उसको बड़ा जस और (प्रेममोहिनी की मूर्ति दिखाकर) इस प्रतिमा की अधिष्ठाता (१) देवी (प्रेममोहिनी) आप से आप सिद्ध हो जायगी।

सब राजा—(आनंद से) ऐसा ही होगा।

सूरत के महाराज—अच्छा, आप किस रीति से अपनी विद्या दिखायंगे ?

नगर का राजा—कहने से क्या है जो कुछ करें अपनी आँख से देख लेना।

(रणधीर घोड़े पर सवार होकर आता है)

सेनापति—(रणधीर को रोककर) तुम कौन हो ?

---

(१) अधिष्ठात्री

रणधीर—रणधीर।

सेनापति—(हँसकर) रणभीरु का यहाँ क्या काम ?

रणधीर—मालूम हुआ आप अंधे नहीं बहरे भी हो।

सेनापति—तुम अपनी कुशल चाहते हो तो उल्टे फिर जाओ!

रणधीर—हाथी के दाँत निकले पीछे भीतर नहीं जाते।

सेनापति—तो लाचार उनको तोड़ना पड़ेगा परंतु तुमारा रूप देखकर मेरे मन में दया आती है।

रणधीर—मेरे ऊपर नहीं अपने कुटुंब पर दया करो।

सेनापति—तुमसे क्या लड़ूँ, लड़ाई बराबर वाले से होती है।

रणधीर—सच कहा, मैं तुम्हारे लिए अपना नौकर बुला दूंगा।

सेनापति—अब तुम मेरे आगे से हट जाओ।

रणधीर—अपनी आँखें क्यों नहीं बंद कर लेते!

सेनापति—(खड्ग दिखाकर) देखो इसकी धार बड़ी तेज है।

रणधीर—पर तुम्हारे बचनों से तो अधिक न होगी।

सेनापति—तुम अभी बालक हो!

रणधीर—तो हम पूतना बध का अनुकरण करेंगे।

सेनापति—(क्रोध से) मुख सम्हाल कर नहीं बोलते!

रणधीर—हमने क्या झूट कहा ?

सेनापति—(पैंतरे बदल कर) अच्छा तो आओ।

(रणधीर ने विना भाले का एक भाला मारकर सेनापति को पाँच सात गज ऊँचा उछाल दिया।)

सूरत के महाराज—(देखकर जल्दी से) जो वीर हमारे सेनापति को बचावेगा वो ही आज की शस्त्र-विद्या में जीतनेवाला समझा जायगा।

(सब राजा इधर उधर दौड़े पर किसी से कुछ न हो सका। रणधीर ने घोड़े समेत ऊँचे उछल कर सेनापति को गिरते गिरते रोक लिया और सूरतपति के आगे लाकर खड़ा कर दिया।)

सूरतपति—(उसे देखकर मन में) इसके बदले तो सेनापति का मर जाना अच्छा था; हे देव ! तुझको ये क्या सूझी ? चंद्रमा का मित्र चकोर ! कांटेदार वृक्ष में गुलाब ! सूरत की महाराजकुमारी का पति एक साधारण परदेशी ! अब मैं अपने वचन से फिरता हूँ तो मेरा विश्वास जाता है और वचन पर रहता हूं तो कन्या जाती है ! क्या करूँ ? सांप छुछूंदर की सी मेरी दशा हो रही है। (उदास भाव से सिर झुका लिया।)

रणधीर—(सूरत के महाराज को उदास देखकर, मन में) तुम्हारे उदास होने से मेरा क्या नुकसान ? मैंने किसी तरह के लालच से ये काम नहीं किया मैं तो केवल जस चाहता हूं—

मेघन कबहुं न जल चहौं, चातक सम तो पास।
मैं मयूर मीठे बचन सुन, मन करत हुलास॥

जो तुम बुरा मानो तो अपना नगर रक्खो मेरी विद्या नहीं छीन सकते।—

बिधना कोपै हंस पर, हरै कमल बन बास।
पै जल दुग्ध विभेद गुण, किंहि बिधि करै बिनास ?

(आगे को चल दिया)

× × ×

प्रेममोहिनी—(मालती से) आज समुद्र ने अपनी मर्जादा छोड़ दी, सूर्य चंद्रमा की चाल बदल गई, अग्नि में दाहक शक्ति नहीं रही, पवन की बाहक शक्ति जाती रही।

मालती—कैसे ?

प्रेममोहिनी—मेरा मन इस पुरुष की तरफ गया।

मालती—तो क्या तुम किसी से विवाह नहीं किया चाहती ?

प्रेममोहिनी—रणधीर के सिवाय मैं किसी को पुरुष नहीं समझती।

मालती—और जो ये रणधीर ही हो।

प्रेममोहिनी—सच कह, क्या ये रणधीर है ?

मालती—ना, मैंने एक बात कही कि जो ये वोही हो।

प्रेममोहिनी—तब तो कुछ कहने सुनने की बात ही नहीं रही।

मालती— (दोहा)

सज्जन प्रीति वियोग ते. कबहु न होत विनाश।
चन्द ढक्यो घन से तदपि, करत कुमोद प्रकाश॥

प्रेममोहिनी—(आंसू भर कर, गद्गद स्वर से) सखी मेरे ऐसे भाग—

(नेत्र बंद कर बेसुध सी हो गई)

मालती—(महल के नीचे से रणधीर को जाते देख) राजकुमारी! इष्ट देव का ध्यान पीछे करना, पहले दूज के चंद्रमा का दर्शन तो कर लो।

(प्रेममोहिनी ने नेत्र खोलकर रणधीर को जाते देखा। अचेत अवस्था में उसकी अंगूठी उसके हाथ से रणधीर पर गिर पड़ी। रणधीर ने अंगूठी को हाथ में झेल कर प्रेममोहिनी की तरफ देखा। वो अंगूठी अपनी अंगुली में पहनकर वहां से चल दिया।)

प्रेममोहिनी—(रणधीर की तरफ देख कर) रणधीर! तुम सच्चे रणधीर हो! आज तुमने अपना नाम सच्चा कर दिखाया। तुम्हारा मुखचंद्र देखकर मेरा मन समुद्र की तरह उमगता है। (झरोखे से नीचे की तरफ देखकर) हाय! वे तो चले गए। बिजली की चमक से भी थोड़ी देर उनका मनोहर रूप दिखाई दिया। अब क्या होगा।

मालती—धीरज धरो, ये समय घबराने का नहीं है।

× × ×

सूरतपति—(सिर ऊंचा करके) वो मनुष्य कहां गया? (मंत्री से) तुम उसको पहचानते हो?

मंत्री—मेरी उसकी बातचीत कभी नहीं हुई, पर मैंने सुना था कि कोई बड़ा गुणवान क्षत्री राजमहल के पीछे आकर ठैरा है।

सूरतपति—अच्छा वो यहां होता तो उसका हाल पूछा जाता। परंतु आज की जीत से वो प्रेममोहिनी के व्याहने लायक नहीं ठैरता। बिल्ली के भागों छीका टूट पड़ा तो क्या हुआ? मैंने ये प्रतिज्ञा राजाओं के लिये की थी। अब इस का फिर कुछ विचार किया जायगा। आज रात को महल में बसंत पंचमी का उत्सव है, सब राजा कृपा करके वहां पधारें।

सब राजा—हमको आप का कहना सब तरह मंजूर है।

(सब गए)

इति प्रथम गर्भांक।

अथ द्वितीय गर्भांक

स्थान, रणधीरसिंह का महल।

(रणधीर मखमली कोंच पर सिरहाने हाथ लगाकर लेट रहा है और जीवन उसके चरण दाबता है।)

जीवन—(चरण दाबते दाबते) इस समय आप का मन बहुत उदास दिखाई देता है।

रणधीर—तैनें कैसे जाना?

जीवन—आपके मुख देखने से प्रकट जाना जाता है।

रणधीर—(आश्चर्य से मन में) मेरे मन का भाव दूसरे ने पहचान लिया। (प्रकट) अच्छा, तू क्या अब तक इसका कारण नहीं जानता? देख आज हमारे दुःख की आग में घी डाला गया। तू अच्छी

तरह जानता है कि हम केवल मान के भूखे हैं, हमारी जान में अपमान और मौत समान है।

जीवन—आपको दुःख देखकर घबराना उचित नहीं। आप महत् पुरुष हो—

बड़े बिपतहूँ मैं पड़े तजत न पर उपकार।
राहु ग्रसित शशि जगत को पुण्य बढ़ावनहार ॥१॥
मलय करत निज गन्ध सों वृक्षन आप समान।
कहहु करत कछु मलय को वृक्ष बहुरि सन्मान ॥२॥

रणधीर—इस विचार में तू भूलता है, क्योंकि थोथे बासों का चंदन से कुछ भी उपकार नहीं होता। उपकार तो उपकार योग्यों के साथ होता है पर (**आँखों में आँसू भरकर**) हम तेरी नौकरी का इस जन्म में क्या बदला देंगे? हमको क्षमा कर, नहीं तो परलोक में हमको तेरा देनदार रहना पड़ेगा।

जीवन—ये आप क्या कहते हो। मैं किसका और नौकरी किसकी। जो मैं सौ जन्म तक आठ पहर आपकी सेवा करूँ तो भी तो आप की कृपा से आगे कुछ गिन्ती में नहीं।

रणधीर—जीवन तेरी लायकी से मैं तुझपर नौछावर हूँ।

जीवन—आप ऐसा बचन मत कहो।

रणधीर—बिपत मनुष्य की कसौटी है, इसमें पीतल और सोने का भेद खुल जाता है। विपत्ति में मनुष्य को परमेश्वर से प्रीति होती है। देख, एक दिन ऐसा था कि बड़े बड़े धनवान आकर मेरी हाजरी साधते, मुझसे प्रीति बाँधते, मुझ पर प्राण नौछावर करते, मेरे सच्चे मित्र बनते। परंतु आज वे सब कहाँ हैं, मेरी विपत्ति में मुझको कौन सहारा देता है, कौन याद करता है, कौन सेवा करता है? कोई नहीं, हिरफिरकर तू ही तू दिखाई देता है। भाई है तो तू है, मित्र है तो तू है, नौकर है तो तू है।

जीवन—महाराज ! उस समय आपकी दया से मेरा घर बसा, आपके रुपै से मेरा पालन हुआ। आपकी कृपा से मैं जीआ, बड़ा हुआ, तो क्या ऐसे समय में आपको छोड़ जाऊँ ? भगवान आपको जीता रखे। जीवन जीते जी कभी आपके चरण-कमल से अलग होने वाला नहीं है।

रणधीर—ओ सच्चे मित्र ! सूखे वृक्ष की छाया में ठैरकर परदेशी क्या सुख पावेगा ? भला तू अब मेरी सेवा से क्या आस रखता है ? जब मुझसे तेरे कुटुंब का पालन भी नहीं होता तो मेरे पास रहने से तेरा क्या भला होगा। तेरी इस मुफ्त की चाकरी का मैं क्या बदला दूंगा।

जीवन—महाराज आपने ये क्या कहा, मैं मुफ्त चाकरी नहीं करता। सब आदमी काम लेकर तनखा देते हैं, पर आपने तो मुझको पहले ही निहाल कर दिया।

रणधीर—(आँसू भरकर) जीवन ! तू अपनी सचाई से मुझको बड़े अचरज में डालता है। तू पहले मेरा सेवक था, परंतु अब तो सहायक मित्र है। तेरे चाल चलन से गरीबों की सचाई का एक अच्छा प्रमाण मिलता है। मैंने अपनी दौलत इन झूठे खुशामदियों की खातिरदारी में खोई, उसके बदले जो गरीबों की सहायता में लगाई होती तो कैसा अच्छा होता ? वे लोग कभी मेरी याद भी करते हैं ?

जीवन—(मन में) देखो, मनुष्य का मन भी पवन की तरह सदा बदलता रहता है। ये रणधीरसिंह जो एक बार बड़े गंभीर, रूखे, कठोर और बेपरवाह थे वे समय के फेरफार से आज कैसे नरम और सीधे हो गये ?

रणधीर—तू ये मत समझ कि, मैं दुःख से घबराकर ये बात कहता हूं। दुःख सुख तो दिन रात की तरह बदलते रहते हैं और मैं ने श्री रामचंद्र, हरिश्चंद्र, नल, युधिष्ठिर आदि की कथा पढ़ी, इस कारण मेरे मन में धीरज बना रहा है। मुझको मनुष्यों के स्वभाव का अच्छी तरह अनुभव है जैसे गरमी की रूत में प्रायः गरम और सरदी की रूत में सरद

चीज पैदा होती हैं। जैसे हवा का रुख पलटते ही सब झंडियों का रुख अपने आप बदल जाता है, तैसे आदमी के होनहार से सब लोगों का मन भी उसकी तरफ को वैसा ही हो जाता है और उसके होनहार से ही लोगों के मन में उसका रूप हलका भारी जंचने लगता है। एक बार एक आदमी की बातें सुहावनी लगती हों, दूसरी बार बेसबब उससे मन हट जाय; उसकी बातें बुरी मालूम होने लगे अथवा जिससे अरुचि हो उसकी बातें सुहावनी मालूम हों तो ये उसके होनहार का कारण नहीं तो और क्या है? बहुत कहाँ तक कहूं? होनहार के बल से खास उस आदमी के मन में भी वैसे ही विचार पैदा हो जाते हैं; जब हर्ष होने वाला हो, उस समय हर्ष की कोई बात न होगी तो भी पहली हर्ष की बातें याद आने अथवा आगे को आनंद होने की उम्मीद से मन हर्षित हो जायगा। इसी तरह जब दुःख होने वाला होगा उस समय कोई दुःख की बात न होगी तो भी पहले दुःख याद आने अथवा आगे को अपने ऊपर किसी तरह के दुःख पड़ने का भय होने से चित्त उदास हो जायगा। जैसी होनहार होगी, तैसे काम करने को मन चाहेगा वैसा ही बानक बन जायगा। होनहार बातों का रूप मैं अच्छी तरह जानता हूँ; होनहार किसी के अटकाए से नहीं अटकती, परंतु जब मुझको इन झूठे खुशामदियों की बातें याद आती हैं तब मेरे शरीर में आग लग जाती है। बता, आज ही के अपमान में किसी ने मेरा साथ दिया?

जीवन—आज आपका क्या अपमान हुआ?

रणधीर—मुझको रंगभूमि में जाने से रोका, इससे बढ़कर और क्या अपमान होगा?

जीवन—ये तो आप को ऐसा ही भासता होगा। पित्तेदार मनुष्य के लिए कोई जरा सी बात हो जाती वो उसको खुर्दबीन की भांत अपने मन ही मन में सोच सोच कर पहाड़ की बराबर बना लेता है, परंतु सबके लिए सब एक से नहीं होते। एक मनुष्य एक का बड़ा दूसरे का छोटा, एक का गुरु दूसरे का शिष्य, एक का स्वामी दूसरे का

सेवक, एक का शत्रु दूसरे का मित्र, एक का पोषक दूसरे का नाशक होता है। एक ही वस्तु एक की लाभदायक और दूसरे की हानिकारक बन जाती है। देखिये, एक मनुष्य को फूलों जी सेज पर नींद नहीं आती, दूसरा मिट्टी के ढेलों पर पांव पसार कर सोता है। इसी तरह आप का विचार और लोगों से जुदा है। आप जिस काम से अपनी स्वरूप हानि बताते हो, उसी काम से आज आप का यश सारे नगर में फैल गया।

रणधीर—जगत की कोई बात गुण दोष से खाली नहीं पाई जाती, परंतु जिस बात में गुण विशेष हो सो अच्छी और दोष विशेष हो सो बुरी समझी जाती है। इस कारण आज की बात मैं तेरे वचनानुसार कुछ गुण हो तो उसको अच्छी नहीं मान सकता, क्योंकि उसमें दोष विशेष हैं।

जीवन—क्यों? आप क्या इसको छोटी बात समझते हैं? मेरे जानने में तो आप को इस समय भी सूरत के महाराज को सभा में अवश्य पधारना चाहिये।

रणधीर—जीवन तैनें क्या कहा? तू नहीं जानता कि मेरे मन में क्रोध की आग जल रही है, फिर तू उसमें घी डाल कर उसके भड़काने का क्यों उपाय करता है? न जाने ये आग किस किस को भस्म कर डालेगी।

जीवन—मैं इस बात से निश्चिंत हूँ, क्योंकि आग को आग नहीं जला सकती। आप आनंद से राजसभा में जायं। हाथी के चपेट मारे बिना सिंह का बल नहीं जाना जाता और भाग्य पर बैठ रहना तो कायरों का काम है।

रणधीर—भला जीवन! बिना बुलाये जाना तो किसी तरह मुनासिब नहीं।

जीवन—सब राजों के बुलावे में आप का बुलावा आ गया फिर आप को यही विचार है तो बताइये बादलों को कौन बुलाने जाता है जो पानी बरसा कर सबकी ताप मिटाते हैं?

रणधीर—(**मन में**) इधर विश्वासी जीवन भी हठ करता है, उधर मेरे मन में भी वीररस भर रहा है इस कारण अब तो राज सभा में जायंगे, होनी होय सो हो। (**प्रकट**) अच्छा, जीवन तेरा कहना माना, अब तू हमारे पांचों शस्त्र और बस्त्र ले आ।

जीवन—(**जाते जाते**) लाया, (**जाकर सब सामान लाता है और रणधीर बस्त्र पहन, शस्त्र सज़, दर्पण देख, जाने को तैयार होता है तब जीवन जल्दी से जल का भरा कलश ले सामने आ खड़ा होता है।**)

रणधीर—ऐसे शकुन का फल नहीं होता, जो शकुन आप से आप हो उसकी त्रिध मिलती है।

जीवन—तो भी नफे की हवा ही अच्छी।

(**आगे आगे रणधीर और पीछे पीछे जीवन जाता है।**)

इति द्वितीय गर्भांक।

अथ तृतीय गर्भांक।

स्थान, सूरत का राजमहल

(सब राजा बराबर बराबर कुर्सियों पर बैठे हैं, सरोजनी नाचती है, मंत्री ने अतरदान ले रक्खा है, सूरतपति अतर लगाते हैं, रिपुदमन पान देता है।)

रिपुदमन—(**मन में**) रणधीरसिंह अब तक क्यों नहीं आए। उनकी जीत का हाल सुनकर तो मुझको ऐसा आनंद हुआ जैसा जनकपुर बासियों को श्री रामचन्द्र जी के धनुष तोड़ने से हुआ था। रणधीर निःसंदेह इस बड़ाई के लायक है परंतु पिता (सूरत के महाराज) ने परशुराम जी की भांत नाहक हट पकड़ रक्खा है। मैं रणधीरसिंह का सब

भेद जानता हूँ, मेरा उनका कुछ अंतर नहीं है। परंतु मैं उनकी आज्ञा बिना एक अक्षर नहीं कह सकता और कहने में अधिक बिगाड़ की सूरत मालूम होती है, इस कारण और भी मौन साध रक्खा है।

(रणधीर आया। उसे देखकर सब राजा चकित हो इधर उधर देखने लगे। वो निर्भयता से सभा के बीच में एक खाली कुर्सी पर जा बैठा और टकटकी बाँध कर सरोजनी की तरफ देखने लगा।)

सूरतपति—(मंत्री से, धीरे) ये ढीट यहाँ बिना बुलाये क्योंकर चला आया ? इसको यहाँ तक पहरे वालों ने कैसे आने दिया ? जहाँ किसी बात में मालिक की तरफ से जरा सी भूल होती है, वहाँ अंधेर मच जाता है, नौकर निर्भय हो जाते हैं। परंतु हम क्या करें ? काम के फैलाव से हमको औसान नहीं आता। तुमने इसका बंदोबस्त क्यों नहीं किया ?

सूरत का मंत्री—महाराज ! बंदोबस्त तो अच्छी तरह कर दिया था परंतु ये भीड़ में छिपकर आ गया होगा, टीडी की मौत आती है जब वो अपने परों से उड़कर आग में जा पड़ती है।

रिपुदमन—(धीरे) पिता जी ! ये आप के घर आया है, आपको अपना धर्म विचार कर काम करना चाहिये, आप क्या ऐसे सज्जन का निरादर करेंगे ? मैं इसके गुण अच्छी तरह जानता हूँ। कहिये, इसने आप का क्या बिगाड़ किया। हट जुदी चीज है। आप इंसाफ से विचार कर देखें तो ये सबसे अधिक सन्मान के लायक हैं। इसको आप ने साधारण आदमी कैसे जाना ? क्या इसके सब लक्षण चक्रवर्ती से नहीं मिलते ! इसका सुंदर रूप प्रेममोहिनी से ब्याहने लायक नहीं है ? इसकी बाण-विद्या ने अर्जुन का गांडीव (धनुष) नहीं भुला दिया ? फिर आप क्यों जान बूझ कर सोते सिंह को जगाते हैं। थोड़े लालच से बहुत सा नुकसान करना नीति के विपरीत है।

(सरोजनी रणधीर के आगे जाकर कहरवा नांचने लगी)

कैसे लगे मेरी नाव खेवट तेरे रूठे पर ?
भला कैसे लगे मेरी नाव खेवट तेरे रूठे पर।
नाव झर्झरी नदिया गहरी वल्लिके कर से छूटे पर ॥
भला कैसे०—

उठत हिलोरैं पालकी रस्सी के टूटे पर ॥ भला कैसे० ॥
बीच धार मैं हात तजत कोउ तन मन धन के लूटे पर।
भला कैसे लगे मेरी नाव खेवट तेरे रूठे पर ॥ १ ॥

रणधीर—(मन में) ये कल चौबे जी के बखेड़े से खाली रह गई थी इस कारण इसको इस समय कुछ देना चाहिये। (अपने गले से मोतियों की माला उतार कर दे दी।)

सूरत के महाराज—(रिपुदमन से) कहो ये इस काम से कलंकी हुआ कि नहीं ?

रिपुदमन—कलंकी तो चंद्रमा भी है, मैं इतने अंश में रणधीरसिंह की बड़ाई नहीं करता। बहुत लोगों का सुभाव होता है कि जिससे प्रीति हो उसके गुण, और बैर हो उसके दोष प्रकट करते हैं। परंतु ये रीति अच्छी नहीं। जो जितने अंश में जैसा हो, तैसा कहना चाहिये। रणधीर के स्वाभाविक गुण क्या कम हैं, जो मैं झूठी बड़ाई करके उनमें दोष लगाऊं, मित्र के दोष छिपाने से छुड़ाना बहुत अच्छा है।

सब राजा—(पुकार कर) ये हमारा बड़ा अपमान हुआ, हम इसका बदला लिए बिना न रहेंगे।

रिपुदमन—घास की आग से लड़ाई क्या ?

सूरतपति—(क्रोध करके रिपुदमन से) तू क्यों उसकी पक्ष करता है ?

रिपुदमन—मैंने आज तक आप की आज्ञा बिना कभी किसी काम का मनोर्थ भी नहीं किया और आगे को आप की आज्ञा पालन करने

का निश्चय विचारा है, परंतु जिस विषय में आज्ञा न निभ सके उसमें प्रथम ही आप को आज्ञा देनी मुनासिब नहीं। आप जानते हैं कि, मन अपनी पूर्ति हुए बिना किसी के भय अथवा लिहाज से नहीं बदल सकता।

सूरत के महाराज—(मन में) ये तो बात बढ़ चली। जिसने जन्म भर सामने आंख करके बात नहीं की थी, उसने आज एक दम जवाब दे दिया। अब ये मेरे पुण्य का अंत नहीं तो और क्या है!

रणधीर—(रिपुदमन की तरफ देखकर) कहो मित्र! ये क्या बखेड़ा है?

रिपुदमन—कुछ नहीं बहुत से सर्प मिलकर गरुड़ से लड़ा चाहते हैं।

रणधीर—नहीं नहीं; ऐसा बचन मत कहो। हमसे तो ये सब बड़े हैं। परंतु बड़े हों या बराबर के हों, लड़ाई की इच्छा होगी तो हम इनसे जरूर लड़ेंगे। क्षत्री शत्रु के हाथ से मर कर सीधा स्वर्ग को जाता है।

सूरत के महाराज—तुम क्षत्री के नाम से हमारी बराबर के बनते होगे।

रणधीर—जैसे आप के ऊंचे ऊंचे महलों पर सूर्य की धूप पड़ती है तैसे ही हमारी गरीब झोंपड़ी में भी सूर्य भगवान प्रकाश करते हैं। जैसे आप के कलशदार महलों पर घनघोर घटा जल बरसाती है तैसे हमारी गरीब झोंपड़ी को भी अपनी अपार दया से सूखा नहीं रखती। हमारा आप का सब संसारी हाल एक सा है और हम तुम को ये झूठा झगड़ा छोड़ कर एक दिन अवश्य यहां से जाना पड़ेगा। परंतु आप के मुकट में अभिमान का तुर्रा और लगा है, ये ही आप की बड़ाई है।

सूरतपति—चेंटी की मौत आती है जब उसके पर निकलते हैं।

रणधीर—पर वो मरते मरते ईश्वर की दया से हाथी का प्राण लेने के लिये बहुत है।

सब राजा—तो अब हमको आज्ञा दीजिये।

सूरत के महाराज—(**सब राजों से**) आप इसकी तरफ न जायं। मेरा महमान समझकर आप इसको क्षमा करें। हंस दूध और जल में से दूध पी लेता है पर जल की तरफ दृष्टि नहीं करता।

रणधीर—मुझको अपने अपराध क्षमा कराने की जरूरत नहीं मालूम होती और बिना अपराध अपराधी बन कर क्षमा कराना क्षत्री कुल को लजाना है।

(खड़े होकर तलवार पर हाथ डाला)

नगर का राजा—(**कटार निकाल कर**) देख, ये कटार अभी तेरे शरीर को अपना म्यान बनावेगी।

सब राजा—(**पुकार कर**) ऐसे अभिमानी को ये ही दंड मुनासिब था। (**नगर के राजा के पास आते ही रणधीर ने उससे कटार छीन ली और अपने दुपट्टे से उसकी मुश्कें बांधकर सभा में खड़ा कर दिया**)

रिपुदमन—जाने बाज के पंजे में कबूतर फंस गया। देखें अब कौन सा वीर आता है। (**सब राजों ने शिर झुका लिया**)

रिपुदमन—(**गंभीर स्वर से**) ऐसे जीतब पर धिक्कार है! आप बड़े निर्लज्ज हैं। आप को कुछ लाज नहीं आती! आप के बड़े ऐसे ही थे? इसी पराक्रम से महाराज महानंद ने सिकंदर का मार्ग रोका था? इसी पराक्रम से उदयपुर के राणा ने नोशेरवां की बेटी ब्याही थी? इसी पराक्रम से (बावल के बादशाह) सिल्यूकस ने महाराज चंद्रगुप्त को अपनी बेटी दी थी? इसी पराक्रम से सब विलायतों के बादशाह उनको कर देते थे? कभी नहीं! जो राजा मतवाले होकर आठ पहर रणवास में बैठे रहते हैं, जो राजा बेश्यागामी होकर उनके पीछे पीछे फिरते हैं, जो राजा अपनी प्रजा के दुःख सुख का कुछ विचार नहीं करते,

जो राजा अपने दफ्तर या खजाने, तोशेखाने को कभी नहीं सम्हालते, जो राजा अपने बड़ों की धरोहर शस्त्र विद्या को जड़ मूल से भूल गये, उनके जीतब पर धिक्कार है। ऐसे ही लोगों ने दिल्ली के बादशाह को डोला देकर अपने कुल को कलंक लगाया है। क्या प्राण यश से अधिक है? मरना एक दिन सबको है पर यश मिलने का समय बारंबार नहीं आता। आप लोगों ने ये पांचों शस्त्र क्या भूषण समझ कर सजा रक्खे हैं? जो इनके रखने का कुछ और भी मतलब है तो उसके प्रकट करने का इससे अच्छा समय कौन सा आवेगा?

(किसी ने कुछ जवाब नहीं दिया।)

रिपुदमन—क्या सब लोग अड़ियल टट्टू की तरह अड़ गये। हे भारतभूमि! तू अपनी संतान का ये हाल देखकर क्यों नहीं फटती? हा! किसी नदी वा समुंद्र में भी इतना जल नहीं आता जो हम लोग उसमें डूब जायं!

रणधीर—भाई, तुम तो चीते के से बढ़ावें देते हो, मैं अब कहां तक ठैरा रहूँ।

(नगर के राजा को छोड़कर चल दिया।)

सरोजनी—(रणधीर को जाता देख ये गजल गाने लगी।)

कुश्तए हसरते दीदार हैं या रब किस्के,
नख्ल ताबूत में जो फूल लगे नरगिस्के।
वह चला जान चली दोनों यहां से खिस्के,
उसको थामूं कि इसे पाँव पड़ूं किस किस्के॥
पांव तुरबत पै मेरी देख सम्हल कर रखना,
चूर है शीशए दिल संगे सितम से पिस्के!
मुझको मारा ये मेरे हाल तगैय्युर न कि है,
कुछ गुमां और ही धड़के से दिले मूनिस्के॥

किस परीरूयसितमगर से मिला दिल अफसोस,
किस्पै दीवाना हुवा होश गए हैं किस्के।
वस्त परवाने से कुर्बान उदू हों यानी,
आग बन जाय है वह गिर्द फिरूं हूं जिस्के॥
नालए रश्क न हो बायसे दरदे सरे मर्ग,
गैर के सर पै लगाता है वह सन्दल घिस्के।
लज्जते मर्ग से हिजरांसे दुआ है कि खुदा,
ये मजा हो न नसीबों में किसी बेहिस के॥
क्यों न हम शमै की मानिन्द जलें दूर खड़े,
जब उदू बायसे गरमी हो तेरी मजलिस के।
यार मोमिन से भि हैं मुद्दए तबैरवां,
वाह अफगार तरां अदमगै या बिस्के॥ (गई)

नगर का राजा—(रणधीर के जाते ही) ओ हो! रणधीर के आने से ये सभा ऐसी डिगमिगाने लगी थी जैसे हाथी के चढ़ने से नाव डिगमिगाती है। क्या इतने राजों में कोई उसको जवाब देनेवाला नहीं था? उसके आगे सबका रंग ऐसा फीका पड़ गया, जैसे धूप में रहने से पतंग का रंग फीका पड़ जाता है। एक रणधीर के आने से सब सभा की ऐसी दशा हो गई; जैसे एक सिंह के आने से हाथियों का झुंड चकित रह जाता है! क्या ये थोड़ी शर्म की बात है? जब अपने राज में इस बात की चर्चा फैलेगी तो लोगों को कैसे मुख दिखाया जायगा! मैं तो ऐसे जीने से मरने को अच्छा समझता हूँ। आप अपने मन में मेरी ज्यादा बेइज्जती समझते होंगे, परंतु असल में ये सबकी बेइज्जती है; क्योंकि मैंने सबकी मर्जी से ये काम किया था।

सूरतपति—मैं उसके अभिमान का किला तोड़ सकता था परंतु अपने यहां का महमान, समझकर न तोड़ सका। निःसंदेह आप के वास्ते ये बड़ी शर्म की बात है। मैं आप लोगों का मन बढ़ाने के लिए

ये वचन देता हूं कि जो वीर रणधीर को पकड़ कर मेरे दरबार में लावेगा उसको मैं प्रेममोहिनी समेत अपने देश का आधा राज्य दूंगा।

सब राजा—(एक स्वर से) अच्छा, हम भी अपने प्राण का दाव लगाकर ये बाजी खेलने को तयार हैं, जो इसमें जीतेंगे तो प्रेममोहिनी समेत आधा राज पावेंगे और मारे गये तो इस कलंक से छूटे। (सूरत के महाराज से) अच्छा तो अब हमको आज्ञा हो?

सूरत के महाराज—आप को इस मार्ग में सुख मिले।

(रिपुदमन के सिवाय सब गये)

रिपुदमन—(मन में) ईश्वर ने इनको अच्छी बुद्धि दी। अब मुझको अपने जन्म सुफल करने का समय मिलेगा। मैं बहुत दिन से चाहता था कि ये नाशवान शरीर किसी के काम आवे सो भगवान ने ऐसा बानक बनां दिया कि जिस ने इस शरीर को बचाया था ये उसी के काम आया और जैसे उसने मेरी बिना जाने मेरी सहायता की थी उसी तरह मुझको उसके बिना जाने उसकी सहायता का रस्ता मिला चाहा! मेरी देह ऐसे सज्जन के काम आवेगी इससे मेरा अहोभाग्य है।

धन देके जी राखिये, जी दे रखिये लाज।
धन दे, जी दे, लाज दे, एक प्रीति के काज।

प्रीति! हे मित्रतारूपी पवित्र प्रीत! तू मेरे मन में सदा ऐसी ही दृढ़ रहियो। मुझको अपने प्राणघात की चिंता नहीं, पर विश्वासघात की बड़ी चिंता है। (गया)

इति तृतीय गर्भांक।

———

अथ चतुर्थ गर्भांक

स्थान, सूरत के महाराज का नजर बाग।

(प्रेममोहिनी और मालती का प्रवेश)

मालती—न जाने तुम्हारा हार कहाँ गिर पड़ा होगा। तुम इस अंधेरी रात में वृथा भटकती हो।

प्रेममोहिनी—मेरे जान तो वो यहां अवश्य मिल जायगा। तू जरा अच्छी तरह देख भाल कर।

मालती—राजकुमारी, बुरा न मानों तो एक बात कहूं।

प्रेममोहिनी—सखी! मैं तेरी कौन सी बात का बुरा मानती हूं।

मालती—मेरे जान तो, तुम हार ढूंढ़ने का मिस करके रणधीर सिंह को ढूंढ़ने यहां आई हो।

प्रेममोहिनी—तैने ये बात कैसे जानी?

मालती—इस समय तुम पत्तों की आहट सुनकर चारों तरफ़ देखने लगती हो।

प्रेममोहिनी—(मन में) आग वस्त्र से नहीं ढकी जाती। (प्रकट) तेरी बात झूट है, पर उसको सच मान लें तो तेरे विचार में कैसी रहे?

मालती—मेरे विचार में ये बात अच्छी है पर ये रीति अच्छी नहीं।

प्रेममोहिनी—क्यों?

मालती—तुमसी राजकन्या का आधीरात के समय एकांत में पर-पुरुष से मिलना तुम्हारे कुल और गुणों को कलंक लगाता है।

प्रेममोहिनी—"पर" की जगह "निज" समझकर विचार कर।

मालती—जो वे इस समय न मिले?

प्रेममोहिनी—इस समय क्या? जन्मभर न मिलेंगे तो भी मैं उनकी हो चुकी! मैंने ये प्रण करके यहां आने का साहस किया है।

मालती—तो मैं तुम्हारे साथ हूँ, पर तुम अपने विचार पर दृढ़ रहना।

प्रेममोहिनी—मैं दृढ़ हूं। (मन में) मेरा सुभाव एक संग कैसे बदल गया? प्रेम की वर्षा से अनुराग की "नदी" पल पल में बढ़ती है। तरह तरह के मनोर्थ "भंवर" और मिलाप की तरंगें "लहर" के समान उठ रही हैं, कुल मर्जाद के "वृक्ष" बिना परिश्रम बह गये, धीरज की नाव हात नहीं आती, इंद्रियां "परदेशी" की भांत दूर हुई जाती हैं। उस शोभा "समुद्र" से मिले बिना इस (नदी) के शांत होने का कोई उपाय नहीं दिखाई देता। हाय! ये नदी रुकने से पल पल में दुगनी होती है। (प्रकट) सखी! मेरा मन इस समय बहुत व्याकुल है।

मालती—देखो चौमासे की नदी की तरह बढ़कर मत चलो। अति कोई बात अच्छी नहीं होती। (१) जो नदी बहुत बढ़कर चलती है उसका उतार थोड़े दिनों में आ जाता है।

प्रेममोहिनी—(मन में) मेरा सुभाव तो ऐसा कभी नहीं था। हे मन! तू दुर्लभ मनुष्य के लालच से क्यों मोह जाल में फंसता है। हे निर्मोही! तू जन्म से मेरा था सो पल भर में पराया हो गया। मैं जानती हूँ कि कामदेव के बाणों से डर कर तैनें ऐसा किया होगा! हे भगवान कुसुमायुध! (कामदेव) आप को भी तीन लोक के विजयी होकर अबलाओं पर बल करते लाज नहीं आती? जिसने अपने रूप से आप का तिरस्कार किया उससे बदला नहीं ले सके! मुझको अबला समझ कर मेरे ऊपर कोप करते हो। हा प्राणनाथ! अब तो आप के बिना मेरा कोई साथी नहीं रहा। मैं केवल आप के मिलाप की आशा से इस भयंकर रात में सबको छोड़कर यहाँ आई हूँ।

(रणधीर का प्रवेश)

---

(१) अति किसी बात की अच्छी नहीं होती।

रणधीर—(चलते चलते दूर से प्रेममोहिनी को देखकर) इस समय इस पुष्प - वाटिका में ये प्रकाश कैसा हो रहा है ! सूर्योदय का समय तो अभी नहीं हुआ, पर सूर्योदय का समय न होता तो कोयल की कुहुक कहां से सुनाई देती, कहीं कमलनी से मिलने को रूप बदल कर सूर्य तो यहां नहीं चले आये ? नहीं; वे आये होते तो ये मूर्ति प्रफुल्लित दिखाई देती। ये तो पवन के झोके से दीपक की जोत के समान थरथराती है अथवा जल के संकोच से सुवर्ण की लता मुर्झा गई हो, ऐसा इसका रूप दिखाई देता है। ये भी बड़े अचंभे की बात है कि मैं ज्यों ज्यों इसके पास जाता हूँ, मुझको कुछ अधिक अचरज का सा रूप दिखाई देता है। आहा ! इस नागन सी अंधेरी रात के सिर में ये मूर्ति नागमणि सी झलक रही है, इसके देखने मात्र से आंखों में प्रकाश आता है ! मैं पास जाकर इसकी शोभा निरखूं।

मालती—(प्रेममोहिनी से) तुम्हारे आये पहले रणधीरसिंह चले गये होंगे तो तुम कब तक उनकी बाट देखोगी ?

प्रेममोहिनी—मेरा मन साक्षी देता है कि रणधीरसिंह अबतक नहीं गये और जो कवियों के वचनानुसार सच्चे प्रेम में कुछ भी आकर्षण शक्ति है तो वे आज इस मार्ग से अवश्य जायंगे।

रणधीर—जिसको मैं कोयल की कुहुक समझता था सो तो अब किसी मधुरालापी मनुष्य की सी वाणी मालूम होती है, परंतु कुछ समझ में नहीं आती। अच्छा, आगे बढ़कर सुनूं। (आगे बढ़ा)

प्रेममोहिनी—(नेत्रों में जल भर कर) हे प्राणवल्लभ ! ये नेत्रों का जल आप के लिये अर्घ पाद्य है और आप के बिराजने के लिए आंखों का आसन बनाया है अब आप आने में क्यों देर करते हो ?

रणधीर—(सुनकर) आहा ! ये तो कोई पद्मिनी अपने प्यारे मित्र की बाट देख रही है। देखो प्रेम कैसी वस्तु है जिसके लिए ये

सुकुमारी इस समय यहां चली आई। इसके वचनों से ये उस पर अत्यंत मोहित मालूम होती है पर अब मैं आगे कैसे बढ़ूँ। (रुक गया)

मालती—(रणधीर को देखकर) भला मैं रणधीर को यहां बुला दूं तो मुझको क्या दो? (रणधीर को दिखाकर) देखो वो सामने से कौन आता है?

प्रेममोहिनी—(रणधीर को देख आश्चर्य से धीरे) क्या है! रणधीरसिंह ही मेरे सामने आ गए अथवा मेरे मन की कल्पना से मुझको ये प्रतिमा दिखाई देती है। मन की कल्पना ही होगी मिलाप लायक मेरा भाग कहां!

रणधीर—(मन में) इसने तो ये ऐसा वचन कहा कि मानों मेरा ही मार्ग देख रही थी। भला ये कौन है? मेरे जान तो इसके समान रूपवती पृथ्वी के किसी विभाग पर कोई न होगी। दैव की विचित्र रचना का ये एक प्रमाण है। अच्छा, उसके पास जाकर इसका हाल पूछूं। (आगे बढ़कर प्रकट में) हे पद्मिनी! तुम कौन हो, रति हो, देवांगना हो, नाग-कन्या हो, किंवा अप्सरा हो? जल्दी अपना हाल कहकर मेरा संदेह मिटाओ। तुमको देखकर मेरे मन में अनेक तरह की संभावना उठती हैं।

(प्रेममोहिनी ने लजाकर शिर झुका लिया)

मालती—(लाज से नीचे दृष्टि करके) प्रिय सज्जन! ये न रति है, न देवांगना, न नागकन्या, न अप्सरा। ये तो एक मानवी है। मानवी सिवा कोई नहीं। पर आप को ये आधी रात का समय देखकर ऐसा कुछ भ्रम हुआ होगा, निःसंदेह ये भयंकर रात मनुष्यों के चलने फिरने लायक नहीं है। आप इस स्थान में चलकर थोड़ी देर आराम करें वहां आप को इसका सब हाल मालूम होगा।

रणधीर—न हमको किसी का डर, न किसी के चरित्र जानने की इच्छा। हम कभी स्त्री के वचन पर नहीं चले, हमको क्षमा करो।

(मन में) मेरे मन में टूटता जवाब देकर इनसे अलग होने की बहुत इच्छा है पर न जाने मेरे मुख से ऐसे नरम शब्द क्यों निकलते हैं ?

प्रेममोहिनी—(मन में) हे दैव ! क्या मेरी आशा के फूल, फल आने से पहले ही मुरझा जायंगे ?

मालती—हे बड़भागी ! आप के मुख से ये अक्षर अच्छे नहीं लगते। क्या आप को ऊखा अनिरुद्ध की कथा स्मर्ण नहीं है ?

प्रेममोहिनी—(धीरे मालती से) सखी ! तू मुझको यहां न ठैरने देगी ?

रणधीर—दोष हो चाहे न हो, हम किसी की देखादेखी काम नहीं करते; बड़ों के काम पर नहीं, आज्ञा पर दृष्टि देनी चाहिये, हमको दूसरों से क्या ? हमारे लिये ये बात अच्छी नहीं दिखाई देती।

प्रेममोहिनी—अमृत तो सब के लिये अमृत ही है इससे किसी को मरते नहीं सुना और आप क्या— (लजाकर चुप हो गई।)

मालती—(मन में) मेरे आगे ये दोनों मन खोल कर बात न करेंगे (प्रकट) सखी ! मुझको एक बड़ा जरूरी काम याद आ गया इस कारण अब मैं तो जाती हूँ।

प्रेममोहिनी—तो क्या मुझको अकेली छोड़ जायगी ? (पल्ला पकड़ लिया)

मालती—अकेली क्यों ? तुम्हारा रखवाला तुम्हारे पास है। (पल्ला छुड़ाकर चली गई)।

रणधीर—(उसके जाते जाते) क्यों झूंठी आस बँधाती हो, पर्वत पर कुआ खोदने से कहीं जल निकला है ?

प्रेममोहिनी—वहाँ स्रोत नहीं, पर झरने का जल मिलेगा।

रणधीर—परंतु काले कंबल पर दूसरा रंग तो नहीं चढ़ता !

प्रेममोहिनी—देखो, ममीरा के लगते ही उसका रंग पलट जाता है।

रणधीर—जैसे चकोर को चंद्रमा देखे बिना मद नहीं आता तैसे अच्छे मनुष्य भी पराए धन से सदा बचते हैं।

प्रेममोहिनी—परंतु चकोर चंद्रमा को सूर्य समझकर दूर भागे तो दोष किसका?

रणधीर—चकोर का।

(प्रेममोहिनी ने हँसकर सिर नीचा कर लिया)

रणधीर—(मन में) मैं अपने मन को बहुत सम्हालता हूँ पर इसके मिलाप से मेरा पत्थर सा हृदय आप ही मोम हुआ जाता है! (प्रकट) मैं तुम्हारी पहेली का अर्थ समझ गया, पर इससे पहले मुझको तुम्हारी प्रीति का प्रमाण मिलना चाहिये।

प्रेममोहिनी—सहृदय मनुष्य को तो उसका हृदय ही प्रमाण था, पर आप इसके प्रमाण में अपनी अँगुली की अँगूठी देखिये।

रणधीर—(अँगूठी देखकर मन में) इस बात का कुछ जवाब नहीं बनता, परंतु अभी धैर्य रखना चाहिये! (प्रकट) बात बनाने में पुरुषों की अपेक्षा स्त्री स्वभाव से चतुर होती है।

प्रेममोहिनी—(उदास होकर) क्यों जी! पारस लोहे को सोना बनाता है, पर लोहा पारस को छोड़ चमक पत्थर से क्यों प्रीति करता है।

रणधीर—ये उसका सुभाव है।

प्रेममोहिनी—हाय! दैव ने सबके सुभाव उलटे बनाये हैं। देखो, सूर्य की गरम किरणों से कोमल कमल का खिलना और चंद्रमा की कोमल किरणों से चंद्रकांत मणि का पिघलना सब तरह उलटा दिखाई देता है।

रणधीर—ये ईश्वर की शक्ति है।

प्रेममोहिनी—तो उसी शक्ति से सूर्यमुखी का सूर्य पर मोहित होना समझो।

रणधीर—(मन में) इसकी कल्पलता सी वाणी से प्रेम सुगंधित पुष्प तो जरूर झड़ते हैं, परंतु इसके आगे से हटकर इसकी परीक्षा लेनी चाहिये। (प्रकट) ऐसी बातों से तो कामी पुरुष मोहित होते हैं। मेरे ऊपर तुम्हारा मोहिनी मंत्र नहीं चल सकता। (कुछ आगे बढ़कर एक वृक्ष की ओट में छिप गया।)

प्रेममोहिनी—(उदास भाव से) हा! ये तो चले। मेरी विरह की आग ने इनके कठोर मन को कुछ भी न पिघलाया। घनघोर घटा के देखने से अभी तो प्यासे पपहिये के नयनों की प्यास भी न बुझने पाई थी कि, इतने में दक्षण वायु ने सब काम बिगाड़ दिया। हाय! मित्र का वियोग भी कैसा दुखदाई होता है—

"भर भर आवैं नैन वियोगी, सूखत सकल शरीरा।
प्रीतिमान पहिचानैं प्यारे, प्रीतिमान की पीरा॥
रह सबते निरास ह्वै जग मैं, सहै सकल दुख भोगू।
परम पुनीत विनीत मीत सों, दैव न देइ वियोगू॥
जो करतार सुनैं मम विनती, देइ इती कर छोहू।
अति दिल्दार पियार यार सों, कबहुं न होय बिछोहू॥
परबस परै जाय बर सरबस, सब तज होय बिदेही।
सुपने में बिछुरे न बिधाता, आपन यार सनेही॥
भोगे नर्क निकाय जन्मभर, रहे सदा बरतापी।
पै कबहूँ बिछुरे न बिधाता, आपन मीत मिलापी॥
धर्म कर्म बर त्याग जगत मैं, फिरै प्रेम मतवारो।
पै कबहूँ बिछुरे न बिधाता, आपन प्राण पियारो॥
बर जल भीतर बसै जन्म भर, तप कर तनहि झुरावै।
पै सुपनेहु अपने पीतम को, बिधि न वियोग करावै॥
बरु तन राख लगाय चाह भर, खाय घरन के टूका।
पै करतार पियार यार सों, कबहुं परै नहिं चूका॥

जाति पाति घर गोय खोय कुल, सब तज होय भिखारी।
कबहुं न होय मीत की मूरति, इन नैंनन ते न्यारी॥"

(गद्‌गद स्वर से) हे अधम शरीर! तैने प्यारे मित्र का संग न दिया तो क्या हुआ? प्राण तो तेरा साथ छोड़कर उसके संग जाता है। हा मित्र! आपके वियोग में बहुत दिन जीने के बदले तत्काल प्राण छोड़ देना मेरे मन को अच्छा लगता है। हे प्यारे आप मुझको छोड़कर चले गये, पर मैं आपसे अलग होने की सामर्थ्य नहीं रखती। (**मूर्छित होकर गिरती थी, इतने में रणधीर ने जल्दी से आकर घुटने के सहारे हाथों पर रोक लिया।**)

रणधीर—मुझसे बड़ी भूल हुई जो इस अति कोमल प्रिया की प्रेम परीक्षा के लिये ऐसा कठोर विचार किया। ये लक्ष्मी मेरे नयनों में अमृत रूपी अंजन की सलाई के समान लगती है और इसका शरीर मेरी देह को चंदन के समान सुखदाई है, इसकी भुजा मेरे गले में मोतियों की माला के समान शोभायमान है। अहा! इसकी अचेत दशा भी मेरे मन को चैतन्य करने वाली है।

प्रेममोहिनी—(उसी दशा में) हे जीवितेश्वर? आपके वियोग से मैं प्राण छोड़ती हूँ पर आपके चरण मुझसे नहीं छोड़े जाते। मैंने जब से आपका नाम सुना, मन, बचन, कर्म से आपको स्वामी समझा। आप के सिवाय कभी किसी पुरुष को पुरुष भी समझा हो तो सूर्य चंद्रमा साक्षी हैं। आपने मुझको त्याग दिया परंतु आपकी तरफ से मुझको कुछ खेद न हुआ क्योंकि पति को स्त्री पर सब तरह का अधिकार होता है। हा! इस अभागी देह से आप की कुछ सेवा न बनी ये बात मेरे मन में खटकती है। अच्छा, अब भगवान से प्रार्थना है कि जो मेरा दूसरा जन्म होय तो आपकी दासी होकर अपना जनम सफल।

(रुक गई)

रणधीर—ये मुझसे बड़ी भूल हुई। मैं कमल के कोमल पत्ते को आग पर रख कर तपाया चाहता था। हाय! मेरी बुद्धि जाती रही। अब मेरा प्रीतिमान से प्रीति रखने का नेम कहाँ गया? देखो, जैसे तोता मीठे फलों को पहिचान पहिचान कर खाता है उसी तरह कामदेव अच्छे आदमियों को ताक ताक कर अपने बाणों से घायल करता है। (प्रकट) प्यारी क्षमा करो, क्षमा करो। इससे बढ़कर सुन्ने की सामर्थ्य नहीं है। मुझको तुम्हारे अगाध प्रेम की थाह नहीं मिली थी।

प्रेममोहिनी—(नेत्र खोलते ही लाज से अलग खड़ी होकर) मेरी तो यही इच्छा है कि आप प्रसन्न रहो। आप की प्रसन्नता में मेरी प्रसन्नता है, आपके सुख में मेरा सौभाग्य है। आपकी इच्छा होय, घड़ी दो घड़ी महल में चलकर आराम कीजिये। नहीं, जिसमें आपकी प्रसन्नता होय सो करिये।

रणधीर—(आनंद से प्रेममोहिनी का हात पकड़कर) मैं तुम्हारी प्रसन्नता करने के लिए मन से प्रसन्न हूँ। भला लक्ष्मी को कोई चाहे तो मिले वा न मिले पर लक्ष्मी जिससे मिलना चाहे उसे क्यों न मिले।

(दोनों गये)

इति चतुर्थ गर्भांक।

———

अथ पंचम गर्भांक।

स्थान, प्रेममोहिनी का महल सजा हुआ है।

(रणधीर मखमली कोंच पर और प्रेममोहिनी दूसरी कुर्सी पर बैठी है।)

प्रेममोहिनी—(मुस्कराती हुई लाज से नीची आँख करके) प्यारे प्राणनाथ ! मुझको अपने प्रिय मित्र के नाम एक प्रेम पत्रिका लिखानी है। आपको अवकाश हो तो कृपा करके लिख दीजिये। आप सा चतुर लिखनेवाला मुझको कहाँ मिलेगा।

रणधीर—(अचरज से मन में) इसने ये कैसी आश्चर्य की बात कही ! मैं इसकी मीठी बातों में आकर ठगा तो नहीं गया ? घड़ी भर पहले ये मेरे बियोग से शरीर छोड़ती थी। अब ये मुझसे अपने मित्र के नाम चिट्ठी लिखाती है ? ईश्वर जाने इसकी बातों में क्या भेद होगा। (प्रकट) अच्छा तुम अपना प्रयोजन बता दो।

प्रेममोहिनी—प्रेम, स्वाभाविक प्रेम, सच्चा प्रेम, अचल प्रेम और कुछ नहीं।

रणधीर—हमको तुम्हारी तरह प्रेम जताना नहीं आता, पर तुम्हारे लिए पुस्तकों के बल से कुछ लिखते हैं।

(प्रेममोहिनी ने दवात, कलम, कागज ला दिया)

रणधीर—(लिखकर) सुनो—

"प्रेम जल की वर्षा से प्यासे पपहिए की प्यास हरनेवाले जलधर, प्रेम-प्रफुल्लित पुष्पों की सुगंधि से संसार को सुगंधित करनेवाले तरुवर, प्रेम भूमि में वियोग की वायु झेलकर अचल रहनेवाले भूधर, प्रेम पियूष के सिंचने से मुरझाई लता को हरे करनेवाले हिमकर ! आपका मुखचंद्र निहारने को मेरे नयन चकोरों को बान पड़ गई है, इस कारण पल भर के वियोग से ये व्याकुल हो जाते हैं। आपको ऐसा चुंबक कहाँ मिला

जिसके बल से आप दूर बैठकर मेरा मन खैंचते हो ? कोई प्राणी बंधन में रहने से प्रसन्न नहीं होता पर मैं आपके प्रीति-जाल में प्रसन्न हूँ। आपने ये विद्या कहाँ से सीखी ? जो हमको सिखा दो तो हम भी आपके ऊपर अजमावें। संसार के विषवृक्ष में एक प्रीति ही अमृत फल है। संसार सागर के पैरने वालों में थके हुओं को एक प्रीति ही सहारा देने-वाली नवका हैं। संसार की पुष्प वाटिका में ये ही फूल सज्जनों के सुगंध लेने लायक हैं। बहुत क्या लिखें, विचार कर देखो तो संसार के सब कामों का ये ही मूल कारण ठैरता है।"

प्रेममोहिनी—आपने मेरे कहने से इतना श्रम किया इसलिए मैं आपका बहुत उपकार मानती हूँ।

रणधीर—मैं तुम्हारे मित्र को नहीं जानता इस कारण ये चिट्ठी अच्छी तरह नहीं लिखी गई।

प्रेममोहिनी—आप ऐसी बात मत कहो ? आपसे मेरा कौन सी बात का अंतर है। आपने ये चिठ्ठी बहुत अच्छी लिखी। अब मेरे कहने से आप ही इसको अपने पास रक्खो।

रणधीर—क्यों ! क्या ये तुमको अच्छी नहीं लगी ?

प्रेममोहिनी—अच्छी लगी, जब तो आपको देती हूं !

रणधीर—ये तुम्हारी है।

प्रेममोहिनी—ना ना आपकी है। मेरे कहने से आपने लिखी इस वास्ते आपका बड़ा उपकार हुआ पर कुछ और भी प्रेम भाव से लिखी गई होती तो अच्छा था।

रणधीर—कहो तो दूसरी लिख दूँ।

प्रेममोहिनी—अच्छा, जब आपकी इच्छानुसार लिख जाय तो आप मेरी तरफ से एक बार पढ़कर अपने पास रखना, मेरे ऊपर आपका बड़ा उपकार होगा।

रणधीर—(हँसकर) मैंने अब तुम्हारा भाव समझा, तुम मेरे हाथ से मेरे ही ऊपर तीर छुड़ाया चाहती हो !!!

(प्रेममोहिनी ने हँसकर सिर झुका लिया)

रणधीर—अच्छा, हँसी चोहल की बातें तो हो चुकीं। अब कुछ मेरे मन को धीर्य देने का भी तो उपाय करो।

(प्रेममोहिनी ने फूलों का गजरा उसके गले में पहरा दिया)

रणधीर—मेरे घायल मन पर कामदेव के बाणों की वर्षा करनी तुमको मुनासिब नहीं थी। अब ये चंद्रमा के अमृत बरसाये बिना कैसे अच्छा होगा।

प्रेममोहिनी—क्या चंद्रमा के अमृत बरसाने का भी कोई उपाय है ?

रणधीर—(हँसकर) जो चंद्रमा ही अपने मुख से ये बात पूछे तो मैं क्या जवाब दूँ !

(प्रेममोहिनी लजाकर कुछ नहीं बोली)

रणधीर—बादल से बिजली को अलग होते कभी नहीं देखा फिर तुम अलग बैठकर ये नई रीति क्यों करती हो !

प्रेममोहिनी—देखो, दीन चकोरी तो चंद्रमा के दर्शनमात्र से प्रसन्न हो जाती है।

रणधीर—हृदय को तपाने के लिए लालच बुरी आग है।

प्रेममोहिनी—पर सोना आग पर रखने से नहीं छीजता।

रणधीर—हाँ, नहीं छीजता, परंतु सुहागे से मिलकर पिघल जाता है।

प्रेममोहिनी—(लजाकर) आप बड़े रसिक हैं, मैं आपको जवाब नहीं दे सकती।

रणधीर—तो अब हम जीत की लूट करें।

(प्रेममोहिनी का हाथ पकड़कर अपने पास बैठा लिया)

प्रेममोहिनी—हे सज्जन ! मेरा हाथ छोड़ दो, मुझको इसमें बड़ी लाज आती है !

रणधीर—(हँसकर) इसमें लाज की क्या बात है। मेरे जान तो ये हाथ ऐसा नहीं मिला जो जन्म भर छुट जाय।

प्रेममोहिनी—मुझसे आपकी इस कृपा का क्या बदला दिया जायगा ?

रणधीर—इसके बदले मैं तुमसे केवल प्रीति चाहता हूँ, परंतु ये बड़े अचरज की बात है कि मैंने संजीवनी औषध का नाम अब तक नहीं जाना।

प्रेममोहिनी—हे प्राणनाथ ! मेरा नाम प्रेममोहिनी है और मैं सूरत के महाराज की कन्या हूं।

रणधीर—तब तो तुमने मेरे हृदय को समझकर घायल किया। पानी ठण्डा हो चाहे गरम हो, आग बुझाने के लिये एक सा है।

प्रेममोहिनी—(आश्चर्य से) आपने कैसा वचन कहा ?

रणधीर—मैं सच कहता हूँ। देखो, मोर और साँप का बैर है, परंतु मोर पंख का निकला हुआ तांबा भी सांप के विष उतारने में काम आता है।

प्रेममोहिनी—(घबराकर) स्वामी आप कौन हैं ?

रणधीर—प्यारी मैं पाटन के महाराज का पुत्र हूँ।

प्रेममोहिनी—(आँसू भर कर) आप मेरे मन से तो अलभ्य रत्न हैं। संसार में दुर्लभ वस्तु की चाह विशेष होती है सो मेरे लिये आप से अधिक और क्या दुर्लभ होगा ? हाय ! मेरे भाग में क्या ये ही लिखा है कि मैं रत्न उठाने को हाथ डालूँ तो वो मेरा हाथ लगते ही अंगार हो जाय।

रणधीर—ना प्यारी, तुम ऐसा वचन मत कहो। देखो, जहाँ तुम्हारे नयनों की झलक जाकर पड़ती है तहाँ कमल पत्र के आकार फूल बन जाते हैं।

प्रेममोहिनी—बस प्राणनाथ, मेरी भी यही इच्छा है। मुझको विश्वास है कि ऐसे सज्जन हाथ पकड़े पीछे अधर धार में नहीं छोड़ते।

धारत विष हर कण्ठ मैं, कमठ पीठ भू भार।
उदधि सहत पावक प्रबल अंगीकृत चितधार ॥१॥
कुटिल कलंकी मित्र रिपु, निशिकर निज शिर धारि।
अंगीकृत प्रतिपाल विध, प्रगट करत त्रिपुरारि ॥२॥

रणधीर—विश्वास रखो, मैं जैसे किसी की प्रेम-परीक्षा लिए बिना उसको नहीं अपनाता तैसे ही अपनाये पीछे उसकी तरफ का अपराध निश्चै हुए बिना उसको परित्याग भी नहीं करता। जिसने प्रीति करके छोड़ दी उसे प्रीति का रस नहीं मिलेगा।

रुकै न काहू जतन ते, जाहि प्रीति की बान।
भौंर न छोड़ै केतकी, तीखे कंटक जान। १॥

प्रेममोहिनी—हे प्रीतम ! अपने चातक की भी यही दशा समझो, वो सब नदी नालों को छोड़ कर केवल स्वाति बूंद के भरोसे प्राण रखता है।

रणधीर—(आकाश की तरफ देखकर) हे प्रिये ! देखो सूर्योदय का समय हो गया, दीपक की जोत मंद पड़ गई, हार के मोती शीतल हो गए, पक्षी चहचहाने लगे और कमल के चिकने चिकने पत्तों से ओस की बूँद मोतियों की लड़ी के समान ढलकने लगी। अब तुम आज्ञा दो तो मैं भी जाकर स्नान करूँ।

प्रेममोहिनी—ना प्राणप्यारे, अभी सूर्योदय का समय नहीं हुआ। आपके तेज से दीपक की जोत मंद पड़ गई और पुष्पों की शीतलता से मोती ठंडे हो गए। पक्षी नहीं चहचहाते, रात्रि के कारण मीठे मीठे सुरों से कोयल बोलती है; कमल के पत्तों पर ओस को बूँद नहीं ढलकती, मेरे कपोलों पर आँसू बह आए हैं।

रणधीर—देखो पद्मिनी, ये सूर्य अपनी किरणों से बादलों को रंग रंग के बनाता है और कमल के खिलने से भौंरे उड़ उड़ कर अपनी भौंरियों के पास जाते हैं। देखो, भैरव के मीठे मीठे सुर कहीं दूर से आकर कान में पड़ते हैं और सप्तऋषि मानो स्नान संध्या करने के लिए आकाश मार्ग से मानसरोवर के किनारों पर उतरते हैं, धान के हरे खेत की तरह तोतों का झुंड उड़ा जाता है।

प्रेममोहिनी—तो क्या सत्य ही मेरी सौत बन कर पूर्व दिशा से सूर्य की किरणें निकल आई। हा दैव! अब यह पहाड़ सा दिन कैसे कटेगा। प्यारे रणधीर! मैं ऊपर से हरी भरी हूँ पर मेहदी की लाली के समान आपका रूप मेरे रोम रोम में समा गया है। हा प्राणनाथ! प्राण बिना ये शरीर कैसे रहेगा!

रणवीर—प्यारी! ऐसा बचन मत कहो। मेरे मन की बेल में तुम्हारी प्रीति का पैवंद ऐसा नहीं लगा जो कभी अलग हो जाय।

प्रेममोहिनी—भला, जिन नयनों को आप की अलबेली छबि निहारे बिन कल नहीं पड़ती और जो नयन अपनी टकटकी के बीच में पलक पड़ने से दुःखी होते हैं उन नयनों से आप के पीछे किसकी ओर दृष्टि उठाकर देखूँगी और ये दुखिया रो रो कर कैसे दिन पूरा करेगी।

पहलै अपनाय सुजान सनेह सों क्यौं तुम नेह को तोरिये जू।
निरधार दै धार मझार दई गहि बांहन नाहन बोरिये जू॥
घन आनंद आपने चातक को गुन बांधले मान न छोरिये जू।
रस प्यास जिवाय बढ़ायकै आस बिसास मैं क्यौं विष घोरियेजू।

रणधीर—ऐसे बचनों से इस समय कलेजा फटता है, इस कारण ऐसे मर्मबेधी बचन मत कहो। सूर्य अपनी लाज लूटे। पहले मुझको प्रीतिपूर्वक मिलकर जाने दो। (हाथ छोड़ने की इच्छा करके) ये कैसा

अचरज है कि हाथ अलग नहीं होता ! क्या तुम्हारी बिजली की सी देह में बिजली की सी आकर्षण शक्ति है !

प्रेममोहिनी—जब आपने बादल से बिजली को कभी अलग होते नहीं देखा तो अब आप ये नई रीति क्यों चलाते हो।

रणधीर—(हाथ छोड़कर खड़े होते हुए नेत्रों में जल भर कर) मैं क्या करूँ, दैव को यही रुचता है। जैसे जल में काई तैसे संयोग में वियोग उसने बना दिया है।

प्रेममोहिनी—**कर छुटकाए जात हो, मोहि निबल जिय जान।**
पै हियरे सै जाहु जब, तब जानों बलवान॥

रणधीर—ना प्यारी, मैं ऐसा बलवान नहीं हूँ। मैं तो आप ही अपना मन तुम्हारे पास छोड़ चला हूँ। (जाती बार फिर फिर कर देखने लगा।)

प्रेममोहिनी—(पुकार कर सजल नयन से) प्राणनाथ ! ठैरो, क्षण एक ठैरो, मुझको अपनी मोहिनी मूर्ति मन भर कर एक बार और देखने दो !

रणधीर—(प्रेममोहिनी की तरफ देखकर) इसी मिस मुझको अपनी जीवन मूल के निरखने का कुछ समय मिलेगा। (ठैर कर) प्यारी, इससे तो प्रेम की गांठ और घुलती है। अब मुझे जाने दो।

(जाने लगा)

प्रेममोहिनी—(पुकार कर) प्राणवल्लभ ! ठैरो, कुछ देर और ठैरो, मुझको एक बात आपसे कहनी है।

(रणधीर फिर कर खड़ा हुआ)

प्रेममोहिनी—आपने रात के आने का समय निश्चय कर लिया।

रणधीर—सो तो पहले ही हो चुका है।

प्रेममोहिनी—(राग विहाग)

अथ चतुर्थांक प्रारंभ

प्रथम गर्भांक

स्थान—राजमार्ग

(रिपुदमन की सेना धीरी चाल से चलती है। नेपथ्य में बड़ा कोलाहल हो रहा है। रिपुदमन केसरिया बागा पहन, शस्त्र सजा, घोड़े पर सवार हो पीछे से अपनी सेना के पास आता है और सेना के लोग खड़े होकर उसकी सलामी उतारते हैं।)

रिपुदमन—मैं माता पिता से प्रणाम कर स्वस्ति वाचन के लिए ठैर गया था, परंतु आप लोग अब तक रणभूमि में कैसे नहीं पहुँचे ? देखो, ये रण समुद्र के (१) तरंगों की घोर ध्वनि सुनाई देती है और मैं नाव बनकर इस (समुद्र) से प्यारे रणधीर के (२) पार उतारने का प्रण कर चुका हूँ, फिर क्या अब देर करने का समय है ?

(नेपथ्य में फिर हल्ला हुआ और लड़ाई के बाजे सुनाई दिए।)

रिपुदमन—जैसे बादल के गर्जन से सिंह को मद चढ़ता है तैसे लड़ाई के बाजे सुनकर मुझसे यहाँ नहीं ठैरा (३) जाता। इसमें तो कुछ संदेह नहीं कि नेकनीयती और परोपकार के विचार से लड़नेवालों की ईश्वर ने कभी जय की हो अथवा निराधार मनुष्यों की तरफ सहारा देनेवालों को कभी सहारा दिया हो अथवा नीति और धर्म के मार्ग में

---

(१) की (२) को (३) ठहरा।

चलनेवालों पर कभी दया की हो तो आज हम उसकी दया से अवश्य जीतेंगे। वो परम दयालु ईश्वर ऐसे अभिमानी, अधर्मी और लालची पुरुषों के बदले हम पर जरूर दया करेगा बल्कि हमारी तरफ से आप लड़ेगा। हमारा विचार ऐसा तो निर्मल और स्वच्छ है कि उसको चाहे संसार की रीति से, चाहे धर्म की रीती से जाँच कर देखो, उसमें पाप का छींटा कहीं नाम को नहीं दिखाई देता। भला, अपने बैरी कौन हैं? वे ही ना जो धर्म और नीति का मार्ग छोड़ पराये माल पर मन दौड़ाते हैं, जो पापी कौरवों की भाँति बहुत आदमी इकट्ठे होकर अकेले अभिमन्यु की तरह रणधीर के प्राण हरने की चिंता कर रहे हैं।

(नेपथ्य में)—हे देश देशांतर के राजा महाराजों! आगे बढ़ो, आगे बढ़ो। दो दो पाँव चलकर रुक क्यों जाते हो? धीरज से आगे बढ़कर बैरी के दरवाजे की सकल (१) को खड़खड़ाओ! जब आप को सोते सिंह की गुफा का दरवाजा देखने से इतना डर होता है तो वो गर्ज (२) कर आपके सामने आवेगा तब आपका क्या हाल होगा?

रिपुदमन—अब तो बैरियों का हाल तुमने अपने कान से सुन लिया। जीत का आधार सेना की गिनती के बदले मन की दृढ़ता पर अधिक होता है और जितनी थोड़ी सेना से जीत हो उतना ही जस अधिक फैलता है। देखो, अब तुम सब एक मन होकर ऐसा प्रण करो कि आज के दिन मरना या मारना, आज की लड़ाई में हार कर जीते रहने के बदले बैरी के हाथ से मरना हर तरह अच्छा है। जब इस शरीर के पलभर ठैरने का भरोसा नहीं तो इसके लिए अपना धर्म क्यों छोड़ना चाहिये? ऐसा समय बारंबार नहीं मिलता। शूरवीर ऐसे समय की बाट देखते हैं। वीरों को अपनी वीरता जताने का ये सबसे अच्छा मौका है। इस समय हाथ में तरवार लेकर ऐसी लड़ाई करो जिससे रुधिर की नदी बह जाय।

---

(१) साँकल (२) जब वह गरज़।

जो मन खोलकर लड़ोगे तो जीत कुछ दूर नहीं है। हारोगे तो दास बन कर रहना पड़ेगा।

(नेपथ्य में)—सब लोग खुशी से आगे बढ़ो। डरने का क्या काम हैं? रणधीर इकल्ला है और अपने पास इतनी सेना है, जो हम सब इकट्ठे होकर एक एक कंकर मारेंगे तो उसको मार लेंगे।

रिपुदमन—हे बकवादी! बेशर्म! झूठे! झूठा बढ़ावा देकर सेना का मन बढ़ाते तुमको लाज नहीं आती। जिस समय रणधीर की बिजली की सी तलवार तुम्हारी सेना पर पड़ेगी उस समय रणधीर का बल तुमको मालूम होगा। तुम्हारी क्या सामर्थ्य जो रणधीर की छाया पर भी हाथ चला सको। रणधीर मेरा मित्र है और उसने अपने प्राण झोंककर मेरे प्राण बचाये थे, फिर क्या मैं उसके लिए अपने प्राण न दूँ? प्रीति की कसौटी विपत्ति है और उपकारियों को बदला देने का ये समय आया है। जो लोग प्रयोजन की प्रीति करते हैं, उनका जीतब धिक्कार है। उनका मुख देखने से पाप होता है। जो लोग झूठी प्रीति जताकर दूसरे को ठगते हैं, उनके मां बाप को कलंक लगता है। मेरा राजपाट जाय तो भले ही जावे, परलोक बिगड़े तो भले ही बिगड़े! मैं स्वर्ग नहीं नर्कवास करने में प्रसन्न हूँ, परंतु रणधीर का संग कभी न छोड़ूँगा। जब तक मेरा सिर धड़ से अलग न होगा, जब तक मेरे शरीर की एक हड्डी साबूत रहेगी मैं रणधीर का बाल बाँका न होने दूँगा। जब मैंने मौत का डर छोड़ दिया तो मुझको किसका डर है? जीत हार तो ईश्वर के हाथ रही पर मैं तलवार हाथ में लेकर आज ऐसी लड़ाई किया चाहता हूँ जिससे सब भूमंडल रुंडमुंडमय हो जाय।

(नेपथ्य में)—हे हे विकट सुभट वीर लोगों! जो आपने सब तरफ की नाकेबंदी कर ली है तो अब यहाँ आकर इस छिपे हुए सांप को बिल से बाहर निकालने का उपाय करो। ये दुष्ट अपनी मौत के डर से छिप कर धरती पकड़ बैठा है।

रिपुदमन—रे रे पापी ! नीच ! झूठे पाखंडियो ! रणधीर की निंदा करने से तुम्हारी जीव (१) के टुकड़े नहीं होते ? होंगे जरूर होंगे। तुम्हारी मैंडक की सी टर टर उसके कान तक न पहुंचे इसी में तुम्हारे लिए अच्छा है, नहीं तो भला भूखे सांप के क्रोध में भरे पीछे दीन मेंडकों का कहाँ पता लगेगा ! रे अधर्मियों, तुम किस नाक से अपनी बड़ाई करते हो ? कल रंगभूमि में हार होने से तुमको कुछ लाज नहीं आई और रात की हँसी होने पर भी तुम्हारा मन ढीला न हुआ। सच है, चिकने घड़े पर पानी नहीं ठैरता। तुम्हारे मन में चुमती हुई बातें न लगेंगी पर चुभते हुए बाण लगेंगे। मनुष्य की मौत आती है, जब उसके शरीर में वायु भड़क उठती है। इस कारण मैं तुम्हारे बचनों का कुछ बुरा नहीं मानता परंतु तुम्हारी बुद्धि ठिकाने लाने का उपाय करता हूँ। जब तक मेरे शरीर में स्वांस बाकी रहेगा मैं अपने बैरियों को घोड़े की पीठ पर जमकर कभी न बैठने दूंगा। (**अपनी सेना की तरफ देखकर**) मेरे बहादुर लड़वैय्ये वीरो ! हुशियार हो ! अपनी तरवार म्यान से बाहर निकाल लो ! और परमेश्वर का नाम लेकर आज ऐसी बहादुरी करो जिससे अपना नाश हो जाय तो भी अपना नाम भूमंडल पर सदा अमर रहे।

धरहु धरहु चहुं ओर ते, करहु करहु बल बोर।
लरहु लरहु यश कारणैं, हरहु हरहु रिपु धीर॥

(सब सेना ने म्यान से तरवारें निकालकर ऊँचो उठा लीं और रिपुदमन की कहन से अपनो प्रसन्नता जताकर तरवार चमकाते हुए रिपुदमन के संग नेपथ्य में चले गये।)

इति प्रथम गर्भांक।

---

(१) जीभ

अथ द्वितीय गर्भांक

स्थान, रणधीर का महल।

(रणधीर पलंग पर सोता है)

जीवन—(**रणधीर को जगाकर**) उठो, महाराज! उठो, ये समय आप से क्षत्री वीरों के सोने का नहीं है। आप क्या नींद से प्रीति करके मित्र की प्रीति भूलते हो? आप की इच्छा पूरी होने का समय आया। आप के लिए रिपुदमन सिंह ने अपने प्राण का दाव लगाया है, बैरियों की सेना सागर में इस समय आप का महल जहाज सा दिखाई देता है। आप अपने यश की रक्षा करने के लिए जल्दी उठो!

रणधीर—(**चौंककर उठ बैठा और जीवन की तरफ देखकर अचरज से**) क्या कहा? तैनें अभी रिपुदमन का नाम लेकर क्या कहा? रिपुदमन से किसकी लड़ाई हो रही है? किसने सिंह की डाढ़ से मांस निकालने का विचार किया? कौन मेरे मन की दबीदबाई आग को भड़काने का उपाय करता है? मेरा केसरिया बागा ला?

जीवन—रिपुदमन की वीरता देख कर मैं तो चकित हो गया! आप के लिए वो वीर अपने मरने का डर छोड़कर लड़ता है। उसके हाथ से कितनेक राजा और सेनापति मारे गए। उसके वेग से बैरी की सेना काई सी फटती चली जाती है। पहाड़ से हाथियों पर उसकी तरवार बिजली सी गिरती—

रणधीर—बस जीवन बस, तू अपनी बात को इसी जगह पूरी कर। मुझको इस समय इन बातों के सुनने का अवकाश नहीं है।

जीवन—तो क्या रिपुदमन के लिए अपने प्राण दोगे?

रणधीर—प्राण तो पहले ही दे चुके अब इसमें नई बात क्या कहते हैं।

जीवन—भला इससे आप के बंधू जनों का क्या होगा ?

रणधीर—कुछ हो, सब लोग मतलब की प्रीति करते हैं। जिसका जिसमें जितना मतलब निकलता है उसकी उससे उतनी प्रीति होती है और वो मतलब बहुधा द्रव्य संबंधी पाया जाता है। जैसे मीठे के लिए चैंटियें दौड़ती हैं तैसे रुपये के लिए मनुष्य फिरते हैं। रुपया संसारी मनुष्यों के नाच नचाने कीं एक कल है फिर ऐसी मतलब की प्रीति के वास्ते मैं मित्र की प्रीति कैसे भूल जाऊँ। मेरे शस्त्र जल्दी ला। मित्र के दुःख दूर किये बिना मुझको एक एक पल बरस बरस की बराबर बीतता है।

जीवन—आप सरीखे कुलवानों को तो ऐसा ही करना चाहिये, परंतु मैं मारा गया। हाय ! मेरा क्या हाल होगा ?

रणधीर—जीवन् ! ओ जीवन ! तू क्या कहता है, आज तुझको क्या हो गया ? मैं मरते मर जाऊँगा पर तेरा उपकार कभी नहीं भूलूंगा।

सेवत सकल जन नाथ कों धन हेतु प्रीति बढ़ाय कै।
मालक निधन तो धन भए धन मिलन हित चित चाय कै॥
पै बिकल संपत छीन आस बिहीन निज पति पाय कै।
पूजत न तो सम धन्य कौ जन अवनि तल मैं आयके॥

तेरे उपकार का बदला तो मैं इस समय कुछ नहीं दे सकता। परंतु मेरी प्रसन्नता के लिये तू मेरा मालमता ले।

जीवन—(**आँसू भर कर**) मेरे स्वामी ! मेरे छत्र ! मेरे मुकुट-मणि ! आप ऐसा बचन मत कहो। आप के मुख से ये बचन अच्छा नहीं लगता। मैं क्या धन दौलत का भूखा हूँ ? मैं तो केवल आप के मन का भूखा हूँ। मेरी तो जन्म भर की कमाई आप हो, आप ही मेरे नयनों का प्रकाश हो, आप ही मेरे पूज्य हो, आप ही मेरे प्राण हो,

आप ही मेरे सर्वस्व हो। मैं दुःखिया आप के वियोग में किसके सहारे अपने प्राण रक्खूँगा।

रणधीर—जीवन! तू मुझे कृतघ्न मत समझ, मैं कृतज्ञ हूं। मेरे हृदय में क्रोध की आग दहकती है, मेरे मन में मित्र की प्रीति महकती है, मैं बैरियों को तिनके बराबर जानता हूँ। मैं जगत के अपयश को मौत से बढ़ कर मानता हूँ। ये लड़ाई का बाजा मेरे मन की उमंग को चौगुना बढ़ाता है। लड़ाई से विमुख होना हमारे कुल को कलंक लगाता है, तौ भी तेरे लिये, तेरी प्रसन्नता के लिये, तू कहे तो मैं इन सब बातों को पानी दूं! मैं अपने प्राणों से बढ़कर जस और जस से बढ़कर धर्म को समझता हूँ तौ भी तेरे लिये मेरा धर्म जाय तो जावे, तेरी मर्जी बिना कभी कोई काम न करूँगा। जिस दिन मेरी छाया भी मेरा साथ छोड़कर अलग हो गई थी उस दिन तैंने अपनी जान झोंककर मेरा साथ दिया, तो क्या अब मैं तुझको उदास करके तेरी मर्जी बिना कोई कांम करूँ? जो मेरे रोकने में तेरी प्रसन्नता होय, जो इस दशा में मेरे जीने का तुझको भरोसा होय, तो तू मन खोलकर कह दे, मैं तेरा बचन कभी नहीं टालूंगा।

जीवन—(**आंसू पोंछकर**) ना। मैं आप को रिपुदमन की सहायता करनें से नहीं रोकता। मेरी चाहे जैसी दुर्दशा हो, मैं बन में कंदमूल खाकर अपनी घटती के दिन पूरे करूंगा, परंतु मुझसे नीच आदमी के लिये आप के निर्मल जस में धब्बा लगे सो अच्छा नहीं। मैं अभी जाकर आप के शस्त्र लाता हूँ। (**गया**)

रणधीर—किस उपाय से जीवन के उपकार का बदला दूँ! मैंने उसको सब तरह ललचाया पर वो कुछ नहीं चाहता। जब से मेरी जन्मभूमि अथवा यों कहो कि माता की गोद छुड़ाई गई तब से ये जीवन मेरा जीवन है। मेरे पीछे न जाने इसका क्या हाल होगा। ओहो! मेरी इतनी आयु पवन की भांत निकल गई! मुझको सबसे अधिक दुःख

अपने समय व्यर्थ जाने का है। पानी की पोल के समान समय में अवकाश भर रहा है परंतु सब लोग आलस्य कर अपना समय व्यर्थ खोते हैं। काम की बहुतायत नाम मात्र समझनी चाहिये, क्योंकि सब लोगों को उनके मामूली काम सिवाय कोई आवश्यक काम आ जाता है तब वो उसके लिये उतने ही काल में अवकाश निकाल लेते हैं जो ऐसा अवकाश हर बार उपयोग में आता रहे तो कितना लाभ हो! अच्छा, अब भी जीवन आवे जितने मैं पिता की चरण संनिधि में एक पत्र लिखता हूँ। (लिखने लगा)

(नेपथ्य में)—हे हे रथी, महारथी, सेनापति, सेना के मुखिया लोग! बचाओ। रिपुदमन सिंह का रुंड क्रोधित काल की तरह सब सेना का नाश किये डालता है। इसकी बाण वर्षा से आप लोग छत्र बनकर हमको बचाओ।

रणधीर—(चौंक कर) मेरे जीवन पर धिक्कार है! मेरी वीरता पर धिक्कार है? रिपुदमनसिंह तो मेरे पीछे भी मेरे लिए लड़ता है और मैं जीते जी ही उसकी सहायता से जी छिपाकर यहाँ बैठ रहा जो मेरे पाषाण हृदय में कुछ भी प्रीति का अंश होता तो ये दारुण वचन सुने पीछे वो कैसे स्थिर रहता! अब शस्त्रों के लिए ठैरना वृथा है। अब तो रिपुदमन सिंह का धनुष उठाकर मैं भी उसी के पीछे जाऊँगा।

(जीवन का प्रवेश)

रणधीर—(उसकी तरफ देखकर) अब शस्त्रों से क्या है? रिपुदमन सिंह वीर लोक को गये! मैं भी उसका धनुष उठाकर उसी के पीछे जाता हूँ। भाई जीवन! तू अपने चित्त को किसी तरह उदास मत करना। और ये बिनयपत्र पिता के चरण कमलों में पहुँचा देना। मुझको देर होगी तो रिपुदमन सिंह आगे निकल जायगा।

(चल दिया)

जीवन—(नेत्रों में जल भर कर रणधीर के पीछे जाते, जाते) महाराज ! आपने अपने प्यारे मित्र रिपुदमन सिंह का साथ दिया, मुझ निराधार सेवक का नहीं। (गया)

इति द्वितीय गर्भांक

अथ तृतीय गर्भांक

स्थान, सूरत का राजमहल

(प्रेममोहिनी और चंपा बैठी हैं)

चंपा—(प्रेममोहिनी से हँसकर) देखो भौंरे की चंचलता से कमल के हृदय की सब केसर झड़ गई। (प्रेममोहिनी ने लजाकर नेत्र नीचे कर लिये।)

चंपा—(मुस्कुराकर) क्यों सखी, मुझसे क्यों बुरा मानती हो? मैं न भौंरा हूँ, न भौंरे का आदर करनेवाली मालती हूँ!

मालती—(जल्दी से आकर) मेरा नाम लेकर क्या कहा?

चंपा—कुछ नहीं राजकुमारी से एक बात थी।

मालती—(प्रेममोहिनी की तरफ देखकर) राजकुमारी, आज का तुमने कुछ नया हाल भी सुना। कहते हैं कि आम की उस लहलही लता का मौर गिराने के लिये चारों तरफ से दल बादल उमड़े चले जाते हैं जिसपर बैठकर कोयल अपने मीठे सुरों से सबका मन प्रसन्न करती थी।

प्रेममोहिनी—(घबराकर) क्यों?

मालती—इन्द्र कोप के सिवाय इसका और क्या कारण होगा?

प्रेममोहिनी—क्यों सखी इसकी सोंधी सुगंध तो सबको प्यारी लगती है फिर इन्द्र ने इसपर क्यों कोप किया?

मालती— दोहा

"कहूँ कहूँ गुण के परस उपजत पीर शरीर।
जैसै मीठी बोल कै परत पींजरा कीर॥"

प्रेममोहिनी—होनी बलवान है। (उदास हो, धरती की तरफ देख) सखी! मन के सुख बिना तन के सब सुख वृथा हैं।

सूरत के महाराज—(जल्दी से आकर) मोहिनी किस विचार में बैठी हो? तुम्हारा मुख क्यों उदास हो गया? हैं, तुम्हारी आँखों में आँसू का क्या काम? रणधीर का बखेड़ा पड़ने से तो तुम उदास नहीं हो?

प्रेममोहिनी—(खड़ी होकर दाहने हाथ से अपने सिर के पल्ले को नीचा सरकाती हुई धरती की तरफ देखकर) पिता जी! आप मेरे लिये कुछ चिंता न करें, मुझको राजा रंक सब बराबर हैं। इस कठिन समय में सब राजा राजी खुशी अपने घर जायँ, ऐसा उपाय करो जिसमें आपकी बात रहे। आप बड़े हो और बड़ों को बहुत क्षमा करनी चाहिये। देखो, पहाड़ जितना ऊँचा होता है उतनी ही वर्षा उसको अधिक सहनी पड़ती है।

सूरत के महाराज—जिसने मेरी आज्ञा न मानी, जिसने मेरी राजसभा में बखेड़ा फैलाया, जिसके कारण मुझको सबके आगे नीचा देखना पड़ा, क्या मैं उसको दंड न दूं? क्या मैं सोने के सुहावने दाने को काले मुँह की चिर्मिठी के साथ तोल दूं?

प्रेममोहिनी—मेरी राह में तो बाप दादों के नाम से बड़ाई पानेवालों के बदले अपनी मिहनत और बुद्धि से इज्जत पैदा करनेवाले हजार दर्जे अच्छे हैं! जो लोग बाप दादों के नाम से बड़ाई पाते हैं उनके बड़े भी कभी न कभी गरीबों से बड़े आदमी हुए होंगे। परंतु मैं इस विषय में आपसे कुछ नहीं कहती। मेरी तो यही कहन है कि मेरे लिए आपका बचन झूठा न हो, आपको किसी तरह का दुःख न उठाना पड़े, मेरे भाग

में अपना बैरी लिखा है पर मैं उसी को प्राणनाथ समझूँगी। मेरे लिये आप अपनी प्रजा का नाश मत करो, सिंह से बन और बन से सिंह की रक्षा होती है। देखो, महाराज रामचंद्र ने प्रजा के प्यार से निर्दोष जानकी जी का परित्याग कर दिया।

सूरतपति—बेटी! तैंने क्या कहा? फिर समझाकर कह। क्या तू रंग में भंग पड़ने से उदास होकर ऐसे बचन कहती है?

प्रेममोहिनी—हाँ महाराज! इन वीरों की चढ़ाई मेरे जीव पर है। सूरत में परदेसियों की सिरोही (तरवार) अच्छी नहीं लगती। आप इस लड़ाई को जल्दी रोकिये। इकल्ले मनुष्य की कुछ गिनती है जिसपर बड़े बड़े राजा अपनी सेना साज कर चढ़ाई करें! सब लोग कहेंगे कि एक निरपराधी सूरवीर सूरत के महाराज से नहीं जीता गया तब सूरत के महाराज ने अपनी बेटी और राज का लालच देकर परदेसियों से वो कांटा निकलवाया, ये बात आपके नाम को धब्बा लगानेवाली है। आप जल्दी जाकर इस बखेड़े को दूर करो नहीं तो सदा के लिये ये कलंक का टीका आपके सिर पर लगा रहेगा।

सूरत के महाराज—(**मन में**) इस समय मेरा क्या हाल है? मैं सोता हूँ कि जागता हूँ! किसी ने मुझसे ये बातें कही सुनी या यों ही मैंने अपने मन से बना लीं। निस्संदेह ये बातें मेरे गले उतरती हैं, परंतु मैं अपना बचन कैसे फेरूँ?

प्रेममोहिनी—मैं आपका सारा विचार अच्छी तरह सब समझती हूँ। अपनी पुरानी रीति पलटने में सब झिझकते हैं। वो रीति बुरी होय तो भी उसके छोड़ने में आनाकानी करते हैं, परंतु आपको ये मुनासिब नहीं। जब क्रोध का कारण नहीं रहा तो क्रोध क्यों बाकी रहे? आप क्या बुरी बात को जान बूझकर छोड़ने में लजाते हो? माथे तक पानी पहुँचने पीछे तैरने का कुछ उपाय नहीं रहता। मैं आप से स्पष्ट कहती हूँ कि आप अपनी जिद्द छोड़ दो; न छोड़ोगे तो पीछे से आप को बहुत पछताना पड़ेगा।

सूरत के महाराज—बेटी ! तेरा बचन मेरे मन पर असर करता है, परंतु, मेरा बचन आज तक खाली नहीं गया।

प्रेममोहिनी—महाराज ! आपने उस दिन भाई (रिपुदमन) से ये बचन कहा था कि "बेटा ! राज पाकर कभी अभिमान न करना। राजा कुछ ईश्वर नहीं, देवता नहीं वो सब प्रजा की तरफ से एक अधिकारी मात्र है। उसको प्रजा की रक्षा और भलाई के लिये प्रजा से धरती की उपज का छठा हिस्सा मिलता है। उसको देश की रक्षा और प्रजा की भलाई के लिये सब तरह का अधिकार है, परंतु उसको प्रजा पर किसी तरह की अनीति करना अथवा प्रजा के रुपये को अपने ऐश आराम के कामों में खर्च करना उचित नहीं। जो राजा अपने स्वार्थ अथवा पक्षपात से प्रजा को दुःख देता है उसका कभी भला नहीं होता।" ये बचन आपने अपने मुख से कहे थे। फिर इस समय अब का बचन निभावेंगे तो ये बचन कैसे निभेंगे ? घबराहट, जल्दी अथवा क्रोध से बिना बिचारे कोई बात मुख से निकल जाय तो उसके तत्काल सुधारने में इतना दोष नहीं गिना जाता जितना जान बूझकर धर्म छोड़ अधर्म करने में होता है।

सूरतपति—अच्छा बेटी, अच्छा, मैं तेरा बचन मानकर यहाँ से जाता हूं परंतु इस समय मेरी सुध बुध ठिकाने नहीं है। (गया)

प्रेममोहिनी—सखी ! जब तक कोई बात निश्चय नहीं होती उस समय तक मुझको तो दुःख है क्योंकि जब कोई बात निश्चय हो जायगी तब तो मैं इस लोक या परलोक में स्वामी के चरण समीप जाकर तत्काल सुखी हो जाऊँगी।

इति तृतीय गर्भांक।

अथ चतुर्थ गर्भांक

स्थान, रणधीर का महल

(सुखबासीलाल और नाथूराम सूती गलीचे पर बैठे हैं)

नाथूराम—क्यूँ जी या लड़ाई किणतरै हुई? काल तो इणरी बात भी नहीं छी! (१)

सुखबासीलाल—सेठजी! क्या पूछते हो? एक मछली सारे दर्या को गंदा कर डालती है, एक गुनहगार के बैठने से किश्ती दर्या बुर्द हो जाती है, आतिश की एक चिङ्गारी रुई के अंबारे कसीर को खाक कर डालती है; अलाहाज़ुलक़यास एक चुग़लखोर बड़ी से बड़ी रियासत तबाह करने के वास्ते काफी है। (२)

नाथूराम—कांई फ़ुरमाई? मैं तो क्यूं बी कोनैं समझ्यों। (३)

सुखबासीलाल—समझने समझाने का वक्त नहीं रहा, खामोशी बहर हाल बेहतर है।

नाथूराम—क्यूं तो फ़ुरमाणी चाहिये? (४)

---

(१) क्यों जी ये लड़ाई किस तरह हुई! कल तो इसकी चर्चा भी न थी।

(२) सेठ जी! क्या पूछते हो? एक मच्छी सारे जल को बिगाड़ती है, एक पापी के बैठने से नाव डूब जाती है, आग की चिंगारी रुई के बड़े ढेर को राख कर डालती है, इसी तरह एक चुगलखोर बड़ी से बड़ी रियासत को बिगाड़ने के लिये बहुत है।

(३) क्या कहा? मैं तो कुछ भी न समझा।

(४) कुछ तो कहना चाहिये?

सुखबासीलाल—जिस रियासत में नक्काल मुसाहिब हों, खिदमतगार मशीर हों, उस रियासत में बजुज बर्बादी और क्या अखीर होगा? (१)

नथूराम—आदमी परखबा मैं तो रणधीरसिंह जी री भारी सोभा सुणी छै। (२)

सुखबासीलाल—खाक, जो इनको आदमी की ही शनाख्त होती तो नुख्स क्या था? हर शख्श का दिल किसी न किसी कार की तरफ रुजू होता है। अगर उसकी तबियत के मुआफिक उससे काम लिया जाय तो निहायत उमदा कारवाई जहूर में आवे। इन्तजामें मुल्की का ये एक जुज है, मगर हर किसी को आदमी की शनाख्त नहीं होती! रणधीरसिंह आदमी की कदर क्या जाने? कोहिस्तान की सरसब्जी दूर से यक्सां नजर आती है लेकिन कोई उसके करीब जाकर देखे तो उसका नशेबो फराज मालूम हो। आप की क्या? घड़ी दो घड़ी के वास्ते आए अपना काम करके चले गए। देखो, इनके दिमाग में जवानी की बू समा रही है। इनका मिजाज निहायत शक्की है, ये सबको बेवफा समझते हैं; इनकी कल तो चुगलखोरों के हात है। (३)

---

(१) जिस रियासत में भांड़ मुसाहब हों, खिदमतगार सलाह देनेवाले हों उस रियासत में सिवाय सत्यानाश के क्या परिणाम होगा?

(२) आदमी परखने में तो रणधीरसिंह की बड़ी बड़ाई सुनी है।

(३) धूल, जो इनको मनुष्य की ही पहचान होती तो कसर क्या थी? हर मनुष्य के मन का लगाव किसी न किसी काम की तरफ होता है जो उसके मनमूजब काम उससे लिया जाय तो काम बहुत अच्छा चले, देश के प्रबंध का ये भाग है, परंतु सबको मनुष्य की पहचान नहीं होती। रणधीरसिंह मनुष्य की परख क्या जाने? पर्वत की हरियाली दूर से एक सी दिखाई देती है पर कोई पास जा कर देखे तो उसका ऊंच नीच मालूम हो। आप की क्या? घड़ी दो घड़ी के वास्ते आए अपना काम

नाथूराम—आपने इशी कांई बात देखी ? (१)

सुखवासीलाल—देखी क्या आजमाई। परसों शबको फितनेपर्दाज के फरेब में आकर हजरत ने मुझसे चक्कर लाए थे ! मगर मैं भला कब दाव में आने वाला हूँ, मैंने ऐसा जवाब दिया कि हजरत अपना सा मुंह लेकर खामोश रह गये। (२)

नाथूराम—आपरी बात तो आपरे साथ रही, पण मैं रणधीरसिंहजीरी इसी नहीं जाणी छी ! (३)

सुखवासीलाल—अपने अपने दिल में सब दानिशमंद होते हैं, मगर गैर तारीफ करें जब अकलमंदी समझी जाय। देखो दुश्मन की लाइंतहा फौज के मुकाबिल एक इन्सान जईफुल बुनियांन का ताकत आजमाई करना किस जी शऊर को पसंद आयगा ! (४)

(चौबे जी का प्रवेश।)

करके चले गए। देखो, इनके सिर में जवानी की बास बस रही है। इनका सुभाव बड़ा वहमी है, ये सबको निर्मोही समझते हैं, इनकी कल तो चुगलखोरों के हाथ है।

(१) आपने ऐसी क्या बात देखी ?

(२) देखी क्या अजमाई। परसों रात को किसी बखेड़िये के दाव में आकर महात्मा ने मुझसे चक्कर लाए थे ! परंतु मैं भला कब दाव में आनेवाला हूँ। मैंने ऐसा जवाब दिया कि वो आप अपना सा मुंह लेकर चुप रह गये।

(३) आप की बात तो आप के साथ रही परंतु मैंने रणधीरसिंह की ऐसी नहीं जानी थी।

(४) अपने अपने मन में सब चतुर होते हैं परंतु दूसरे बड़ाई करें जब चतुराई समझी जाय। देखो बैरी की अगणित सेना के आगे एक तुच्छ मनुष्य का बल करना किस बुद्धिमान को अच्छा लगेगा !

चौबे जी—आज सबेरे काऊ भले भागमान को मोंडो देख के उठेहे जो भोर ही लछमी ते भेट भई। (जेब से नौरत्न की जोड़ी निकालकर) भय्या जी (रणधीरसिंह) की सदा जय बनी रहै। हमारे लिये तो ए दूसरो राजा करन है। आहा ! जाको देख कै हमारे घर के कैसे राजी होयंगे ! (१)

सुखवासीलाल—क्या ये नौरतन हमारे आकाय नामदार ने आप को इनायत किया ? (२)

चौबे जी—हां भय्या ! आज मैं बगीची से कागावासी (भंग) छान के आवै हो तब वे मोको पौरी मैं मिले। भुजबंध की जोरी दीनी और कहबे लगे कि "कही सुनी छिमा करियो।" (३)

सुखबासीलाल—(मन में) इन बातों से खुद उनके दिल की मायूसी जाहिर होती है। बस, अब माल खुर्द बुर्द करने की कोई तदबीर करनी चाहिये (४)

नाथूराम—(मन में) रणधीरसिंह जी उठासै पाछा नहीं वाहवड्या

---

(१) आज सबेरे किसी अच्छे भाग्यवान का मुख देखकर उठे थे जो सबेरे ही लक्ष्मी से मिलाप हुआ। (जेब से नौरत्न की जोड़ी निकालकर) भैया जी (रणधीरसिंह) की सदा जय बनी रहे। हमारे लिए तो ये दूसरा राजा कर्ण है। आहा, इस नौरत्न को देखकर हमारे घर के कैसे राजी होंगे !

(२) क्या ये नौरत्न हमारे मालिक ने आप को दिया ?

(३) हां भाई ! आज सबेरे मैं बगीचे से प्रातःकाल की (भंग) छानकर आता था तब वे मुझको पौली में मिले। ये भुजबंध की जोड़ी दी और कहने लगे कि "कहा सुना क्षमा करना।"

(४) (मन में) इन बातों से खास उनके मन की उदासी जानी जाती है। बस, अब माल चंपत करने का कोई उपाय करना चाहिये।

तो शगरी धरोड़ म्हानैं पचसी जो या धरोड़ म्हानैं पचजाय तो बालाजीरै सोनारो छत्तर चढ़ाऊं। (१) (**जीवन का प्रवेश**)

जीवन—हे निर्दई विधाता ! तेरी यही इच्छा थी। जैसे सूर्य दिनभर अपना प्रकाश करके सांझ को अस्त हो जाता है तैसे आज—(**नेत्रों में जलभर, मुंह पुल्का चुप हो गया।**)

चौबे जी—भय्या ! तू इतनो उदास क्यों होत है ? जब तांई हमारे माथे पै हमारी छत्र रहैगी तब तांई हमको काहू को डर नांहिनैं। (२)

जीवन—भाई ! मुझको उसी का संदेह है।

सुखवासीलाल—(**मन में**) अब माल तीर करने का वक्त आया। (**प्रकट**) क्या दर हक़ीक़त इस वाकै जां काह का वकूअ हुआ ? इस खबर बहशत असर के सुनने से दिल पारह, पारह हुआ जाता है ! मगर ये वक्त दिल मजबूत रखने का है। ऐसा न हो कि हम दर्याय ग़म में गोतेज़न रहैं जब तक दुश्मन जान की तरह माल पर हाथ साफ करे। इस वक्त माल की हिफ़ाज़त मुकद्दम है और जब तक वो माल इस मकान से अलहदा न किया जाय उसके महफ़ूज़ रहने की कोई सूरत नज़र नहीं आती। (३)

---

(१) (**मन में**) रणधीरसिंह वहां से न फिरे तो सब धरोहड़ हमको पचेगी। जो ये धरोहड़ हमको पच जाय तो बाला जी को सोने का छत्र चढ़ाऊं।

(२) भाई तू इतना उदास क्यों होता है, जब तक हमारे सिरपर हमारा छत्र रहेगा तब तक हमको किसी का डर नहीं।

(३) (**मन में**) अब माल उड़ाने का समय आया। (**प्रकट**) क्या निश्चय ये प्राणहारी प्रसंग हुआ ? इस बावले बनानेवाली खबर के सुनने से मन के टुकड़े २ हुए जाते हैं। पर ये समय मन दृढ़ रखने का है। ऐसा न हो कि हम शोक सागर में डूबे रहें जब तक बैरी

जीवन—अब इस माल की रखवाली करके क्या करेंगे ? जब इसका भोगनेवाला कोई न रहा तो इसका होना न होना बराबर है। भला, जिन शस्त्रों को रणधीरसिंह बाँधते थे अब उन शस्त्रों का बाँधनेवाला कोई दिखाई देता है ? इसी तरह जिन लोगों ने रणधीरसिंह की सेवा की, उनसे कभी दूसरे की नौकरी हो सकती है ? हम लोग बन में रहकर अपनी उमर पूरी कर देंगे पर रणधीरसिंह के सेवक होकर दूसरे की झूटन कभी न खायँगे।

सुखवासीलाल—(मन में) अगर इस ने अपने कौल की ताईद की तो बेशक ये कुल माल मेरे कब्जे तसर्रुफ में आयगा। अच्छा, अब मैं इसको जिद पर चढ़ाने की तद्बीर करूं क्योंकि गुल जाए होने से समर और समर जाए होने से तुख़म हासिल होता है। (प्रकट) बस, आप ज्यादे चर्ब जबानी न करें, मैं आपके कौल फैल से बखूबी वाकिफ हूँ। आप अपनी वफादारी वो जाँनिसारी जाहिर करने के वास्ते ये चाल डाल्ते हैं, मगर महज फजूल। बगैर आग राख से मोम कभी नहीं पिगलता। (१)

जीवन—भाई ! मैं कारगुजारी नहीं दिखाता। उनकी कृपा के आगे जान की तरह माल पर हाथ बढ़ावे। इस समय माल की रक्षा करना मुख्य काम है, और जब तक वो माल इस मकान से अलग न किया जाय उसके बचने की कोई सूरत नजर नहीं आती।

---

(१) (मन में) जो इसने अपने बचन को निभाया तो ये सब माल मेरे अधिकार और बर्ताव में आवेगा। अच्छा, अब मैं इसको जिद पर चढ़ाने का उपाय करूँ, क्योंकि फूल के नष्ट होने से फल और फूल के विनाश से बीज प्राप्त होता है। (प्रकट) बस, आप ज्यादा बातें न बनावें, मैं आपकी जबान और कर्तबारी से अच्छी तरह वाकिफ हूँ। आप (उनके) अपनी प्रीत और जिबारी जताने के लिये ये चाल डालते हैं, परंतु वृथा। बे आग राख से मोम कभी नहीं पिगलता।

मेरी सेवा किस गिनती में है। मैं सौ जन्म तक मुफ्त में उनकी सेवा करूँ तो भी बराबर नहीं हो सकता। तुम्हारी बातों का मतलब मैं अच्छी तरह समझता हूँ। देखो, रणधीरसिंह अपने सब नौकरों पर एक सी दया रखते थे पर तुम उनकी दया को अपनी कारगुजारी का फल समझते हो। इस कारण तुम्हारे मन में उपकार का उभास नहीं होता और मैं अपनी जीविका को केवल उनकी कृपा का फल समझता हूं। इस कारण लाज से मेरी आँख नीची हुई जाती है। बस, इतना ही तुम्हारे मेरे सुभाव में अंतर है।

सुखबासीलाल—अच्छा, मैं बेवफा, अहसान फरामोश सही तुम तो बड़े वफादार हो। देखें इस वफादारी और खैरख्वाही के जज्बे में आकर आज क्या बहादुरी करोगे? (१)

जीवन—अब मैं क्या बहादुरी करूँगा! डोर कटते ही पतंग तो कट चुका, उसके ढाँच को कहीं लिये फिरो, जब तक घटती के दिन पूरे न होंगे इसका यही हाल रहेगा।

सुखबासीलाल—तुम तो अभी दुनियाँ को तर्क करते थे? "तर्क दुनियां शहवतस्तो हविस्। पारसाई न तर्क जामेओवस।" (२)

जीवन—मैं अभी संसार को छोड़ता हूँ। रणधीरसिंह बिना मुझको ये मकान डरावना लगता है। परंतु तुम कभी खोटा लालच न करना। अच्छे लोग महनत और धर्म की कमाई पर दृष्टि रखते हैं, और जिनको मुफ्त के माल खाने की बान पड़ जाती है वे किसी काम के नहीं रहते,

---

(१) अच्छा, मैं निर्मोही और कृतघ्न सही। तुम तो बड़े प्रीतिमान हो, देखें इस प्रीति और शुभचिंतकता के आधीन होकर आज क्या बहादुरी करोगे?

(२) तुम तो अभी संसार को छोड़ते थे? संसार का छोड़ना काम और लालच छोड़ने से है। वैराग्य वस्त्र के छोड़ने से नहीं। और बस।

उनको सब निर्लज्ज बताते हैं, उनसे देश का बड़ा अहित होता है। मैंने महाभारत में महात्मा विदुर का ये वचन सुना था कि "पापी (मनुष्य) पहले फलते फूलते हैं परंतु पीछे जड़ मूल से नाश हो जाते हैं।" रणधीरसिंह तपस्वी था। उसका माल कच्चे पारे की तरह तुमको कभी नहीं पचेगा। (गया)

नाथूराम—(मन में) म्हे कांई चोरी करबा गया छा; म्हेतो हात का दिया लिया छै म्हानैं क्यू नहीं पचसी ? (१)

सुखबासीलाल—(मन में) रेशम की कीमत के रूपे मुलायम नहीं होते। इल्म और दौलत जहाँ से मिले हासिल करनी चाहिये। जिस शख्स को अपनी अकल के जोर से सच झूँठ की तमीज नहीं होती वो अव्वल हर किस्म की बातों में शक व शुबह रखता है। मगर जब उसको किसी की तरफ से एतक़ाद आ जाता है तो वो उसके कलाम को कलामुल्लाह समझता है, उसकी खिदमत को खुदा की इबादत जानता है, उनके वास्ते हतेली पर जान लिये फिरता है, मगर ये बात हमारे वास्ते मुफीद है, क्योंकि इसकी अलहदगी से हमको किसी तरह का खौफ बाकी न रहेगा। अच्छा, अब माल खुर्द बुर्द करने की तदबीर करें। (प्रकट) जिस कमरुतबे, पुस्तहिम्मत (आदमी) को किसी तरह के काम करने का हौसला नहीं होता वह हमेशे इसी किस्म की वाहियात बातें बनाकर काम से जी छिपाया करता है मगर हम ऐसे नादान नहीं जो इस नाआक़बतअंदेश की बातों में आकर अपना फर्ज भूल जाँय। (२)

---

(१) (मन में) हम क्या चोरी करने गए थे, हमने तो हाथ के दिये लिए हैं, हमको क्यों न पचेंगे।

(२) (मन में) रेशम की कीमत के रुपये नरम नहीं होते। विद्या और धन जहाँ से मिले, प्राप्त करना चाहिये। जिस मनुष्य को अपनी बुद्धि के बल से सच झूठ की परख नहीं होती वो पहले हर तरह

नाथूराम—ईश्याई बखत में तो आदमीरी तोल पड़ै। (१)

सुखबासीलाल—(मन में) अब इस दौलते बेअंदाज को ऐसी हिकमत से गायब करना चाहिये जिसमें पीछे कुछ सुराग न लग सके। (प्रकट) हमारा काबू लगेगा जहाँ तक हम इस माल के अलहदा करने की जरूर कोशिश करेंगे मगर इस बात में पूरे कामयाब न हुए तो बाकी कुल असबाब को बत्ती दिखा देंगे। इल्ला अपने आकाय नामदर का माल दुश्मन के तहतः तसर्रुफ में कभी नहीं जाने देंगे। (२)

की बातों में संशय और संदेह रखता है परंतु जब उसको किसी की तरफ से भरोसा आ जाता है तो वो उसके बचन को ईश्वर का बचन समझता है। उसकी चाकरी को परमेश्वर की सेवा जानता है; उसकी दया को ईश्वर की कृपा गिनता है। इसी तरह इस निर्बुद्ध खिदमतगार का हाल देखने में आया। इस मूर्ख के मन में रणधीरसिंह का विश्वास बैठ गया। इस कारण ये उनको ईश्वर से अधिक समझता है, उनके लिए अपनी जान हतेली पर लिए फिरता है परंतु ये बात हमारे फायदे की है। क्योंकि उसके अलय होने से हमको किसी तरह का डर न रहेगा। अच्छा, अब इस माल के पचाने का उपाय करें। (प्रकट) जिस मंदभाग, बेहिम्मत (मनुष्य) को किसी तरह के काम करने की हिम्मत नहीं होती वो सदा इसी तरह की थोथी बात बनाकर काम से जी छिपाया करता है परंतु हम ऐसे बावले नहीं जो इस मूर्ख की बातों में आकर अपने जुम्मे का काम भूल जांय।

(१) ऐसे ही समय में तो आदमी का हाल मालूम होता है।

(२) (मन में) अब इस असंख्य द्रव्य को ऐसी हिकमत से उड़ाना चाहिए जिसमें पीछे कुछ पता न लग सके। (प्रकट) हमारा बस चलेगा जब तक हम इस माल के अलग करने का अवश्य उपाय करेंगे परंतु ये उपाय पार न पड़ा तो बाकी सब असबाब में आग लगा देंगे पर अपने मालिक का माल बैरी के अधिकार में कभी न जाने देंगे।

चौबे जी—भय्या ! जो आग लगाओ तो पहले मोकों अपनों कूंडी सोंटा उठाय लैवे दीजो ।

नाथूराम—यो बखत इण तरै गुमावारी नहीं छै, ढोलकियाँ सारा काम बिगड़ जासी । (१)

सुखबासीलाल—अच्छा, हम अभी इसकी तदबीर करते हैं लेकिन आप इस तरह खोफनाक जगह से अपने दौलतखाने को तशरीफ ले जाँए । (२)

नाथूराम—ठीक छै, हूँ तो जाऊँ छूं । (३)

(जाने को तयार हुआ)

चौबे जी—भय्या ! मोहूँ को संग लेत चलियो ।(४)

(सब गये)

इति चतुर्थ गर्भांक

चौथा अंक समाप्त ।

---

(१) ये समय इस तरह खोने का नहीं है, देर करने से अब काम बिगड़ जायगा ।

(२) अच्छा, हम अभी इसका उपाय करते हैं परंतु आप इस भयानक जगह से अपने मकान को पधारैं ।

(३) ठीक है, मैं तो जाता हूँ ।

(४) भाई मुझको भी साथ लेते चलना ।

अथ पंचम अंक प्रारंभ

अथ प्रथम गर्भांक

स्थान, राजमहल और उसके पास मैदान।

(प्रेममोहिनी मालती समेत राजमहल में बैठी है।)

प्रेममोहिनी—सखी! इस भयंकर लड़ाई का क्या परिणाम होगा? पिता इसको बंद करने गये हैं परंतु अब तक भूमि में बिजली की तरह तरवारों की झलक बारंबार दिखाई देती हैं। मैं अबला, इस समय प्यारे प्राणनाथ की सहायता का क्या उपाय करूँ? ईश्वर ने मुझको पुरुष क्यों न बनाया? जो मैं पुरुष होती तो आज प्राणपति के साथ जाकर अपना जन्म सफल करती।

मालती—रणधीरसिंह की बीरता में किसी तरह का संदेह नहीं, पर बैरियों का बिस्तार देख मेरी छाती धड़कती है।

प्रेममोहिनी—सखी! रणधीरसिंह मेरे सर्वस्व हैं, चंद्रमा और चांदनी की तरह मैं अपना प्राण उनके आधीन समझती हूँ परंतु रण से बिमुख होकर प्राण प्यारे फूलों की सेज पर सोवें तो उसके बदले रण में बैरी के हाथ उनका शरशय्या पर सोना मुझको अच्छा लगता है; मैं तत्काल तन तज कर प्यारे प्राणपति की चरण सेवा में चली जाऊँगी।

मालती—राजनंदिनी! कभी ऐसा संदेह मत करो, रणधीरसिंह का रण बिमुख होना किसी तरह संभव नहीं। उनका बल तुम अपने नेत्रों से अच्छी तरह देख चुकी हो। नदी की प्रवाह की भांति सारे भूमंडल में उनके बल का बेग रोकनेवाला तुमको कौन दिखाई देता है?

प्रेममोहिनी—सखी ! ये तो मैं भी समझती हूँ, पर अत्यंत प्रीति के कारण मेरा चित्त ठिकाने नहीं रहता। जब से मेरे नयनों ने उनका रूपरस पीया, मुझको उनकी माधुरी मूर्ति के सिवाय कुछ नहीं दिखाई देता।

मालती—(मन में) प्रेममोहिनी की प्रेम कली खिल कर पुष्प के आकार हो गई, अब इसकी सुगंधि का छिपना बहुत कठिन है। (प्रकट) राजकुमारी ! चेत करो, अंदाज सिरकी सब बातें अच्छी नहीं लगती।

प्रेममोहिनी—सखी ! दूसरों के उपदेश करने को बहुत लोग चतुर होते हैं परंतु अपने ऊपर बीते जब मालूम हो।

मालती—स्त्री का भूषण लाज है।

प्रेममोहिनी—जो ये लाज महाराजकुमार की प्रीति रोकनेवाली होय तो इसको भूषण नहीं दूषण कहना चाहिये, स्त्री का भूषण तो पति है।

(झरोखे में चंपा का प्रवेश)

चंपा—जैसे कमल बन को रूंथकर मतवाला हाथी आता हो, तैसे रणधीरसिंह इस समय रणभूमि से इस तरफ चले आते हैं ! क्रोध के कारण उनका मुख प्रातःकाल के सूर्य की तरह लाल हो रहा है, उनके नेत्रों से ज्वालामुखी पर्वत की तरह झल निकलती है। उनके तेज की चमक से इस समय उनकी तरफ दृष्टि बांधकर नहीं देखा जाता।

(रणधीर का राजमहल के नीचे, मैदान में प्रवेश)

प्रेममोहिनी—(रणधीर को देख कर) रणधीरसिंह के मनोहर मुख कमल पर रुधिर के छींटे और पसीने की बूँद मोती के समान बड़ी सुंदर दिखाई देती हैं ! और टेढ़े टेढ़े बालों की घूँघरवाली जुल्फों पर रज पड़ने से ऐसा रूप हो गया है मानो काले भौंरे कोमल कमल का रस पीने के लिए चारों तरफ से उमड़े चले आते हैं।

रणधीर—(प्रेममोहिनी की तरफ देख कर, मन में) जिस बात के लिए मैं यहाँ आया था वो बात हो गई, अब मैं सब तरह सुखी होकर संसार छोड़ूँगा। (प्रेममोहिनी से आँख मिला, निरास हो, धीर स्वर से, प्रकट) आनंद की रात के साथ दीपक का तेल पूरा हो गया, इस कारण अब ये (दीपक) बुझता है; पर अंधेरे को जड़ मूल से मिटाकर बुझता है। इसके लिए पतंग कुछ चिंता न करे। उसको इससे अच्छे, अच्छे दीपक संसार में मिलेंगे। (मूर्छित होकर गिर पड़ा) (सखियों समेत प्रेममोहिनी गुलाबपास लेकर जल्दी से रणधीर के निकट आती है)

प्रेममोहिनी—(रणधीर का सिर गोद में ले, उसके मुख पर गुलाब छिड़क, मालती से) सखी ये जहाज क्या बड़ी बड़ी आंधियों से बच कर किनारे पर आए पीछे डूब जायगा !

मालती—राजकुमार के लिए बैरी के बाणों से तुम्हारे नेत्र अधिक पैने निकले। देखो, तुमसे आँख मिलते ही राजकुमार का रुधिर जोश खाकर रोम रोम में झलक आया, देह की सुध बुध जाती रही।

प्रेममोहिनी—सखी ! तैंने राजकुमार के बचन भी सुने, तलवार का घाव औषधि से भर जाता है पर बचन का घाव किसी तरह नहीं मिटता। क्या संसार में ऐसे भी लोग हैं जो एक से प्रीति करके दूसरे की इच्छा रक्खें ? सुख के साथी बन, दुख में अलग हो जायँ ? क्या पंखहीन पतंग दूसरे दीपक के पास जा सकता है ? अथवा मणि बिना सर्प और जल बिना मीन के जीने की आस है ? (आँसू डाले)

रणधीर—(सचेत हो, प्रेममोहिनी की तरफ देख, धीरी आवाज से) जब एक फूल वृक्ष से झड़ गया तो फिर हजार उपाय किये वृक्ष में फूल नहीं लगता। उसके वास्ते भौंरे का सोच करना वृथा है। भौंरे को चाहिए कि उनकी प्रीति छोड़ कर और फूल का रस लें। (कुछ नेत्र बंद होते हैं)

प्रेममोहिनी—(आँसू पोंछकर, गद्गद स्वर से) हा प्राणनाथ ! मेरे कल्पते हृदय को ऐसे ऐसे बचन कहकर क्यों अचेत करते हो ! प्राण गये पीछे शून्य शरीर से क्या हो सकेगा ? क्या शब्द से अर्थ जुदा है, जो आप मुझको अपनी देह से अलग समझकर ऐसे बचन कहते हो ! क्या आप के बिना ये देह पल भर ठैर सकती है ? आप नहीं, तो इस देह पर कुछ बीते, चाहे इसका एक एक रोम सांप बनकर डसे, चाहे आकाश से बिजली गिरकर इसको भस्म कर डाले। नदी का समुद्र से मिलाप हुए पीछे कभी वियोग नहीं होता।

रणधीर—(थोड़े से नेत्र खोलकर, टूटती सी बाणी से) प्यारी मुझको तुम्हारी सच्ची प्रीति देखकर बड़ा संतोष हुआ। संसार में अब तक पतिव्रता (स्त्री) हैं ! अच्छा, तुम प्रसन्न रहो; यह हंस तो अब जग जंजाल से निकलकर मानसरोवर को (हरिचरणों में) जाता है। (नेत्र बंद हो गए)

प्रेममोहिनी—(आंखों में आंसू भरकर) प्यारे रणधीर। तुम्हारा ये क्या हाल हुआ ? तुम्हारा मनोहर मुख गुलाब के फूल की तरह पल भर में कैसे कुम्हला गया ! हा ! चंद्रमा की पूरी कला हुए बिना राहु उसको कैसे ग्रसने लगा ! बिना बादल ये बिजली कहाँ से टूट पड़ी ! हे जीवतेश्वर ; इस अबला अनाथ की ओर एक बार आँख उठा कर तो देखो ! हाय ! धरती फट जाय तो मैं उसमें समा जाऊं !

हा ! मम प्राण महीप सुत कहां रहे मुख मोर।
बांह गहे की लाज तज चले प्रेम तृण तोर॥

हे प्राणेश्वर ! आप की यह दशा देख मेरा कलेजा फटता है। हाय ! जल बिन नदी, कमल बिन सरोवर, पुष्प बिन बाग, सुगंधि बिन पुष्प, व्यर्थ हैं।

रणधीर—(नेत्र खोलकर, बहुत धीरे स्वर से) प्रेम–प्रेम–प्रे—(नेत्र बंद कर प्राण त्याग दिये)।

प्रेममोहिनी—"प्रेम"—हा ! "प्रेम"—प्राणनाथ के मुख से इस समय भी "प्रेम" निकलता है ! इस अथाह "प्रेम" की महिमा कौन कहि सकै ? ऐसे प्रेमी बिन प्रेममोहिनी के जीवन पर धिक्कार है ! ये दासी आप के चरण कमलों से अलग नहीं रह सकती ! (रणधीर के चरणों पर सिर रखकर शरीर तज दिया) ।

मालती—(चंपा से) सखी ! इन दोनों की प्रीति का ये परिणाम हुआ ! हाय ! निर्दई विधाता ने दोनों को एक बाण से बेध लिया !

चंपा—जैसे सूर्य चंद्रमा के मिलने से (अमावस को) अधिक अंधेरी होती है, तैसे आज इन दोनों के मिलने से दशा हुई। ये दोनों क्या इस लायक थे ?

मालती—सखी ? ये दुःख देखकर हमारा तो कलेजा फटता है ! हाय ! दुष्ट दैव ने हमको इससे पहले क्यों न उठा लिया !

चंपा—हमारे जाने तो आज प्रलय हो गई, संसार में अब हमारा कौन है ? हमसे तो ये दुःख नहीं सहा जाता।

(सूरत के महाराज आते हैं)

सूरतपति—(देखकर करुणा से) ये क्या ! रणधीर और प्रेममोहिनी को ईश्वर ने सोने से सुगंधि मिला दी थी, पर हाय ! (आंखों में आंसू भर कर गद्‌गद स्वर से)मालती—(मुख से कुछ नहीं बोला गया, संकेत से वृत्ताँत पूछने लगे)

मालती—(रोकर करुणा से) महाराज ! ये हृदय विदारक बचन कहने को मेरी जीभ नहीं उथलती। मैं क्या कहूँ ? (फूट फूटकर रोने लगी)

सूरतपति—(कातर स्वर से) रणधीर और प्रेममोहिनी का मिलाप कैसे हुआ ?

मालती—कल रात्रि के समय रणधीर को राजनंदिनी ने अपने मन से बरा था। आज उनकी यह दशा देख हमको अनाथकर...(रोने लगी)

सूरतपति—हाय !!! (मूर्छित होकर गिर पड़े)।

(मालती ने गुलाब छिड़का,) चंपा वस्त्र से पवन करने लगी)

सूरतपति—(सचेत होकर) बेटी यह क्या होता है ? इस स्वयंबर का ये अंत हुआ ! हाय ! मेरी जन्म भर की कमाई पल भर में लुट गई ! ये विवाह का सामान इनके क्रिया-कर्म में काम आवेगा ! मोहिनी ! तू अपने दुखिया बाप से एक बात कहे बिन उसको दुखसागर में छोड़कर कहाँ चली गई ? हाय ! हमने ऐसा क्या पाप किया होगा, जिसका यह फल है ! हे पापी प्राण ! तू इस अधम शरीर को अब तक क्यों नहीं छोड़ता ! अरे जब ऐसा बिकराल दुख सह लिया तो कौन सा दुख भोगकर छोड़ेगा ? (बिलख बिलखकर रोने लगा)।

(सूरत के मंत्री का प्रवेश)

मालती—(चंपा से रोकर) सखी ! हमारे भाग में क्या दुष्ट दैव ने यही लिख दिया था कि रणधीर और प्रेममोहिनी के लिए फूलों की सेज के बदले चंदन की चिता बनायं ! (चिता बनाने लगी)।

मंत्री—(बहुत रोकर) हाय ! हमारा नसीब फूट गया, हमारा सर्वस्व लुट गया हमारी सब आस टूट गई, हमारे नेत्रों का प्रकाश जाता रहा ! हे कठोर दैव ! तुझको हम पर कुछ दया न आई। हाय ! हम अंधों के टटोलकर चलने की लकड़ी छीन कर तू क्या सुखी होगा ? हे धर्मराज, हमारी विनय सुन कर हमको जल्दी इस दुख सागर से निकालो।

सूरत के महाराज—मंत्री ! ऐसे ऐसे बचन कह कर क्यों मेरे व्याकुल मन को अचेत करते हो ! धीरज धरो, संसार के सब दुखों को पहले पापों का फल समझना चाहिये ।

मंत्री—महाराज ! राजकुमार रिपुदमनसिंह के कुसमय संसार छोड़ने का दुखदाई बचन आपसे कौन कह सके ।

सूरत के महाराज—(आँसू भर कर) हा ! ये बचन बर्छी की तरह मेरे कलेजे में पार हो गया ! मंत्री तुम क्या कहते हो ? हमारे दोनों नयनों का प्रकाश एक संग जाता रहा ! रिपुदमनसिंह परलोक गये ! हा ! रिपुदमन प्राणाधार, हा वीर, हा ! क्षत्री कुलभूषण ! हा ! आज्ञाकारी प्यारे पुत्र ! मुझसे बिना आज्ञा लिये कोई काम न करते थे सो आज मुझसे बिना पूछे किस कारण इतनी जात्रा की, मुझको उत्तर दो !

मंत्री—हाय ! इस दुःखसागर का किनारा कहीं दूर तक नहीं दिखाई देता, इसमें डूबना ही हमारे लिए पार लगना है ।

सूरत के महाराज—क्यों मंत्री, हमारे दुःखी हृदय को जलाने के लिये ये आग कहाँ से प्रकट हुई ?

मंत्री—कहते हैं कि रणधीरसिंह की मित्रता से राजकुमार ने ऐसा किया ।

सूरत के महाराज—मित्र के लिए प्राण देने की तो हमारे वंश में परंपरा से चाल है, परंतु मैं बीच धार में डूब गया, मुझको इस बुढ़ापे में रास्ता दिखानेवाला कौन है ? संसार में पुत्र शोक की बराबर कौन सा दुख होता है ? जब कोई राजा बिना संतान मरता है तो उसका राज यों ही औरों के राज में मिल जाता है । हाय ! यही हाल अब हमारे राज का होगा ! हमारा राज अब तक तो बड़ों के पुण्य से हरा भरा रहा परंतु अब हमारे बड़ों को वस्त्र का पल्ला निचोड़ कर जल देनेवाला भी कोई न रहेगा ।

मंत्री—महाराज़ क्या करिएगा, दैव कोप प्रबल है !

सूरत के महाराज—(करुणा करके) मंत्री ! मुझको दैव कोप से किसी बात का भरोसा नहीं रहा ! हमारे कुल पर दैव विमुख है ! हाय !

हमारे कुल का इस तरह अंत आया! इसी दिन के लिए हम संतान की चाहना करते थे! ओ रिपुदमन! ओ प्रेममोहिनी! मेरे प्राणाधार! मेरे जीवन! मैं फिर कब तुमको अपनी छाती से लगाऊँगा, कौन से जन्म में तुम्हारा मुख चंद्र देखूँगा, तुम्हारा मुख स्मरण करने से कलेजा फटता है। हाय! तुम कहाँ चले गये! तुमने मुझको छोड़ दिया, तुमको मेरे बुढ़ापे पर कुछ दया न आई, मेरी एक बात का जवाब तो दो, मेरी तरफ आँख उठाकर तो देखो। तुमको एक समय फूलों की सेज पर नींद नहीं आती थी अब तुम कठोर भूमि में सदा के लिए ऐसी गहरी नींद सोते हो। हाय! तुम्हारा यह हाल देख कर धरती माता की छाती भी न फटी। पर्वत, आकाश और नदी नाले भी वैसे ही बने रहे; तुम्हारा यह हाल हो, और मैं जीता रहूँ! मेरी छाती बोझ से दबी जाती है, मेरे हाथ पाँव गिरे पड़ते हैं, मुझको आँखों से कुछ नहीं दिखाई देता, कानों से सुनाई नहीं देता, मेरे प्राण जाते हैं। मुझको प्यारी संतान के पास ले चल! अरे मुझको प्यारी संतान के पास ले चल! प्राण चले मुझको—
(मूर्छित होकर गिरता था सो मंत्री ने रोक लिया।)

मंत्री—महाराज! महल में महारानी जी अचेत पड़ी हैं, यहाँ आप ऐसे अधीर हो रहे हैं, इस दशा में हम लोगों को कैसे धीर्य रहै।

(बीरवेश से कवच और शस्त्र सजाकर एक योधा आता है)

योधा—आज इस नगर में किस कारण हाहाकार हो रहा है? बहुत से मनुष्य मूर्छित, मृतक, अंग भंग, दर्द से व्याकुल, रुधिर में डूबे हुये, धरती पर लोटते हैं, तरह तरह के कपड़े और गहने बिखरे पड़े हैं, कितनेक मुर्दों की छाती से बाण निकलते हैं, कितनेक घायल अपने घाव पर बिना पट्टी बाँधे खाली घोड़े को देख बिसूरत (बिसूरते) हैं, बहुत से वीर धरती की तरफ देख कर बिलख रहे हैं, कितनेक क्षत्री रणभूमि में पड़े हुए कातर स्वर से जल जल पुकारते हैं, कहीं किसी वीर की स्त्री अपने मरे हुए पति का सिर गोद में ले सती होती है, कहीं किसी वीर की माता अपने बेटे के लिए रो रोकर प्राण खोती है। इस

लड़ाई का क्या कारण होगा? कुछ हो। मुझको एक बार सूरतपति से अवश्य मिलना है। मैंने बहुत से लोगों से उनका हाल पूछा, पर किसी ने मेरी बात का जवाब न दिया। अच्छा, अब मैं आप ढूंढ़ता हूँ। (कुछ आगे बढ़ा)

सूरत के महाराज—(कुछ चेतना पाकर) मंत्री! मैं अपना शरीर छोड़कर प्यारी संतान से मिलने जाता हूँ परंतु न जाने शरीर छोड़े पीछे भी मुझ आत्मघाती से उनका मिलाप होगा या नहीं!

योधा—(आगे बढ़कर) आगे ऐसा कौन मनुष्य खड़ा है जिसके गहने की झलक सूर्य की किरणों से मिलती है। मेरे जान तो ये सूरत के महाराज होंगे! (आगे बढ़कर एक पत्र देने लगा)

सूरत के महाराज—किसका पत्र है?

योधा—आप पढ़ लीजिये।

सूरत के महाराज—मंत्री इसे पढ़ो, मेरी आंखों में जल छा रहा है।

मंत्री—(पत्र लेकर पढ़ने लगा)

"श्री सूरतपति राय!

हमारे आप के बीच में पीढ़ियों से बैर है और बैरी से बैर लेने की सबके मन में चाहना होती है, परंतु बन में जागते सिंह के मारने की बड़ाई है। बंधन में निरुत्साही सिंह के मारने से जस नहीं मिलता। एक वीर पर अनेक वीरों का चढ़ाई करना पाप है, इसी तरह सहायता मांगनेवालों की सहाय न करना भी महापाप है। मित्र का उपकार सब करते हैं परंतु बैरी का उपकार करने में उससे अधिक जस मिलता है:—

करै बुराई पै भली सो साधू अवरेख।
करै भलाई पै भली तामैं कहा बिशेष॥

क्षत्री अपनी हार को मौत से बढ़कर समझते हैं परंतु रणधीर के लिए हमने हार मानी। राजकुमार कुछ दिन से अपना देश छोड़कर

आप की राजधानी में जा बसे हैं जो आप उनको समझाकर हमारे पास भेज देंगे तो आप का ये उपकार हम कभी न भूलेंगे। रणधीरसिंह को लड़ाई में वीर रस का औतार कहना चाहिये। वो वीर एकाएकी बैरी की बड़ी सेना से दब जाय ऐसा नहीं है, तो भी पुत्र की प्रीति से हमारा कलेजा धड़कता है ! हमको निश्चय है कि आप ऐसे समय में खोटा लालच कभी न करोगे।

सज्जन तजत न नीति पथ यदपि प्राण तज देत।
भूखो रहत मृगेन्द्र तउ तृण न कबहुं मुख लेत॥

सजन से सब तरह की आस होती है।

सुजन कठिन तउ हेम सम पिगलत औसर पाय।
तृण सम छोटे मनुज को पिगलन को न उपाय॥

परोपकार से कीर्ति मिलती है और कीर्ति ही आत्मा का भूषण है।

मूरत से कीरत बड़ी बिना पंख उड़ जाय।
मूरत कबहुं न थिर रहै कीरत कबहुं न जाय॥

अब जो आप को सच्ची कीर्ति का लालच होय तो अपना स्वार्थ छोड़-कर परोपकार करो !

सरिता बारि न पियत कहुं तरु न कबहुं फल खांहि।
वारिद भखत न अन्न कहुं सज्जन पर हित मांहि॥

हमारी कामना साधारण मनुष्य से पूरी होने लायक नहीं थी इस कारण आपको लिखा गया।

ऊँचे जन की कामना नीचन ते न पुराय।
हरत ताप गिरि को जलद सरिता रहत लजाय॥

आगे आप को अपने काम का अधिकार है। आप नीति से हमारे लेख को अंगीकार करोगे तो हम आपकी श्री हरैंगे और आप

अनीति से हमारे लेख को न अंगीकार करोगे तो हम आप की श्री न हरेंगे।" (१)

श्रीपाटनपति राय का जुहार।

(सूरत के महाराज चकित हो कभी पत्र, कभी जोधा, कभी रणधीर, कभी प्रेममोहिनी की तरफ देखने लगे, परंतु मुख से एक अक्षर न निकला। आंखों में आंसू भरकर चुप रह गए।)

मंत्री—(जोधा से) इस समय महाराज का चित्त ठिकाने नहीं है। तुमको पत्र का जवाब पीछे से मिलेगा।

(जोधा जाता है)

(सूरत के महाराज का एक नौकर आता है)

नौकर—(घबराहट से) महाराज! पाटनपति राय की सेना टीड़ी दल के समान उमड़ी चली आती है।

सूरतपति—(निरास हो कर) हम तो इस खेत में खेत रहे, अब इस अभागे नगर का कुछ हो! चाहे इस पर ओले गिरे, चाहे टीड़ी दल टूट पड़े, हमको इन बातों से क्या काम?

मंत्री—महाराज जब तक आपके शरीर में प्राण है, आपको प्रजा की रक्षा करनी चाहिये। बड़े लोग विपत्ति पड़ने से कभी अपनी रीति नहीं बदलते।

बड़े लहत सुख संपदा, बड़े सहत दुख द्वंद।
उडगण घटत न वढ़त कहुँ, बढ़त घटत नित चंद॥

---

(१) आपने नीति से हमारे लेख को मंजूर किया तो बैरी को पत्र में चार श्री लिखते हैं, उसके बदले हम आपको एक श्री हर कर मित्र भाव से आपको तीन श्री लिखा करेंगे और आपने हमारे लेख को नामंजूर किया तो हम आप पर चढ़ाई करके आपकी राजश्री हरेंगे।

(मालती से) जल्दी रणधीर और प्रेममोहिनी को चिता पर विराज-मान कर।

(सूरत के महाराज बेसुध हो गये)

मालती—हाय ! राजकुमारी से सदा के लिए वियोग होता है ! एक बार प्रेममोहिनी की मोहिनी मूर्ति तो मन भर कर देख लूँ !!!

(प्रेममोहिनी के मुख की तरफ टकटकी बाँध कर देखने लगी)

चंपा—सखी ! रणधीर और प्रेममोहिनी के प्राण चंद चकोर की तरह अब तक इनकी मृत देह के आसपास फिरते हैं !

(नेपथ्य में घोड़ों की टाप सुनाई दी।)

मंत्री—मालती ! जल्दी कर, देर करने में सब बात बिगड़ जायगी।

(मालती और चंपा ने रोते रोते रणधीर और प्रेम-मोहिनी की मृत देह को चिता पर रख कर अग्नि - संस्कार किया।)

मंत्री—(सूरतपति को वस्त्र से पवन करके) महाराज ! चेत करिये, बैरी सनमुख आता है !

सूरतपति—(सचेत होकर, करुणा से) इससे अधिक बैरी हमारा क्या करेगा ! हमारा तो होना था सो हो चुका !!! (चिता की तरफ देख कर) हाय ! ये चिता नहीं जलती, मेरा हृदय जलता है।

मालती—सखी ! हमसे ये दुख नहीं देखा जाता। हाय ! हमारी मौत कहाँ छिप रही ! (रोती हुई दोनों जाती हैं।)

सूरतपति—(अत्यंत करुणापूर्वक गद्‌गद स्वर से) हे दैव ! तुमने अंत समय भी मेरी मोहिनी का मुख मुझको मन भर कर नहीं देखने दिया ! हाय ! मेरे जीतब को धिक्कार है !!! (शोक से व्याकुल हो खड़े रह गये)

(दो मंत्री और सेनापति समेत पाटन के महाराज का प्रवेश)

पाटनपति—मंत्री ! मैं पत्र के जवाब की बाट देखे बिना रणधीर से मिलने की उमंग में यहाँ चला आया, परंतु अपनी करतूत विचार कर मेरे पाँव पीछे को हटते हैं। मेरा कलेजा धड़कता है। मेरे आने की चर्चा सुन कर कहीं रणधीर यहाँ से चला न जाय। मैं कौन सा मुँह लेकर उससे बात करूँगा। हाय ! वो घड़ी कब आवेगी जब मैं अपने लाल को अपने गले लगाऊँगा।

पाटन का सेनापति—(चारों तरफ देख कर) हमारे आने से पहले यह बड़ा भारी खेत पड़ा है, न जाने इस लड़ाई का क्या कारण होगा !

पाटन का मंत्री—सामने सूरतपति खड़े हैं, इनके मिलने से सब भेद खुल जायगा।

सूरतपति—(आँसू बहाते हुए आप ही पास आकर) पाटनपतिराय को सूरतपति राय का जुहार।

पाटनपति—आप प्रसन्न हैं ?

सूरतपति—जिनके भाग्य में केवल दुःख लिखा है उनकी प्रसन्नता क्या ?

पाटनपति—क्यों ?

सूरतपति—(रोकर) मेरे बहते हुए आंसू आप को उत्तर देंगे।

पाटनपति—आप के इतने विलाप का क्या कारण है ?

सूरतपति—रणधीरसिंह !

पाटनपति—इतने वीरों के खेत पड़ने का क्या कारण ?

सूरतपति—रणधीरसिंह !

पाटनपति—सामने इस अग्नि के प्रज्वलित होने का क्या कारण ?

सूरतपति—रणधीरसिंह !

पाटनपति—आप क्या कहते हो ?

सूरतपति—क्या कहूँ ? अपने वीर बेटे का पराक्रम देखो। संसार में इसका जोड़ मिलना बहुत कठिन है, जैसे जलती हुई अग्नि सूखे बन को जला कर आप बुझ जाती है, तैसे ही वीर रणधीरसिंह ने सब बैरियों का अंत लेकर अपना प्राण दिया !

सूरतपति का मंत्री—हमारे राजकुमार रिपुदमन सिंह ने पवन की तरह उनका बल बढ़ाया और प्रेममोहिनी उनके संग इस चिता में विराजमान है। (चिता दिखाई)

(सूरत के महाराज मूर्छित हो गए और मंत्री उनको पवन करने लगा)

पाटनपति—हा रणधीर, हा ! प्राणाधार, हा ! लाल, हा ! वत्स ! (मूर्छित हो गया)।

पाटन का मंत्री—(वस्त्र से पवन करके) महाराज धीरज धरो, धीरज धरो।

सूरतपति—(होश में आकर) हाय ! रणधीरसिंह का ये हाल देख कर हमारा कलेजा फटता है तो उनके पिता को कैसा दुःख होगा !

पाटनपति—(होश में आकर) देखो, पृथ्वी कंपायमान नहीं हुई, आकाश में महाप्रलय के बादल नहीं छाये, चारों तरफ से प्रबल पवन नहीं चलने लगी, पृथ्वी को भस्म करने के लिए सूर्य से अग्नि नहीं प्रकट हुई, फिर रणधीरसिंह की मृत्यु किस प्रकार बताते हो ! (चिता के पास जाकर) मुझको एक विमान में गंधर्व समेत अप्सरा दिखाई देती है। हाय ! अब मेरा मिलाप कैसे होगा !

सूरतपति—आपको ऐसे ज्ञानवान होकर धीरज छोड़ना उचित नहीं।

पाटनपति—(रोकर)—

सोरठा।

"सब काहू सुख दीन दुख न दियो काहू कबहुँ।
सो मर मोकों दीन भली करी रणधीरसिंह"।

हा, रणधीर! प्राण जीवन! आज्ञाकारी! शीलसिंधु बेटा! ऐसे अमोघ बली होकर सदा मेरी आज्ञा में रहते थे, मेरे डर से थर थर कांपते थे, तुम्हारी सौतेली मां के बहकाने से मैंने लाज और प्रीति छोड़कर तुम्हारा अपमान किया, तुमको प्रबल शत्रु के राज्य में रहने की आज्ञा दी। हा! केसर की कोमल पोद को कश्मीर से उखाड़कर रेत के थड़ में लगाने का विचार किया तो भी तुम मेरी आज्ञा से प्रसन्न होते थे, अपना जन्म सुफल समझते थे, अपनी सौतेली माँ को निज माता से बढ़कर मानते थे, फिर बेटा! अब हमने ऐसा क्या अपराध किया जो हमको दूर से आते देख, अजान की तरह जाते हो; एक बेर मुख मोड़कर तो देखो! (मूर्छित होकर गिरता है।)

पाटन का मंत्री—महाराज धीरज धरो, धीरज धरो! संसार में जिसने जन्म लिया वो एक दिन अवश्य मरेगा। संसार की कोई चीज थिर नहीं, ईश्वर का नियम अमिट है। उसने अब तक जो चाहा किया, आगे को जो चाहे करेगा, हमको उसकी इच्छा पर संतोष रखना चाहिए।

पाटन के महाराज—(विशेष रोकर) हमको सबसे अधिक दुख उसके इस समय परलोक जाने का है। कोई बात समय बिन अच्छी नहीं लगती। फिर उदय होने के समय सूर्य अस्त हो जाय तो धीर्य कैसे रहे? (रणधीर का ध्यान करके) हे बेटा! तुम्हारी थोड़ी उमर में मैंने बहुत से गुण देखे, तुमने बैरियों के विनाश से प्रजा को सब तरह का सुख दिया, मेरी सेवा करने में कोई बात बाकी न छोड़ी, जिस पर तुम अपनी लायकी से सदा नीची आँख रखते थे, समुद्र की तरह गंभीर रहकर कभी किसी का जी दुखने वाली कठोर बात मुख से नहीं निकालते थे, ये सब लक्षण तुम्हारे शीघ्र मरने के थे, क्योंकि जो मनुष्य थोड़े दिन जीते हैं उनमें भलाई और बड़ाई के गुण बहुत पाये जाते हैं। हाय! मेरे जीतब पर धिक्कार है! मुझको तुम्हारे आगे अपने पछतावे से मन खोल कर रोने का समय भी न मिला! देखो! सब संसार में माता पिता से संतान

बैरागी—जिसको याद करके मेरे मुख से एक अक्षर नहीं निकलता **(आँसू भर आये)।**

पाटनपति—(पत्र खोलकर पढ़ने लगे)

"स्वस्ति श्री राजराजेन्द्र महाराज मुकुटमणि श्रीमान् महाराजाधिराज पाटनपतिराय के चरणारविंद में ये आज्ञाकारी दास आँसू भरकर ये निवेदन करता है कि दास ने अब तक आपकी आज्ञा से यहाँ बास किया पर अब बहुत दूर की यात्रा का समय आ गया है। कदाचित आगे को कभी अपने नयन जल से आपके चरण सरोज धोने का समय न मिले। आपकी अकारण दया मुझको हर घड़ी याद आती है। जब मैं बाल बुद्धि से धूल धूसरित अंग होकर आप की गोद मैली करता अथवा किसी अनमिल वस्तु के वास्ते हट करके आपको खिजाता तब आप क्रोध के बदले प्यार करते थे। आपने बड़े परिश्रम से मेरे मन में विद्या का बीज बोया। पर हाय ! इस ऊसर भूमि से आप को कुछ फल न मिला। जिस देह से माता पिता की सेवा न बनी उसने संसार में जन्म लेकर क्या किया ! मुझको यहाँ णधीरसिंह कुँवर, रणधीरसिह कहने वाले अनेक मिलते हैं पर आपकी तरह प्यार से रणधीर कहनेवाला कोई न मिला। मुझको आज की लड़ाई में आपके चरण पर मस्तक रख कर जाने की लालसा थी, परंतु अब इस लालसा को मैं अपने संग ले जाता हूँ। आपने जन्म से अब तक मेरे संग जो उपकार किये हैं उनका बदला मैं किसी तरह नहीं दे सकता। संसार में किसी करजदार को करज उतारने की सामर्थ्य नहीं होती तो वो साहूकार की दृष्टि बचा कर परदेश जाने का विचार करता है। आपने अपनी प्रसन्नता से मुझको यहाँ आने की आज्ञा दी। मेरे प्राणप्यारे भाई को युवराज बनाया, मेरी माता की कामना पूरी की। आपसे माता पिता पाकर मैं अपना अहोभाग्य समझता हूँ। मैं अब तक कछुए के अंडे की तरह आपकी असीस से यहाँ प्रसन्न रहा और जीवन ने जीवन के अंत तक मेरा साथ दिया। अब अंत समय बड़ी दीनता से

मैं ये माँगता हूँ कि आज की लड़ाई में मेरे प्राण जायँ तो आप मुझ तुच्छ मनुष्य के लिए कुछ चिंता न करें, ईश्वर आपको मेरी दोनों माता और प्यारे भ्राता समेत सदा सुखी रखे। अब प्यारे भाई को असीस देकर दोनों माताओं समेत आपके चरण कमलों में अंत की प्रणाम करता हूँ।

मैं आप का चरणानुरागी दास
रणधीर—सूरत।"

पाटनपति—(पत्र को हृदय से लगाकर बड़ी करुणा से) जैसे शीत पड़ने से कमल मुरझा जाता है तैसे रणधीर के शीतल बचनों से मेरा हृदय अचेत होता है। मेरे कुटिल हृदय में रणधीरसिंह की सीधी वाणी बाण की तरह पार होती है। हाय! मुझ कपटी में रणधीरसिंह की ऐसी प्रीति क्यों हुई? रणधीरसिंह के एक एक गुण याद आने से मेरा कलेजा फटता है! मेरी रसना ऐंठी जाती है, मेरे नयनों से दिखाई नहीं देता, मेरे शरीर का फिरता रुधिर एक संग बंद हो गया। अब ये पत्नी पिंजरे से उड़ता है। मंत्री मेरी अंत समय की विनय सुन—

(नेपथ्य में बड़ा प्रकाश दिखाई दिया)

पाटनपति—(चौंक कर) अरे ये क्या! मुझको भस्म करने के लिए आग प्रगट हुई! अथवा आकाश से बिजली गिरी! हे दैव! तेरा कैसा उपकार।

बैरागी—(रोकर) दुष्ट सुखबासीलाल आदि ने रणधीरसिंह के महल में आग लगा दी। हाय! प्रतापी रणधीरसिंह का माल यों धूल में मिला! संसार में लोभ सब खोटे कामों की जड़ है।

सूरत के महाराज—इन दुष्टों को न्याय सभा में बुलाकर भली भाँति दंड दिया जायगा।

पाटन के महाराज—हाय! हमारे नेत्र शीतल होने के लिए दुष्ट दैव ने रणधीरसिंह की कोई चीज़ बाकी न छोड़ी। (बैरागी की तरफ

देख कर) तू कौन ? जीवन ! तैने रणधीरसिंह का अच्छा साथ दिया। तेरा मेरे ऊपर बड़ा उपकार हुआ। तू मुझको प्राण से अधिक प्यारा है। बेटा ! आ, मेरे गले लग। मंत्री ! प्यारे जीवन को अपने राज में से दस गाँव देकर सब तरह सुखी करना।

वैरागी—(रोकर) महाराज ! मुझको कुछ नहीं चाहिये। मेरी सब संपत लुट गई। अब ये पापी प्राण रणधीरसिंह का वियोग सहकर बचेगा तो परबत की किसी कंदरा में घटती के दिन पूरे करेगा।

पाटन की मंत्री—धन्य जीवन, धन्य ! तू और तेरे माता पिता धन्य हैं।

सूरतपति—प्रेममोहिनी की प्रतिमा के संग रणधीरसिंह की रत्न-जटित मूर्ति बनवाकर यहाँ रखने की मेरे मन में इच्छा है।

पाटनपति—(करुणा करके गद्गद स्वर से) रणधीर ! बेटा रणधीर !! भर जवानी में ये तेरा क्या हाल हुआ ? ऐसी घड़ी अपने घर से पाँव निकाला कि फिर धरना ही नसीब न हुआ ! मेरे बदले जमराज ने तुझको क्यों बुला लिया, और तू अपने बूढ़े बाप को छोड़ कर कहाँ चला गया ? हाय ! मेरे अधर्म से मेरा लाल बैरी के देश में इस तरह इकल्ला मारा गया ! (विलाप करने लगे)

सूरत के महाराज—(आँसू भर) क्या आप मुझको अब तक अपना बैरी समझते हो ? मैं आप का सच्चा मित्र हूँ। प्रेममोहिनी की पहरावनी में मैंने ये राज आपको दिया। जब रिपुदमन से रणधीरसिंह की मित्रता हुई, जब प्रेममोहिनी से रणधीरसिंह का ब्याह हुआ, तब हमारा आपका बैर कहाँ रहा ? जिनसे रिपुदमन और प्रेममोहिनी की प्रीति थी वे हमारे सदा के मित्र हैं। प्यारे पाटनपति राय ! रिपुदमन और प्रेममोहिनी की मैं क्या बड़ाई करूँ ? ये दोनों मेरे प्राणाधार थे। इनके देखने से मेरी आँखों में प्रकाश आता था, इनको देख कर मैं फूला न समाता

था। हाय! जब ये दोनों सूर्य चंद्रमा अस्त हो गए, जब हमारे नयनों का प्रकाश जाता रहा, जब हमारे उत्तम कुल का इस तरह अंत आया तब हम जीकर क्या करेंगे? ऐसे जीतब पर धिक्कार है! हम अपनी प्यारी संतान के पास जाते हैं। (मूर्छित होकर गिर पड़ा और सूरत का मंत्री वस्त्र से पवन करने लगा।)

पाटनपति—(विलाप करके गद्‌गद स्वर से) जब प्यारा रणधीर न रहा तब मुझको इस राजपाट से क्या काम? (बैरागी की तरफ देख कर) जीवन मुझको प्यारे रणधीर के पास ले चल, उसके बिना मेरे प्राण जाते हैं, मेरा कंठ रुक गया। हा! रणधीर! बेटा रणधीर! मुझ दुखिया को छोड़ कर तुम स्त्री और मित्र के संग चले गये! तुमको मेरी दशा पर कुछ दया न आई। अच्छा, पल भर ठैरो मैं अभी आकर तुमको गले लगाता हूँ। मंत्री! हमारे कुल की नदी का राजहंस, हमारे विपत्ति की ढाल, हमारे शरीर का चंदन, हमारे नेत्रों का चंद्रमा अस्त हो गया! हम उसके वियोग में प्राण छोड़ते हैं। हमारा राजपाट तुम्हारे आधीन है। हमारा अज्ञान बालक तुम्हारी गोद है। तुम पदवी में छोटे पर बुद्धि में बड़े हो। इस कारण हम हाथ जोड़ कर अंत समय तुमसे ये माँगते हैं कि हमारे स्नेह से अपने ब्याकुल मन को धीर्य देकर हमारे अनाथ कुल की रक्षा करो। हमारे नष्ट कुल में ये एक अंकुर बचा है इससे हमारा वंश चलेगा और ये ही बड़ा होकर हमारा निपुत्री कुल में पानी (पिंड) देनेवाला होगा। देखो, यह कहीं हमारी याद करके मर न जाय। इसको अपना समझ कर अच्छी तरह रक्षा करना। इसको सुमार्ग में डालना (आँसू भर कर) और ये बड़ा हो! हमारी प्यारी प्रजा को प्राण से अधिक रखना। भैया! तुम ज्ञानवान हो। हमारे अंत समय के वचन को भूल मत जाना, तुम्हारे काम से हमको परलोक में सुख मिले ऐसा उपाय करना। (मंत्री को छाती से लगा कर) हमारा सर्वस्व तुम्हारे आधीन है। अब हमसे कुछ नहीं बोला जाता। अब हम तुमको अंत की असीस देकर बिदा होते हैं।

हाय ! प्यारे रणधीर बिना जगत अंधेरा लगता है !!! (मूर्छित होकर गिर पड़े)

पाटन का मंत्री—(आँसू भर कर चरण दाबते दाबते) महाराज ! आपने ये क्या विचारा ? आप कभी ऐसा वचन न कहें । क्या सब संसार डबोने की आपके मन में है ! रणधीरसिंह के वियोग रूपी अथाह समुद्र में पाटन को जहाज बना कर सब नगर निवासी चढ़ चुके अब आप खेवट होकर खेवेंगे तो बेड़ा पार लग जायगा, नहीं तो संसार के डूबने का समय है । आपके नाम से जो काम होता है हमारे उपाय से नहीं हो सकता । हा ! आपके बिना हम क्या करेंगे ? हे जगदीश ! हमारा दुख और सब संसार का दुःख दूर कर !!!

(धीरे धीरे परदा गिरता है)

इति प्रथम गर्भांकः ।

पंचम अंक समाप्त ।

समाप्त ।

———

परीक्षागुरु

अर्थात्

अनुभव द्वारा उपदेश मिलने की एक संसारी वार्ता ।

"ऐश्वर्य मद पापिष्ठा मदाः पान मदादयः ।
ऐश्वर्य मदमत्तो हि नापतित्वा विबुध्यते ॥"

भावार्थ

और मदन ते विभव मद अति पापिष्ठ लखाय ।
वह उतरैं अपने समय यह बिन बिपति न जाय ॥

विदुर प्रजागरे ।

Dedication

To

Lala Sri Ram M. A.
Ufwar

My dear friend,

I dedicate this book, my humble attempt at novel writing to you as a token of sincere friendship which has existed between us for many years and as a tribute of the esteem I have always felt for you, the deep interest you take in everything connected with the weal of the People of India by showing them by your own example the best means of civilizing the Country.

Delhi
The 25 November 1884

yours sincerely
Sri Newas Das

निवेदन

अब तक नागरी और उर्दू भाषा मैं अनेक तरह की अच्छी, अच्छी पुस्तकें तैयार हो चुकी हैं परंतु मेरे जान इस रीति से कोई नहीं लिखी गई इसलिये अपनी भाषा मैं यह नई चाल की पुस्तक होगी, परंतु नई चाल होनें सै ही कोई चीज अच्छी नहीं हो सक्ती बल्कि साधारण रीति सै तो नई चाल मैं तरह, तरह की भूल होनें की संभावना रहती है और मुझको अपनी मंद बुद्धि सै और भी अधिक भूल होनें का भरोसा है इसलिये मैं अपनी अनेक तरह की भूलों सै क्षमा मिलनें का आधार केवल सज्जनों की कृपा दृष्टि पर रखता हूँ .

यह सच है कि नई चाल की चीज देखनें को सबका जी ललचाता है परंतु पुरानी रीति के मन मैं समाये रहनें और नई रीति को मन लगाकर समझनें मैं थोडी महनत होनें सै पहले पहल पढ़नेंवाले का जी कुछ उलझनें लगता है और मन उछट जाता है इस्सै इस्का हाल समझ मैं आनें के लिये मैं अपनी तरफ से यहाँ कुछ खुलासा किया चाहता हूँ—

पहलै तो पढ़नेंवाले इस पुस्तक मैं सौदागर की दुकान का हाल पढ़ते ही चकरावेंगे क्योंकि अपनी भाषा मैं अब तक वार्तारूपी जो पुस्तकें लिखी गई हैं उन्मैं अक्सर नायक, नायका वगैरै का हाल ठेटसै सिलसिले-वार (यथाक्रम) लिखा गया है जैसे "कोई राजा, बादशाह, सेठ साहूकार का लड़का था उस्के मन मैं इस बात सै यह रुचि हुई और उस्का यह परिणाम निकला" ऐसा सिलसिला इस्मैं कुछ भी नहीं मालूम होता . "लाला मदनमोहन एक अंग्रेजी सौदागर की दुकान मैं अस्बाब देख रहे हैं लाला ब्रजकिशोर, मुंशी चुन्नीलाल और मास्टर शिंभूदयाल उनके साथ हैं ." इन्मैं मदनमोहन कौन, ब्रजकिशोर कौन, चुन्नीलाल कौन और शिंभूदयाल

कौन है ? इन्का स्वभाव कैसा है ? परस्पर संबंध कैसा है ? हरेक की हालत क्या है ? यहाँ इससमय किस लिए इकट्ठे हुए हैं ? यह बातैं पहलै सै कुछ भी नहीं जताई गईं ! हाँ पढ़नें वाले धैर्य सै सब पुस्तक पढ़ लेंगे तो अपनें, अपनें मौके पर सब भेद खुल्ता चला जायगा और आदि सै अंत तक सब मेल मिल जायगा परंतु जो साहब इतना धैर्य न रक्खेंगे वह इस्का मतलब भी नहीं समझ सकैंगे .

अलबत्ता किसी, किसी नाटक मैं यह रीति पहलै से पाई जाती है परंतु उस्की इस्की लिखने की रीति जुदी जुदी है . नाटकों मैं जिस्का बचन होता है उस्का नाम आदि मैं लिख देते हैं और वह पैरेग्राफ (१) उस्का बचन समझा जाता है परंतु इस्मैं ऐसा नहीं होता इस्मैं ऐसे "......" चिन्ह (अर्थात् इन्वरटेडकोमा या कुटेशन) के भीतर कहनें वाले का बचन लिखा जाता है और कहनेंवाले का नाम बचन के बीच मैं या अंत मैं जहाँ पुस्तक रचनेंवाले को जगह मिल्ती है, वह लिख देता है अथवा नाम लिखे बिना पढ़नेंवाले को कहनेंवाले का बचन मालूम हो सके तो नहीं भी लिखता . एक आदमी का बचन बहुत करके एक पैरेग्राफ मैं पूरा होता है परंतु कहीं, कहीं किसी, किसी के बचन मैं और और विषय आ जाते है तो ऐसे "चिन्ह (इन्वरटेडकोमा) सै पहला बचन पूरा किए बिना दूसरे पैरेग्राफ के आदि सै ऐसे "चिन्ह लगाकर उसी का बचन जारी रक्खा जाता है, और बचन के बीच मैं दूसरे का बचन आ जाता है तो वहाँ उस बचन को अलग दिखानें के लिए उस्पर भी अक्सर इन्वरटेडकोमा लगा दिये जाते हैं, परंतु जो बचन

---

(१) पैरेग्राफ के प्रारंभ मैं हर जगह नए सिरसै जरा सी लकीर छोड़कर लिखा जाता है और वह पूरा होता है वहाँ बाकी लकीर खाली छोड़ दी जाती है, जैसे यह पैरेग्राफ "अलबत्ता" से प्रारंभ होकर "होते हैं" पर समाप्ति हुआ है .

ऐसे " " चिन्हों के भीतर नहीं होते वह पुस्तक रचनैंवाले की तरफ़ सै होते हैं.

और चिन्हों मैं ऐसा, (कोमा) किंचित् बिश्राम, ऐसा; (सिमी-कालेन) अथवा : (कोलन) अर्धबिश्राम, ऐसा. (फूलिस्टोप) पूर्ण बिश्राम, ऐसा ? (इंट्रोगेशन) प्रश्न की जगह, ऐसा ! (एक्स क्लेमेशन) आश्चर्य अथवा संबोधन वग़ैरै के जो शब्द जोर देकर बोलनें चाहियें उन्के आगे ऐसा—चिन्ह बात अधूरी छोड़नें के समय लगाया जाता है और ऐसे ( ) चिन्हों (पेरेनथिसेस) के भीतर पहले पद का खुलासा अर्थ या चल्ते प्रसंग मैं कोई दूतरफी अथवा विशेष बात जतानी होती है वह लिख देते हैं.

इस पुस्तक मैं दिल्ली के एक कल्पित (फ़र्ज़ी) रईस का चित्र उतारा गया है और उस्को जैसे का तैसा (अर्थात् स्वाभाविक) दिखानें के लिए संस्कृत अथवा फारसी अरबी के कठिन, कठिन शब्दों की बनाई हुई भाषा के बदले दिल्ली के रहनेवालों की साधारण बोलचाल पर ज्यादः दृष्टि रक्खी गई है. अलबत्ता जहाँ कुछ बिद्या बिषय आ गया है वहाँ बिबस होकर कुछ, कुछ शब्द संस्कृत आदि के लेने पड़े हैं परंतु जिनको ऐसी बातों के समझने मैं कुछ झमेल मालूम हो उन्की सुगमता के लिये ऐसे प्रकरणों पर ऐसा × चिन्ह लगा दिया गया है जिस्सै उन प्रकरणों को छोड़कर हरेक मनुष्य सिलसिलेवार बृत्तांत पढ़ सक्ता है.

इस पुस्तक मैं संस्कृत, फारसी, अंग्रेजी की कविता का तर्जुमा अपनी भाषा के छंदों मैं हुआ है परंतु छंदों के नियम और दूसरे देशों का चाल चलन जुदा होने की कठिनाई से पूरा तर्जुमा करने के बदले कहीं, कहीं भावार्थ ले लिया गया है.

अब इस पुस्तक के गुण दोषों पर विशेष विचार करनें का काम बुद्धिमानों की बुद्धि पर छोड़कर मैं केवल इतनी बात निवेदन किया चाहता हूँ कि कृपा करके कोई महाशय पूरी पुस्तक बाँचे बिना अपना बिचार

प्रगट करनें की जल्दी न करैं और जो सज्जन इस विषय मैं अपना विचार प्रगट करैं वह कृपा करके उस्की एक नकल मेरे पास भी भेज दें (यदि कोई अखबारवाला उस अंक की क़ीमत चाहेगा तो वह तत्काल उस्के पास भेज दी जायगी) जो सज्जन तरफ़दारी (पक्षपात) छोड़कर इस विषय मैं स्वतंत्रता सै अपना विचार प्रगट करैंगे मैं उन्का बहुत उपकार मानूँगा .

इस पुस्तक के रचनें मैं मुझको महाभारतादि संस्कृत, गुलिस्तां वगैरे फ़ारसी, स्पेक्टेटर, लार्डबेकन, गोल्डस्मिथ, विलियम कूपर आदि के पुरानें लेखों और स्त्री बोध आदि के बर्तमान रिसालों सै बड़ी सहायता मिली है इसलिये इन् सबका मैं बहुत उपकार मान्ता हूँ और दीनदयालु परमेश्वर की निर्हेतुक कृपा का सच्चे मन सै अमित उपकार मान कर लेख समाप्त करता हूँ .

सज्जनों का कृपाभिलाषी

श्रीनिवासदास, दिल्ली .

———

परीक्षागुरु

प्रकरण १

सौदागर की दुकान.

चतुर मनुष्य को जितनें खर्च मैं अच्छी प्रतिष्ठा अथवा धन मिल सक्ता है मूर्ख को उस्सै अधिक खर्चनें पर भी कुछ नहीं मिलता.

लार्ड चेस्टरफील्ड.

लाला मदनमोहन एक अंग्रेज़ी सौदागर की दुकान मैं नई, नई फाशन का अंग्रेजी अस्बाब देख रहे हैं लाला ब्रजकिशोर, मुंशी चुन्नीलाल, और मास्टर शिंभूदयाल उन्के साथ हैं .

"मिस्टर ब्राइट ! यह बड़ी काच की जोड़ी हमको पसंद है इस्की क़ीमत क्या है ?" लाला मदनमोहन नें सौदागर सै पूछा .

"इस साथ की जोड़ी अभी तीन हजार रुपे मैं हमनें एक हिंदुस्थानी रईस को दी है लेकिन आप हमारे दोस्त हैं आप को हम चार सौ रुपे कम कर देंगे ."

"निस्संदेह ये काच आप के कमरे के लायक़ हैं इन्के लगनें सै उस्की शोभा दुगुनी हो जायगी" शिंभूदयाल बोले .

"आहा ! मैं तो इन्के चोखटों की कारीगरी देखकर चकित हूँ ! ऐसे अच्छे फूल पत्ते बनाये हैं कि सच्चे बेल बूटों को मात करते हैं, जी चाहता है कि कारीगर के हाथ चूम लूं" मुंशी चुन्नीलाल नें कहा .

"इन्के बिना आप का इस्समय कौन्सा काम अटक रहा है ?" लाला ब्रजकिशोर कहनें लगे "खेल तमाशे की चीज़ों सै भोले भाले आदमियों का जी ललचाता है वह सौदागर की सब दुकान को अपनें घर ले जाया

चाहते हैं परंतु बुद्धिमान अपनी ज़रूरी चीज़ों के सिंवाय किसी पर दिल नहीं दौड़ाते" लाला ब्रजकिशोर बोले.

"ज़रूरत भी तो अपनी, अपनी रुचि के समान अलग, अलग होती है" मुंशी चुन्नीलाल नें कहा.

"और जब दरिद्रियों की तरह धनवान भी अपनी रुचि के समान काम न कर सकैं तो फिर धनी और दरिद्रियों मैं अंतर ही क्या रहा?" मास्टर शिंभूदयाल नें पूछा.

"नामुनासिब काम करके कोई नुसकान सै नहीं बच सक्ता—

"धनी दरिद्री सकल जन हैं जग के आधीन।
चाहत धनी विशेष कछु तासों ते अति दीन।"

लाला ब्रजकिशोर कहनें लगे. "मुनासिब रीति से थोड़े खर्च मैं सब तरह का सुख मिल सक्ता है परंतु इन्तज़ाम और काम के सिलसिले बिना बड़ी सै बड़ी दौलत भी ज़रूरी खर्चों को पूरी नहीं हो सक्ती. जब थोथी बातों मैं बहुत सा रुपया खर्च हो जाता है तो ज़रूरी कामों के लिये पीछे सै ज़रूर तकलीफ़ उठानी पड़ती है."

"चित्त की प्रसन्नता के लिये मनुष्य सब काम करते हैं फिर जिन चीज़ों के देखने सै चित्त प्रसन्न हो उन्का खरीदना थोथी बातों में कैसे समझा जाय?" मुंशी चुन्नीलाल ने कहा.

"चित्त प्रसन्न रखने की यह रीति नहीं है चित्त तो उचित व्यवहार सै प्रसन्न रहता है" लाला ब्रजकिशोर नें जवाब दिया.

"परंतु निरी फ़िलासफी की बातों सै भी तो दुनियादारी का काम नहीं चल सक्ता" लाला मदनमोहन नें दुनियादार बन कर कहा.

"बलायत की सब उन्नति का मूल लार्ड बेकन की यह नीति है कि "केवल बिचार ही बिचार मैं मकड़ी के जाले न बनाओ आप परीक्षा करके हरेक पदार्थ का स्वभाव जानों" मिस्टर ब्राइट नें कहा.

"क्यों साहब! ये काच कहाँ के बने हुए हैं?" मुंशी चुन्नीलाल नें सौदागर सै पूछा.

"फ्रांस के सिवाय ऐसी सुडोल चीज़ कहीं नहीं बन सक्ती. जब से ये काच यहां आए हैं हर वक्त देखनेंवालों की भीड़ लगी रहती है और कई कारीगर तो इन्का नक्शा भी खींच ले गए हैं."

"अच्छा जी ! इन्की क़ीमत हमारे हिसाब मैं लिखो और ये हमारे यहां भेज दो."

"मैंनें एक हिंदुस्थानी सौदागर की दुकान मैं इसी मेल के काच देखे हैं उन्के चौखटों मैं निस्संदेह ऐसी कारीगरी नहीं है परंतु क़ीमत मैं वह इन्से बहुत ही सस्ते हैं" लाला ब्रजकिशोर बोले.

"मैं तो अच्छी चीज़ का गाहक हूँ चीज़ पसंद आये पीछे मुझको क़ीमत की कुछ परवा नहीं रहती."

"अंग्रेजों की भी यही चाल है" मास्टर शिंभूदयाल नें कहा.

"परंतु सब बातों मैं अंग्रेजों की नक़ल करनी क्या ज़रूर है?" लाला ब्रजकिशोर नें जवाब दिया.

"देखिये ! जब से लाला साहब यह अमीरी चाल रखनें लगे हैं लोगों मैं इन्की इज़्ज़त कितनी बढ़ती जाती है!" मास्टर शिंभूदयाल नें कहा.

"सर सामान से सच्ची इज़्ज़त नहीं मिल सक्ती सच्ची इज़्ज़त तो सच्ची लियाक़त से मिल्ती है" लाला ब्रजकिशोर कहनें लगे "और जब कोई मनुष्य बुद्धि के विपरीत इस रीति से इज़्ज़त चाहता है तो उस्का परिणाम बड़ा ही भयंकर होता है."

"साहब ! इतनी बात तो मैं हिम्मत से कहता हूँ कि जो इस साथ की जोड़ी इस शहर मैं दूसरी जगह निकल आवेगी तो मैं ये काच मुफ्त नज़र करूँगा" मिस्टर ब्राइट नें ज़ोर देकर कहा.

"कदाचित इस साथ की जोड़ी दिल्ली भर मैं न होगी परंतु क़ीमत की कम्ती बढ़ती भी तो चीज़ की हैसियत के बमूजिब होनी चाहिये" लाला ब्रजकिशोर नें जवाब दिया..

"जिस तरह मोतियों के हिसाब मैं किसी दाने की तोल ज़रा ज्यादः होनें सै चौ बहुत ज्यादः बढ़ जाती है इसी तरह इन शीशों की क़ीमत का भी हाल है मुझको लाला साहब सै ज्यादः नफ़ा लेना मंजूर न था इस वास्तै मैंने पहले ही असली क़ीमत मैं चार सौ रुपे कम कर दिये इस पर भी आप को कुछ संदेह हो तो आप तीसरे पहर मास्टर साहब को यहाँ भेज दें मैं बीजक दिखलाकर इन्सै क़ीमत ठैरा लूँगा ."

"अच्छा ! मास्टर शिंभूदयाल मदरसे सै लोटती बार आप के पास आयँगे पर ये काच हमसै पूछे बिना आप और किसी को न दें" लाला मदनमोहन नें कहा .

इस बात सै सब अपनें, अपनें जी मैं राजी हुए . ब्रजकिशोर नें इतना अवकाश बहुत समझा मदनमोहन के मन मैं हाथ सै चीज़ निकल जानें का खटका न रहा, चुन्नीलाल और शिंभूदयाल को अपनें कमीशन सही करनें का समय हाथ आया और मिस्टर ब्राइट को लाला मदनमोहन की असली हालत जान्नें के लिये फ़ुरसत मिली .

"बहुत अच्छा" मिस्टर ब्राइट ने जवाब दिया "लेकिन आप को फ़ुरसत हो तो आप एक बार यहाँ फिर भी तशरीफ़ लायँ हाल मैं नई नई तरह की बहुत सी चीज़ैं बलायत सै ऐसी उम्दा आई हैं जिन्को देख कर आप बहुत खुश होंगे परंतु अभी वह खोली नहीं गईं हैं और इससमय मुझको रुपे की कुछ ज़रूरत है इन चीजों की क़ीमत के बिल का रुपया देना है आप महरबानी करके अपनें हिसाब मैं सै थोड़ा रुपया मुझको इस्समय भेज दें तो बड़ी इनायत हो ."

इस बचन मैं मिस्टर ब्राइट अपनें अस्बाब की खरीदारी के लिये लाला मदनमोहन को ललचाता है परंतु अपनें रुपे के वास्तै मीठा तक़ाज़ा भी करता है . चुन्नीलाल और शिंभूदयाल के कारण उस्को मदन-मोहन के लेन देन मैं बहुत कुछ फ़ायदा हुआ परंतु उसके पचास हज़ार रुपे इस्समय मदनमोहन की तरफ़ बाक़ी हैं और शहर मैं मदनमोहन की बाबत

तरह तरह की चर्चा फैल रही हैं बहुत लोग मदनमोहन को फ़िज़ूल ख़र्च, दिवालिया बताते हैं और हक़ीक़त मैं मदनमोहन का ख़र्च दिन पर दिन बढ़ता जाता है इस्सै मिस्टर ब्राइट को अपनी रकम का खटका है इसीलिये उस्ने इन काचों का सौदा इस समय अटकाया है और तीसरे पहर मास्टर शिंभूदयाल को अपनें पास बुलाया है.

"रुपया! ऐसी जल्दी!" लाला ब्रजकिशोर नें मिस्टर ब्राइट को वहम मैं डालनें के लिये आश्चर्य सै इतनी बात कहकर मन मैं कहा "हाय! इन् कारीगरी की निरर्थक चीज़ों के बदले हिंदुस्थानी अपनी दौलत वृथा खोये देते हैं."

"सच है पहले आप अपना हिसाब तैयार करायँ, उस्को देखकर अंदाज सैं रुपे भेजे जांयगे" मुंशी चुन्नीलाल नें बात बनाकर कहा.

"और बहुत जल्दी हो तो बिल करके काम चला लीजिए, जब तक कागज के घोड़े दौड़ते हैं रुपे की क्या कमीं है?" ब्रजकिशोर बीच मैं बोल उठे.

"अच्छा! मैं हिसाब अभी उतरवाकर भेजता हूं मुझको इस्समय रुपे की बहुत ज़रूरत है" मिस्टर ब्राइट नें कहा.

"आपनें साढ़े नो बजे मिस्टर रसल को मुलाक़ात के लिये बुलाया है इस वास्तै अब वहां चलना चाहिये" मास्टर शिंभूदयाल नें याद दिवाई.

"अच्छा मिस्टर ब्राइट! इन् काचों की याद रखना और नया अस्बाब खुलै जब हमको ज़रूर बुला लेना" कहकर लाला मदनमोहन नें मिस्टर ब्राइट सै हाथ मिलाया और अपनें साथियों समेत जोड़ी की एक निहायत उम्दा वलायती फिटन मैं सवार होकर रवाने हुए.

जब बग्गी कंपनी बाग़ मैं पहुंची तो सबेरे का सुहावना समय देखकर सब का जी हरा हो गया. उस्समय की शीतल, मंद, सुगंधित हवा बहुत प्यारी लगती थी, वृक्षों पर हर तरह के पक्षी मीठे मीठे सुरों सैं चहचहा रहे थे? नहर के पानी की धीरी, धीरी आवाज़ कान को बहुत

अच्छी मालूम होती थी ! पन्ने सी हरी घास की भूमि पर मोती सी ओस की बूंदें बिखर रही थीं ! और तरह, तरह की फुलवाड़ी हरी मखमल मैं रंग रंग के बूंटों की तरह बड़ी बहार दिखा रही थी; इस स्वाभाविक शोभा को देखकर लाला ब्रजकिशोर नें मदनमोहन सै थोड़ी देर वहां ठैरनें के वास्ते कहा .

इस्समय मुंशी चुन्नीलाल नें जेब सै निकालकर घड़ी मैं चाबी दी और घड़ी देखकर घबराट सै कहा "ओ ! हो ! नो पर बीस मिनिट चले गए तो अब मकान को जल्दी चलना चाहिये ."

निदान लाला मदनमोहन की बग्गी मकानपर पहुंची और ब्रजकिशोर उन्सै रुखसत होकर अपनें घर गए .

प्रकरण २

अकाल मैं अधिक मास ।

अप्रापति के दिनन मैं खर्च होत अविचार ।
घर आवत है पाहुनो बणिज न लाभ लगार ॥ वृंद ।

"हैं अभी तो यहाँ के घंटे मैं पोनें नो ही बजे हैं तो क्या मेरी घड़ी आध घंटे आगे थी ?" मुंशी चुन्नीलाल नें मकान पर पहुँचते ही बड़े घंटे की तरफ़ देखकर कहा. परंतु ये उस्की चालाकी थी उसनें ब्रजकिशोर सै पीछा छुड़ानें के लिये अपनी घड़ी चाबी देनें के बहानें सै आध घंटे आगे कर दी थी !

"कदाचित ये घंटा आध घंटे पीछे हो" मास्टर शिंभूदयाल नें बात साध कर कहा.

"नहीं, नहीं ये घंटा तोप से मिला हुआ है" लाला मदन-मोहन बोले.

"तो लाला ब्रजकिशोर साहब की लच्छेदार बातैं नाहक अधूरी रह गईं ?" मुंशी चुन्नीलाल नें कहा.

"लाला ब्रजकिशोर की बातैं क्या हैं चकाबू का जाल है वह चाहते हैं कि कोई उन्के चक्कर सै बाहर न निकलनें पाय" मास्टर शिंभूदयाल नें कहा.

"मैं यों तो ये काच लेता या न लेता पर अब उन्की ज़िद सै अदबद कर लूँगा."

"निस्संदेह जब वे अपनी ज़िद नहीं छोड़ते तो आप को अपनी बात हारनी क्या ज़रूर है ?" मुंशी चुन्नीलाल नें छींटा दिया.

"हितोपदेश मैं कहा है

"आज्ञालोपी सुतहु कों क्षमैं न नृपति विनीत ।
को विशेष नृप, चित्र मैं जो न गहे यह रीति" ॥*

पंडित पुरुषोत्तमदास नें मिल्ती मैं मिलाकर कहा.

"बहुत पढ़नें लिखनें सै भी आदमी की बुद्धि कुछ ऐसी निर्बल हो जाती है कि बड़े बड़े फिलासफर छोटी, छोटी बातों मैं चक्कर खाने लगते हैं" मास्टर शिंभूदयाल कहनें लगे. "सर आइजक न्यूटन कितनी ही बार खाना खाकर भूल जाते थे, जरमन का प्रसिद्ध विद्वान लेसिंग एक बार बहुत रात गए अपनें घर आया और कुंदा खड़काने लगा, नोकर नें ग़ैर आदमी समझ कर भीतर सै कहा कि "मालिक घर मैं नहीं हैं कल आना" इस्पर लेसिंग सचमुच लौट चला !!! इटली का मारीनी नामी कवि एक दिन कविता बनानें मैं ऐसा मग्न हुआ कि अंगीठी सै उस्का पैर जल गया तो भी उसै कुछ ख़बर न हुई !"

---

* आज्ञा भंगकरान् राजा न क्षमेत सुतानपि ।
विशेषः कोनु राज्ञश्च राज्ञश्चित्रगतस्य च ॥

"लाला ब्रजकिशोर साहब का भी कुछ, कुछ ऐसा ही हाल है यह सीधी, सीधी बातों को बिचार ही बिचार मैं खेंच तान कर ऐसी पेचीदा बना लेते हैं कि उन्का सुलझाना मुश्किल पड़ जाता है" मुंशी चुन्नीलाल बोले.

"मैंनें तो मिस्टर ब्राइट के रोबरू ही कह दिया था कि कोरी फिलासोफी की बातों सै दुनियादारी का काम नहीं चलता", लाला मदनमोहन नें अपनीं अक़्लमंदी ज़ाहर की.

इतनें मैं मिस्टर रसल की गाड़ी कमरे के नीचे आ पहुँची और मिस्टर रसल खट-खट करते हुए कमरे मैं दाखिल हुए, लाला मदनमोहन नें मिस्टर रसल सै शेकिंगहैंड करके उन्हें कुर्सी पर बिठाया और मिज़ाज की ख़ैरोआफ़ियत पूछी.

मिस्टर रसल नील का एक हौसलेमंद सोदागर है परंतु इस्के पास रुपया नहीं है, यह नील के सिवाय रुई और सन वग़ैरे का भी कुछ कुछ व्यापार कर लिया करता है इस्का लेन देन डेढ़, पौने दो बरस सै एक दोस्त की सिफ़ारश पर लाला मदनमोहन के यहाँ हुआ है पहले बरस मैं इस्के माल पर लाला मदनमोहन का जितना रुपया लगा था माल की बिक्री सै ब्याज समेत वसूल हो गया, परंतु दूसरे साल रुई की भरती की जिस्मैं सात आठ हज़ार रुपे टूटते रहे इस्का घाटा भरनें के लिये पहले सै दुगनी नील बनवाई जिस्मैं एक तो परता कम बैठा दूसरे माल कलकत्ते पहुँचा उस्समय भाव मंदा रह गया जिस्सै नफ़े के बदले दस, बारह हज़ार इस्मैं टूटते रहे. लाला मदनमोहन के लेन देन सै पहले मिस्टर रसल का लेन देन रामप्रसाद बनारसीदास सै था उन्के आठ हजार रुपे अब तक इस्की तरफ़ बाक़ी थे; जब उन्की मयाद जाने लगी तो उन्होंनें नालिश करके साढ़े ग्यारह हजार की डिक्री इस्पर करा ली अब उन्की इजराय डिक्री मैं इस्का सब कारखाना नीलाम पर चढ़ रहा

है और नीलाम की तारीख मैं केवल चार दिन बाक़ी हैं इस लिये यह बड़े घबराट मैं रुपे का बंदोबस्त करनें के लिये मदनमोहन के पास आया है.

"मेरे मिज़ाज का तो इस्समय कोसों पता नहीं लगता परंतु उस्को ठिकाने लाना आपके हाथ है" मिस्टर रसल नें मदनमोहन के कुशल प्रश्न (मिज़ाजपुर्सी) पर कहा "जो आफ़त एकाएक इस्समय मेरे सिर पर आ पड़ी है उस्को आप अच्छी तरह जान्ते हैं. इस कठिन समय मैं आपके सिवाय मेरा सहायक कोई नहीं है आप चाहैं तो दम भर मैं मेरा बेड़ा पार लगा सक्ते हैं नहीं तो मैं तो इस तूफान मैं ग़ारत हो चुका."

"आप इतने क्यों घबराते हैं ? ज़रा धीरज रखिये" मुंशी चुन्नीलाल नें पहले की मिलावट के अनुसार सहारा लगाकर कहा "लाला साहब के स्वभाव को आप अच्छी तरह जान्ते हैं जहाँ तक हो सकेगा यह आप की सहायता मैं कभी कसर न करेंगे."

"पहले आप मुझे यह तो बताइये कि आप मुझसै किस तरह की सहायता चाहते हैं ?" लाला मदनमोहन नें पूछा.

"मैं इस्समय सिर्फ इतनी सहायता चाहता हूँ कि आप रामप्रसाद बनारसीदास की डिक्री का रुपया चुका दें मुझसै हो सकेगा जहाँ तक मैं आपका सब क़र्ज़ा एक बरस के भीतर चुका दूंगा" मिस्टर रसल नें कहा "मुझको अपनी बरबादी का इतना खयाल नहीं है जितनी आपके क़र्जे की चिन्ता है. रामप्रसाद बनारसीदास की डिक्री मैं मेरी जायदाद बिक गई तो और लेनदार कोरे रह जायँगे और मैंनें इंसालवन्ट होने की दरख़ास्त की तो आप लोगों के पल्ले रुपे मैं चार आनें भी न पड़ेंगे."

"अफ्सोस ! आप की यह हक़ीक़त सुन्कर मेरा दिल आप सै आप उमड़ा आता है" लाला मदनमोहन बोले.

"सच है महाकवि शेक्सपीअर नें कहा है" मास्टर शिंभूदयाल कहने लगे :—

"कोमल- मन होत न किये होत प्रकृति अनुसार।
जों पृथवी हित गगन ते वारिद द्रवति फुहार॥
वारिद द्रवति फुहार द्रवहि मन कोमलताई।
लेत, देत शुभ हेत दोउन को मन हरषाई॥
सब गुन ते उतकृष्ट सकल वैभव को भूषन।
राजहु ते कछु अधिक देत शोभा कोमल मन॥"*

"हज़रत सादी कहते हैं कि "दुर्बल तपस्वी सै कठिन समय मैं उस्के दुःख का हाल न पूछ और पूछै तो उस्के दुःख की दवा कर†" मुंशी चुन्नीलाल नें कहा.

"अच्छा इस रुपे के लिये ये हमारी दिलजमई क्या कर देंगे?" लाला मदनमोहन नें बड़ी गंभीरता सै पूछा.

"हाँ हाँ लाला साह्ब सच कहते हैं आप इस रुपे के लिये हमारी दिलजमई क्या कर देंगे?" मुंशी चुन्नीलाल ने दिलजमई की चर्चा हुए पीछे अपनी सफाई जतानें के लिए मिस्टर रसल सै पूछा.

---

* The quality of mercy is not strained,
It droppeth, as the gentle rain from heaven
Upon the place beneath; it is twice blessed
It blesseth him that gives, and him that takes.
'Tis mightiest in the mightiest, it becomes
The throned monarch better than his crown.
William Shakespeare.

† दरवेशज़ईफ़ हालरा दरखुशकी तंगेसाल मपुर्सके चुनी इल्ला बशर्ते आंकि मरहमे बरेशनिही.

"मैं थोड़े दिन मैं शीशे बरतन का एक कारखाना यहाँ बनाया चाहता हूँ अब तक शीशे बरतन की सब चीज़ें वलायत सै आती हैं इस लिये खर्च और टूट फूट के कारण उन्की लागत बहुत बढ़ जाती है, जो वह सब चीज़ें यहाँ तैयार की जायँगी तो उन्मैं ज़रूर फ़ायदा रहेगा और खुदा नें चाहा तो एक बरस के भीतर भीतर आप की सब रक़म जमा हो जायगी परंतु आपको इस समय इस बात पर पूरा भरोसा न हो तो मेरा नील का कारख़ाना आपकी दिलजमई के वास्तै हाज़िर है" मिस्टर रसल नें जवाब दिया.

"हिंदुस्थान मैं अब तक कलों के कारख़ानें नहीं हैं इस्सै हिंदुस्थानियों को बड़ा नुक्सान उठाना पड़ता है मैं जान्ता हूं कि इस्समय हिम्मत करके जो कलों के कारख़ानें पहले जारी करेगा उस्की ज़रूर फ़ायदा रहेगा" मास्टर शिंभूदयाल नें कहा.

"आपको रामप्रसाद बनारसीदास के सिवाय किसी और का रुपया तो नहीं देना !" मुंशी चुन्नीलाल ने पूछा.

"रामप्रसाद बनारसीदास की डिक्री का रुपया चुके पीछै मुझको लाला साहब के सिवाय किसी की फूटी कौड़ी नहीं देनी रहैगी" मिस्टर रसल नें जवाब दिया ।

परंतु काच का कारखाना बनाने के लिये रुपे कहाँ सै आँयगे ? और लाला मदनमोहन के क़र्ज़े लायक़ नील के कारख़ानें की हैसियत कहाँ है ? इंसालवंट होनें सै लेनदारों के पल्ले चार आने भी न पड़ेंगे यह बात मिस्टर रसल अपनें मुँह सै अभी कह चुका है पर यहाँ इन् बातों की याद कौन दिलावै ?

"इस सूरत मैं रामप्रसाद बनारसीदास की डिक्री का रुपया न दिया जायगा तो उन्की डिक्री मैं इस्का कारख़ाना बिक जायगा और अपनी रक़म वसूल होनें की कोई सूरत न रहैगी" मुंशी चुन्नीलाल नें लाला मदनमोहन के कान मैं झुक कर कहा.

परंतु इस्समय इस्को देनें के लिये अपनें पास नकद रुपया कहाँ है ?" लाला मदनमोहन नें धीरे सै जवाब दिया.

"अब मेरी शर्म आपको है 'वक्त निकल जाता है बात रह जाती है' जो आप इस्समय मुझको सहारा देकर उभार लोगे तो मैं आपका अह-सान जन्म भर नहीं भूलूँगा" मिस्टर रसल नें गिड़गिड़ा कर कहा.

"मैं मन सै तुम्हारी सहायता किया चाहता हूं परंतु मेरा रुपया इस्समय और कामों मैं लग रहा है इस्सै मैं कुछ नहीं कर सक्ता" लाला मदनमोहन नें शर्माते, शर्माते कहा.

'अजी हुज़ूर ! आप यह क्या कहते हैं ? आपके वास्तै रुपे की क्या कमी है ? आप कहैं जितना रुपया इसी समय हाज़िर हो" मास्टर शिंभू-दयाल बोले.

"अच्छा ! मुझसें हो सकेगा जिस तरह दस हज़ार रुपे का बंदोबस्त करके मैं कल तक आपके पास भेज दूंगा आप किसी तरह की चिन्ता न करैं" लाला मदनमोहन नें कहा.

"आपनें बड़ी महरबानी की मैं आपकी इनायत सैं जी गया अब मैं आपके भरोसे बिल्कुल निश्चिंत रहूंगा" मिस्टर रसल नें जाते, जाते बड़ी खुशी सै हाथ मिलाकर कहा. और मिस्टर रसल के जाते ही लाला मदनमोहन भी भोजन करनें चले गए.

प्रकरण ३

संगति का फल

सहबासी बस होत नृप गुण कुल रीति विहाय ।
नृप युवती अरु तरुलता मिलत प्राय संग पाय ॥*

हितोपदेशे ।

लाला मदनमोहन भोजन करके आए उस्समय सब मुसाहब कमरे मैं मौजूद थे. मदनमोहन कुर्सी पर बैठकर पान खानें लगे और इन् लोगों नें अपनी, अपनी बात छेड़ी .

हरगोविंद (पंसारी के लड़के) नें अपनी बग़ल सै लखनऊ की बनी हुई टोपियें निकाल कर कहा "हुज़ूर ये टोपियें अभी लखनऊ सै एक बज़ाज के यहाँ आई हैं सोगात मैं भेजनें के लिए अच्छी हैं पसंद हों तो दो, चार ले आऊँ ?"

"कीमत क्या है ?"

"वह तो पच्चीस, पच्चीस रुपे कहता है परंतु मैं वाजबी ठैरा लूँगा"

"बीस, बीस रुपे मैं आवें तो ये चार टोपियें ले आना ."

"अच्छा ! मैं जाता हूँ अपनें बस पडते तोड़ जोड़ मैं कसर नहा रक्खूँगा" यह कहकर हरगोविंद वहाँ सै चल दिया .

"हुज़ूर ! यह हिना का अतर अजमेर सै एक गंधी लाया है वह कहता है कि मैं हुज़ूर की तारीफ़ सुनकर तरह, तरह का निहायत उम्दा

---

* आसन्नमेव नृपतिर्भजते मनुष्यं विद्याविहीनमकुलीनमसङ्गतं वा ।
प्रायेण भूमिपतयः प्रमदा लताश्च, यः पार्श्वतो बसति तं परिवेष्टयन्ति ॥

अतर अजमेर सै लाता था परंतु रास्ते मैं चोरी हो गई सब माल अस्बाब जाता रहा सिर्फ यह शीशी बची है वह आपकी नज़र करता हूँ" यह कह कर अहमद हुसैन हकीम नें वह शीशी लाला साहब के आगे रख दी.

"जो लाला साहब को मंज़ूर करनें मैं कुछ चारा बिचार हो तो हमारी नज़र करो हम इस्को मंज़ूर करके उस्की इच्छा पूरी करेंगे." पंडित पुरुषोत्तमदास नें बड़ी वजेदारी सै कहा.

"आपकी नज़र तो सिवाय करेले के और कुछ नहीं हो सक्ता मरज़ी हो, मंगवाँय?" हकीम जी नें जवाब दिया.

"करेले तुम खाओ, तुम्हारे घर के खांय हमको मुँह कड़वा करनें की क्या ज़रूरत है? हम तो लाला साहब के कारण नित्य लड्डू उड़ाते हैं और चैन करते हैं" पंडित जी नें कहा.

"लड्डू ही लड्डुओं की बातैं करनी आती हैं या कुछ और भी सीखे हो?" मास्टर शिंभूदयाल नें छेड़ की..

"तुम सरीखे छोकरे मदरसे मैं दो एक किताबें पढ़कर अपनें को अरस्तातालीस समझनें लगते हैं परंतु हमारी बिद्या ऐसी नहीं है तुमको परीक्षा करनी हो तो लो इस काग़ज़ पर अपनें मन की बात लिखकर अपनें पास रहनें दो जो तुमने लिखा होगा हम अपनी बिद्या सै बता देंगे" यह कहकर पंडित जी नें अपने अंगोछे मैं सै काग़ज़ पेनसिल और पुष्टीपत्र निकाल दिया.

मास्टर शिंभूदयाल नें उस कागज़ पर कुछ लिखकर अपने पास रख लिया और पंडित जी अपना पुष्टीपत्र लेकर थोड़ी देर कुंडली खेंचते रहे फिर बोले "बच्चा तुमको हर बात मैं हँसी सूझती है तुमनें कागज़ मैं 'करेला' लिखा है परंतु ऐसी हँसी अच्छी नहीं"

लाला मदनमोहन के कहनें सै मास्टर शिंभूदयाल नें काग़ज़ खोलकर दिखाया तो हक़ीक़त मैं 'करेला' लिखा पाया अब तो पंडित जी की खूब चढ़ बनी मूछों पर ताव दे, देकर खखारने लगे

परंतु पंडित जी नें ये 'करेला' कैसे बता दिया? लाला मदनमोहन के रोबरू आपस की मिलावट सै बकरी का कुत्ता बना देना सहज सी बात थी परंतु पंडित जी का चुन्नीलाल और शिंभूदयाल सै ऐसा मेल न था और न पंडित जी को इतनी बिद्या थी कि उस्के बल सै करेला बता देते. असल बात यह थी कि पंडित जी नें एक काग़ज़ पर काजल लगाकर पुष्टीपत्र मैं रख छोड़ा था जिस्समय पुष्टीपत्र पर काग़ज़ रखकर कोई कुछ लिखता था कलम के दबाव सै काजल के अक्षर दूसरे काग़ज़ पर उतर आते थे फिर पंडित जी कुंडली खेंचती बार किसी ढब सै उस्को देखकर थोड़ी देर पीछे बता देते थे.

"तो हुज़ूर! उस गंधी के वास्तै क्या हुक्म है?" हकीम जी नें फिर याद दिवाई".

"अतर मैं चंदन के तैल की मिलावट मालूम होती है और मिलावट की चीज़ बेचने का सरकार सै हुक्म नहीं है इस वास्तै कह दो शीशी जप्त हुई वह अपना रस्ता ले" पंडित जी शीशी सूंघकर बीच मैं बोल उठे.

"हाँ हकीम जी! आपकी राय मैं उस गंधी का कहना सच है?" लाला मदनमोहन नें पूछा.

"बेशक, अंदाज़ सै तो ऐसा ही मालूम होता है आगे खुदा जाने" हकीम जी बोले

"तो लो यह पचीस रुपे के नोट इस्समय उस्को खर्च के वास्तै दे दो बिदा पीछे सै सामने बुलाकर की जायगी" लाला मदनमोहन नें पचीस रुपे के नोट पाकट सै निकाल दिये.

"उदारता इस्का नाम है" "दयालुता इसे कहते हैं" "सच्चे यश मिलनें की यह राह है" "परमेश्वर इस्सै प्रसन्न होता है" चारों तरफ़ सै वाह वाह की बोछार होनें लगी.

ये बहियाँ मुलाहजे के वास्तै हाज़िर हैं और बहुत सी रकमों का जमा-खर्च आपके हुक्म के बिना अटक रहा है जो अवकाश हो तो इस्समय

कुछ अर्ज़ करूँ ?" लाला जवाहर लाल नें आते ही बस्ता आगे रख कर डरते, डरते कहा .

"लाला जवाहर लाल इतनें बरस सै काम करते हैं परंतु लाला साहब की तबियत, और काग़ज़ दिखानें का मोका अब तक नहीं पहचान्ते" लाला मदनमोहन को सुना कर चुन्नीलाल और शिंभूदयाल आपस मैं काना-फूसी करनें लगे .

"भला इस्समय इन् बातों का कौन प्रसंग है ? और मुझको बार, बार दिक करने सै क्या फायदा है ? मैं पहले कह चुका हूँ कि तुम्हारी समझ मैं आवै जैसै जमाखर्च कर लो मेरा मन ऐसे कामों मैं नहीं लगता" लाला मदनमोहन नें झिड़क कर कहा और जवाहर लाल वहाँ सै उठकर चुपचाप अपने रस्ते लगे .

"चलो अच्छा हुआ ! थोड़े ही मैं टल गई मैं तो बहियों का अटंबार देख कर घबरा गया था कि आज उस्ताद जी घेरे बिना न रहैंगे" जवाहर लाल के जाते ही लाला मदनमोहन खुश हो, हो कर कहनें लगे .

"इन्का तो इतना होसला नहीं है परंतु ब्रजकिशोर होते तो वे थोड़े बहुत उलझे बिना कभी न रहते" मास्टर शिंभूदयाल नें कहा .

"जब तक लाला साहब लिहाज करते हैं तब ही तक उन्का उलझनां उलझाना बन रहा है नहीं तो घड़ी भर मैं अकल ठिकाने आ जायगी" मुंशी चुन्नीलाल बोले .

"हुज़ूर ! मैं लाला हरदयाल साहब के पास हो आया उन्होंने बहुत, बहुत करकै आप की खैरोआफ़ियत पूछी है और आज शाम को आप सै बाग मैं मिलनें का करार किया है" हरकिसन दलाल ने आकर कहा .

"तुम गए जब वो क्या कर रहे थे ?" लाला मदनमोहन ने खुश होकर पूछा .

"भोजन करके पलंग पर लेटे ही थे आप का नाम सुनकर तुर्त उठ आए और बड़े जोश सै आप की खैरोआफ़ियत पूछनें लगे ."

"मैं अच्छी तरह जान्ता हूँ वे मुझको प्राण सै भी अधिक समझते हैं" लाला मदनमोहन नें पुलकित होकर कहा.

"आप की चाल ही ऐसी है जो एक बार मिल्ता है हमेशे के लिये चेला बन् जाता है" मुंशी चुन्नीलाल ने बढ़ावा देकर कहा.

"परंतु कानूनीबंदे इस्सै अलग हैं" मास्टर शिंभूदयाल ब्रजकिशोर की तरफ़ इशारा करके बोले.

"लीजिये ये टोपियाँ अठारह, अठारह रुपे मैं ठैरा लाया हूं" हरगोविंद नें लाला मदनमोहन के आगे चारों टोपियें रखकर कहा.

"तुमने तो उस्की आँखों मैं धूल डाल दी! अठारह अठारह रुपे मैं कैसे ठैरा लाये? मुझको तो ये बाईस, बाईस रुपे सै कम की किसी तरह नहीं जचती" लाला मदनमोहन नें हरगोविंद का हाथ पकड़कर कहा.

"मैंने उस्को आगे का फ़ायदा दिखाकर ललचाया और बड़ी, बड़ी पट्टियें पढ़ाईं तब उस्नें लागत मैं दो, दो रुपे कम लेकर आपके नाम से ये टोपियें दीं हैं"

"अच्छा! यह लाला हरकिशोर आते हैं इन्सै तो पूछिये ऐसी टोपी कितनें, कितनें मैं ला देंगे?" दूर सै हरकिशोर बज़ाज को आते देखकर पंडित पुरुषोत्तम ने कहा.

"ये टोपियें हरनारायण बजाज् के हाँ कल लखनऊ सै आई हैं और बाज़ार मैं बारह, बारह रुपे को बिकी हैं पर यहाँ तो तेरह तेरह मैं आई होंगी" हरकिशोर नें जवाब दिया.

"तुम हमें पंदरह, पंदरह रुपे मैं ला दो" हरगोविंद नें झुँझला कर कहा.

"मैं अभी लाता हूँ तुम्हारे मन मैं आवे जितनी ले लेना"

"ला चुके, ला चुके लानें की यही सूरत है?" हरगोविंद नें बात उड़ानें के वास्ते कहा

"क्यों ? मेरी सूरत को क्या हुआ ? मैं अभी टोपियाँ लाकर तुम्हारे साम्ने रख देता हूँ" हरकिशोर नें हिम्मत सै जवाब दिया।

"तुम टोपियें क्या लाओगे ? तुम्हारी सूरत पर खिसियानपन अभी से छा गया !" हरगोविंद ने मुस्करा कर कहा.

"मुझको नहीं मालूम था कि मेरी सूरत मैं दर्पण की खासियत है" हरकिशोर नें हँसकर जवाब दिया.

"चलो चुप रहो क्यों थोथी बातें बनाते हो ?" मुंशी चुन्नीलाल रोकनें के वास्तै भस्म मैं बोले.

"बहुत अच्छा ! अब मैं टोपी लाये पीछे ही बात करूँगा" यह कह कर हरकिशोर वहाँ सै चल दिये.

"यहाँ के दुकानदारों मैं यह बड़ा ऐब है कि जलन के मारे दूसरे के माल को बारह आने का जाच देते हैं" मुंशी चुन्नीलाल नें कहा.

"और किसी समय मुक़ाबला आ पड़े तो अपनी गिरह सै घाटा भी दे बैठते हैं" मास्टर शिंभूदयाल बोले.

"न जानें लोगों को अपनी नाक कटा कर औरों की बदशगूनी करने मैं क्या मजा आता है" हकीम जी नें कहा.

"और जो हरगोविंद कुछ ठगा आया होगा तो क्या मैं इन्के पीछे उस्का मन बिगाड़ूँगा" लाला मदनमोहन बोले.

"आप की ये ही बातैं तो लोगों को बेदाम गुलाम बना लेती हैं" मुंशी चुन्नीलाल नें कहा.

"कुछ दिन सै यहाँ ग्वालियर के दो गवैये निहायत अच्छे आए हैं मरज़ी हो दो घड़ी के वास्तै आज की मजलिस मैं उन्हैं बुला लिया जाय" हरकिसन दलाल नें पूछा.

"अच्छा ! बुला लो तुम्हारी पसंद हैं तो जरूर अच्छे होंगे" मदनमोहन नें कहा

"लखनऊ की अमीरजान भी इन दिनों यहीं है इस्के गाने की बड़ी तारीफ़ सुनी गई है पर मैंने अपने कान सै अब तक उस्का गाना नहीं सुना" हकीम जी बोले.

"अच्छा! आपके सुन्ने को हम उसे भी यहाँ बुलाये लेते हैं पर उस्के गाने मैं समा न बंधा तो उस्के बदले आपको गाना पड़ेगा!" लाला मदनमोहन ने हँस कर कहा.

"सच तो ये है कि आपके सबब सै दिल्ली की बात बन रही है जो गुणी यहाँ आता है कुछ न कुछ ज़रूर ले जाता है आप न होते तो उन बिचारों को यहाँ कौन पूछता? आपकी इस उदारता सै आप का नाम बिक्रम और हातम की तरह दूर, दूर तक फैल गया है और बहुत लोग आप के दर्शनों की अभिलाषा रखते हैं" मुंशी चुन्नीलाल ने छींटा दिया.

इतने मैं हरकिशोर टोपी लेकर आ पहुँचे और बारह, बारह रुपे मैं खुशी सै देने लगे.

"सच कहो तुमने इस्मैं अपनी गिरह का पलोथन क्या लगाया है?" शिभूंदयाल ने पूछा.

"पलोथन लगानें की क्या ज़रूरत थी मैं तो इस्मैं लाला साहब सै कुछ इनाम लिया चाहता हूं" हरकिशोर ने जवाब दिया.

"मुझको टोपियें लेनी होती तो मैं किसी न किसी तरह सै आप ही तुम्हारा घाटा निकालता पर मैं तो अपनी ज़रूरत के लायक़ पहलै ले चुका" लाला मदनमोहन ने रुखाई सै कहा.

"आपको इन्की कीमत मैं कुछ संदेह हो तो मैं असल मालिक को रोबरू कर सक्ता हूँ?"

"जिस गाँव-नहीं जाना उस्का रस्ता पूछना क्या जरूर"

"तो मैं इन्हैं ले जाउँ?"

"मैंने मंगाई कब थी जो मुझसै पूछते हो" यह कह कर लाला मदनमोहन नें कुछ ऐसी त्योरी बदली कि हरकिशोर का दिल खट्टा हो गया और लोग तरह, तरह की नकलैं करके उस्का ठट्ठा उड़ानें लगे.

हरकिशोर उस्समय वहाँ सैं उठ कर सीधा अपनें घर चला गया पर उस्के मन मैं इन् बातों का बड़ा खेद रहा.

प्रकरण ४

मित्र-मिलाप

दूरहिसों कर बढ़ाय, नयननते जल बहाय,
आदर सों ढिग बुलाय अर्धासन देत सो।
हित सों हिय मैं लगाय, रुचि सम बाणी बनाय,
कहत सुनत अति सुभाय, आनंद भरि लेत जो।
ऊपर सों मधु समान, भीतर हलाहल जान,
छल मैं पंडित महान, कपटको निकेत वो।
ऐसो नाटक विचित्र, देख्यो ना कबहु मित्र,
दुष्टन कों यह चरित्र, सिखवे को हेत को? *

हितोपदेश.

---

* दूरा दुच्छ्रितपाणिरार्द्रनयनः प्रात्सारिताद्धासनो।
गाढालिङ्गनतत्परः प्रियकथाप्रश्नेषु दत्तादरः ॥
अन्तर्भूतविषो वहिर्मधुमयश्चातीव मायापटुः।
कोनामायमपूर्वनाटकविधिर्यः शिक्षितोदुर्जनैः ॥१॥

लाला मदनमोहन को हरदयाल सै मिलनें की लालसा मैं दिन पूरा करना कठिन हो गया वह घड़ी, घड़ी घंटे की तरफ़ देखते थे और उख-ताते थे. जब ठीक चार बजे अपने मकान सै सवार होकर मिस्तरीख़ानें मैं पहुँचे यहाँ तीन बग्गियें लाला मदनमोहन की फ़र्मायश सै नई चाल की बन रही थीं उन्के लिये बहुत सा सामान बलायत सै मँगाया गया था और मुंबई के दो कारीगरों की राह सै वह बनाई जाती थीं. लाला मदन-मोहन नें कह रक्खा था "कि चीज़ अच्छी बने खर्च की कुछ नहीं अटकी जो होगा हम करेंगे" निदान लाला मदनमोहन इन बग्गियों को देख भाल कर वहाँ सै आगा हसन जान के तबेले मैं गये और वहाँ तीन घोड़े पाँच हजार, पाँच सो रुपे मैं लेने करके वहाँ सै सीधे अपनें बाग़ 'दिलपसंद' को चले गये.

यह बाग़ सब्ज़ी मंडी सै आगै बढ़ कर नहर की पटड़ी के किनारे पर था इस्की रविशों के दोनों तरफ़ रेलिया की क़तार, सुहावनी क्यारियों मैं रंग, रंग के फूलों की बहार, कहीं हरी, हरी घास का सुहावना फ़र्श, कहीं घनघोर वृक्षों की गहरी छाया, कहीं बनावट के झरनें, और बेट, कहीं पेड़ और टट्टियों पर बेलों की लपेट एक तरफ को चिड़ियाख़ानें मैं तरह, तरह के पक्षी चहचहा रहे थे दूसरी तरफ़ को संगमरमर के एक कुंड मैं तरह, तरह के जलचर अपना रंग ढंग दिखा रहे थे बाग़ के बीच मैं एक बड़ा कमरा हवादार बहुत अच्छा बना हुआ था उस्के चारों तरफ़ सगमरमर का साईवान और साईवान के गिर्द फव्वारों की क़तार लगी थी जिस समय ये फव्वारे छूटते थे जेठ वैसाख को सावन भादों समझकर मोर नाच उठते थे बीच के कमरे मैं रेशमी ग़लीचे की बड़ी उम्दा बिछायत थी और बढ़िया साठन की मढ़ी हुई सुनहरी कौंच, कुर्सियें जगह, जगह मौक़े सै रक्खी थीं. दीवार के सहारे संगमरमर की मेज़ों पर बड़े, बड़े आठ काच आम्नें साम्नें लगे हुए थे. छत मैं बहुमूल्य झाड़ लटक रहे थे. गोल, बैज़ई और चोखूँटी मेज़ों पर फूलों के गुलदस्ते, हाथी

दांत, चंदन, आबनूस, चीनी, सीप और काच वग़ैरे के उम्दा उम्दा खिलोनें मिसल सै रक्खे थे, चांदी की रकेबियों मैं इलायची, सुपारी चुनी हुई थी . समय, तारीख, वार, महीना बतानें की घड़ी, हारमोनियम बाजा, अंटा खेलने की मेज़, अलबम्, सैरबीन, सितार और शतरंज वगैरे मन बहलाने का सब सामान अपनें, अपनें ठिकानें पर रक्खा हुआ था . दीवारों पर गच के फूल पत्तों का सादा काम अबरख की चमक सै चांदी के डले की तरह चमक रहा था और इसी मकान के लिये हजारों रुपे का सामान हर महीने नया ख़रीदा जाता था .

इस्समय लाला मदनमोहन को कमरे मैं पांव रखते ही विचार आया कि इस्के दरवाज़ों पर बढ़िया साठन के पर्दे अवश्य होनें चाहियें उसी समय हरकिशोर के नाम हुक्म गया कि तरह, तरह की बढ़िया साठन लेकर अभी चले आओ . हरकिशोर (नें) समझा कि "अब पिछली बातों के याद आने सै अपने जी मैं कुछ लज्जित हुए होंगे चलो सबेरे का भूला साँझ को घर आ जाय तो भूला नहीं बाजता" यह विचार कर हरकिशोर साठन इकट्ठी करनें लगा पर यहाँ इन्बातों की चर्चा भी न थी . यहाँ तो लाला मदनमोहन को लाला हरदयाल की लौ लग रही थी . निदान रोशनी हुए पीछे बड़ी देर बाट दिखाकर लाला हरदयाल आए उन्को देखकर मदनमोहन की खुशी की कुछ हद नहीं रही बग्गी के आनें की आवाज़ सुन्ते ही लाला मदनमोहन बाहर जाकर उन्को लिवा लाए और दोनों कौंच पर बैठकर बड़ी प्रीति सै बातें करनें लगे .

"मित्र ! तुम बड़े निठुर हो मैं इतनें दिन सै तुम्हारी मोहनी मूर्ति देखनें के लिए तरस रहा हूँ पर तुम याद भी नहीं करते" लाला मदनमोहन नें सच्चे मन सै कहा .

"मुझको एक पल आपके बिना कल नहीं पड़ती पर क्या करूँ ? चुगलखोरों के हाथ सै तंग हूँ जब कोई बहाना निकाल कर आने का उपाय करता हूँ वे लोग तत्काल जाकर लाला जी (अर्थात् पिता) सै

कह देते हैं और लाला जी खुलकर तो कुछ नहीं कहते पर बातों ही बातों मैं ऐसा झँझोड़ते हैं कि जी जलकर राख हो जाता है आज तो मैंनें उन्सै भी साफ़ कह दिया कि आप राज़ी हों, या नाराज़ हों मुझसै लाला मदनमोहन की दोस्ती नहीं छूट सक्ती" लाला हरदयाल नें यह बात ऐसी गर्मा गर्मी सै कही कि लाला मदनमोहन के मन पर लकीर हो गई पर यह सब बनावट थी उस्नें ऐसी बातें बना, बना कर लाला मदनमोहन सै "तोफ़ा तहायफ़" मैं बहुत कुछ फ़ायदा उठाया था इसलिये इस सोनें की चिड़िया को जाल मैं फसाने के लिये भीतर पेटे सब घर के शामिल थे और मदनमोहन के मन मैं मिलनें की चाह बढ़ानें के लिये उसनें अब की बार आनें मैं जान बूझ कर देर की थी .

"भाई ! लोग तो मुझे भी बहुत बहकाते हैं कोई कहता है "ये रुपे के दोस्त हैं" कोई कहता है "ये मतलब के दोस्त हैं" पर मैं उन्को ज़रा भी मुँह नहीं लगाता क्योंकि मुझको ओथेलो की बरबादी का हाल अच्छी तरह मालूम है" लाला मदनमोहन नें साफ़ मन सै कहा पर हरदयाल के पापी मन को इतनी ही बात सै खटका हो गया .

'दुनिया के लोगों का ढंग सदा अनोखा देखनें मैं आता है उन्मैं सै कोई अपना मतलब दृष्टांत और कहावतों के द्वारा कह जाता है, कोई अपना भाव दिल्लगी और हँसी की बातों मैं जता जाता है, कोई अपना प्रयोजन औरों पर रख कर सुना जाता है, कोई अपना आशय जता कर फिर पलट जानें का पहलू बनायें रखता है, पर मुझको ये बातें नहीं आतीं मैं तो सच्चा आदमी हूँ जो मन मैं होती है वह ज़बान सै कहता हूं जो ज़बान सै कहता हूं वह पूरी करता हूँ ." लाला हरदयाल नें भरमा भरमी अपना संदेह प्रगट करके अंत मैं अपनी सचाई जताई .

"तो क्या आप को इससमय यह संदेह हुआ कि मैंनें बहकानें वालों पर रख कर अपनी तरफ़ सै आपको "रुपे का दोस्त" और "मतलब का

दोस्त" ठैराया है ?" लाला मदनमोहन गिड़गिड़ा कर कहनें लगे "हाय ! आपनें मुझको अब तक नहीं पहचाना मैं अपनें प्राण सै अधिक आपको सदा समझता रहा हूँ इस संसार मैं आप सै बढ़कर मेरा कोई मित्र नहीं है जिस्पर आपको मेरी तरफ़ सै अब तक इतना संदेह बन रहा है मुझको आप इतना नादान समझते हैं. क्या मैं अपनें मित्र और शत्रु को भी नहीं पहचान्ता ? क्या आप सै अधिक मुझको संसार मैं कोई मनुष्य प्यारा है ? मैं अपना कलेजा चीर कर दिखाऊँ तो आपको मालूम हो कि आप की प्रीति मेरे हृदय मैं कैसी अंकित हो रही है !"

"आप वृथा खेद करते हैं मैं आप की सच्ची प्रीति को अच्छी तरह जान्ता हूं और मुझको भी इस संसार मैं आप सै बढ़कर कोई प्यारा नहीं है, मैंनें दुनिया का यह ढंग केवल चालाक आदमियों की चालाकी जतानें के लिए आप सै कहा था आप वृथा अपनें ऊपर ले दोड़े मुझको तो आपकी प्रीति का यहाँ तक विश्वास है कि सूर्य चंद्रमा की चाल बदल जायगी तो भी आपकी प्रीति मैं कभी अंतर न आयगा" लाला हरदयाल नें मदनमोहन के गले मैं हाथ डाल कर कहा.

"प्रीति के बराबर संसार मैं कौन्सा पदार्थ है ?" लाला मदनमोहन कहनें लगे "और सब तरह के सुख मनुष्य को द्रव्य सै मिल सक्ते हैं पर प्रीति का सुख सच्चे मित्र बिना किसी तरह नहीं मिल्ता जिस्नें संसार मैं जन्म लेकर प्रीति का रस नहीं लिया उस्का जन्म लेना वृथा है इसी तरह जो लोग प्रीति करके उस्पर दृढ़ नहीं रहते वह उस्के रस सै नावाकिफ़ हैं."

"निस्संदेह ! प्रीति का सुख ऐसा ही अलौकिक है. संसार मैं जिन लोगों को भोजन के लिये अन्न और पहन्ने के लिये वस्त्र तक नहीं मिल्ता उन्को भी अपनें दुःख सुख के साथी प्राणोपम मित्र के आगे अपना दुःख रोकर छाती का बोझ हल्का करनें पर, अपनें दुःखों को सुन सुन कर उस्के जी भर आनें पर, उस्के धैर्य देने पर, उस्के हाथ सै

अपनी डबडबाई हुई आँखों के आँसू पुछ जानें पर, जो संतोष होता है वह किसी बड़े राजा को लाखों रुपे खर्च करनें से भी नहीं हो सक्ता" लाला हरदयाल नें कहा .

"निस्संदेह ! मित्रता ऐसी ही चीज़ है पर जो लोग प्रीति का सुख नहीं जान्ते वह किसी तरह इस्का भेद नहीं समझ सक्ते" लाला मदन-मोहन कहनें लगे .

"दुनियाँ के लोग बहुत करके रुपे के नफे नुक्सान पर प्रीति का आधार समझते हैं आज हरगोविंद नें लखनऊ की चार टोपियाँ मुझको अठारह रुपे मैं ला दी थीं इस्पर हरकिशोर जल गये और मेरी प्रीति बढ़ानें के लिये बारह, बारह रुपे मैं वैसी ही टोपियाँ मुझको देनें लगे इन्के निकट प्रीति और मित्रता कोई ऐसी चीज़ है जो दस पाँच रुपे की कसर खानें से बातों मैं हाथ आ सक्ती है !"

"हरकिशोर नें हरगोविंद की तरफ़ से आपका मन उछांटनें के लिए यह तद्बीर की हो तो भी कुछ आश्चर्य नहीं ." हरदयाल बोले "मैं जान्ता हूँ कि हरकिशोर एक बड़ा—"

इतनें मैं एकाएक कमरे का दरवाजा खुला और हरकिशोर भीतर दाखल हुआ उसको देखते ही हरदयाल की जबान बंद हो गई और दोनों नें लजाकर सिर झुका लिया .

"पहलै आप अपनें शुभचिन्तकों के लिये सजा तजवीज कर लीजिये फिर मैं साठन मुलाहज़े कराऊँगा ऐसे वाहियात कामों के वास्ते इस ज़रूरी काम मैं हर्ज करना मुनासिब नहीं . हाँ लाला हरदयाल साहब क्या फ़रमा रहे थे "हरकिशोर एक बड़ा—" क्या है ?" हरकिशोर नें कमरे मैं पाँव रखते ही कहा .

"चल्लो दिल्लगी की बातैं रहने दो लाओ, दिखलाओ तुम कैसी साठन लाए हो ? हम अपनी निज की सलाह के वास्ते औरों का काम हर्ज नहीं किया चाहते" लाला हरदयाल नें पहली बात उड़ा कर कहा .

"मैं और नहीं हूँ पर अब आप चाहे जो बना दें मुझको अपना माल दिखानें मैं कोई उज्र नहीं पर इतना बिचार है कि आज कल सच्चे माल की निस्बत नकली या झूंटे माल पर ज्याद: चमक दमक मालूम होती है, मोतियों को देखिये चाहै मणियों को देखिये, कपड़ों को देखिये चाहै गोटे किनारी को देखिये जो सफ़ाई झूंटे पर होगी सच्चे पर हर- गिज़ न होगी इसलिये मैं डरता हूँ कि शायद मेरा माल पसंद न आय" हरकिशोर नें मुस्करा कर कहा .

"तुम कपड़ा दिखानें आए हो या बातों की दुकान्दारी लगानें आए हो ? जो कपड़ा दिखाना हो तो झटपट दिखा दो नहीं तो अपना रस्ता लो हमको थोथी बातों के लिये इस्समय अवकाश नहीं है" लाला मदन- मोहन नें भौं चढ़ा कर कहा .

"यह तो मैंने पहले ही कहा था अच्छा ! अब मैं जाता हूँ फिर किसी वक्त हाज़िर होऊँगा ."

"तो तुम कल नो, दस बजे मकान पर आना" यह कह कर लाला मदनमोहन नें उसै रुख़सत किया .

"आपस मैं क्या मज़े की बातैं हो रही थीं न जानें यह हत्या बीच मैं कहाँ सै आ गई" लाला हरदयाल बोले .

"ख़ैर अब कुछ दिल्लगी की बात छेड़िये !" लाला मदनमोहन नें फ़रमायश की . निदान बहुत देर तक अच्छी तरह मिल भेट कर लाला हरदयाल अपनें मकान को गए और लाला मदनमोहन अपनें मकान को गए ।

प्रकरण ५.

विषयासक्त

इच्छा फल के लाभ सों कबहुँ न पूरहि आश।
जैसे पावक घृत मिले बहु बिधि करत प्रकाश ॥❀
(हरिवंश)

लाला मदनमोहन बाग़ सै आए पीछे ब्यालू करके अपनें कमरे मैं आए उस्समय लाला ब्रजकिशोर, मुंशी चुन्नीलाल, मास्टर शिंभूदयाल, बाबू बैजनाथ, पंडित पुरुषोत्तम दास, हकीम अहमद हुसैन वग़ैरे सब दरबारी लोग मौजूद थे. लाला साहब के आते ही ग्वालियर के गवैयों का गाना होनें लगा.

"मैं जान्ता हूँ कि आप इस निर्दोष दिल्लगी को तो अवश्य पसंद करते होंगे देखिये इस्सै दिन भर की थकान उतर जाती है और चित्त प्रसन्न हो जाता है" लाला मदनमोहन नें थोड़ी देर पीछे लाला ब्रजकिशोर सै कहा.

"सब बातें काम के पीछे अच्छी लगती हैं जो सब तरह का प्रबंध बंध रहा हो, काम के उसूलों पर दृष्टि हो, भले बुरे काम और भले बुरे आदमियों की पहचान हो, तो अपना काम किये पीछे घड़ी, दो घड़ी की दिल्लगी मैं कुछ बिगाड़ नहीं है पर उस्समय भी इस्का व्यसन न होना चाहिये" लाला ब्रजकिशोर नें जवाब दिया.

"अमीरों को ऐश के सिवाय और क्या काम है?" मास्टर शिंभूदयाल नें कहा.

❀ नजातु कामः कामानामुपभोगेन शाम्यति।
हविषा कृष्णवर्त्मैव भूय एवाभिवर्द्धते ॥

"राजनीति मैं कहा है

"राजा सुख भोगहि सदा मंत्री करहि सम्हार।
राजकाज बिगरे कछू तो मंत्री सिर भार॥"*

पंडित पुरुषोत्तम दास बोले.

"हाँ यहाँ के अमीरों का ढंग तो यही है पर यह ढंग दुनियाँ सै निराला है जो बात सब संसार के लिए अनुचित गिनी जाती है वही उन्के लिए उचित समझी जाती है! उन्की एक, एक बात पर सुन्नेंवाले लोट-पोट हो जाते हैं! उन्की कोई बात हिकमत सै खाली नहीं ठैरती! जिन बातों कौ सब लोग बुरी जान्ते हैं, जिन बातों के करनें मैं कमीने भी लजाते हैं, जिन बातों के प्रगट होने सै बदचलन भी शर्माते हैं उन्का करना यहाँ के धनवानों के लिए कुछ अनुचित नहीं है! इन लोगों को न किसी काम के प्रारंभ की चिंता होती है! न किसी काम के परिणाम का बिचार होता है! यहाँ के धनपति तो अपनें को लक्ष्मीपति समझते हैं परंतु ईश्वर के हाँ का यह नियम नहीं है उस्ने अपनी सृष्टि मैं सब गरीब अमीरों को एक सा बनाया है" लाला ब्रजकिशोर कहनें लगे "जो मनुष्य ईश्वर का नियम तोड़ेगा उस्को अपनें पाप का अवश्य दंड मिलैगा. जो लोग सुख भोग मैं पड़कर अपनें शरीर या मन को कुछ परिश्रम नहीं देते प्रथम तो असावधान्ता के कारण उन्का वह वैभव ही नहीं रहता और रहा भी तो कुदरती कायदे के मूजिब उन्का शरीर और मन क्रम सै दुर्बल होकर किसी काम का नहीं रहता. पाचन शक्ति के घटनें सै तरह तरह के रोग उत्पन्न होते हैं और मानसिक शक्ति के घटनें सै चित्त की बिकलता, बुद्धि की अस्थिरता और काम करनें की अरुचि उत्पन्न हो जाती है जिस्सै थोड़े दिन मैं संसार दुःख रूप मालूम होने लगता है.

---

* भोगस्य भाजनं राजा मन्त्री कार्य्यस्य भाजनम्।
राजकार्य्यपरिध्वंसी मंत्री दोषेण लिप्यते॥

"परंतु अत्यंत महनत करनें सै भी तो शिथिलता हो जाती है" बाबू बैजनाथ नें कहा .

"इस्सै यह बात नहीं निकल्ती कि बिलकुल महनत न करो सब काम अंदाज सिर करनें चाहियें" लाला ब्रजकिशोर कहने लगे "लिडिया का बादशाह क़ारून साईरस सै हारा उस्समय साईरस उस्की प्रजा को दास बनानें लगा तब क़ारून नें कहा "हमको दास किसलिये बनाते हो? हमारे नाश करनें का सीधा उपाय यह है कि हमारे शस्त्र ले लो, हमको उत्त-मोत्तम वस्त्र भूषण पहनने दो, नाच रंग देखनें दो, शृंगार रस का अनुभव करनें दो, फिर थोड़े दिन मैं देखोगे कि हमारे शूर वीर अबला बन जायँगे और सर्वथा तुमसै युद्ध न कर सकेंगे" निदान ऐसा ही हुआ . पृथ्वीराज का संयोगता सै विवाह हुए पीछै वह इसी सुख मैं लिपटकर हिंदुस्थान का राज खो बैठा और मुसल्मानों का राज भी अंत मैं इसी भोग विलास के कारण नष्ट हुआ ."

"आप तो जिस्बात को कहते हैं हद्द के दरजे पर पहुँचा देते हैं; भला! पृथ्वीराज और मुसल्मानों की बादशाहत का लाला साहब के काम काज सै क्या संबंध है? उन्का द्रव्य बहुत करके अपनें भोग विलास मैं खर्च होता था परंतु लाला साहब का तो परोपकार मैं होता है" मास्टर शिंभूदयाल नें कहा .

"देखिये लाला साहब का मन पहले नाच तमाशे मैं बिल्कुल नहीं लगता था पर इन्होंनें चार मित्रों का मेल मिलाप बढ़ानें के लिये अपना मन रोक कर उन्की प्रसन्नता की" . पंडित पुरुषोत्तम दास बोले .

"बुरे कामों के प्रसंग मात्र सै मनुष्य के मन मैं पाप की ग्लानि घटती जाती है पहले लाला साहब को नाच रंग अच्छा नहीं लगता था पर अब देखते, देखते व्यसन हो गया फिर जिन् लोगों की सोहबत सै यह व्यसन हुआ उन्को मैं लाला साहब का मित्र कैसे समझूँ? मित्रता का काम करे

वह मित्र समझा जाता है अपनें मतलब के लिए लंबी लंबी बातैं बनानें सै कोई मित्र नहीं हो सक्ता" लाला ब्रजकिशोर कहनें लगे. सादी नें कहा है .

"एक दिवस मैं मनुज की विद्या जानी जाय !
पै न भूल, मन को कपट बरसन लग न लखाय ॥"%

"तो क्या आप इन् सब को स्वार्थपर ठैरा कर इन्का अपमान करते हैं !" लाला मदनमोहन नें जरा तेज होकर कहा.

"नहीं, मैं सबको एक सा नहीं ठैराता परंतु परीक्षा हुए बिना किसी को सच्चा मित्र भी नहीं कह सक्ता" लाला ब्रजकिशोर कहनें लगे. "केलीप्स नामी एक एथीनियन सै साइराक्यूस के बादशाह डिओन की बड़ी मित्रता थी. डिओन बहुधा केलीप्स के मकान पर जाकर महीनों रहा करता था एक बार डिओन को मालूम हुआ कि केलीप्स उसका राज छीन्ने के लिये कुछ उद्योग कर रहा है. डिओन ने केलीप्स सै इस्का वृत्तांत पूछा तब वह डिओन के पांव पकड़ कर रोनें लगा और देवमंदिर मैं जाकर अपनी सच्ची मित्रता के लिए कठिन सै कठिन सौगंध खा गया पर असल मैं यह बात झूंटी न थी अंत मैं केलीप्स नें साइराक्यूस पर चढ़ाई की और डिओन को महल ही मैं मरवा डाला ! इसलिए मैं कहता हूँ कि दूसरे की बातों मैं आकर अपना कर्तव्य भूलना बड़ी भूल की बात है" .

"अच्छा ! फिर आप खुलकर क्यों नहीं कहते आपके निकट लाला साहब को बहकानें वाला कौन, कौन है ?" पंडित जी नें जुगत सै पूछा .

"मैं यह नहीं कह सक्ता जो बहकाते होंगे, अपने जी मैं आप समझते होंगे मुझको लाला साहब के फायदे सै काम है और लोगों के जी दुखानें सै कुछ काम नहीं है . मनुस्मृति मैं कहा है —

तवां शनाख्त बयकरोज़ दर शमायल मरद
किता कुजाश रसीदस्त पायगाह उलूम ।
वले ज़ बातिनश ए मन मवाशो ग़र्रा मशो
के खुब्स नफस नगदर्द बसालहा मालूम ।

सत्य कहहु अरु प्रिय कहहु अप्रिय सत्य न भाख।
प्रियहु असत्य न बोलिये धर्म सनातन राख॥"*

"इसलिए मैं इस्समय इतना ही कहना उचित समझता हूँ" लाला ब्रजकिशोर नें जवाब दिया.

और इस्पर थोड़ी देर सब चुप रहे.

प्रकरण ९.

भले बुरे की पहचान.

धर्म्म, अर्थ शुभ कहत कोउ काम, अर्थ कहिं आन।
कहत धर्म्म कोउ अर्थ कोउ, तीनहुँ मिल शुभ जान॥†

(मनुस्मृति)

"आप के कहनें मूजब किसी आदमी की बातों सै उस्का स्वभाव नहीं जाना जाता फिर उस्का स्वभाव पहचान्नें के लिये क्या उपाय करें?" लाला मदनमोहन ने तर्क की.

"उपाय करनें की कुछ जरूरत नहीं है, समय पाकर सब भेद अपनें आप खुल जाता है" लाला ब्रजकिशोर कहनें लगे "मनुष्य के मन मैं ईश्वर नें अनेक प्रकार की बृत्ति उत्पन्न की है जिन्मैं परोपकार की इच्छा,

---

* सत्यं ब्रूयात् प्रियं ब्रूयान् न ब्रूयात् सत्यमप्रियम्।
प्रियं च नानृतं ब्रूयादेषधर्मस्सनातनः॥

† धर्म्मार्थावुच्यते श्रेयः कामार्थौ धर्म एव च।
अर्थ एवेह वा श्रेयस्त्रिवर्ग इति तु स्थितिः॥

भक्ति और न्यायपरता धर्मप्रवृत्ति मैं गिनी जाती हैं; दृष्टांत और अनुमानादि के द्वारा उचित अनुचित कामों की विवेचना, पदार्थ ज्ञान, और विचार शक्ति का नाम बुद्धि वृत्ति है . बिना बिचारे अनेक बार के देखनें, सुन्नें आदि सै जिस काम मैं मन की प्रवृत्ति हो, उसै आनुसंगिक प्रवृत्ति कहते हैं काम, संतान-स्नेह, संग्रह करनें की लालसा, जिघांसा और आत्म-सुख की अभिरुचि इत्यादि निकृष्ट प्रवृत्ति मैं शामिल हैं और इन सब के अविरोध सै जो काम किया जाय वह ईश्वर के नियमानुसार समझा जाता है परंतु किसी काम मैं दो बृत्तियों का विरोध किसी तरह न मिट सके तो वहाँ जरूरत के लायक आनुसंगिक प्रबृत्ति और निकृष्ट प्रबृत्ति को धर्म्म-प्रवृत्ति सै दबा देना चाहिये जैसे श्री रामचंद्र जी नें राज पाट छोड़ कर बन मैं जानें सै धर्मप्रवृत्ति को उत्तेजित किया था ."

"यह तो सवाल और जवाब और हुआ मैंनें आपसै मनुष्य का स्वभाव पहिचान्नें की राह पूछी थी आप बीच मैं मन की बृत्तियों का हाल कहनें लगे" लाला मदनमोहन नें कहा .

"इसी सै आगे चलकर मनुष्य के स्वभाव पहचान्नें की रीति मालूम होगी—"

"पर आप तो काम, संतान-स्नेह आदि के अविरोध सै भक्ति और परोपकारादि करनें के लिये कहते हैं और शास्त्रों मैं काम, क्रोध, लोभ मोहादिक की बारंबार निंदा की है फिर आप का कहना ईश्वर के नियमानुसार कैसे हो सक्ता है ?" पंडित पुरुषोत्तम दास बीच मैं बोल उठे .

"मैं पहले कह चुका हूँ कि धर्म्मप्रवृत्ति और निकृष्ट प्रबृत्ति मैं विरोध हो वहाँ जरूरत के लायक धर्म्मप्रवृत्ति को प्रबल मान्ना चाहिये परंतु धर्म्मप्रवृत्ति और बुद्धि प्रवृत्ति का बचाव किये पीछै भी निकृष्ट प्रवृत्ति का त्याग किया जायगा तो ईश्वर की यह रचना सर्वथा निरर्थक ठैरेगी पर ईश्वर का कोई काम निरर्थक नहीं है मनुष्य निकृष्ट प्रवृत्ति के बस होकर धर्म्म प्रवृत्ति और बुद्धि वृत्ति की रोक नहीं मान्ता इसी सै शास्त्र मैं

बारंबार उस्का निषेध किया है परतु धर्म्मप्रवृत्ति और बुद्धि को मुख्य मानें पीछै उचित रीति सै निकृष्ट प्रवृत्ति का आचरण किया जाय तो गृहस्थ के लिए दूषित नहीं हो सक्ता हाँ उस्का नियम उल्लंघन कर किसी एक वृत्ति की प्रबलता सै और और वृत्तियों के विपरीत आचरण कर कोई दुःख पावै तो इस्मैं किसी का बस नहीं. सब सै मुख्य धर्म्मप्रवृत्ति है परंतु उस्मैं भी जब तक और वृत्तियों के हक़ की रक्षा न की जायगी अनेक तरह के बिगाड़ होनें की संभावना बनी रहैगी."

"मुझको आप की यह बात बिल्कुल अनोखी मालूम होती है भला परोपकारादि शुभ कामों का परिणाम कैसे बुरा हो सक्ता है?" पंडित पुरुषोत्तम दास नें कहा.

"जैसे अन्न प्राणाधार है परंतु अति भोजन सै रोग उत्पन्न होता है" लाला ब्रजकिशोर कहनें लगे "देखिये परोपकार की इच्छा ही अत्यंत उपकारी है परंतु हद सै आगे बढ़नें पर वह भी फ़िजूलखर्ची समझी जायगी और अपनें कुटुंब परवारादि का सुख नष्ट हो जायगा जो आलसी अथवा अधर्मियों की सहायता की तो उस्सै संसार मैं आलस्य और पाप की वृद्धि होगी इसी तरह कुपात्र मैं भक्ति होनें सै लोक, परलोक दोनों नष्ट हो जायंगे. न्यायपरता यद्यपि सब बृत्तियों को समान रखनें वाली है परंतु इस्की अधिकता सै भी मनुष्य के स्वभाव मैं मिलनसारी नहीं रहती, क्षमा नहीं रहती. जब बुद्धि वृत्ति के कारण किसी बस्तु के विंचार मै मन अत्यंत लग जायगा तो और जान्नें लायक पदार्थों की अज्ञानता बनी रहैगी मन को अत्यंत परिश्रम होनें सै वह निर्बल हो जायगा और शरीर का परिश्रम बिल्कुल न होनें के कारण शरीर भी बलहीन हो जायगा. आनुसंगिक प्रवृत्ति के प्रबल होनें सै जैसा संग होगा वैसा रंग तुरत लग जाया करेगा. काम की प्रबलता सै समय, असमय और स्वस्त्री परस्त्री आदि का कुछ विचार न रहैगा. संतान-स्नेह की वृत्ति बढ़ गई तो उस्के लिये आप अधर्म्म करनें लगेगा, उस्को लाड, प्यार मैं रखकर उस्के लिये जुदे

कांटे बोयेगा . संग्रह करनें की लालसा प्रबल हुई तो जोरी सै, चोरी सै, छल सै, खुशामद सैं, कमाने की डिव्या पड़ैगी और खानें, खर्चनें के नाम सै जान निकल जायगी . जिघांसा बृत्ति प्रबल हुई तो छोटी, छोटी सी बातों पर अथवा खाली संदेह पर ही दूसरों का सत्यानाश करनें की इच्छा होगी और दूसरे को दंड देती बार आप दंड योग्य बन जायगा . आत्मसुख की अभिरुचि हद्द सै आगै बढ़ गई तो मन को परिश्रम के कामों सै बचानें के लिये गानें बजानें की इच्छा होगी, अथवा तरह, तरह के खेल तमाशे, हंसी चुहलकी बातें, नशेबाजी, और खुशामद मैं मन लगैगा , द्रव्य के बल सै बिना धर्म किये धर्मात्मा बना चाहैंगे, दिन रात बनाव सिंगार मैं लगे रहैंगे . अपनी मानसिक उन्नति करनें के बदले उन्नति करनेंवालों से द्रोह करैंगे अपनी झूँटी ज़िद निबाहनें मैं सब बड़ाई समझैंगे, अपनें फायदे की बातों मैं औरों के हक़ का कुछ बिचार न करैंगे, अपनें काम निकालनें के समय आप खुशामदी बन जायँगे, द्रव्य की चाहना हुई तो उचित उपायों सै पैदा करनें के बदले जुआ, बदनी, धरोहड़, रसायन या धरी ढकी दौलत ढूँडते फिरैंगे—"

"आप तो फिर वोही मन की वृत्तियों का झगड़ा ले बैठे. मेरे सवाल का जवाब दीजिये या हार माननिये" लाला मदनमोहन उखता कर कहनें लगे .

"जब आप पूरी बात ही न सुनें तो मैं क्या जवाब दूं ! मेरा मतलब इतनें बिस्तार सै यह था कि सब वृत्तियों का संबंध मिला कर अपना कर्तव्य कर्म निश्चय करना चाहिये किसी एक बृत्ति की प्रबलता सै और बृत्तियों का विचार न किया जायगा तो उस्मैं बहुत नुक्सान होगा" लाला ब्रज-किशोर कहनें लगे :—

"वाल्मीकि रामायण मैं भरत सै रामचंद्र नें और महाभारत मैं नारद मुनि नें राजा युधिष्ठिर से ये प्रश्न किया है

"धर्महि धन, अर्थहि धरम, बाधक तो कहुँ नाहिं ?
काम न करत बिगार कछु पुन इन दोउन माहिं ? १"

"विदुरप्रजागर मैं विदुर जी राजा धृतराष्ट्र सै कहते हैं

"धर्म अर्थ अरु काम, यथा समय सेवत जु नर ॥
मिल तीनहुँ अभिराम, ताहि देत दुहुँ लोक सुख ॥२"

"विष्णुपुराण मैं कहा है

"धर्म बिचारै प्रथम पुनि अर्थ, धर्म अबिरोधि ।
धर्म अर्थ बाधा रहित सेवै काम सुसोधि ॥३"

"रघुवंश मैं अतिथि की प्रशंसा करती बार महाकवि कालिदास नें कहा है

"निरी नीति कायरपनो, केवल बल पशुधर्म्म ।
तासो उभय मिलाय इन सिद्ध किये सब कर्म्म ॥ ४ ॥
हीन निकम्मे होत हैं बली उपद्रववान ।
तासों कीन्हें मित्र तिन मध्यम बल अनुमान ॥ ५ ॥

१—कच्चिदर्थेन वा धर्मं धर्मेणार्थं मया पिवा ।
उभौ वा प्रीतिसारेण न कामेन प्रबाधसे ॥

२—यो धर्ममर्थं कामं च यथा कालं निषेवते ।
धर्मार्थकामसंयोगं सो मुत्रेह च विन्दति ॥

३—विबुद्धश्चिन्तयेद्धर्ममर्थं चास्या विरोधिनम् ।
अपीडया तयोः काममुभयोरपि चिन्तयेत् ॥

४—कातर्यं केवलानीतिः शौर्यंश्वापदचेष्टितम् ।
अतः सिद्धिसमेताभ्यामुभाभ्यामन्वियेष सः ॥

५—हीनान्यनुप कर्तृणि प्रबृद्धानि विकुर्वते ।
तेन मध्यमशक्तिनी मित्राणि स्थापितान्यतः ॥

"चाणक्य नें लिखा है—

"बहुत दान ते बलि बँध्यो मान मरो कुरुराज।
लंपटपन रावण हत्यो अति वर्जित सब काज॥"*

"फ्रीजिया के मशहूर हकीम एपिक्टेटस की सब नीति इन दो वचनों में समाई हुई है कि "धैर्य सै सहना" और "मयध्म भाव सैं रहना" चाहिये."

"कुरान मैं कहा है कि" अय (लोगों)! खाओ, पीओ परंतु फिजूलखर्ची न करो" †

"वृंद कहता है

'कारज सोई सुघर है जो करिये समझाय।
अति बरसे बरसे बिना जों खेती कुम्हलाय॥"

"अच्छा संसार मैं किसी मनुष्य का इस रीति पर पूरा बरताव भी आज तक हुआ है?" बाबू बैजनाथ नें पूछा.

"क्यों नहीं देखिये पाईसिस्ट्रेट्रस नामी एथीनियन का नाम इसी कारण इतिहास मैं चमक रहा है वह उदार होनें पर फ़िज़ूलखर्च न था और किसी के साथ उपकार करके प्रत्युपकार नहीं चाहता था बल्कि अपनी नामवरी की भी चाह न रखता था वह किसी दरिद्री के मरनें की खबर पाता तो उसकी क्रिया कर्म के लिए तत्काल अपनें पास सै खर्च भेज देता. क़िसी दरिद्र को बिपद्ग्रस्त देखता तो अपनें पास सै सहायता करके उसके दुःख दूर करनें का उपाय करता पर कभी किसी मनुष्य को उसकी आवश्यकता सै अधिक देकर आलसी और निरुद्यमी नहीं होनें देता था. हाँ सब मनुष्यों की प्रकृति ऐसी नहीं हो सक्ती, बहुधा जिस मनुष्य के मन मैं जो वृत्ति प्रबल होती है वह उसको खींच खाँच कर अपनी ही राह पर ले जाती है जैसे एक मनुष्य को जंगल मैं रुपों की

---

* अति दानाद् बलिबद्धो नष्टो मानात् सुयोधनः।
विनष्टो रावणो लौल्यादति सर्वत्र वर्जयेत्॥

† कुलू वश्रबू व ला तुस्रिफू.।

थैली पड़ी पावै और उस्समय उस्के आस पास कोई न हो तब संग्रह करने की लालसा कहती है कि "इसै उठा लो" संतान स्नेह और आत्म-सुख की अभिरुचि सम्मति देती है कि "इस काम सै हमको भी सहायता मिलेगी" न्यायपरता कहती है कि "न अपनी प्रसन्नता सै यह किसी नें हमको दी न हमनें परिश्रम करके यह किसी सै पाई फिर इस्पर हमारा क्या हक है ? और इस्का लेना चोरी सै क्या कम है ? इसै पर धन समझ कर छोड़ चलो" परोपकार की इच्छा कहती है कि "केवल इस्का छोड़ जाना उचित नहीं, जहाँ तक हो सके उचित रीति सै इस्को इस्के मालिक के पास पहुँचानें का उपाय करो" अब इन् वृत्तियों मैं सै जिस बृत्ति के अनुसार मनुष्य काम करे वह उसी मेल मैं गिना जाता है यदि धर्म प्रवृत्ति प्रबल रही तो वह मनुष्य अच्छा समझा जायगा और निकृष्ट प्रबृत्ति प्रबल रही तो वह मनुष्य नीच गिना जायगा, और इस रीति सै भले बुरे मनुष्यों की परीक्षा समय पाकर अपनें आप हो जायगी बल्कि अपनी बृत्तियों को पहचान कर मनुष्य अपनी परीक्षा भी आप कर सकेगा. राज-पाट, धन-दौलत, बिद्या, स्वरूप, बंश, मर्यादा सै भले बुरे मनुष्य की परीक्षा नहीं हो सक्ती. बिदुर जी नें कहा है—

"उत्तम कुल आचार बिनकरे प्रमाण न कोइ ।
कुलहीनो आचार युत लहे बड़ाई सोइ ॥"*

---

* न कुलं वृत्तहीनस्य प्रमाणमिति मे मतिः ।
अन्तेष्वपि हि जातानां वृत्तमेव विशिष्यते ॥

प्रकरण ७

सावधानी (होशयारी)

सब भूतन तो तत्व लख कर्म योग पहिचान।
मनुजन के यत्नहि लखहिं सो पंडित गुणवान ॥*
(विदुर प्रजागरे)

"यहाँ तो आप अपने कहनें पर खुद ही पक्के न रहे. आपनें केलीप्स और डिओन का दृष्टांत देकर यह बात साबित की थी कि किसी की जाहिरी बातों से उस्की परीक्षा नहीं हो सक्ती परंतु अंत मैं आपनें उसी के कामों सै उस्को पहचान्नें की राह बतलाई" बाबू बैजनाथ नें कहा.

"मैंने केलीप्स के दृष्टांत मैं पिछले कामों सै पहली बातों का भेद खोलकर उस्का निज स्वभाव बता दिया था इसी तरह समय पाकर हर आदमी के कामों सै मन की वृत्तियों पर निगाह करकै उस्की भलाई बुराई पहचान्ने की राह बतलाई तो इस्सै पहली बातों से क्या विरोध हुआ ?" लाला ब्रजकिशोर पूछनें लगे.

"अच्छा ! जब आपके निकट मनुष्य की परीक्षा बहुत दिनों मैं उस्के कामों सै हो सक्ती है तो पहले कैसा बरताव रक्खैं ? क्या उस्की परीक्षा न हो जब तक उस्को अपनें पास न आनें दें ?" लाला मदनमोहन नें पूछा.

"नहीं, केवल संदेह सै किसी को बुरा समझना, अथवा किसी का अपमान करना सर्वथा अनुचित है परंतु किसी की झूंटी बातों मैं आकर

---

* तत्वज्ञः सर्वभूतानां योगज्ञः सर्वकर्मणाम् ।
उपायज्ञो मनुष्याणां नरः पंडित उच्यते ॥

ठगा जाना भी मूर्खता सै खाली नहीं" . लाला ब्रजकिशोर कहने लगे "महाभारत मैं कहा है—

मन न भरे पतियाहु जिन, पतियायेहु अति नाहिं ।
भेदी सों भय होत ही, जर उखरे छिन माहिं ॥"*

इस्कारण जब तक मनुष्य की परीक्षा न हो साधारण बातों मैं उस्के जाहिरी बरताव पर दृष्टि रखनी चाहिये परंतु जोखों के काम मैं उस्सै सावधान रहना चाहिये उस्का दोष प्रगट होनें पर उस्को छोड़नें मैं संकोच न हो इसलिए अपना भेदी बनाकर, उस्का अहसान उठाकर, अथवा किसी तरह की लिखावट और ज़बान सै उस्कै बसवर्ती होकर अपनी स्वतंत्रता न खोवै यद्यपि किसी, किसी के बिचार मैं छल, बल की प्रतिज्ञाओं का निबाहना आवश्यक नहीं है परंतु प्रतिज्ञा भंग करनें की अपेक्षा पहले विचार कर प्रतिज्ञा करना हर भांत अच्छा है."

"ऐसी सावधानी तो केवल आप लोगों ही सै हो सक्ती है जो दिन रात इन्हीं बातों के चारा बिचार मैं लगे रहैं" लाला मदनमोहन नें हंसकर कहा .

"मैं ऐसा सावधान नहीं हूँ परंतु हर काम के लिये सावधानी की बहुत ज़रूरत है" लाला ब्रजकिशोर कहनें लगे "मैं अभी मन की बृत्तियों का हाल कह कर अच्छे बुरे मनुष्यों की पहचान बता चुका हूँ परंतु उनमैं सै धर्म प्रवृत्ति की प्रबलता रखनें वाले अच्छे आदमी भी सावधानी बिना किसी काम के नहीं है क्योंकि वे बुरी बातों को अच्छा समझकर धोका खा जाते हैं. आप नें सुना होगा कि हीरा और कोयला दोनों कार्बोन हैं और उन्के बन्ने की रसायनिक क्रिया भी एक सी है दोनों मैं कार्बोन रहता है केवल इतना अंतर है हीरे मैं निरा कार्बोन जमा रहता है और

---

* न विश्वसेदविश्वस्ते विश्वस्ते नाति विश्वसेत् ।
विश्वासाद् भयमुत्पन्न मूलान्यपि निकृन्तति ॥

कोयले में उस्की कोई खास सूरत नहीं होती; जो कार्बोन जमा हुआ, दृढ़ रहनें सै बहुत कठोर, स्वच्छ, स्वेत और चमकदार होकर हीरा कहलाता है वही कार्बोन परमाणुओं के फैल फुट और उलट पुलट होनें के कारण काला, भिर्भिरा, बोदा और एक सूरत मैं रह कर कोयला कहलाता है ! ये ही भेद अच्छे मनुष्यों मैं और अच्छी प्रकृति वाले सावधान मनुष्यों मैं है कोयला बहुत सी ज़हरीली और दुर्गंधित हवाओं को सोख लेता है अपनें पास की चीजों को गलनें सड़नें की हानि सै बचाता है . और आमोनिया इत्यादि के द्वारा बनस्पति को फ़ायदा पहुँचाता है इसी तरह अच्छे आदमी दुष्कर्मों सै बचते हैं परंतु सावधानी का योग मिले बिना हीरे की तरह क़ीमती नहीं हो सक्ते ."

"मुझै तो यह बातैं मनः कल्पित मालूम होती हैं क्योंकि संसार के बरताव सै इन्की कुछ बिध नहीं मिल्ती संसार मैं धनवान कुपढ़, दरिद्री पंडित, पापी सुखी, धर्मात्मा दुखी, असावधान अधिकारी, सावधान आज्ञाकारी, भी देखनें मैं आते हैं" मास्टर शिंभूदयाल नें कहा .

"इस्के कई कारण हैं" लाला ब्रजकिशोर कहनें लगे "मैं पहले कह चुका हूँ कि ईश्वर के नियमानुसार मनुष्य जिस विषय मैं भूल करता है बहुधा उस्को उसी विषय मैं दंड मिल्ता है . जो विद्वान दरिद्री मालूम होते हैं वह अपनी विद्या मैं निपुण हैं परंतु सांसारिक व्यवहार नहीं जान्ते अथवा जान बूझ कर उस्के अनुसार नहीं बरतते . इसी तरह जो कुपढ़ धनवान दिखाई देते हैं वह बिद्या नहीं पढ़े परंतु द्रव्योपार्जन करनें और उस्कें रक्षा करनें की रीति जान्ते हैं । बहुधा धनवान रोगी होते हैं और ग़रीब नैरोग्य रहते हैं इस्का यह कारण है कि धनवान द्रव्योपार्जन करनें की रीति जान्ते हैं परंतु शरीर की रक्षा उचित रीति सै नहीं करते और ग़रीबों की शरीर रक्षा उचित रीति सै बन जाती है परंतु वे धनवान होनें की रीति नहीं जान्ते . इसी तरह जहाँ जिस बात की कसर होती है वहाँ उसी चीज की कमी दिखाई देती है . परंतु

कहीं, कहीं प्रकृति के विपरीत पापी सुखी, धर्मात्मा दुखी, असावधान अधिकारी, सावधान आज्ञाकारी दिखाई देते हैं इस्के दो कारण हैं. एक यह कि संसार की बर्तमान दशा के साथ मनुष्य का बड़ा दृढ़ संबंध रहता है इसलिये कभी, कभी औरों के हेतु उस्का विपरीत भाव हो जाता है जैसे मा बाप कें विरसे सै द्रव्य, अधिकार या ऋण रोगादि मिल्ते हैं, अथवा किसी और की धरी हुई दौलत किसी और के हाथ लग जानें से वह उस्का मालिक बन बैठता है, अथवा किसी अमीर की उदारता से कोई नालायक धनवान बन जाता है, अथवा किसी पास पड़ोसी की ग़फ़लत से अपना सामान जल जाता है, अथवा किसी दयालु विद्वान के हितकारी उपदेशों से कुपढ़ मनुष्य विद्या का लाभ ले सक्ते हैं, अथवा किसी बलवान लुटेरे की लूट मार सै कोई गृहस्थ बेसबब धन और तंदुरुस्ती खो बैठता है और ये सब बातें लोगों के हक मैं अनायास होती रहती हैं इसलिये इनको सब लोग प्रारब्ध फल मान्ते हैं परंतु ऐसे प्रारब्धी लोगों मैं जिस्को कोई वस्तु अनायास मिल गई पर उस्के स्थिर रखनें के लिये उस्के लायक कोई वृत्ति अथवा सब वृत्तियों की सहायता स्वरूप सावधानी ईश्वर नें नहीं दी तो वह उस चीज को अंत मैं अपनी स्वाभाविक वृत्तियों के बस होकर बहुधा खो बैठता है अथवा विपरीत वृत्तियों की प्रबलता सै वह वस्तु अधिक हुई तो उस्मैं उन वृत्तियों का नुक्सान गुप्त रह कर समय पर ऐसे प्रगट होता है जैसे बचपन की बे मालूम चोट बड़ी अवस्था मैं शरीर को निर्बल पाकर अचानक कसक उठे, या शतरंज मैं किसी चाल की भूल का असर दस बीस चाल पीछै मालूम हो. पर ईश्वर की कृपा सै किसी को कोई वस्तु मिलती है तो उस्के साथ ही उस्के लायक बुद्धि भी मिल जाती है या ईश्वर की कृपा सै किसी क़ायम मुकाम (प्रतिनिधि) वग़ैरे की सहायता पाकर उस्के ठीक ठीक काम चलनें का बानक बन जाता है जिस्सै वह नियम निभे जाते हैं परंतु ईश्वर के नियम मनुष्य से किसी तरह नहीं टूट सक्ते."

"मनुष्य क्या मैं तो जान्ता हूँ ईश्वर से भी नहीं टूट सक्के" बाबू बैजनाथ ने कहा.

"ऐसा बिचारना अनुचित है ईश्वर को सब सामर्थ्य है देखो प्रकृति का यह नियम सब जगह एक सा देखा जाता है कि गर्म होनें सै हरेक चीज़ फैलती है और ठंडी होनें सै सिमट जाती है यही नियम २१२ डिक्री तक जल के लिए भी है परंतु जब जल बहुत ठंडा होकर ३२ डिक्री पर बर्फ बन्नें लगता है तो वह ठंड सै सिमटनें के बदले फैलता जाता है और हल्का होनें के कारण पानी के ऊपर तैरता रहता है इसमैं जल जंतुओं की प्राण रक्षा के लिये यह साधारण नियम बदल दिया गया ऐसी ऐसी बातों सै उस्की अपरमित शक्ति का पूरा प्रमाण मिलता है; उसनें मनुष्य के मानसिक भावादि सै संसार के बहुत सै कामों का गुप्त संबंध इस तरह मिला रक्खा है कि जिस्के आभास मात्र सै अपना चित्त चकित हो जाता है. यद्यपि ईश्वर के ऐसे बहुत से कामों की पूरी थाह मनुष्य की तुच्छ बुद्धि को नहीं मिली तथापि उसनें मनुष्य को बुद्धि दी है इसलिये यथाशक्ति उसके नियमों का विचार करना, उन्के अनुसार बरतना और विपरीत भाव का कारण ढूंढ़ना उस्को उचित है सो मैं अपनी तुच्छ बुद्धि के अनुसार एक कारण पहले कह चुका हूँ. दूसरा यह मालूम होता है कि जैसे तारों की छांह चंद्रमा की चाँदनी मैं और चंद्रमा की चाँदनी सूर्य की धूप मैं मिलकर अपनें आप उस्का तेज बढ़ानें लगती है इसी तरह बहुत उन्नति मैं साधारण उन्नति अपनें आप मिल जाती है. जब तक दो मनुष्यों का अथवा दो देशों का बल बराबर रहता है कोई किसी को नहीं हरा सक्ता, परंतु जब एक उन्नतिशाली होता है, आकर्षण शक्ति के नियमानुसार दूसरे की समृद्धि अपनें आप उस्की तरफ़ को खिचनें लगती है, देखिये जब तक हिंदुस्थान मैं और देशों सै बढ़कर मनुष्य के लिये वस्त्र और सब तरह के सुख की सामग्री तैयार होती थीं, रक्षा के उपाय ठीक, ठीक बन रहे

थे, हिंदुस्थान का वैभव प्रतिदिन बढ़ता जाता था परंतु जब सै हिंदुस्थान का एका टूटा, और देशों मैं उन्नति हुई बाफ और बिजली आदि कलों के द्वारा हिंदुस्थान की अपेक्षा थोड़े खर्च, थोड़ी महनत और थोड़े समय मैं सब काम होनें लगा हिंदुस्थान की घटती के दिन आ गए; जब तक हिंदुस्थान इन बातों मैं और देशों की बराबर उन्नति न करेगा यह घाटा कभी पूरा न होगा. हिंदुस्थान की भूमि मैं ईश्वर की कृपा सै उन्नति करनें के लायक सब सामान बहुतायत सै मौजूद हैं केवल नदियों के पानी ही सै बहुत तरह की कलैं चल सक्ती हैं परंतु हाथ हिलाये बिना अपनें आप ग्रास मुख मैं नहीं जाता, नई नई युक्तियों का उपयोग किये बिना काम नहीं चलता. पर इन बातों सै मेरा यह मतलब हरगिज़ नहीं है कि पुरानी, पुरानी सब बातैं बुरी और नई, नई सब बातैं एक दम अच्छी समझ ली जायँ. मैंनें यह दृष्टांत केवल इस विचार सै दिया है कि अधिकार और व्यापारादि के कामों मैं कोई, कोई युक्ति किसी समय काम की होती है वह भी कालांतर मैं पुरानी रीति भांत पलट जानें पर अथवा किसी और तरह की सूधी राह के निकल आनें पर अपनें आप निरर्थक हो जाती है और संसार के सब कामों का संबंध परस्पर ऐसा मिला रहता है कि एक की उन्नति अवनति का असर दूसरों पर तत्काल हो जाता है इस कारण एक सावधानी बिना मन की बृत्तियों के ठीक होने पर भी ज़मानें के पीछै रह जानें सै कभी, कभी अपनें आप अवनति हो जाती है और इन ही कारणों सै कहीं, कहीं प्रकृति के बिपरीत भाव दिखाई देता है."

"इस्सै तो यह बात निकली कि हिंदुस्थान मैं इससमय कोई सावधान नहीं है" मुंशी चुन्नीलाल नें कहा.

नहीं यह बात हरगिज़ नहीं है, परंतु सावधानी का फल प्रसंग के अनुसार अलग अलग होता है" लाला ब्रजकिशोर कहनें लगे "तुम अच्छी तरह विचार कर देखोगे तो मालूम हो जायगा कि हरेक समाज का मुखिया

कोई निरा विद्वान अथवा धनवान नहीं होता, बल्कि बहुधा सावधान मनुष्य होता है और जो खुशी बड़े, बड़े राजाओं को अपने बराबरवालों में प्रतिष्ठा लाभ से होती है वही एक ग़रीब से गरीब लकड़हारे को भी अपने बराबर वालों मैं इज्जत मिलनें से होती है और उन्नति का प्रसंग हो तो वह धीरै, धीरै उन्नति भी करता जाता है परंतु इन दोनों की उन्नति का फल बराबर नहीं होता क्योंकि दोनों को उन्नति करने के साधन एक से नहीं मिलते . मनुष्य जिन कामों मैं सदैव लगा रहता है अथवा जिन बातों का बारबार अनुभव करता है बहुधा उन्हीं कामों मैं उस्की बुद्धि दौड़ती है और किसी सावधान मनुष्य की बुद्धि किसी अनूठे काम मैं दोड़ी भी तो उसै काम मैं लाने के लिए बहुत कर कै मौका नहीं मिल्ता . देश की उन्नति अवनति का आधार वहाँ के निवासियों की प्रकृति पर है . सब देशों मैं सावधान और असावधान मनुष्य रहते हैं परंतु जिस देश के बहुत मनुष्य सावधान और उद्योगी होते हैं उस्की उन्नति होती जाती है और जिस देश में असावधान और कमकस विशेष होते हैं उस्की अवनति होती जाती है . हिंदुस्थान मैं इस्समय और देशों की अपेक्षा सच्चे सावधान बहुत कम हैं और जो हैं वे द्रव्य की असंगति से, अथवा द्रव्यवानों की अज्ञानता से, अथवा उपयोगी पदार्थों की अप्राप्ति से, अथवा नई, नई युक्तियों के अनुभव करनें की कठिनाइयों सै, निरर्थक से हो रहे हैं और उन्की सावधानता बन के फूलों की तरह कुछ उपयोग किए बिना वृथा नष्ट हो जाती है परंतु हिंदुस्थान मैं इस्समय कोई सावधान न हो यह बात हरगिज़ नहीं है ."

"मेरे जान तो आजकल हिंदुस्थान मैं बराबर उन्नति होती जाती है . जगह जगह पढ़नें लिखनें की चर्चा सुनाई देती है, और लोग अपना हक़ पहचान्नें लगे हैं" बाबू बैजनाथ नें कहा .

"इन सब बातों मैं बहुत सी स्वार्थपरता और बहुत सी अज्ञानता मिली हुई है परंतु हकीक़त मैं देशोन्नति बहुत थोड़ी है" लाला ब्रजकिशोर कहनें

लगे "जो लोग पढ़ते हैं वे अपनें बाप दादों का रोजगार छोड़कर केवल नौकरी के लिए पढ़ते हैं और जो देशोन्नति के हेतु चर्चा करते हैं उन्का लक्ष अच्छा नहीं है वे थोथी बातों पर बहुत हल्ला मचाते हैं परंतु विद्या की उन्नति, कलों के प्रचार, पृथ्वी के पैदावार बढ़ानें की नई, नई युक्ति और लाभदायक व्यापारादि आवश्यक बातों पर जैसा चाहिये ध्यान नहीं देते जिस्सै अपनें यहाँ का घाटा पूरा हो . मैं पहले कह चुका हूँ कि जिन मनुष्यों की जो वृत्तियाँ प्रबल होती हैं वह उन्को खींच खाँच कर उसी तरफ ले जाती हैं सो देख लीजिए कि हिंदुस्थान मैं इतनें दिन सै देशोन्नति की चर्चा हो रही है परंतु अब तक कुछ उन्नति नहीं हुई और फ्रांसवालों को जर्मनीवालों सै हारे अभी पूरे दस वर्ष नहीं हुए जिस्मैं फ्रांसवालों नें सच्ची सावधानी के कारण ऐसी उन्नति कर ली कि वे आज सब सुधरी हुई बलायतों सै आगै दिखाई देते हैं" .

"अच्छा ! आपके निकट सावधानी की पहचान क्या है ?" लाला मदनमोहन नें पूछा .

"सुनिये" लाला ब्रजकिशोर कहनें लगे "जिस तरह पाँच, सात गोलियें बराबर, बराबर चुन् दी जायँ और उन्मैं सै सिरे की एक गोली को हाथ सै धक्का दे दिया जाय तो हाथ का बल, पृथ्वी की आकर्षण शक्ति, हवा आदि सब कार्य कारणों के ठीक, ठीक जान्नें सै आपस्मैं टकराकर अंत की गोली कितनी दूर लुढ़कैगी इस्का अंदाज हो सक्ता है इसी तरह मनुष्यों की प्रकृति और पदार्थों की जुदी, जुदी शक्ति का परस्पर संबंध बिचार कर दूर और पास की हरेक बात का ठीक परिणाम समझ लेना पूरी सावधानी है परंतु इन बातों को जान्नें के लिए अभी बहुत से साधनों की कसर है और किसी समय यह सब साधन पाकर एक मनुष्य बहुत दूर, दूर की बातों का ठीक परिणाम निकाल सकै यह बात असंभव मालूम होती है तथापि अपनी सामर्थ्य के अनुसार जो मनुष्य इस राह पर चलै वह अपनें समाज मैं साधारण रीति सै सावधान समझा जाता है . एक मोमबत्ती

एक तरफ सै जल्ती हो और दूसरी दोनों तरफ जल्ती हो तो उस्के बर्तमान प्रकाश पर न भूलना परिणाम पर दृष्टि करना सावधानी का साधारण काम है और इसी सै सावधानता पहचानी जाती है".

"आपनें अपनी सावधानता जतानें के लिए इतना परिश्रम करके सावधानी का वर्णन किया इसलिए मैं आपका बहुत उपकार मान्ता हूँ" लाला मदनमोहन नें हँस कर कहा.

"वाजबी बात कहनें पर मुझको आप सै ये तो उम्मेद ही थी". लाला ब्रजकिशोर नें जवाब दिया, और लाला मदनमोहन सै रुखसत होकर अपनें मकान को रवानें हुए.

प्रकरण ८

सब मैं हाँ

"एकै साधे सब सधैं सब साधे सब जाहिं।
जो गहि सींचै मूल कों फूलैं फलैं अघाहिं॥

कबीर

"लाला ब्रजकिशोर बातें बनानें मैं बड़े होशयार हैं परंतु आपनें भी इस्समय तो उन्को ऐसा मंत्र सुनाया कि वह बंद ही हो गए" मुंशी चुन्नीलाल नें कहा.

"मुझको तो उन्की लंबी चोड़ी बातों पर लुक्मान की वह कहावत याद आती है जिस्मैं एक पहाड़ के भीतर सै बड़ी गड़गड़ाहट हुए पीछै छोटी सी मूसी निकली थी" मास्टर शिंभूदयाल नें कहा.

"उन्की बातचीत मैं एक बड़ा ऐब यह था कि वह बीच मैं दूसरे को बोलनें का समय बहुत कम देते थे जिस्सै उन्की बात अपनें आप फीकी मालूम होनें लगती थी" बाबू बैंजनाथ नें कहा.

"क्या करें ? वह वकील हैं और उन्की जीविका इन्हीं बातों सै है" हकीम अहमद हुसैन बोले.

"उन् पर क्या है अपना, अपना काम बनानें मैं सबही एक से दिखाई देते हैं" पंडित पुरुषोत्तम दास नें कहा.

"देखिये सबेरे वह काचों की ख़रीदारी पर इतना झगड़ा करते थे परंतु मन मैं क़ायल हो गए इस्सै इससमय उन्का नाम भी न लिया" मुंशी चुन्नीलाल नें याद दिलाई.

"हाँ, अच्छी याद दिलाई, तुम तीसरे पहर मिस्टर ब्राइट के पास गये थे ? काचों की क़ीमत क्या ठैरी !" लाला मदनमोहन नें शिभूदयाल सै पूछा.

"आज मदरसे सै आने मैं देर हो गई इस्सै नहीं जा सका" मास्टर शिभूदयाल नें जवाब दिया. परंतु यह उस्की बनावट थी असल मैं मिस्टर ब्राइट नें लाला मदनमोहन का भेद जान्नें के लिये सौदा अटका रक्खा था.

"मिस्टर रसल को दस हजार रुपे भेजनें हैं उन्का कुछ बंदोबस्त हो गया" मुंशी चुन्नीलाल नें पूछा.

हाँ लाला जवाहर लाल सै कह दिया है परंतु मास्टर साहब भी तो बंदोबस्त करनें कहते थे इन्होंनें क्या किया ?" लाला मदनमोहन नें उलट कर पूछा.

"मैंनें एक, दो जगह चर्चा की है पर अब तक किसी सै पकावट नहीं हुई." मास्टर शिभूदयाल नें जवाब दिया.

"ख़ैर ! यह बातें तो हुआ ही करैंगी मगर वह लखनऊ का तायफ़ा शाम सै हाज़िर है उसके वास्तै क्या हुक्म होता है ?" हकीम अहमद हुसैन नें पूछा.

"अच्छा ! उस्को बुलवाओ पर उस्के गानें मैं समा न बँधा तो आप को वह शर्त पूरी करनी पड़ेगी" लाला मदनमोहन नें मुस्करा कर कहा .

इस्पर लखनऊ का तायफ़ा मुजरे के लिये खड़ा हुआ और उस्नें मीठी आवाज़ सै तालसुर मिलाकर सोरठ गाना शुरू किया .

निस्संदेह उस्का गाना अच्छा था परंतु पंडित जी अपनी अभिज्ञता जतानें के लिए बे समझे बूझे लट्टू हुए जाते थे समझनेंवालों का सिर मोके पर अपनें आप हिल जाता है परंतु पंडित जी का सिर तो इस्समय मतवालों की तरह घूम रहा था, मास्टर शिंभूदयाल को दुपहर का बदला लेनें के लिए यह समय सब सै अच्छा मिला उस्नें पंडित जी को आसामी बनानें के हेतु और लोगों सै इशारों मैं सलाह कर ली और पंडित जी का मन बढ़ानें के लिये पहलै सब मिलकर गानें की वाह वाह करनें लगे अंत मैं एक नें कहा "क्या श्याम कल्याण है" दूसरे नें कहा "नहीं ईमन है" तीसरे नें कहा "वाह झंझौटी है" चोथा बोला "देस है" इस्पर सुनारी लड़ाई होनें लगी .

"पंडित जी को सबसै अधिक आनंद आ रहा है इसलिये इन्सै पूछना चाहिये" लाला मदनमोहन नें झगड़ा मिटानें के मिस सै कहा .

"हाँ, हाँ पंडित जी नें दिन मैं अपनी बिद्या के बल सै बे देखे भाले करेला बता दिया था सो अब इस प्रत्यक्ष बात के बतानें मैं क्या संदेह है ?" मास्टर शिंभूदयाल नें शै दी और सब लोग पंडित जी के मुँह की तरफ़ देखनें लगे .

"शास्त्र सै कोई बात बाहर नहीं है जब हम सूर्य चंद्रमा का ग्रहण पहले सै बता देते हैं तो पृथ्वी पर की कोई बात बतानी हम को क्या कठिन है ?" पंडित पुरुषोत्तम दास नें बात उड़ानें के वास्तै कहा .

"तो आप रेल और तार का हाल भी अच्छी तरह जान्ते होंगे ?" बाबू बैजनाथ नें पूछा .

"मैं जान्ता हूँ कि इन सब का प्रचार पहले हो चुका है क्योंकि "रेल पेल" और "एक तार" होनें की कहावत अपनें यहाँ बहुत दिन सै चली आती है" पंडित जी नें जवाब दिया .

"अच्छा महाराज ! रेल शब्द का अर्थ क्या है और यह कैसे चल्ती है ?" मास्टर शिंभूदयाल नें पूछा .

"भला यह बात भी कुछ पूछनें के लायक़ है ! जिस तरह पानी की रेल सब चीजों को बहा ले जाती है इसी तरह यह रेल भी सब चीजों को घसीट ले जाती है इस वास्तै इस्को लोग रेल कहते हैं और रेल धुँएँ के ज़ोर से चल्ती है यह बात तो छोटे छोटे बच्चे भी जान्ते हैं*" पंडित पुरुषोत्तम दास नें जवाब दिया, और इस्पर सब आपस मैं एक दूसरे की तरफ़ देख कर मुस्करानें लगे .

"और तार ?" मुंशी चुन्नीलाल नें रही सही कलई खोलनें के वास्तै पूछा .

"इस्मैं कुछ योग विद्या की कला मालूम होती है ." इतनी बात कह कर पंडित पुरुषोत्तम दास चुप होते थे परंतु लोगों को मुस्कराते देख कर अपनी भूल सुधारनें के लिये झटपट बोल उठे कि "कदाचित् योग विद्या न होगी तो तार भीतर सै पोला होगा जिस्मैं होकर आवाज़ जाती होगी या उस्के भीतर चिट्ठी पहुँचानें के लिए डोर बँध रही होगी ."

"क्यों दयालु ! वैलून† कैसा होता है ?" बाबू बैजनाथ नें पूछा .

"हम सब बातें जान्तें हैं परंतु हमारी परीक्षा लेनें के वास्तै पूछते

---

* देश भाषा मैं बाफ और बिजली की शक्ति के वृत्तांत न प्रकाशित होनें का यह फल है कि अब तक सर्वसाधारण रेल और तार का भेद कुछ नहीं जान्ते .

† गैस सै भरा हुआ उड़नें का गुबारा .

हो इस्सै हम कुछ नहीं बताते" पंडित जी नें अपना पीछा छुड़ानें के लिए कहा. परंतु शिंभूदयाल नें सबको जता कर झूंटे छिपाव सै इशारे मैं पंडित जी को उड़नें की चीज बताई इस्पर पंडित जी तत्काल बोल उठे "हम को परीक्षा देनें की क्या ज़रूरत है ? परंतु इस समय न बतावेंगे तो लोग बहाना समझेंगे, बैलून पतंग को कहते हैं."

"वाह वा, वाह ! पंडित जी नें तो हद कर दी इस कलि काल मैं ऐसी बिद्या किसी को कहाँ आ सक्ती है ?" मुंशी चुन्नीलाल नें कहा.

"हाँ पंडित जी महाराज ! हुलक किस जानूवर को कहते हैं ?" हकीम अहमद हुसैन नें नया नाम बनाकर पूछा.

"एक चोपाया है" मुंशी चुन्नीलाल नें बहुत धीरी आवाज़ सै पंडित जी को सुनाकर शिंभूदयाल के कान मैं कहा.

"और बिना परों के उड़ता भी तो है" मास्टर शिंभूदयाल नें उसी तरह चुन्नीलाल को जवाब दिया.

"चलो चुप रहो देखें पंडित जी क्या कहते हैं" चुन्नीलाल नें धीरे सै कहा.

"जो तुमको हमारी परीक्षा ही लेनी है तो लो सुनो हुलक एक चतुष्पद जंतु विशेष है और बिना पंखों के उड़ सक्ता है" पंडित जी नें सबको सुनाकर कहा.

"यह तो आप नें बहुत पहुँच कर कहा परंतु उस्की शक्ल बताइये" हकीम जी हुज्जत करनें लगे.

"जो शक्ल ही देखनी हो तो यह रही" बाबू बैजनाथ नें मेजपर सै एक छोटा सा काच उठाकर पंडित जी के सामनें कर दिया.

इस्पर सब लोग खिल खिलाकर हँस पड़े.

"यह सब बातें तो आपनें बता दीं परंतु इस राग का नाम न बताया" लाला मदनमोहन नें हँसी थमे पीछै कहा.

"इस्समय मेरा चित्त ठिकानें नहीं है मुझको क्षमा करो" पंडित पुरुषोत्तम दास नें हार मान कर कहा.

"बस महाराज ! आपको तो करेला ही करेला बताना आता है और कुछ भी नहीं आता" मास्टर शिंभूदयाल बोले.

"नहीं साहब ! पंडित जी अपनी विद्या मैं एक ही हैं" "रेल और तार का हाल क्या ठीक, ठीक बताया है ." "और बैलून मैं तो आप ही उड़ चले !" "हुलक की सूरत भी तो आप ही नें दिखाई थी !" "और सबसै बढ़ कर राग का रस भी तो इनही नें लिया है" चारों तरफ़ लोग अपनी अपनी कहनें लगे.

पंडित जी इन लोगों की बातैं सुन, सुन कर लज्जा के मारे धरती मैं गड़े चले जाते थे पर कुछ बोल नहीं सक्ते थे.

आखिर यह दिल्लगी पूरी हुई तब बाबू बैजनाथ लाला मदनमोहन को अलग ले जाकर कहनें लगे "मैंनें सुना है कि लाला ब्रजकिशोर दो, चार आदमियों को पक्का करकै यहाँ नये सिरे सै कालिज स्थापन करनें के लिये कुछ उद्योग कर रहे हैं यद्यपि सब लोगों के निरुत्साह सै ब्रजकिशोर के कृतकार्य होनें की कुछ आशा नहीं है तथापि लोगों को देशोपकारी बातों मैं अपनी रुचि दिखानें और अग्रसर बन्नें के लिए आप इस्मैं ज़रूर शामिल हो जायँ अखबारों मैं धूम मैं मचा दूँगा यह समय कोरी बातों मैं नाम निकालनें का आ गया है क्योंकि ब्रजकिशोर नामवरी नहीं चाहते इसीलिए मैं बात चलाकर आपको चेतानें के लिए इस्समय आपके पास आया था".

"आपकी बड़ी महरबानी हुई मैं आपके उपकारों का बदला किसी तरह नहीं दे सक्ता, किसी नें सच कहा है

"हितहि परायो आपनो अहित अपनपो जाय ॥
बनकी ओषधि प्रिय लगत तन को दुख न सुहाय ॥"*

---

* परोपि हितवान् बन्धुर्बन्धुरप्यहितः परः ।
अहितो देहजो व्याधिर्हितमारण्यमोषधम् ॥

ऐसा हितकारी उपदेश आपके बिना और कौन दे सक्ता है" लाला मदनमोहन नें बड़ी प्रीति सै उन्का हाथ पकड़ कर कहा.

और इसी तरह अनेक प्रकार की बातों मैं बहुत रात चली गई तब सब लोग रुखसत होकर अपने, अपनें घरं गए.

प्रकरण ६.

सभासद.

धर्मशास्त्र पढ़, वेद पढ़ दुर्जन सुधरे नाहिं।
गो पय मीठे प्रकृति ते प्रकृति प्रबल सब माहिं ॥*

(हितोपदेश)

इस्समय मदनमोहन के वृत्तांत लिखनें सै अवकाश पाकर हम थोड़ा सा हाल लाला मदनमोहन के सभासदों का पाठकगण को विदित करते हैं. इन्मैं सब सै पहलै मुंशी चुन्नीलाल स्मरण योग्य हैं.

मुंशी चुन्नीलाल प्रथम ब्रजकिशोर के यहाँ दस रुपे महीनें का नोकर था उन्हींनें इस्को कुछ, कुछ लिखना पढ़ना सिखाया था, उन्हीं की संगति मैं रहनें सै इसै कुछ सभा चातुरी आ गई थी, उन्हीं के कारण मदनमोहन सै इस्की जान पहचान हुई थी परंतु इस्के स्वभाव मैं चालाकी ठेठ सै थी इस्का मन लिखनें पढ़नें मैं कम लगता था पर इस्नें बड़ी, बड़ी पुस्तकों मैं सै कुछ कुछ बातें ऐसी याद कर रक्खी थीं कि नए आदमी के सामनें

---

*. न धर्मशास्त्रं पठतीति कारणं न चापि वेदाध्ययनं दुरात्मनः ।
स्वभाव एवात्र तथातिरिच्यते यथा प्रकृत्या मधुरं गवां पयः ॥

झड़ बाँध देता था स्वार्थपरता के सिवाय परोपकार की रुचि नाम को न थी पर ज़बानी जमा खर्च करनें और काग़ज़ के घोड़े दौड़ानें मैं यह बड़ा धुरंधर था. इस्की प्रीति अपना प्रयोजन निकालनें के लिये, और धर्म लोगों को ठगनें के लिये था. यह औरों सै विवाद करनें मैं बड़ा चतुर था परंतु इस्को अपना चाल चलन सुधारने की इच्छा न थी. यह मनुष्यों का स्वभाव भली भांत पहचान्ता था, परंतु दूर दृष्टि सै हरेक बात का परिणाम समझ लेने की इस्को सामर्थ्य न थी। जोड़ तोड़ की बातों मैं यह इयागो का अवतार था. कणिक की नीति पर इस्का पूरा विश्वास था. किसी बड़े काम का प्रबंध करनें की इस्को शक्ति न थी परंतु बातों मैं धरती और आकाश को एक कर देता था इसके काम निकालनें के ढंग दुनिया सै निराले थे. यह अपनें मतलब की बात बहुधा ऐसे समय करता था जब दूसरा किसी और काम मैं लग रहा हो जिस्सै इस्की बात का अच्छी तरह विचार न कर सके अथवा यह काम की बात करती बार कुछ, कुछ साधारण बातों की ऐसी चर्चा छेड़ देता था जिस्सै दूसरे का मन बटा रहै अथवा कोई बात रुचि के विपरीत अंगीकार करानी होती थी तो यह अपनी बातों मैं हर तरह का बोझ इस ढब सै डाल देता था कि दूसरा इन्कार न कर सके कभी, कभी यह अपनी बातों को इस युक्ति सै पुष्ट कर जाता कि सुन्नेंवाले तत्काल इस्का कहना मान लेते. जो काम ये अपनें स्वार्थ के लिए करता उस्का प्रयोजन सब लोगों के आगे और ही बताता था और अपनी स्वार्थपरता छिपानें के लिए बड़ी आना कानी सै वह बात मंजूर करता था; यह अपनें बैरी की व्याजस्तुति इस ढब सै करता था कि लोग इस्का कहना इस्की दयालुता और शुभचिंतकता सै समझनें लगते थे. जिस्बात के सहसा प्रगट करनें मैं कुछ खटका समझता उस्का प्रथम इशारा कर देता था और सुन्नेंवाले के आग्रह पर रुक, रुक वह बात कहता था. जोखों की बात लोगों पर ढाल कर कहता था अथवा शिंभूदयाल वगैरे के मुख से कहवा दिया करता

था और आप साधनें को तयार रहता था. तुच्छ बातों को बढ़ा कर, बड़ी बातों को घटा कर, अपनी तरफ़ से लोन मिर्च लगा कर, कभी प्रसन्न, कभी उदास, कभी क्रोधित, कभी शांत हो कर यह इस रीति से बात कहता था कि जो कहता था उस्की मूर्ति बन जाता था. इस्के मन मैं संग्रह करनें की वृत्ति सब से प्रबल थी.

मुंशी चुन्नीलाल ब्रजकिशोर के यहाँ नोकर था जब अपनीं चालाकी से बहुधा मुक़द्दमेंवालों को उलट पुलट समझाकर अपना हक़ ठैरा लिया करता था. स्टांप, तल्बानें वगैरे के हिसाब मैं उन लोगों को धोका दे दिया करता था बल्कि कभी, कभी प्रतिपक्षी से मिल्कर किसी मुक़द्दमे वाले का सबूत वगैरे भी गुप चुप उस्को दिखा दिया करता था. ब्रजकिशोर नें ये भेद जान्ते ही पहले उसै समझाया फिर धमकाया जब इस्पर भी राह मैं न आया तो घर का मार्ग दिखाया. इस्नें पहले ही से ब्रजकिशोर का मन देख कर लाला मदनमोहन के पास अपनी मिसल लगा ली थी हर-किशोर को अपना सहायक बना लिया था. लाला ब्रजकिशोर के पास से अलग होते ही लाला मदनमोहन के पास रहनें लगा.

मुंशी चुन्नीलाल नें लाला मदनमोहन के स्वभाव को अच्छी तरह पहचान लिया था. लाला मदनमोहन को हाकमों की प्रसन्नता, लोगों की वाह वाह, अपनें शरीर का सुख, और थोड़े खर्च मैं बहुत पैदा करनें के लालच सिवाय किसी काम मैं रुपया खर्च करना अच्छा नहीं लगता था पर रुपया पैदा करनें अथवा अपनें पास की दौलत को बचा रखनें के ठीक रस्ते नहीं मालूम थे इसलिए मुंशी चुन्नीलाल उन्को उन्की इच्छानुसार बातें बनाकर खूब लूटता था.

मास्टर शिंभूदयाल प्रथम लाला मदनमोहन को अंग्रेज़ी पढ़ानें के लिये नोकर रक्खा गया था पर मदनमोहन का मन बचपन से पढ़नें

लिखने की अपेक्षा खेल कूद मैं अधिक लगता था. शिंभूदयाल नें लिखने पढ़नें की ताकीद की तो मदनमोहन का मन बिगड़नें लगा. मास्टर शिंभूदयाल खानें, पहन्नें, देखनें, सुन्नें का रसिक था और लाला मदनमोहन के पिता अँग्रेज़ी नहीं पढ़े थे इसलिए मदनमोहन सै मेल करनें मैं इस्नें हर भांत अपना लाभ समझा पढ़ानें लिखानें के बदले मदन-मोहन बालक रहा जितनें अलिफ़लैला मैं सै सोते जागते का क़िस्सा, शेक्सपियर के नाटकों मैं सै कोमेडी आफ़ एरर्ज, ट्वेल्फ्थ नाइट, मचएडू एबाउट नथिंग, बेन जान्सन का एवरी मैन इन हिज़ ह्यूमर; स्विफ्ट के ड्रेपीअर्स लेटर्स, गुलिवर्स ट्रैवल्स, टेल आफ़ ए टब, आदि सुनाकर हँसाया करता था और इस युक्ति सै उस्को टोपी, रुमाल, घड़ी, छड़ी आदि का बहुधा फ़ायदा हो जाता था. जब मदनमोहन तरुण हुआ तो अलिफ़लैला मैं सै अबुलहसन और शम्सुलूनिहार का क़िस्सा; शेक्स-पियर के नाटकों मैं सै रोमयो एंड जुलियट आदि सुनाकर आदि रस का रसिक बनानें लगा और आप भी उस्के साथ फूल के कीड़े की तरह चैन करनें लगा, परंतु यह सब बातें मदनमोहन के पिता के भय सै गुप्त होती थीं और गुप्त होती थीं इसी सै शिंभूदयाल आदि का बहुत फ़ायदा था. वह पहाड़ी आदमियों की तरह टेढ़ी राह मैं अच्छी तरह चल सक्ता था परंतु समभूमि पर उस्को आदत न थी. जब चुन्नीलाल मदनमोहन के पास आया कुछ दिन इन दोनों की बड़ी खटपट रही परंतु अंत मैं दोनों अपना हानि लाभ समझ कर गरम लोहे की तरह आपस मैं मिल गये. शिंभू-दयाल को मदनमोहन नें सिफ़ारश कर के मदरसे मैं नोकर रखा दिया था इस्कारण वह मदनमोहन की अहसानमंदी के बहानें सै हर वक्त वहाँ बना रहता था.

पंडित पुरुषोत्तम दास भी बचपन सै लाला मदनमोहन के पास आते जाते थे इन्को लाला मदनमोहन के यहाँ सै इन्के स्वरूपानुरूप अच्छा

लाभ हो जाता था परंतु इन्के मन मैं औरों की डाह बड़ी प्रबल थी. लोगों को धनवान, प्रतापवान, विद्वान, बुद्धिमान, सुंदर, तरुण, सुखी और कृतिकार्य देखकर इन्हैं बड़ा खेद होता था. वह यशवान मनुष्यों सै सदा शत्रुता रखते थे औरों को अपनें सुख-लाभ का उद्योग करते देख कर कुढ़ जाते थे ; अपनें दुखिया चित्त को धैर्य देनें के लिए अच्छे अच्छे मनुष्यों के छोटे, छोटे दोष ढूँढ़ा करते थे किसी के यश मैं किसी तरह का कलंक लग जानें सै यह बड़े प्रसन्न होते थे. पापी दुर्योधन की तरह सब संसार के विनाश होने मैं इन्की प्रसन्नता थी. और अपनी सर्वज्ञता बताने के लिए जाने बिना जाने हर काम मैं पाँव अड़ाते थे. मदनमोहन को प्रसन्न करने के लिए अपनी चिड़ करेले की कर रक्खी थी. चुन्नीलाल और शिंभूदयाल आदि की कटती कहनें मैं कसर न रखते थे परंतु अक़ल मोटी थी इसलिए उन्होंने इन्हें खिलोना बना रक्खा था. और परकैंच कबूतर की तरह वह इन्हें अपना बसवर्ती रखते थे.

हकीम अहमद हुसैन बड़ा कमहिम्मत मनुष्य था इस्को चुन्नीलाल और शिंभूदयाल सै कुछ प्रीति न थी परंतु उन्को कर्ता समझ कर अपनें नुक्सान के डर सै यह सदा उन्की खुशामद किया करता था उन्हीं को अपना सहायक बना रक्खा था उन्के पीछै बहुधा मदनमोहन के पास नहीं जाता आता था और मदनमोहन की बड़ाई तथा चुन्नीलाल और शिंभूदयाल की बातों को पुष्ट करने के सिवाय और कोई बात मदनमोहन के आगे मुख सै नहीं निकालता था मदनमोहन के लिये औषधि तक मदनमोहन के इच्छानुसार बताई जाती थी मदनमोहन का कहना उचित हो, अथवा अनुचित हो यह उस्की हाँ मैं हाँ मिलाने को तयार था मदनमोहन की राय के साथ इस्को अपनी राय बदलने मैं भी कुछ उज्र न था ! "यह लाला जी का नोकर था कुछ बैंगनों का नोकर नहीं था" परंतु इन

लोगों की प्रसन्नता मैं कुछ अंतर न आता हो तो यह ब्रजकिशोर की कहन मैं भी सम्मति करने को तैयार रहता था इस्को बड़े, बड़े कामों के करने की हिम्मत तो कहाँ सै आती छोटे, छोटे कामों सै इस्का जी दहल जाता था अजीर्ण के डर सैं भोजन न करने और नुक्सान के डर सै व्यापार न करने की कहावत यहाँ प्रत्यक्ष दिखाई देती थी. इस्को सब कामों मैं पुरानी चाल पसंद थी.

———

बाबू बैजनाथ ईस्ट इंडियन रेलवे कंपनी मैं नोकर था अंग्रेज़ी अच्छी पढ़ा था. यूरुप के सुधरे हुए बिचारों को जान्ता था परंतु स्वार्थपरता ने इस्के सब गुण ढक रक्खे थे; बिद्या थी पर उस्के अनुसार व्यवहार न था "हाथी के दांत खाने के और दिखाने के और थे" इस्के निर्वाह लायक इस्समय बहुत अच्छा प्रबंध हो रहा था परंतु एक संतोष बिना इस्के जी को ज़रा भी सुख न था. लाभ सै लोभ बढ़ता जाता था और समुद्र की तरह इस्की तृष्णा अपार थी. लोभ सैं धर्म, अधर्म का कुछ बिचार न रहता था. बचपन मैं इस्को इल्ममुसल्लिम, तहरीरउक्लेदस और जब्रमुकाबले वगैरे के सीखने मैं परीक्षा के भय सैं बहुत परिश्रम करना पड़ा था परंतु इस्के मन मैं धर्म प्रवृत्ति के उत्तेजित करने के लिए धर्म नीति आदि के असरकारक उपदेश अथवा देशोन्नति के हेतु बाफ और बिजली आदि की शक्ति, नई नई कलों का भेद, और पृथ्वी की पैदावार बढ़ाने के हेतु खेती बाड़ी की बिद्या, अथवा स्वच्छंदता सै अपना निर्वाह करने के लिये देश दशा के अनुसार जीविका करने की रीति और अर्थ बिद्या, तंदुरुस्ती के लिये देह रक्षा के तत्व द्रव्यादि की रक्षा और राजाज्ञा भंग के अपराध सैं बचने को राजाज्ञा का तात्पर्य, अथवा बड़े और बराबरवालों सै यथायोग्य व्यवहार करने के लिए शिष्टाचार का उपदेश बहुत ही कम मिला था बल्कि नहीं मिलने के बराबर था. इसके कई वर्ष तो केवल अंग्रेज़ी भाषा सीखने मैं बिद्या के द्वार पर

खड़े खड़े बीत गये जो अंग्रेज़ों की तरह ये शिक्षा अपनी देश भाषा मैं होती अथवा काम, काम की पुस्तकों का अपनी भाषा मैं अनुवाद हो गया होता तो कितना समय व्यर्थ नष्ट होने सै बचता ? और कितने अधिक लोग उस्सै लाभ उठाते ? परंतु प्रचलित रीति के अनुसार इस्को सच्ची हितकारी शिक्षा नहीं हुई थी जिस्पर अभिमान इतना बढ़ गया था कि बड़े बुढ़े मूर्ख मालूम होने लगे और उन्के काम सै ग्लानि हो गई पर इस विद्वत्ता मैं भी सिवाय नोकरी के और कहीं ठिकाना न था भाग्यबल सै मदरसा छोड़ते ही रेलवे की नोकरी मिल गई पर बाबू साहब को इतने पर संतोष न हुआ वह और किसी बुर्द की ताक झांक मैं लग रहे थे इतने मैं लाला मदनमोहन सै मुलाकात हो गई एक बार लाला मदनमोहन आगरे लखनऊ की सैर को गए उस्समय इसने उन्की स्टेशन पर बड़ी ख़ातिर की थी उसी समय सै इन्की जान पहचान हुई. यह दूसरे तीसरे दिन लाला मदनमोहन के यहाँ जाता था और समा बाँध कर तरह, तरह की बातें सुनाया करता था. इस्की बातों सै मदनमोहन के चित्त पर ऐसा असर हुआ कि वह इस्को सब सै अधिक चतुर और बिश्वासी समझने लगा इस्ने अपनी युक्ति सै चुन्नीलाल वगैरे को भी अपना बना रक्खा था पर अपने मतलब सै निश्चिंत न था. यह सब बातें जान बूझ कर भी धृतराष्ट्र की तरह लोभ सै अपने मन को नहीं रोक सक्ता था.

खेद है कि लाला ब्रजकिशोर और हरकिशोर आदि के वृत्तांत लिखने का अवकाश इस्समय नहीं रहा. अच्छा फिर किसी समय विदित किया जायगा पाठकगण धैर्य रक्खें

प्रकरण १०

प्रबंध (इंतज़ाम)

कारज को अनुबंध लख अरु उत्तर फल चाहि।
पुन अपनी सामर्थ्य लख करै कि न करै ताहि ॥*

(विदुर प्रजागरे)

सबेरे ही लाला मदनमोहन हवाखोरी के लिये कपड़े पहन रहे थे मुंशी चुन्नीलाल और मास्टर शिभूदयाल आ चुके थे.

"आजक़ल मैं हमको एक बार हाकिमों के पास जाना है" लाला मदनमोहन नें कहा.

"ठीक है, आपको म्युनिसिपेलीटी के मेम्बर बनानें की रिपोर्ट हुई थी उस्की मंज़ूरी भी आ गई होगी" मुंशी चुन्नीलाल बोले.

"मंज़ूरी मैं क्या संदेह है? ऐसे लायक़ आदमी सरकार को कहाँ मिलेंगे?" मास्टर शिभूदयाल नें कहा.

"अभी तो (खुशामद मैं) बहुत कसर है! साइराक्यूस के सभासद डायोनिस्यस का थूक चाट जाते थे और अमृत से अधिक मीठा बताते थे" लाला ब्रजकिशोर नें कमरे मैं आते आते कहा.

"यों हर काम मैं दोष निकालनें की तो जुदी बात है पर आप ही बताइये इस्मैं मैंनें झूंट क्या कहा?" मास्टर शिभूदयाल पूछनें लगे.

"लाला साहब नें म्युनिसिपेलीटी का सालानः आमद खर्च अच्छी तरह समझ लिया होगा? आमदनी बढ़ानें के रस्ते अच्छी तरह बिचार

---

* अनुबन्धं च संपेक्ष्य विपाकं चैवकर्म्मणाम्।
उत्थानमात्मनश्चैव धीरः कुर्वीत वा न वा ॥

लिये होंगे ? शहर की सफ़ाई के लिए अच्छे, अच्छे उपाय सोच लिये होंगे ?" लाला ब्रजकिशोर नें पूछा .

"नहीं; इन बातों मैं सै अभी तो किसी बात पर दृष्टि नहीं पहुँचाई गई परंतु इन बातों का क्या है ? ये सब बातैं तो काम करते, करते अपनें आप मालूम हो जायँगी" लाला मदनमोहन नें जवाब दिया .

"अच्छा आप अपनें घर का काम तो इतनें दिन सै करते हो उसके नफ़े नुक्सान और राह बाट सै तो आप अच्छी तरह वाक़िफ़ हो गये होंगे ?" लाला ब्रजकिशोर नें पूछा .

इस्समय लाला मदनमोहन नावाक़िफ़ नहीं बना चाहते थे परंतु वाक़िफ़कार भी नहीं बन सक्ते थे इसलिए कुछ जवाब न दे सके .

"अब आप घर की तरह वहाँ भी औरों के भरोसे रहे तो काम कैसे चलेगा ? और सब बातों सै वाक़िफ़ होनें का बिचार किया तो वाक़िफ़ होंगे जितनें आप के बदले काम कौन करैगा ?" लाला ब्रजकिशोर नें पूछा .

"अच्छा मंज़ूरी आवैगी जितने मैं इन् बातों सै कुछ, कुछ वाक़िफ़ हो लूँगा" लाला मदनमोहन नें कहा .

"क्या इन बातों से पहले आपको अपनें घर के कामों से वाक़िफ़ होनें की ज़रूरत नहीं है ? जब आप अपनें घर का प्रबंध उचित रीति सै कर लेंगे तो प्रबंध करनें की रीति आ जायगी और हरेक काम का प्रबंध अच्छी तरह कर सकैंगे. परंतु जब तक प्रबंध करनें की रीति न आवेगी कोई काम अच्छी तरह न हो सकेगा !" . लाला ब्रजकिशोर कहने लगे . "हाकिमों की प्रसन्नता पर आधार रख ; अपनें मुख सै अधिकार मागनें मैं क्या शोभा है ? और अधिकार लिये पीछै वह काम अच्छी तरह पूरा न हो सकै तो कैसी हँसी की बात है ? और अनुभव हुए बिना कोई काम किस् तरह भली भाँत हो सक्ता है ? महाभारत मैं कौरवौं के गौ घेरनें पर विराट का राजकुमार उत्तर बड़े अभिमान सै उन्को जीतनें की

"हरेक काम के प्रबंध करनें की रीति जुदी जुदी हैं परंतु मैं साधारण रीति सै सब का तत्व आप को सुनाता हूँ" लाला ब्रजकिशोर कहनें लगे. "सावधानी की सहायता लेकर हरेक बात का परिणाम पहले सै सोच लेना, और उन सब पर एक बार दृष्टि कर के जितना अवकाश हो उतनें ही मैं सब बातों का ब्योंत बना लेना निरर्थक चीजों को काम मैं लानें की युक्ति सोचते रहना और जो जो बातें आगै होनें वाली मालूम हों उन्का प्रबंध पहलै ही सै दूर दृष्टि पहुँचा कर धीरे धीरे इस भाँत करते जाना कि समय पर सब काम तयार मिलें, किसी बात का समय न चूकनें पावै, कोई काम उलट पलट न होनें पावै, अपनें आस पास वालों की उन्नति सै आप पीछे न रहे किसी नोकर का अधिकार स्वतंत्रता की हद सै आगे न बढ़नें पावै, किसी पर ज़ुल्म न होनें पावै, किसी के हक़ मैं अंतर न आनें पावै, सब बातों की सम्हाल उचित समय पर होती रहे, परंतु ये सब काम इन्की बारीकियों पर दृष्टि रखनें सै कोई नहीं कर सक्ता बल्कि इस रीति सै बहुत महनत करनें पर भी छोटे छोटे कामों मैं इतना समय जाता रहता है कि उस्के बदले बहुत सै ज़रूरी काम अधूरे रह जाते हैं और तत्काल प्रबंध बिगड़ जाता है इसलिए बुद्धिमान मनुष्य को चाहिये कि काम बाँट कर उन्पर योग्य आदमी मुकर्रर कर दे और उन्की कारवाई पर आप दृष्टि रक्खे पहले अंदाज सै पिछला परिणाम मिलाकर भूल सुधारता जाय एक साथ बहुत काम न छेड़े, काम करनें के समय बटे रहैं आमद सै थोड़ा खर्च हो और कुपात्र को कुछ न दिया जाय. महाराज रामचंद्र जी भरत सै पूछते हैं

"आमद पूरी होत है ? खर्च अल्प दरसाय ।
देत न कबहुँ कुपात्र कों कहहु भरत समुझाय ॥" *

इसी तरह इन्तजाम के कामों मैं रू रीआयत सै बड़ा बिगाड़ होता है. हज़रत सादी कहते हैं—

---

* आयस्ते विपुलः कच्चित्कच्चिदल्पतरो व्ययः ।
अपात्रेषु नते कच्चित्कोषो गच्छतिराघवः ॥

"जिस्सै तैनें दोस्ती की उस्सै नौकरी की आशा न रख" *

"लाला ब्रजकिशोर साहब आज कल की उन्नति के साथी हैं तथापि पुरानी चाल के अनुसार रोचक और भयानक बातों को अपनी कहन मैं मैं इस तरह मिला देते हैं कि किसी को बिल्कुल खबर नहीं होनें पाती" मास्टर शिंभूदयाल नें कहा.

"नहीं मैं जो कुछ कहता हूँ अपनी तुच्छ बुद्धि के अनुसार यथार्थ कहता हूँ" लाला ब्रजकिशोर कहनें लगे "चीन के शहनशाह होएन नें एक बार अपनें मंत्री टिची सै पूछा कि "राज्य के वास्ते सब से अधिक भयंकर पदार्थ क्या है?" मंत्री नें कहा "मूर्ति के भीतर का मूसा" शहनशाह नें कहा "समझा कर कह" मंत्री बोला "अपनें यहाँ काठ की पोली मूर्ति बनाई जाती है और ऊपर सै रंग दी जाती है अब दैव-योग से कोई मूसा उस्के भीतर चला गया तो मूर्ति खंडित होनें के भय से उस्का कुछ नहीं कर सक्ते. इसी तरह हरेक राज्य मैं बहुधा ऐसे मनुष्य होते हैं जो किसी तरह की योग्यता और गुण बिना केवल राजा की कृपा के सहारे सै सब कामों मैं दखल देकर सत्यानास किया करते हैं परंतु राजा के डर सै लोग उन्का कुछ नहीं कर सक्ते." हां जो राजा आप प्रबंध करनें की रीति जान्ते हैं वह उन लोगों के चक्कर सै खूबसूरती के साथ बचे रहते हैं जैसै ईरान के बादशाह आरटाजरकसीस सै एक बार उस्के किसी कृपापात्र नें किसी अनुचित काम करनें के लिए सवाल किया बादशाह नें पूछा कि "तुझको इस्सै क्या लाभ होगा?" कृपापात्र नें बता दिया तब बादशाह नें उतनी रक़म उस्को अपनें ख़जानें सै दिवा दी और कहा कि "ये रुपे ले इन्के देनें सै मेरा कुछ नहीं घटता परंतु तैनें जो अनुचित सवाल किया था उस्के पूरा करनें सै मैं निस्संदेह बहुत कुछ खो बैठता." उचित प्रबंध मैं जरा सा अंतर आनें सै कैसा भयंकर परिणाम

* चूं इकरारे दोस्ती कर दी तवक्के ख़िदमत मदार ॥

होता है इस्पर बिचार करिये कि इसी दिल्ली के तख्त बाबत दारा शिकोह और औरंगज़ेब के बीच युद्ध हुआ उस्समय औरंगज़ेब की पराजय मैं कुछ संदेह न था परंतु दारा शिकोह हाथी सै उतरते ही मानों तख्त सैं उतर गया. मालिक का हाथी खाली देखते ही सब सेना तत्काल भाग निकली ."

"महाराज ! बग्गी तैयार है ." नोकर नें आकर रिपोर्ट की .

"अच्छा चलिये रस्ते मैं बतलाते चलैंगे" लाला ब्रजकिशोर नें कहा. निदान सब लोग बग्गी मैं बैठकर रवानें हुए .

प्रकरण ११

सज्जनता

सज्जनता न मिलै किये जतन करो किन कोय ।
ज्यों कर फार निहारिये लोचन बड़ो न होय ॥

बृंद .

"आप भी कहाँ की बात कहां मिलानें लगे ! म्युनिसिपेलीटी के मेंबर होनें सै और इंतजाम की इन बातों सै क्या संबंध है ? म्युनिसिपेलीटी के कार्य निर्बाह का बोझ एक आदमी के सिर नहीं है उस्मैं बहुत से मेम्बर होते हैं और उन्मैं कोई नया आदमी शामिल हो जाय तो कुछ दिन के अभ्यास सै अच्छी तरह वाक़िफ़ हो सक्ता है . चार बराबर वालों सै बातचीत करनें मैं अपनें विचार स्वतः सुधरते जाते हैं और आजकल के सुधरे विचार जान्नें का सीधा रस्ता तो इस्सै बढ़ कर और कोई नहीं है" मुंशी चुन्नीलाल नें कहा .

"जिस तरह समुद्र मैं नोका चलानेंवाले केवट समुद्र की गहराई नहीं जान सक्के इसी तरह संसार मैं साधारण रीति से मिलनें भेंटनें वाले इधर उधर की निरर्थक बातों सै कुछ फ़ायदा नहीं उठा सक्के बाहर की सज धज और ज़ाहिर की बनावट सै सच्ची सज्जनता का कुछ संबंध नहीं है वह तो दरिद्री धनवान और मूर्ख विद्वान का भेदभाव छोड़ कर सदा मन की निर्मलता के साथ रहती है और जिस जगह रहती है उस्को सदा प्रकाशित रखती है" लाला ब्रजकिशोर नें कहा.

"तो क्या लोगों के साथ आदर सत्कार सै मिलना जुलना और उन्का यथोचित शिष्टाचार करना सज्जनता नहीं है?" लाला मदनमोहन नें पूछा.

"सच्ची सज्जनता मन के संग है" लाला ब्रजकिशोर कहनें लगे. "कुछ दिन हुए जब अपनें गवर्नर जनरल मारक्किस आफ़ रिपन साहब नें अजमेर के मेयो कालिज मैं बहुत से राजकुमारों के आगे कहा था कि "हम चाहे जितना प्रयत्न करैं परंतु तुम्हारी भविष्यत अवस्था तुम्हारे हाथ है. अपनी योग्यता बढ़ानी, योग्यता की क़दर करनी, सत्कर्मों मैं प्रवृत्त रहना, असत्कर्मों सै ग्लानि करना तुम यहाँ सीख जाओगे तो निस्संदेह सरकार मैं प्रतिष्ठा, और प्रजा की प्रीति लाभ कर सकोगे. तुम मैं सै बहुत से राजकुमारों को बड़ी जोखों के काम उठानें पड़ैंगे और तुम्हारी कर्तव्यता पर हज़ारों लाखों मनुष्यों के सुख दुःख का बल्कि जीनें मरनें का आधार रहैगा. तुम बड़े कुलीन हो और बड़े विभववान हो. फ्रेंचभाषा मैं एक कहावत है कि जो अपनें सत्कुल का अभिमान रखता हो उस्को उचित है कि अपनें सत्कर्मों सै अपना बचन प्रमाणिक कर दे. तुम जान्ते हो कि अंग्रेज़ लोग बड़े, बड़े ख़िताबों के बदले सज्जन (Gentleman) जैसे साधारण शब्दों को अधिक प्रिय समझते हैं इस शब्द का साधारण अर्थ ये है कि मर्यादाशील, नम्र और सुधरे विचार का मनुष्य हो, निस्संदेह

ये गुण यहाँ के बहुत से अमीरों मैं हैं परंतु इस्के अर्थ पर अच्छी तरह दृष्टि की जाय तो इस्का आशय बहुत गंभीर मालूम देता है. जिस मनुष्य की मर्यादा, नम्रता और सुधरे विचार केवल लोगों को दिखाने के लिए न हों बल्कि मन से हों, अथवा जो सच्चा प्रतिष्ठित, सच्चा वीर और पक्षपात रहित न्यायपरायण हो, जो अपनें शरीर को सुख देनें के लिए नहीं बल्कि धर्म से औरों के हक़ मैं अपना कर्तव्य संपादन करनें के लिए ज़ीता हो; अथवा जिस्का आशय अच्छा हो जो दुष्कर्मों से सदैव बचता हो वह सच्चा सज्जन है."

"निस्संदेह सज्जनता का यह कल्पित चित्र अति विचित्र है परंतु ऐसा मनुष्य पृथ्वी पर तो कभी कोई काहे को उत्पन्न हुआ होगा" मास्टर शिंभूदयाल नें कहा.

"हम लोग जहाँ खड़े हों वहाँ से चारों तरफ़ को थोड़ी थोड़ी दूर पर पृथ्वी और आकाश मिले दिखाई देते हैं परंतु हकीकत मैं वह नहीं मिले इसी तरह संसार के सब लोग अपनी, अपनी प्रकृति के अनुसार और मनुष्यों के स्वभाव का अनुमान करते हैं परंतु दर असल उन्मैं बड़ा अंतर है" लाला ब्रजकिशोर कहनें लगे, "देखो—एथेन्स का निवासी आरिस्टाईडीज एक बार दो मनुष्यों का इंसाफ़ करने बैठा तब उन्मैं से एक नें कहा कि "प्रतिपक्षी नें आप को भी प्रथम बहुत दुख दिया है आरिस्टाईडीज नें जवाब दिया कि "मित्र! इस्नें तुमको दुख दिया हो वह बताओ क्योंकि इससमय मैं अपना नहीं; तुम्हारा इंसाफ़ करता हूँ."

"प्रीवरनम के लोगों नें रूम के विपरीत बलवा उठाया उससमय रूम की सेना नें वहाँ के मुखिया लोगों को पकड़ कर राजसभा मैं हाज़िर किया उससमय प्लाटीनियस नामी सभासद नें एक बँधुए से पूछा कि "तुम्हारे लिए कौन्सी सज़ा मुनासिब है?" बँधुए नें जवाब दिया कि "जो अपनी स्वतंत्रता चाहनें वालों के वास्तै मुनासिब हो" इस उत्तर से

और सभासद अप्रसन्न हुए पर प्लाटीनियस प्रसन्न हुआ और बोला "अच्छा ! राजसभा तुम्हारा अपराध क्षमा कर दे तो तुम कैसा बरताव रक्खो ?" "जैसा हमारे साथ राजसभा रक्खे" बँधुआ कहनें लगा "जो राजसभा हमसे मानपूर्वक मेल करेगी तो हम सदा ताबेदार बनें रहैंगे परंतु हमारे साथ अन्याय और अपमान सै बरताव होगा तो हमारी बफ़ा-दारी पर सर्वथा विश्वास न रखना" इस जवाब सै और सभासद अधिक चिड़ गए और कहनें लगे कि "इस्मैं राजसभा को धमकी दी गई है" प्लाटीनियस नें समझाया कि "इस्मैं धमकी कुछ नहीं दी गई यह एक स्वतंत्र मनुष्य का सच्चा जवाब है." निदान प्लाटीनियस के समझानें सै राजसभा का मन फिर गया और उस्नें उन्हें क़ैद सै छोड़ दिया.

"मेसीडोन के पादशाह पीरस नें रूम के क़ैदियों को छोड़ा उस्समय फेब्रीशियस नामी एक रूमी सरदार को एकांत मैं ले जाकर कहा "मैं जान्ता हूँ कि तुम जैसा वीर, गुणवान, स्वतंत्र, और सच्चा मनुष्य रूम के राज भर मैं दूसरा नहीं है जिस्पर तुम ऐसे दरिद्री बन रहे हो यह बड़े खेद की बात है ! सच्ची योग्यता की क़दर करना राजाओं का प्रथम कर्तव्य है इसलिये मैं तुमको तुम्हारी पदवी के लायक़ धनवान बनाया चाहता हूँ परंतु मैं इस्मैं तुम्हारे ऊपर कुछ उपकार नहीं करता अथवा इसके बदले तुम सै कोई अनुचित काम नहीं लिया चाहता. मेरी केवल इतनी प्रार्थना है कि उचित रीति सै अपना कर्तव्य संपादन किये पीछै न्यायपूर्वक मेरी सहायता हो सके सो करना." फेब्रीशियस नें उत्तर दिया कि "निस्संदेह मैं धनवान नहीं हूँ मैं एक छोटे से मकान मैं रहता हूँ और ज़मीन का एक छोटा सा क़िता मेरे पास है. परंतु ये मेरी ज़रूरत के लिये बहुत है और ज़रूरत सै ज्याद: लेकर मुझको क्या करना है ? मेरे सुख मैं किसी तरह का अंतर नहीं आता मेरी इज्जत और धनवानों सै बढ़कर है, मेरी नेकी मेरा धन है मैं चाहता तो अब तक बहुत सी दौलत इकट्ठी कर लेता परंतु दौलत की अपेक्षा मुझको अपनी

इज्जत प्यारी है इसलिये तुम अपनी दौलत अपने पास रक्खो और मेरी इज्जत मेरे पास रहनें दो" .

"नोशेरवाँ अपनी सेना का सेनापति आप था एक बार उस्की मंज़ूरी सै ख़ज़ांची ने तनख्वाह बाँटनें के वास्तै सब सैना को हथियार बंद होकर हाज़िर होनें का हुक्म दिया पर नोशेरवाँ इस हुक्म से हाज़िर न हुआ इसलिये ख़ज़ांची नें क्रोध करके सब सेना को उलटा फेर दिया और दूसरी बार भी ऐसा ही हुआ तब तीसरी बार ख़ज़ांची नें डोंडी पिटवाकर नोशेरवाँ को हाज़िर होनें का हुक्म दिया . नोशेरवाँ उस हुक्म के अनुसार हाज़िर हुआ परंतु उस्की हथियार बंदी ठीक न थी . ख़ज़ांची नें पूछा "तुम्हारे धनुष की फाल्तू प्रत्यंचा कहाँ है ?" नोशेरवाँ नें कहा "महलों मैं भूल आया" ख़ज़ांची नें कहा "अच्छा ! अभी जाकर ले आओ" इस्पर नोशेरवाँ महलों में जाकर प्रत्यंचा ले आया तब सब की तनख्वाह बटी परंतु नोशेरवाँ ख़ज़ांची के इस अपक्षपात काम सै ऐसा प्रसन्न हुआ कि उसे निहाल कर दिया . इस प्रकार सच्ची सज्जनता के इतिहास मैं सैकड़ों दृष्टांत मिल्ते हैं परंतु समुद्र मैं गोता लगाए बिना मोती नहीं मिल्ता ."

"आप बार, बार सच्ची सज्जनता कहते हैं सो क्या सज्जनता, सज्जनता मैं भी कुछ भेद भाव है ?" लाला मदनमोहन नें पूछा .

"हां सज्जनता के दो भेद हैं एक स्वाभाविक होती है जिसका वर्णन मैं अब तक करता चला आया हूँ . दूसरी ऊपर सै दिखानें की होती है जो बहुधा बड़े आदमियों मैं और उन्के पास रहनेंवालों मैं पाई जाती है. बड़े आदमियों के लिए वह सज्जनता सुंदर वस्त्रों के समान समझनी चाहिये जिस्को वह बाहर जाती बार पहन जाते हैं और घर मैं आते ही उतार देते हैं स्वाभाविक सज्जनता स्वच्छ स्वर्ण के अनुसार है जिस्को चाहे जैसे तपाओ, गलाओ परंतु उस्मैं कुछ अंतर नहीं आता . ऊपर सै दिखानेंवालों की सज्जनता गिल्टी के समान है जो रगड़ लगते ही उतर

जाती है ऊपर के दिखानेंवाले लोग अपना निज स्वभाव छिपाकर सज्जन बन्नें के लिये सच्चे सज्जनों के स्वभाव की नक़ल करते हैं परंतु परीक्षा के समय उन्की कलई तत्काल खुल जाती है; उन्के मन मैं विकास के संकुचित भाव, सादगी के बदले बनावट, धर्म प्रवृत्ति के बदले स्वार्थपरता और धैर्य के बदले घबराट इत्यादि प्रगट दिखनें लगते हैं, उन्का सब सद्भाव अपनें किसी गूढ़ प्रयोजन के लिये हुआ करता है परंतु उन्के मन को सच्चा सुख इस्सै सर्वथा नहीं मिल सक्ता".

प्रकरण १२

सुख दुःख

आत्मा को आधार अरु साक्षी आत्मा जान ।
निज आत्मा को भूलहू करिये नहिं अपमान ॥*

(मनुस्मृतिः)

"सुख दुःख तो बहुधा आदमी की मानसिक वृत्तियों और शरीर की शक्ति के आधीन है . एक बात सै एक मनुष्य को अत्यंत दुःख और क्लेश होता है वही बात दूसरे को खेल तमाशे की सी लगती है इसलिए सुख दुःख होनें का कोई नियम नहीं मालूम होता" मुंशी चुन्नीलाल नें कहा .

"मेरे जान तो मनुष्य जिस बात को मन सै चाहता है उस्का पूरा

---

* आत्मैव ह्यात्मनः साक्षी गतिरात्मा तथात्मनः ।
भावसंस्थाः स्वमात्मानं नृणां साक्षिणमुत्तमम् ॥

होना ही सुख का कारण है और उसमैं हर्ज पड़नें ही से दुःख होता है." मास्टर शिंभूदयाल नें कहा.

"तो अनेक बार आदमी अनुचित काम करके दुःख मैं फँस जाता है और अपनें किये पर पछताता है इस्का क्या कारण ? असल बात यह है कि जिस्समय मनुष्य के मन मैं जो वृत्ति प्रबल होती है वह उसी के अनुसार काम किया चाहता है और दूरअंदेशी की सब बातों को सहसा भूल जाता है परंतु जब वो बेग घटता है तबियत ठिकानें आती है तो वो अपनी भूल का पछतावा करता है और न्याय बृत्ति प्रबल हुई तो सबके साम्हनें अपनी भूल अंगीकार कर कै उसके सुधारनें का उद्योग करता है पर निकृष्ट प्रवृत्ति प्रबल हुई तो छल करके उस्को छिपाया चाहता है अथवा अपनी भूल दूसरे के सिर रक्खा चाहता है और एक अपराध छिपानें के लिये दूसरा अपराध करता है परंतु अनुचित कर्म सै आत्मग्लानि और उचित कर्म सै आत्मप्रसाद हुए बिना सर्वथा नहीं रहता" लाला ब्रजकिशोर बोले.

"अपना मन मारनें सै किसी को खुशी क्यों कर हो सक्ती है ?" लाला मदनमोहन आश्चर्य सै कहनें लगे.

"सब लोग चित्त का संतोष और सच्चा आनंद प्राप्त करनें के लिये अनेक प्रकार के उपाय करते हैं परंतु सब बृत्तियों के अविरोध सै धर्म प्रवृत्ति के अनुसार चलनेंवालों को जो सुख मिल्ता है वह और किसी तरह नहीं मिल सक्ता" लाला ब्रजकिशोर कहनें लगे "मनुस्मृति मैं लिखा है—

"जाको मन अरु बचन शुचि बिध सों रक्षित होय।
अति दुर्लभ वेदान्त फल जग मैं पावत सोय॥"*

---

* यस्य वाङ्मनसी शुद्धे सम्यग्गुप्ते च सर्वदा।
सवै सर्व मवाप्नोति वेदान्तोपगतम्फलम्॥

जो लोग ईश्वर के बांधे हुए नियमों के अनुसार सदा सत्कर्म करते रहते हैं उन्को आत्मप्रसाद का सच्चा सुख मिल्ता है उन्का मन विकसित पुष्पों के समान सदा प्रफुल्लित रहता है; जो लोग कह सक्ते हैं कि हम अपनी सामर्थ्य भर ईश्वर के नियमों का प्रतिपालन करते हैं, यथाशक्ति परोपकार करते हैं, सब लोगों के साथ अनीत छोड़कर नीतिपूर्वक सुहृद्भाव रखते हैं, अतिशय भक्ति और विश्वासपूर्वक ईश्वर की शरणागति हो रहे हैं वही सच्चे सुखी हैं . वह अपने निर्मल चरित्रों को बारंबार याद कर कै परम संतोष पाते हैं . यद्यपि उन्का सत्कर्म मनुष्य मात्र न जान्ते हों इसी तरह किसी के मुख सै एक बार भी अपने सुयश सुन्नें की संभावना न हो, तथापि वह अपने कर्तव्य काम मैं अपने को कृतकार्य देखकर अद्वितीय सुख पाते हैं उचित रीति सै निष्प्रयोजन होकर किसी दुखिया का दुःख मिटाने की, किसी मूर्ख को ज्ञानोपदेश करने की एक एक बात याद आने सै उन्को जो सुख मिल्ता है वह किसी को बड़े सै बड़ा राज मिलने पर भी नहीं मिल सक्ता . उन्का मन पक्षपात रहित होकर सबके हित-साधन मैं लगा रहता है इस्कारण वह सबके प्यारे होने चाहियें परतु मूर्ख जलन सै, हट सै, स्वार्थपरता सै अथवा उन्का भाव जाने बिना उन्सै द्वेष करै, उनका बिगाड़ करना चाहें तो क्या कर सक्ते हैं ? उन्का सर्वस्व नष्ट हो जाय तो भी वह नहीं घबराते; उन्के हृदय मैं जो धर्म का खज़ाना इकठा हो रहा है उस्के छूने की किसको सामर्थ्य है ? आपनें सुना होगा कि महाराज रामचंद्र जी को राजतिलक के समय चौदह वर्ष का बनवास हुआ उस्समय उन्के मुख पर उदासी के बदले प्रसन्नता चमकनें लगी .

"इंगलैंड की गद्दी बाबत एलीज़ाबेथ और मेरी के बीच विवाद हो रहा था उस्समय लेडी जेन ग्रे को उस्के पिता, पति और स्वसुर नें गद्दी पर बिठाना चाहा परंतु उस्को राज का लोभ न था वह होशियार, विद्वान

और धर्मात्मा स्त्री थी . उस्ने उन्को समझाया कि "मेरी निस्बत मेरी और एलिज़ाबेथ का ज्याद: हक़ है और इस काम सै तरह, तरह के बखेड़े उठने की संभावना है . मैं अपनी वर्तमान अवस्था मैं बहुत प्रसन्न हूँ इसलिये मुझको क्षमा करो" पर अंत मैं उस्को अपनी मरज़ी के उपरांत बड़ों की आज्ञा सै राजगद्दी पर बैठना पड़ा परंतु दस दिन नहीं बीते इतने मैं मेरी नें पकड़ कर उसै क़ैद किया और उस्के पति समेत फाँसी का हुक्म दिया . वह फाँसी के पास पहुँची उस्समय उस्ने अपने पति को लटकते देख कर तत्काल अपनी याददाश्त मैं यह तीन बचन लाटिन, यूनानी, और अंग्रेज़ी मैं क्रम सै लिखे कि "मनुष्य जाति के न्याय ने मेरी देह को सज़ा दी परंतु ईश्वर मेरे ऊपर कृपा करेगा . और मुझको किसी पाप के बदले यह सज़ा मिली होगी तो अज्ञान अवस्था के कारण मेरे अपराध क्षमा किये जायेंगे . और मैं आशा रखती हूँ कि सर्वशक्तिमान परमेश्वर और भविष्यत काल के मनुष्य मुझ पर कृपा दृष्टि रखेंगे" उस्नें फाँसी पर चढ़ कर सब लोगों के आगे एक वक्तृता की जिस्मैं अपनें मरनें के लिये अपनें सिवाय किसी को दोष न दिया _ वह बोली कि "इंगलैंड की गद्दी पर बैठने के वास्तै उद्योग करने का दोष मुझ पर कोई नहीं लगावेगा परंतु इतना दोष अवश्य लगावेगा कि "वह औरों के कहने सै गद्दी पर क्यों बैठी ? उस्ने जो भूल की वह लोभ के कारण नहीं, केवल बड़ों के आज्ञावर्ती होकर की थी" सो यह करना मेरा फर्ज था परंतु किसी तरह करो जिस्के साथ मैंने अनुचित व्यवहार किया उस्के हाथ मैं प्रसन्नता सै अपनें प्राण देने को तयार हूं" यह कहकर उस्ने बड़े धैर्य से अपनी जान दी" .

"दुखिया अपने मन को धैर्य देनें के लिये चाहे जैसे समझा करैं परंतु साधारण रीति तो यह है कि उचित उपाय सै हो अथवा अनुचित उपाय सै हो जो अपना काम निकाल् लेता है वही सुखी समझा जाता है. आप विचार कर देखैंगे तो मालूम हो जायगा कि आज भूमंडल मैं जितने

अमीर और रहीस दिखाई देते हैं उन्के बड़ों मैं सै बहुतों ने अनुचित कर्म कर कै यह वैभव पाया होगा" मुंशी चुन्नीलाल ने कहा.

"कभी अनुचित कर्म करनें सै सच्चा सुख नहीं मिलता, प्रथम तो मनु महाराज और लोमश ऋषि एक स्वर सै कहते हैं कि—

"कर अधर्म पहले बढ़त सुख पावत बहु भांत।
शत्रुन जय कर आप पुन मूल सहित बिनसात॥*"

फिर जिस तरह सत्कर्म का फल आत्मप्रसाद है इसी तरह दुष्कर्म का फल आत्मग्लानि, आंतरिक दुःख अथवा पछतावा हुए बिना सर्वथा नहीं रहता. मनुस्मृति मैं लिखा है—

"पापी समुझत पाप कर काहू देख्यो नाहिं।
पै सुर अरु निज आतमा निस दिन देखत जाहिं॥"†

लाला ब्रजकिशोर कहनें लगे "जिस्समय कोई निकृष्ट प्रवृत्ति अत्यंत प्रबल होकर धर्मप्रवृत्ति की रोक नहीं मान्ती उस्समय हम उस्की इच्छा पूरी करनें के लिए पाप करते हैं परंतु उस काम सै निवृत्ति होते ही हमारे मन मैं अत्यंत ग्लानि होती है हमारी आत्मा हमको धिक्कारती है और लोक परलोक के भय सै चित्त बिकल रहता है जिस्नें अपनें अधर्म सै किसी का सुख हर लिया है अथवा स्वार्थपरता के बसवर्ती होकर उपकार के बदले अपकार किया है, अथवा छल बल सै किसी का धर्म भ्रष्ट कर

---

* अधर्मेणैधते तावत्ततो भद्राणि पश्यति।
ततः सपत्नान् जयति समूलस्तूविनश्यति॥
वर्द्धत्य धर्मेण नरस्ततो भद्राणि पश्यति।
ततः सपत्नान् जयति समूलस्तूविनश्यति॥

† मन्यन्ते वै पापकृतो न कश्चित् पश्यतीतिनः।
तांस्तु देवाः पप्रश्यन्ति स्वस्यैवान्तर पूरुषः॥

दिया है, जो अपने मन मैं समझता है कि मुझ सै फ़लाने का सत्यानाश हुआ, अथवा मेरे कारण फ़लानें के निर्मल कुल मैं कलंक लगा, अथवा संसार मैं दुःख के सोते इतनें अधिक हुए मैं उत्पन्न न हुआ होता तो पृथ्वी पर इतना पाप कम होता, केवल इन बातों की याद उस्का हृदय विदीर्ण करनें के लिये बहुत है और जो मनुष्य ऐसी अवस्था मैं भी अपनें मन का समाधान रख सकै उस्को मैं बज्रहृदय समझता हूँ. जिसनें किसी निर्धन मनुष्य के साथ छल अथवा विश्वासघात करके उस्की अत्यंत दुर्दशा की है उस्की आत्मग्लानि और आंतरिक दुःख का बरणन् कौंन कर सक्ता है ? अनेक प्रकार के भोग विलास करनेंवालों को भी समय पाकर अवश्य पछ्तावा होता है . जो लोग कुछ्र काल श्रद्धा और यत्नपूर्वक धर्म का आनंद लेकर इस दलदल मैं फस्ते हैं उन्सै आत्मग्लानि और आंतरिक दाह का क्लेश पूछना चाहिये .

"टरकी का खलीफ़ा मौन्तासर अपनें बाप को मरवा कर उस्के महल का क़ीमती सामान देख रहा था उससमय एक उम्दा तस्वीर पर उस्की दृष्टि पड़ी जिस्मैं एक सुशोभित तरुण पुरुष घोड़े पर सवार था और रत्नजटित "ताज" उस्के सिर पर शोभायमान था . उस्के आसपास फ़ारसी मैं बहुत सी इबारत लिखी थी खलीफ़ा नें एक मुंशी को बुला कर वह इबारत पढ़वाई उस्मैं लिखा था कि "मैं सीरोज़ खुसरो का बेटा हूं मैंनें अपनें बाप का ताज लेनें के वास्तै उसे मरवा डाला पर उस्के पीछै वह ताज मैं सिर्फ छ महीनें अपनें सिर पर रख सका" यह बात सुन्ते ही खलीफ़ा मौन्तासर के दिल पर चोट लगी और अपनें आंतरिक दुःख सै वह केवल तीन दिन राज कर कै मर गया" .

"यह आत्मग्लानि अथवा आंतरिक क्लेश किसी नए पंछी को जाल मैं फँसनै सै भलै ही होता हो परानें खिलाड़ियों को तो इस्की खबर भी नहीं होती संसार मैं इस्समय ऐसे बहुत लोग मोजूद हैं जो दूसरे के प्राण लेकर हाथ भी नहीं धोते" मास्टर शिंभूदयाल नें कहा .

"यह बात आप नें दुरुस्त कही निस्संदेह जो लोग लगातार दुष्कर्म करते चले जाते हैं और एक अपराधी सै बदला लेनें के लिये आप अपराधी बन जाते हैं अथवा एक दोष छिपानें के लिए दूसरा दूषित कर्म करनें लगते हैं या जिन्को केवल अपनें मतलब सै ग़र्ज़ रहती है उन्के मन सै धीरे धीरे अधर्म की अरुचि उठती जाती है" लाला ब्रजकिशोर कहनें लगे "जैसे दुर्गंध मैं रहनेंवाले मनुष्यों के मस्तक मैं दुर्गंध समा जाती है तब उन्को वह दुर्गंध नहीं मालूम होती अथवा बारबार तरवार को पत्थर पर मारनें सै उस्की धार अपनें आप भोंटी होती जाती है इसी तरह ऐसे मनुष्यों के मन सै अभ्यास बस अधर्म की ग्लानि निकल कर उन्के मन पर निकृष्ट प्रवृत्तियों का पूरा अधिकार हो जाता है. विदुर जी कहते हैं—

"तासों पाप न करत बुध किये बुद्धि कौ नाश।
बुद्धि नास ते बहुरि नर पापै करत प्रकाश॥"*

यह अवस्था बड़ी भयंकर है और सन्निपात के समान इस्सै आरोग्य होनें की आशा बहुत कम रहती है . ऐसी अवस्था मैं निस्संदेह शिभूदयाल के कहनें मूजब उन्को अनुचित रीति सै अपनी इच्छा पूरी करनें मैं सिवाय आनंद के कुछ पछतावा नहीं होता परंतु उन्को पछतावा हो या न हो ईश्वर के नियमानुसार उन्हें अपनें पापों का फल अवश्य भोगना पड़ता है. मनुस्मृति मैं लिखा है—

"वेद, यज्ञ, तप, नियम, अरु बहुत भांति के दान।
दुष्टहृदय को जगत मैं करत न कछु कल्यान॥"†

---

* तस्मात् पापं न कुर्वीत पुरुषः शंसितव्रतः।
पापं प्रज्ञां नाशयति क्रियमाणं पुनः पुनः॥

† वेदास्त्यागश्चयज्ञाश्च नियमाश्च तपांसिच।
नविप्रभावदुष्टस्य सिद्धिं गच्छन्ति कर्हिचित्॥

ऐसे मनुष्यों को समाज की तरफ़ सै. राज की तरफ़ सै, अथवा ईश्वर की तरफ़ सै अवश्य दंड मिल्ता है और बहुधा वह अपना प्राण देकर उस्सै छुट्टी पाते हैं इसलिए सुख दुःख का आधार इच्छाफल की प्राप्ति पर नहीं बल्कि सत्कर्म और दुष्कर्म पर है."

इस्तरह पर अनेक प्रकार की बातचीत करते हुए लाला मदनमोहन की बग्गी मकान पर लोट आई और लाला ब्रजकिशोर वहाँ सै रुखसत होकर अपनें घर गए.

प्रकरण १३

बिगाड़ का मूल—विवाद

कोपै बिन अपराध, रीझै बिन कारन जु नर।
ताको शील असाध, शरद काल के मेघ जों ॥*

(बिदुर प्रजागरे)

लाला मदनमोहन हवा खाकर आए उस्समय लाला हरकिशोर साठन की गठरी लाकर कमरे मैं बैठे थे.

"कल तुम नें लाला हरदयाल साहब के साम्नें बड़ी ढिटाई की परंतु मैं पुरानी बातों का बिचार करके उस्समय कुछ नहीं बोला" लाला मदन-मोहन नें कहा.

---

* अकस्मा देव कुप्यंति प्रसीदंत्य निमित्तशः।
शीलमेतदसाधूनामभ्रंपारिप्लवं यथा ॥

"आपनें बड़ी दया की पर अब मुझको आप सै एकांत मैं कुछ कहना है, अवकाश हो तो सुन लीजिए" लाला हरकिशोर बोले.

"यहाँ तो एकांत ही है तुमको जो कुछ कहना हो निस्संदेह कहो" लाला मदनमोहन नें जवाब दिया.

"मुझको इतना ही कहना है कि मैंने अब तक अपनी समझ मूजिब आपको अप्रसन्न करनें की कोई बात नहीं की परंतु मेरी सब बातें आपको बुरी लगती हैं तो मैं भी ज्यादः आवा जाई रखनें मैं प्रसन्न नहीं हूँ. किसी नें सच कहा है

"जब तो हम गुल थे मियाँ लगते हजारों के गले।
अब तो हम खार हुए सबसै किनारे ही भले॥"

संसार मैं प्रीति स्वार्थपरता का दूसरा नाम है समय निकले पीछे दूसरे सै मेल रखनें की किसी को क्या ग़रज़ पड़ी है? अच्छा! महरबानी करके मेरे माल की कीमत मुझको दिलवा दें" हरकिशोर नें रुखाई सै कहा.

"क्या तुम कीमत का तकाजा कर के लाला साहब को दबाया चाहते हो?" मुंशी चुन्नीलाल बोले.

"हरगिज़ नहीं, मेरी क्या मजाल?" हरकिशोर कहनें लगे. "सब जान्ते हैं कि मेरे पास गाँठ की पूँजी नहीं है, मैं जहाँ तहाँ सै माल लाकर लाला साहब के हुक्म की तामील कर देता था परंतु अब की बार रुपे मिलनें मैं देर हुई कई एक़रार झूँटे हो गए इसलिए लोगों का विश्वास जाता रहा अब आज कल मैं उन्के माल की कीमत उन्के पास न पहुँचेगी तो वे मेरे ऊपर नालिश कर देंगे और मेरी इज्ज़त धूल मैं मिल जायगी".

"तुम कुछ दिन धैर्य धरो, तुम्हारे रुपे का भुगतान हम बहुत जल्दी कर देंगे" लाला मदनमोहन नें कहा.

"जब मेरे ऊपर नालिश हो गई और मेरी साख जाती रही तो फिर रुपे मिलनें सै मेरा क्या काम निकला?

"देखो अवसर को भलो जासों सुधरे काम।
खेती सूखे बरसबो घन को निपट निकाम॥"

मैं जान्ता हूँ कि आपको अपनें कारण किसी ग़रीब की इज्ज़त मैं बट्टा लगाना हरगिज़ मंजूर न होगा". लाला हरकिशोर नें. कुछ नरम पड़ कर कहा.

"तुम्हारा रुपया कहां जाता है? तुम ज़रा धैर्य रक्खो. तुमने यहां से बहुत कुछ फ़ायदा उठाया है, फिर अबकी बार रुपे मिलनें मैं दो चार दिन की देर हो गई तो क्या अनर्थ हो गया? तुमको ऐसा कड़ा तक़ाज़ा करनें मैं लाज नहीं आती? क्या संसार से मेल मुलाहज़ा बिल्कुल उठ गया?" मुंशी चुन्नीलाल नें कहा.

"मैं भी इसी चारा विचार मैं हूँ" हरकिशोर नें जवाब दिया "मैं तो माल देकर मोल चाहता हूँ. ज़रूरत के सबब से तक़ाज़ा करता हूँ पर न जानें और लोगों को क्या हो गया जो बेसबब मेरे पीछे पड़ रहे हैं? मुझ से उन्को बहुत कुछ लाभ हुआ होगा परंतु इस्समय वे सब 'तोता चश्म' हो गए. उन्हीं के कारण मुझको यह तक़ाज़ा करना पड़ता है. जो आज कल मैं मेरे लेनदारों का रुपया न चुका, तो वे निस्संदेह मुझपर नालिश कर देंगे और मैं ग़रीब अमीरों की तरह दबाव डालकर उन्को किसी तरह न रोक सकूंगा?"

"तुम्हारी ठग विद्या हम अच्छी तरह जान्ते हैं, तुम्हारी ज़िद से इस्समय तुम को फूटी कौड़ी न मिलेगी, तुम्हारे मन मैं आवे सो करो." मुंशी चुन्नीलाल नें कहा.

"जनाब ज़बान सम्हाल कर बोलिये. माल देकर क़ीमत मांगना ठग विद्या है? गिरधर सच कहता है

"साईं नदी समुद्र सों मिली बड़प्पन जानि।
जात नास भयो आपनो मान महत की हानि॥

मान महत की हानि कहो अब कैसी कीजै ।
जल खारो ह्वै गयो ताहि कहु कैसैं पीजै ॥
कह गिरधर कविराय कच्छ मच्छन सकुचाई ।
बड़ो फ़जीहतचार भयो नदियन को साईं ॥"

"बस अब तुम यहाँ सै चल दो . ऐसे बाज़ारू आदमियों का यहाँ कुछ काम नहीं है" मास्टर शिंभूदयाल नें कहा .

"मैं नें किसी अमीर के लड़के को बहकाकर बदचलनी सिखाई ? या किसी अमीर के लड़के को भोग विलास मैं डालकर उस्की दौलत ठग ली जो तुम मुझे बाज़ारू आदमी बताते हो ?"

"तुम कपड़ा बेंचनें आये हो या झगड़ा करनें आये हो ?" मुंशी चुन्नीलाल पूछनें लगे .

"न मैं कपड़ा बेंचनें आया न मैं झगड़ा करनें आया, मैं तो अपना रुपया वसूल करनें आया हूं. मेरा रुपया मेरी झोली मैं डालिये फिर मैं यहाँ क्षण भर न ठैरूँगा."

"नहीं जी, तुमको ज़बरदस्ती यहाँ ठैरनें का कुछ अखत्यार नहीं है रुपे का दावा हो तो जाकर अदालत मैं नालिश करो" मास्टर शिंभूदयाल बोले .

"तुम लोग अपनी गली के शेर हो यहाँ चाहे जो कह लो परंतु अदालत मैं तुम्हारी गीदड़ भपकी नहीं चल सक्ती . तुम नहीं जान्ते कि ज्यादः घिस्नें पर चंदन सै भी आग निकलती है अच्छे आदमियों को खातर शिष्टाचार सै चाहे जितना दबा लो परंतु अभिमान और धमकी सै वह कभी नहीं दबता ."

"तो क्या तुम हमको इन बातों सै दबा लोगे ?" लाला मदनमोहन नें त्योरी चढ़ाकर कहा .

"नहीं साहब, मेरा क्या मक़्दूर है ! मैं ग़रीब, आप अमीर . मुझको दिन भर रोज़गार धंधा करना पड़ता है, आप का सब दिन हँसी दिल्लगी

की बातों मैं जाता है . मैं दिन भर पैदल भटकता हूँ, आप सवारी बिना एक क़दम नहीं चल्ते . मेरे रहनें की एक झोंपड़ी, आप के बड़े बड़े महल . मुल्क मैं अकाल हो, ग़रीब बिचारे भूखों मरते हों, आपके यहाँ दिन रात ये ही हाहा, हीही रहैगी . सच है आप पर उन्का क्या हक़ है ? उनसै आपका क्या संबंध है ? परमेश्वर नें आपको मनमानी मोज करनें के लिए दौलत दे दी फिर औरों के दुख दर्द मैं पड़नें की आपको क्या ज़रूरत रही ! आप के लिये नीति अनीति की कोई रोक नहीं है, आप—"

"क्यों जी ! तुम अपनी बकवाद नहीं छोड़ते. अच्छा जमादार इन्को हाथ पकड़ कर यहाँ सै बाहर निकाल दो और इन्की गठरी उठा कर गली मैं फेंक दो" मुंशी चुन्नीलाल नें हुक्म दिया .

"मुझको उठाने को क्या ज़रूरत है ? मैं आप जाता हूँ परंतु तुमनें बेसबब मेरी इज्ज़त ली है इस्का परिणाम थोड़े दिन मैं देखोगे जिस तरह राजा द्रुपद नें बचपन मैं द्रोणाचार्य सै मित्रता करके राज पानें पर उन्का अनादर किया तब द्रोणाचार्य नें कौरव पांडवों को चढ़ा ले जाकर उस्की मुश्कें बँधवा ली थीं और चाणक्य नें अपनें अपमान होनें पर नंद वंश का नाश करके अपनी प्रतिज्ञा पूरी कर दिखाई थी, पृथ्वीराज नें संयोगता के बसवर्ती होकर चंद और हाहुली राय को लौंडियों के हाथ पिटवाया तब हाहुली राय नें उस्का बदला पृथ्वीराज सै लिया था, इसी तरह परमेश्वर नें चाहा तो मैं भी इस्का बदला आप से लेकर रहूँगा" यह कह कर हरकिशोर नें तत्काल अपनी गठरी उठा ली और गुस्सै मैं मूछों पर ताव देता चला गया .

"ये बदला लेंगे ! ऐसे बदला लेनें वाले सैकड़ों झक मारते फिरते हैं" हरकिशोर के जाते ही मुंशी चुन्नीलाल नें मदनमोहन को दिलासा देनें के लिये कहा .

"जो यों किसी के बैर भाव सै किसी का नुक्सान हो जाया करै तो बस संसार के काम ही बंद हो जायँ" मास्टर शिंभूदयाल बोले .

"सूर्य चंद्रमा की तरफ़ धूल फेंकनेंवाले अपने ही सिर पर धूल डालते हैं" पंडित पुरुषोत्तम दास ने कहा. पर इन बातों सै लाला मदनमोहन को संतोष न हुआ.

"मैं हरकिशोर को ऐसा नहीं जान्ता था, वह तो आज आपे सै बाहर हो गये. अच्छा! अब वह नालिश कर दें तो उस्की जवाबदिही किस तरह करनी चाहिये? मैं चाहता हूँ कि चाहे जितना रुपया खर्च हो जाय परंतु हरकिशोर के पल्लै फूटी कौड़ी न पड़े" लाला मदनमोहन नें अपनें स्वभावानुसार कहा.

मदनमोहन के निकटवर्ती जान्ते थे कि मदनमोहन जैसे हठीले हैं वैसे ही कमहिम्मत हैं, जिस्समय उन्को किसी तरह का घबड़ाट हो हरेक आदमी दिलजमई की झूँटी सच्ची बातें बनाकर उन्को अपनें काबू पर चढ़ा सक्ता है और मन चाहा फ़ायदा उठा सक्ता है इसलिये अब चुन्नी-लाल नें वह चाल डाली.

"यह मुकद्दमा क्या चीज है! ऐसे सैकड़ों मुकद्दमें आप के पुन्य प्रताप सै चुटकियों मैं उड़ा सक्ता हूँ परंतु इस्समय मेरे चित्त को ज़रा उद्वेग हो रहा है इसी सै अक़ल काम नहीं देती" मुंशी चुन्नीलाल नें कहा.

"क्यों तुम्हारे चित्त के उद्वेग का क्या कारण है? क्या हरकिशोर की धमकी सै डर गये? ऐसा हो तो विश्वास रक्खो कि मेरी सब दौलत खर्च हो जायगी तो भी तुम्हारे ऊपर आँच न आनें दूंगा" लाला मदन-मोहन नें कहा.

"नहीं, महाराज! ऐसी बातों सै मैं कब डरता हूं? और आप के लिए जो तकलीफ मुझको उठानी पड़ै उस्मैं तो और मेरी इज्जत है. आपके उपकारों का बदला मैं किसी तरह नहीं दे सक्ता, परंतु लड़की के ब्याह के दिन बहुत पास आ गये, तयारी अब तक कुछ नहीं हुई, ब्याह

आपकी नामवरी के मूजिब करना पड़ेगा, इस्सै इन दिनों मेरी अक़ल कुछ गुम सी हो रही है" मुंशी चुन्नीलाल नें कहा.

"तुम धैर्य रक्खो तुम्हारी लड़की के ब्याह का सब खर्च हम देंगे" लाला मदनमोहन नें एक दम हामी भर ली.

"ऐसी सहायता तो इस सरकार सै सबको मिलती ही है परंतु मेरी जीविका का वृत्तांत भी आपको अच्छी तरह मालूम है और घर गृहस्थ का खर्च भी आप सै छिपा नहीं है, भाई खाली बैठे हैं जब आप के यहाँ सै कुछ सहायता होगी तो ब्याह का काम छिड़ैगा, कपड़े लत्ते वगैरे की तैयारी मैं महीनों लगते हैं" मुंशी चुन्नीलाल नें कहा.

"लो; ये दो सो रुपे के नोट लेकर इस्समय तो काम चल्ता करो, और बातों के लिये बंदोबस्त पीछै सै कर दिया जायगा" लाला मदनमोहन नें नोट देकर कहा.

"जी नहीं, हुजूर! ऐसी क्या जल्दी थी" मुंशी चुन्नीलाल नोट जेब मैं रख कर बोले.

"यह भी अच्छी विद्या है" पंडित जी नें भरमा भरमी सुनाई.

"मैं जान्ता हूँ कि प्रथम तो हरकिशोर नालिश ही नहीं करेंगे और की भी तो दम भर मैं खारिज करा दी जायगी" मुंशी चुन्नीलाल नें कहा.

निदान लाला मदनमोहन बहुत देर तक इस प्रकार की बातों सै अपनी छाती का बोझ हल्का करके भोजन करनें गए और गुपचुप बैजनाथ के बुलानें के लिए एक आदमी भेज दिया.

प्रकरण १४

पत्र व्यवहार

अपनें अपनें लाभ कों बोलत बैन बनाय ।
बेस्या बरस घटावही जोगी बरस बढ़ाय ॥

वृंद.

लाला मदनमोहन भोजन करके आए उस्समय डाक के चपरासी नें लाकर चिट्ठियाँ दीं. उन्मैं एक पोस्टकार्ड महरोली सै मिस्टर बेली नें भेजा था उस्मैं लिखा था कि "मेरा बिचार कल शाम को दिल्ली आनें का है आप महरबानी करके मेरे वास्तै डाक का बंदोबस्त कर दें और लौटती डाक मैं मुझ को लिख भेजैं" लाला मदनमोहन नें तत्काल उस्का प्रबंध कर दिया.

दूसरी चिठ्ठी कलकत्ते सै हमल्टीन कंपनी जुएलर (जोहरी) की आई थी उस्मैं लिखा था "आपके आरडर के बमूजिब हीरों की पाकट चेन बन कर तैयार हो गई है, एक दो दिन मैं पालिश करके आप के पास भेजी जायगी और इस्पर लागत चार हज़ार अंदाज रहैगी. आप नें पन्ने की अँगूठी और मोतियों की नेकलेस के रुपे अब तक नहीं भेजे सो महरबानी करके इन् तीनों चीज़ों के दाम बहुत जल्द भेज दीजिए"

तीसरा फार्सी खत अल्लीपूर सै अब्दुर्रहमान मेट का आया था उस्मैं लिखा था कि "रुपे जल्दी भेजिये नहीं तो मेरी आबरू मैं फ़र्क़ आ जायगा और आप का बड़ा हर्ज होगा कंकरवाले का रुपया बहुत चढ़ गया इस लिये उस्नें खेप भेजनी बंद कर दी. मजदूरों का चिट्ठा एक महीनें सै नहीं बटा इसलिए वह मेरी इजत लिया चाहते हैं. इस ठेके बाबत पाँच हज़ार रुपे सरकार सै आप को मिल्नेंवाले थे वह मिले होंगे, महरबानी करके वह

कुल रुपे यहाँ भेज दीजिये जिस्सै मेरा पीछा छूटे . मुझको बड़ा अफ़सोस है कि इस ठेके मैं आप को नुक्सान रहैगा परंतु मैं क्या करूँ ? मेरे बस की बात न थी . ज़मीन बहुत ऊँची नीची निकली, मजदूर दूर, दूर सै दूनी मज्दूरी देकर बुलानें पड़े, पानी का कोसों पता न था मुझ सै हो सका जहाँ तक मैंने अपनी जान लड़ाई . ख़ैर इस्का इनाम तो हुजूर के हाथ है परंतु रुपे जल्दी भेजिये, रुपयों के बिना यहाँ का काम घड़ी भर नहीं चल सक्ता."

लाला मदनमोहन नोकरों को काम बतानें और उन्की तन्ख्वाह का ख़र्च निकालनें के लिये बहुधा ऐसे ठेके वगैरा ले लिया करते थे. नोकरों के विषय मैं उन्का बरताव बड़ा विलक्षण था . जो मनुष्य एक बार नोकर हो गया वह हो गया . फिर उस्सै कुछ काम लिया जाय या न लिया जाय, उस्के लायक़ कोई काम हो या न हो, वह अपना काम अच्छी तरह करे या बुरी तरह करे, उस्के प्रतिपालन करनें का कोई हक़ अपनें ऊपर हो या न हो, वह अलग नहीं हो सक्ता, संसार के अयश का ऐसा भय समा रहा है कि अपनी अवस्था के अनुसार उचित प्रबंध सर्वथा नहीं होनें पाता . सब नोकर सब कामों मैं दख़ल देते हैं परंतु कोई किसी काम का जिम्मेवार नहीं है, और न कोई सम्हाल रखता है . मामूली तनख्वाह तो उन लोगों नें बादशाही पेंशन समझ रक्खी है . दस पंद्रह रुपे महीनें की तनख्वाह मैं हज़ार पाँच सो रुपे पेशगी ले रखना, दो, चार हजार पैदा कर लेना कौन बड़ी बात है ? पाँच रुपे महीनें के नोकर हों, या तीन रुपे महीनें के नोकर हों विवाह आदि का ख़र्च लाला साहब के जिम्मे समझते हैं, और क्यों न समझैं ? लाला साहब की नोकरी करें तब विवाह आदि का ख़र्च लेनें कहाँ जायँ ? मदत का दारोग़ा मदत मैं चीज़ बस्त लानेंवाले चीज़ बस्त मैं, दुकान के गुमाश्ते दुकान मैं मनमाना काम बना रहे हैं जिस्नें जिस काम के वास्तै जितना रुपया पहले ले लिया वह उस्के बाप दादे का हो चुका, फिर हिसाब कोई नहीं पूछता . घाटे नफ़े और लेन देन

की जाँच परताल करनें के लिये काग़ज़ कोई नहीं देखता. हाल मैं लाला मदनमोहन नें अपनें नोकरों के प्रतिपालन के लिए अल्लीपुर रोड का ठेका ले रक्खा था जिस्मैं सरकार सै ठेका लिया उस्सै दूनें रुपे अब तक खर्च हो चुके थे पर काम आधा भी नहीं बना था और खर्च के वास्तै वहाँ सै ताक़ीद पर ताक़ीद चली आती थी परमेश्वर जानें अब्दुर्रहमान को अपनें घर खर्च के वास्तै रुपे की ज़रूरत थी या मदत के वास्तै रुपे की ज़रूर थी.

चोथा ख़त एक अख़बार के एडीटर का था उस्मैं लिखा था कि "आपनें इस महीनें की १३ वीं तारीख़ का पत्र देखा होगा उस्मैं कुछ वृत्तांत आप का भी लिखा गया है इससमय के लोगों को ख़ुशामद बहुत प्यारी है और ख़ुशामदी चैन करते हैं परंतु मेरा यह काम नहीं. मैंने जो कुछ लिखा वह सच, सच लिखा है. आप से बुद्धिमान, योग्य, सच्चे अभिज्ञ, उदार और देशहितैषी हिंदुस्थान मैं बहुत कम हैं इसी सै हिंदुस्थान की उन्नति नहीं होती, विद्याभ्यास के गुण कोई नहीं जान्ता, अख़बारों की क़दर कोई नहीं करता, अख़बार जारी करनेंवालों को नफ़े के बदले नुक्सान उठाना पड़ता है. हम लोग अपना दिमाग़ खिपा कर देश की उन्नति के लिए आर्टिकल लिखते हैं, परंतु अपनें देश के लोग उस्की तरफ़ आँख उठा कर भी नहीं देखते इस्सै जी टूटा जाता है. देखिये अख़बार के कारण मुझ पर एक हज़ार रुपे का कर्ज़ हो गया और आगे को छापेखानें का खर्च निकलना भी बहुत कठिन मालूम होता है. प्रथम तो अख़बार के पढ़नेवाले बहुत कम, और जो हैं उन्मैं भी बहुधा कारस्पोन्डेन्ट बन कर बिना दाम दिये पत्र लिया चाहते हैं और जो गाहक बनते हैं उन्मैं भी बहुधा दिवालिये निकल जाते हैं. छापेखानें का दो हज़ार रुपया इससमय लोगों मैं बाकी है परंतु फूटी कौड़ी पटनें का भरोसा नहीं. कोई आप सा साहसी पुरुष देश का हित विचार कर इस डूबती नाव को सहारा लगावे तो बेड़ा पार हो सक्ता है नहीं तो ख़ैर जो इच्छा परमेश्वर की."

एक अखबार के एडीटर की इस लिखावट सै क्या, क्या बातें मालूम होती हैं ? प्रथम तो यह कि हिंदुस्थान मैं विद्या का, सर्वसाधारण की अनुमति जान्नें का, देशांतर के वृत्तांत जान्नें का, और देशोन्नति के लिये देश हितकारी बातों पर चर्चा करनें का व्यसन अभी बहुत कम है . वलायत की बस्ती हिंदुस्थान की बस्ती सै बहुत ही थोड़ी है तथापि वहाँ अखबारों की इतनी वृद्धि है कि बहुत से अखबारों की डेढ़ दो लाख कापियाँ निकलती हैं . वहाँ के स्त्री, पुरुष, बूढ़े, बालक, गरीब, अमीर, सब अपनें देश का वृत्तांत जान्ते हैं और उस्पर वादा विवाद करते हैं किसी अखबार मैं कोई बात नई छपती है तो तत्काल उस्की चर्चा सब देश मैं फैल जाती है और देशांतर को तार दोड़ जाते हैं परंतु हिंदुस्थान मैं ये बात कहाँ? यहाँ बहुत सी अखबारों की पूरी दो, दो सौ कापियाँ भी नहीं निकलतीं, और जो निकलती हैं उन्मैं भी जान्नें के लायक बातैं बहुत ही कम रहती हैं क्योंकि बहुत से एडीटर तो अपना कठिन काम संपादन करनें की योग्यता नहीं रखते और वलायत की तरह उन्को और विद्वानों की सहायता नहीं मिल्ती, बहुत से जान बूझ कर अपना काम चलानें के लिए अजान बन जाते हैं इसलिये उचित रीति सै अपना कर्तव्य संपादन करनेंवाले अखबारों की संख्या बहुत थोड़ी है पर जो है उस्को भी उत्तेजन देनें वाला और मन लगाकर पढ़नेंवाला कोई नहीं मिल्ता . बड़े बड़े अमीर, सौदागर, साहूकार, ज़मींदार, दस्तकार जिन्की हानि लाभ का और देशों सै बड़ा संबंध है वह भी मन लगाकर अखबार नहीं देखते बल्कि कोई कोई तो अखबार के एडीटरों को प्रसन्न रखनें के लिए अथवा गाहकों के सूचीपत्र मैं अपना नाम छपानें के लिये, अथवा अपनी मेज़ को नये नये अखबारों से सुशोभित करनें के लिये, अथवा किसी समय अपना काम निकाल लेनें के लिये अखबार खरीदते हैं ! जिस्पर अखबार निकालनेंवालों की यह दशा है ! लाला मदनमोहन इस खत को पढ़ कर सहायता करनें के लिए बहुत ललचाये परंतु रुपे की तंगी के कारण तत्काल कुछ न कर सके .

"हुजूर ! मिस्टर रसल के पास रुपे आज भेजनें चाहियें" मुंशी चुन्नीलाल नें डाक देखे पीछै याद दिवाई .

"हाँ ! मुझको बहुत खयाल है परंतु क्या करूँ ? अब तक कोई बानक नहीं बना." लाला मदनमोहन बोले .

"थोड़ी बहुत रक़म तो मिस्टर ब्राइट के यहाँ भी ज़रूर भेजनी पड़ेगी" मास्टर शिंभूदयाल नें अवसर पाकर कहा .

"हाँ, और हरकिशोर नें नालिश कर दी तो उस्सै जवाब दिही करनें के लिये भी रुपे चाहियेंगे" लाला मदनमोहन चिंता करनें लगे .

"आप चिंता न करें, जोतिष सै सब होनहार मालूम हो सक्ता है . चाणक्य नें कहा है—

"का ऐश्वर्य विशाल मैं का मोटे दुख पाहिं ।
रस्सी बांध्यो होय जों पुरुष दैव बस माहिं ॥*"

इसलिए आपको कुछ आगे का वृत्तांत जान्ना हो, तो आप प्रश्न करिये । जोतिष सै बढ़कर होनहार जान्नें का कोई सुगम मार्ग नहीं है" पंडित पुरुषोत्तम दास नें लाला मदनमोहन को कुछ उदास देखकर अपना मतलब गाँठनें के लिये कहा . वह जान्ता था कि निर्बल चित्त के मनुष्य सुख मैं किसी बात की ग़र्ज़ नहीं रखते परंतु घबराट के समय हर तरफ़ को सहारा तकते फिरते हैं .

"विद्या का प्रकाश प्रति दिन फैल्ता जाता है इसलिये अब आप की बातों मैं कोई नहीं आवेगा" मास्टर शिंभूदयाल नें कहा .

"यह तो आजकल के सुधरे हुओं की बात है परंतु वे लोग जिस विद्या का नाम नहीं जान्ते उस्मैं उन्की बात कैसे प्रमाण हो ?" पंडित जी नें जवाब दिया .

---

* ऐश्वर्यं वासु विस्तीर्णे व्यसनें वापि दारुणे ।
रज्वेव पुरुषो बद्धः कृतांतेनोपनीयते ॥

"अच्छा ! आप करेले के सिवाय और क्या जान्ते हैं ? आप को मालूम है कि नई तहक़ीक़ात करनें वालों नें कैसी, कैसी दूरबीनें बनाकर ग्रहों का हाल निश्चय किया है ?" मास्टर शिंभूदयाल बोले .

"किया होगा, परंतु हमारे पुरुखों नें भी इस विषय मैं कुछ कसर नहीं रक्खी" पंडित पुरुषोत्तम दास कहनें लगे . "इस समय के विद्वानों नें बड़ा खर्च करके जो कलें ग्रहों का बृत्तांत निश्चय करनें के लिये बनाई हैं हमारे बड़ों नें छोटी, छोटी नलियों और बाँस की छड़ियों के द्वारा उस्सै बढ़कर काम निकाला था . संस्कृत की बहुत सी पुस्तकें नष्ट हो गईं, योगाभ्यास आदि बिद्याओं का खोज नहीं रहा परंतु फिर भी जो पुस्तकें अब मौजूद हैं उन्मैं ढूँढ़नें वालों के लिए कुछ थोड़ा खज़ाना नहीं है . हाँ आप की तरह कोई कुछ ढूँढ़ भाल करे बिना दूर ही सै "कुछ नहीं" "कुछ नहीं" कह कर बात उड़ा दे तो यह जुदी बात है."

"संस्कृत विद्या की तो आजकल के सब विद्वान एक स्वर होकर प्रशंसा करते हैं परंतु इससमय जोतिष की चर्चा थी सो निस्संदेह जोतिष मैं फलादेश की पूरी बिध नहीं मिल्ती शायद बतानेंवालों की भूल हो . तथापि मैं इस विषय मैं किसी समय तुम सै प्रश्न करूँगा और तुम्हारी बिध मिल जायगी तो तुम्हारा अच्छा सत्कार किया जायगा" लाला मदनमोहन नें कहा और यह बात सुन कर पंडित जी के हर्ष की कुछ हद न रही .

प्रकरण १५

प्रिय अथवा पिय्

दमयन्ती बिलपत हुती बन में अहि भय पाइ ।
अहि बध बधिक अधिक भयो ताहू ते दुखदाइ ॥
नलोपाख्याने

"ज्योतिष की बिध पूरी नहीं मिल्ती इसलिये उस्पर विश्वास नहीं होता परंतु प्रश्न का बुरा उत्तर आवे तो प्रथम ही से चित्त ऐसा व्याकुल हो जाता है कि उस काम के अचानक होनें पर भी वैसा नहीं होता, और चित्त का असर ऐसा प्रबल होता है कि जिस वस्तु की संसार में सृष्टि ही न हो वह भी वहम समा जानें से तत्काल दिखाई देने लगती है. जिस्पर जोतिषी ग्रहों को उलट पुलट नहीं कर सक्ते, अच्छे बुरे फल को बदल नहीं सक्ते, फिर प्रश्न करने से लाभ क्या? कोई ऐसी बात करनी चाहिये जिस्सै कुछ लाभ हो" मुंशी चुन्नीलाल ने कहा.

"आप हुक्म दें तो मैं कुछ अर्ज़ करूँ?" बिहारी बाबू बहुत दिन से अवसर देख रहे थे वह धीरे से पूछने लगे.

"अच्छा कहो" मुंशी चुन्नीलाल नें मदनमोहन के कहनें से पहले ही कह दिया.

"भोजला पहाड़ी पर एक बड़े धनवान् जागीरदार रहते हैं उन्को ताश खेलने का बड़ा व्यसन है वह सदा बाज़ी बद कर खेल्ते हैं और मुझ को इस खेल के पत्ते ऐसी राह से लगानें आते हैं कि जब खेलैं तब अपनी ही जीत हो. मैंनें उन्को कितनी ही बार हरा दिया इसलिये

अब वह मुझको नहीं पतियाते परंतु आप चाहैं तो मैं वह खेल आप को सिखा दूँ फिर आप उन्सै निधड़क खेलैं आप हार जायँगे तो वह रक़म मैं दूँगा और जीतें तो उस्मैं सै मुझको आधी ही दें" बिहारी बाबू नें जुए का नाम छिपा कर मदनमोहन को आसामी बनानें के वास्तै कहा.

"जीतेंगे तो चोथाई देंगे परंतु हारनें के लिये रक़म पहले जमा कर दो" मुंशी चुन्नीलाल लाला मदनमोहन की तरफ़ सै मामला करनें लगे.

"हारनें के लिये पहले पाँच सौ की थैली अपनें पास रख लीजिये परंतु जीत मैं मैं आधा हिस्सा लूँगा" बिहारी बाबू हुजत करनें लगे.

"नहीं, जो चुन्नीलाल नें कह दिया वह हो चुका, उस्सै अधिक हम कुछ न देंगे" लाला मदनमोहन नें कहा.

और बड़ी मुश्किल सै बिहारी बाबू उस्पर कुछ, कुछ राज़ी हुए परंतु सौभाग्य बस उस्समय बाबू बैजनाथ आ गए इस्सै सब काम जहाँ का तहाँ अटक गया.

"बिहारी बाबू सै किस बात का मामला हो रहा है ?" बाबू बैजनाथ नें पहुँचते ही पूछा.

"कुछ नहीं, यह तो ताश के खेल का ज़िक्र था" मुंशी चुन्नीलाल नें साधारण रीति सै कहा.

"बिहारी बाबू कहते हैं कि "मैं पत्ते लगाना सिखा दूं जिस्तरह पत्ते लगाकर आप एक धनवान जागीरदार सै ताश खेलैं और बाज़ी बद लें जो हारेंगे तो सब नुक्सान मैं दूंगा और जीतेंगे तो उस्मैं सै चौथाई ही मैं लूँगा" लाला मदनमोहन नें भोले भाव सै सच्चा वृत्तांत कह दिया.

"यह तो खुला जुआ है और बिहारी बाबू आप को चाट लगानें के लिये प्रथम यह सब्ज़ बाग दिखाते हैं" बाबू बैजनाथ कहनें लगे "जिस तरह सै पहलै एक मेव नें आप को गड़ी दौलत का तांबे पत्र दिखाया था, और वह सब दौलत गुप चुप आपके यहाँ ला डालनें की हामी भरता था परंतु आप सै खोदनें के बहानें सो, पचास रुपे मार ले गया तब सै

लोट कर सूरत तक न दिखाई ! आप को याद होगा कि आपके पास एक बदमाश स्याम का शाहज़ादा बन कर आया था और उस्नें कहा था कि "मैं हिंदुस्थान की सैर करनें आया हूँ मेरे जहाज़ नें कलकत्ते मैं लंगर कर रक्खा है मुझको यहाँ खर्च की ज़रूरत है आप अपनें अढ़तिये का नाम मुझे बता दें मैं अपनें नोकरों को लिखकर उस्के पास रुपे जमा कर दूँगा जब उस्की इत्तला आप के पास आ जाय तब आप रुपे मुझे दे दें" निदान आप के अढ़तिये के नाम सै तार आप के पास आ गया और आप नें रुपे उस्को दे दिये, परंतु वह तार उन्हीं के किसी साथी नें आप के अढ़तिये के नाम सै आप को दे दिया था इसलिये यह भेद खुला उससमय शाहज़ादे का पता न लगा ! एक बार एक मामला करानेंवाला एक मामला आप के पास लाया था जब उस्नें कहा था कि "सरकार मैं रसद के लिये लकड़ियों की ख़रीद है और तहसील मैं ढाई मन का भाव है. मैं सरकारी हुक्म आप को दिखा दूँगा आप चार मन के भाव मैं मेरी मारफ़त एक जंगलवाले की लकड़ी लेनी कर लें" यह कह कर उस्नें तहसील सै निर्खनामे की दस्तखती नक़ल लाकर आप को दिखा दी पर उस भाव मैं सरकार की कुछ ख़रीददारी न थी ! इन्सै सिवाय जिस्तरह बहुत से रसायनी तरह, तरह का धोका देकर सीधे आदमियों को ठगते फिरते हैं इसी तरह यह भी जुआरी बनानें की एक चाल है. जिस काम मैं बे लागत और बे महनत बहुत सा फ़ायदा दिखाई दे उस्मैं बहुधा कुछ न कुछ धोकेबाज़ी होती है ऐसे मामलेवाले ऊपर सै सब्ज़ बाग़ दिखा कर भीतर कुछ न कुछ चोरी जरूर रखते हैं".

"बाबू साहब ! मैंनें जिस राह सै ताश खेलनें के वास्तै कहा था वह हरगिज़ जुए मैं नहीं गिनी जा सक्ती परंतु आप उस्को जुआ ही ठैराते हैं तो कहिये जुए मैं क्या दोष है ?" बिहारी बाबू मामला बिगड़ता देख कर बोले "दिवाली के दिनों मैं सब संसार जुआ खेल्ता है और असल मैं जुआ एक तरह का व्यापार है जो नुक्सान के डर सै जुआ

वर्जित हो तो और सब तरह के व्यापार भी वर्जित होने चाहियें. और व्यापार मैं घाटा देनें के समय मनुष्य की नीयत ठिकाने नहीं रहती परंतु जुए के लेन देन बाबत अदालत की डिक्री का डर नहीं है तो भी जुआरी अपना सब माल अस्बाब बेचकर लेनदारों की कौड़ी, कौड़ी चुका देता है उस्के पास रुपया हो तो वह उस्के लुटानें मैं हाथ नहीं रोकता और अपनें काम मैं ऐसा निमग्न हो जाता है कि उसै खानें पीनें तक की याद नहीं रहती. उस्के पास फूटी कौड़ी न रहै तो भी वह भूखों नहीं मरता फड़ पर जाते ही जीते जुआरी दो, चार गंडे देकर उस्का काम अच्छी तरह चला देते हैं."

"राम! राम! दिवाली पर क्या? समझवार तो स्वप्न मैं भी जुए के पास नहीं जाते जुए सै व्यापार का क्या संबंध? उस्की कुछ सूरत मिल्ती है तो बदनी सै मिल्ती है पर उस्को जुए सै अलग कौन समझता है? उस्को प्रतिष्ठित साहूकार कब करते हैं? सरकार मैं उस्की सुनाई कहां होती है? निरी बातों का जमा खर्च व्यापार मैं सर्वथा नहीं गिना जाता. व्यापार के तत्व ही जुदे हैं. भविष्यत काल की अवस्था पर दृष्टि पहुँचाना, परता लगाना, माल का खरीदना, बेचना या दिसावर को बीजक भेजकर माल मँगाना और माल भेजकर बदला भुगताना, व्यापार है परंतु जुए मैं यह बातें कहाँ? जुआ तो सब अधर्मों की जड़ है. मनु और विदुर जी एक स्वर सै कहते हैं

"सुनी पुरातन बात जुआ कलह को मूल है।
हांसी हूं मैं तात तासों नहिं खेलैं चतुर॥"*

बाबू बैजनाथ नें कहा.

"आप वृथा तेज होते हैं मैं खुद जुए का तरफ़दार नहीं हूँ परंतु विवाद के समय अच्छी अच्छी युक्तियों सै अपना पक्ष प्रबल करना चाहिये.

---

* द्यूतमेतत्पुराकल्पे दृष्टं वैरकरम् महत्॥
तस्मात् द्यूतन्नसेवेत हास्यार्थमपि बुद्धिमान्॥

क्रोध करके गाली देनें सै जय नहीं होती . आप की दृष्टि मैं मैं झूंटा हूं परंतु मेरी सदुक्तियों को आप झूंटा नहीं ठैरा सक्ते मुझ पर किसी तरह का दोषारोप किया जाय तो उस्को युक्तिपूर्वक साबित करना चाहिये और और बातों मैं मेरी भूल निकालनें सै क्या वह दोष साबित हो जायगा ? "

"जुये का नुक्सान साबित करनें के लिये विशेष परिश्रम नहीं करना पड़ेगा देखो नल और युधिष्ठिरादि की बरबादी इस्का प्रत्यक्ष प्रमाण है" बाबू बैजनाथ बोले .

"मैं आपसै कुछ अर्ज़ नहीं कर सक्ता परंतु—"

"बस जी ! रहनें दो बाबू साहब कुछ तुम सै बहस करनें के लिये इस्समय यहाँ नहीं आये" यह कह कर लाला मदनमोहन बाबू बैजनाथ को अलग ले गए और हरकिशोर की तकरार का सब बृत्तांत थोड़े मैं उन्हैं सुना दिया .

"मैं पहले हरकिशोर को अच्छा आदमी समझता था परंतु कुछ दिन सै उस्की चाल बिल्कुल बिगड़ गई उस्को आप की प्रतिष्ठा का बिल्कुल बिचार नहीं रहा और आज तो उस्नें ऐसी ढिठाई की कि उस्को अवश्य दंड होना चाहिये था सो अच्छा हुआ कि वह अपनें आप यहाँ सै चला गया, उस्के चले जानें सै उस्के सब हक़ जाते रहे अब कुछ दिन धक्के खानें सै उस्की अक़ल अपनें आप ठिकानें आ जायगी ."

"और उसनें नालिश कर दी तो ?" लाला मदनमोहन घबरा कर बोले.

"क्या होगा ? उस्के पास सबूत क्या है ? उस्का गवाह कौन है ? वह नालिश करैगा तो हम क़ानूनी पाइंट सै उस्को पलट देंगे परंतु हम जान्ते हैं कि यहाँ तक नोबत न पहुँचेगी . अच्छा ! उस्के पास आप की कोई सनद है ?"

"कोई नहीं"

"तो फिर आप क्यों डरते हैं ? वह आप का क्या कर सक्ता है ?"

"सच है उस्को रुपे की गर्ज़ होगी तो वह नाक रगड़ता आप चला आयगा हम उस्के नीचे नहीं दबे वही कुछ हमारे नीचे दब रहा है."

"आप इस विषय मैं बिल्कुल निश्चिंत रहैं."

"मुझको थोड़ा सा खटका लाला ब्रजकिशोर की तरफ़ का है यह हर बात मैं मेरा गला घोंटते हैं और मुझको तोते की तरह पिंजरे मैं बंद रक्खा चाहते हैं."

वकीलों की चाल ऐसी ही होती है वह प्रथम धरती आकाश के कुलाबे मिलाकर अपनी योग्यता जताते हैं फिर दूसरे को तरह, तरह का डर दिखाकर अपना आधीन बनाते हैं और अंत मैं आप उस्के घर बार के मालक बन बैठते हैं परंतु चाहे जैसा फ़ायदा हो मैं तो ऐसी परतंत्रता सै रहने को अच्छा नहीं समझता."

"मेरा भी यही विचार है मैं जों जों दबता हूं वह ज्याद: दबाते जाते हैं इसलिये अब नहीं दबा चाहता."

"आप को दबनें की क्या ज़रूरत है ? जब तक आप इनको मुंहतोड़ जबाब न देंगे यह सीधे न होंगे, लाला ब्रजकिशोर आप के घर के टुकड़े खा खा कर बड़े हुए थे वह दिन भूल गये !"

लाला मदनमोहन नें बाबू बैजनाथ की नेक सलाहों का बहुत उपकार माना और वह लाला मदनमोहन सै रुख़सत होकर अपनें घर गए.

प्रकरण १६.

सुरा (शराब)

जे निंदित कर्म न डरहिं करहिं काज शुभ जान।
रक्षैं मंत्र प्रमाद तज करहिं न ते मद्पान ॥*

(बिदुरनीति)

"अब तो यहाँ बैठे, बैठे जी उखताता है चलो कहीं बाहर चल कर दस, पांच दिन सैर कर आवैं" लाला मदनमोहन नें कमरे मैं आ कर कहा.

"मेरे मन मैं तो यह बात कई दिन सै फिर रही थी परंतु कहनें का समय नहीं मिला" मास्टर शिभूदयाल बोले.

"हुज़ूर! आजकल कुतब मैं बड़ी बहार आ रही है थोड़े दिन पहलै एक छींटा हो गया था इस्सै चारों तरफ़ हरियाली छा गई इस्समय झरनें की शोभा देखनें लायक़ है" मुंशी चुन्नीलाल कहनें लगे.

"आ हा! वहाँ की शोभा का क्या पूछना है? आम के मौर की सुगंधी सै सब अमरैयें महक रही हैं उस्की लहलही लताओं पर बैठकर कोयल कुहुकती रहती है घनघोर वृक्षों की घटा सी छटा देख कर मोर नाचा करते हैं, नीचै झरना झरता है ऊपर बेल और लताओं के मिलनें सै तरह तरह की रमणीक कुंजें और लता-मंडप बन गये हैं रंग, रंग के फूलों की बहार जुदी ही मन को लुभाती है फूलों पर मदमाते भौंरों की

---

* अकार्य कारणाद्भीतः कार्याणांच विवर्जनात्।
अकाले मंत्र भेदाच्च येनमाद्येन्नतत्पिबेत् ॥

गुंजार और भी आनंद बढ़ाती है शीतल मंद सुगंधित हवा सै मन अपनें आप खिला जाता है निर्मल सरोवरों के बीच बारहदरी मैं बैठकर चद्दर और फुआरों की शोभा देखनें सै जी कैसा हरा हो जाता है ! वृक्षों की गहरी छाया मैं पत्थर के चटानों पर बैठकर यह बहार देखनें सै कैसा आनंद आता है ." पंडित पुरुषोत्तम दास नें कहा .

"पहाड़ की ऊँची चोटियों पर जानें सें कुछ और विशेष चमत्कार दिखाई देता है जब वहाँ सै नीचे की तरफ़ देखते हैं कहीं बर्फ़, कहीं पत्थर की चटानें, कहीं बड़ी बड़ी कंदराएँ, कहीं पानी बहनें के घाटों मैं कोसों तक वृक्षों की लंगतार, कहीं सूअर, रीछ और हिरनों के झुंड, कहीं ज़ोर सै पानी का टकराकर छींट छींट हो जाना और उन्मैं सूर्य की किर्णों के पड़नें सै रंग, रंग के प्रतिबिंबों का दिखाई देना, कहीं बादलों का पहाड़ सै टकराकर अपनें आप बरस जाना, बरसा की झड़, अपनें आस पास बादलों का लूम झूम कर घिर आना अति मनोहर दिखाई देता है" मास्टर शिभूदयाल नें कहा .

"कुतब मैं ये बहार नहीं है तो भी वो अपनी दिल्लगी के लिये बहुत अच्छी जगह है" मुंशी चुन्नीलाल बोले .

"रात को चाँद अपनी चाँदनी सै सब जगत को रुपहरी बना देता है उस्समय दरया किनारे हरियाली के बीच मीठी तान कैसी प्यारी लगती है !" हकीम अहमद हुसैन नें कहा . "पानी के झरनें की झनझनाहट, पक्षियों की चहचहाहट, हवा की सन्सनाहट, बाजे के सुरों सै मिल कर गानें वाले की लय को चौगुना बढ़ा देते हैं . आहा ! जिस समय यह समा आँख के साम्नें हो स्वर्ग का सुख तुच्छ मालूम देता है ."

"जिस्मैं यह बसंत ऋतु तो इसके लिए सब सै बढ़कर है" पंडित जी कहनें लगे "नई कोंपल, नए पत्ते, नई कली, नए फूलों सै सज सजाकर वृक्ष ऐसे तैयार हो जाते हैं जैसे बुड्ढ़ों मैं नए सिर सै जवानी आ जाय ."

"निस्संदेह, वहाँ कुछ दिन रहना हो, सुख भोग की सब सामग्री मौजूद हो और भीनी भीनी रात मैं ताल सुर के साथ किसी पिकबयनी की आवाज़ आकर कान मैं पड़े तो पूरा आनंद मिले" मास्टर शिंभूदयाल नें कहा.

"शराब की चस बिना यह सब मज़ा फीका है" मुंशी चुन्नीलाल बोले.

"इसमैं कुछ संदेह नहीं" मास्टर शिंभूदयाल नें सहारा लगाया "मन की चिंता मिटानें के लिये तो ये अक्सीर का गुण रखती है इस्की लहरों के चढ़ाव उतार मैं स्वर्ग का सुख तुच्छ मालूम होता है इस्के जोश मैं बहादुरी बढ़ती है बनावट और छिपाव दूर हो जाता है हरेक काम मैं मन खूब लगता है".

"बस; विशेष कुछ न कहो ऐसी बुरी चीज़ की तुम इतनी तारीफ़ करते हो इस्सै मालूम होता है कि तुम इस्समय भी उसी के बसवर्ती हो रहे हो" बाबू बैजनाथ कहनें लगे. "मनुष्य बुद्धि के कारण और जीवों सै उत्तम है फिर जिस्के पान सै बुद्धि विकार हो, किसी काम के परिणाम की खबर न रहै, हरेक पदार्थ का रूप और सै और जाना जाय, स्वेच्छाचार की हिम्मत हो काम क्रोधादि रिपु प्रबल हों, शरीर जर्जर हो वह कैसे अच्छी समझी जाय?"

"यों तो गुण दोष सै खाली कोई चीज़ नहीं है परंतु थोड़ी शराब लेनें सै शरीर मैं बल और फुर्ती तो ज़रूर मालूम होती है" मुंशी चुन्नीलाल नें कहा.

"पहले थोड़ी शराब पीनें सै निंस्संदेह रुधिर की गति तेज़ होती है, नाड़ी बलवान होती है और शरीर मैं फुर्ती पाई जाती है परंतु पीछे उतनी शराब का कुछ असर नहीं मालूम होता इस लिये वह धीरे धीरे बढ़ानी पड़ती है उस्के पान किये बिना शरीर शिथिल हो जाता है, अन्न हजम नहीं होता, हात पाँव काम नहीं देते. पर बढ़ानें सै बढ़ते, बढ़ते वो ही

शराब प्राणघातक हो जाती है . डाक्टर पेरेरा लिखते हैं कि शराब से दिमाग़ और उदर आदि के अनेक रोग उत्पन्न होते हैं; डाक्टर कार्पेन्टर नें इस बाबत एक पुस्तक रची है जिस्मैं बहुत से प्रसिद्ध डाक्टरों की राय से साबित किया है कि शराब से लक़वा, मंदाग्नि, बात, मूत्र रोग, चर्म रोग, फोड़ा फुंसी और कंपवायु आदि अनेक रोग उत्पन्न होते हैं, शराबियों की दुर्दशा प्रति दिन देखी जाती है, कभी कभी उनका शरीर सूखे काठ की तरह अपनें आप भभक उठता है. दिमाग़ मैं गर्मी बढ़नें से बहुधा लोग बावले हो जाते हैं ."

"शराब मैं इतनें दोष होते तो अंग्रेज़ों मैं शराब का इतना रिवाज़ हरगिज़ न पाया जाता" मास्टर शिंभूदयाल बोले .

"तुमको मालूम नहीं है बलायत के सैकड़ों डाक्टरों नें इस्के विपरीत राय दी है और वहाँ सुरापान निवारिणी सभा के द्वारा बहुत लोग इसे छोड़ते जाते हैं परंतु वह छोड़ें तो क्या और न छोड़ें तो क्या ? इंद्र के परस्त्री (अहिल्या) गमन से क्या वह काम अच्छा समझ लिया जायगा ? अफ़सोस ! हिंदुस्थान मैं यह दुराचार दिन दिन बढ़ता जाता है यहाँ के बहुत से कुलीन युवा छिप छिप कर इस्मैं शामिल होनें लगे हैं पर जब इंगलैंड जैसे ठंडे मुल्क मैं शराब पीनें से लोगों की यह गत होती है तो न जानें हिंदुस्थानियों का क्या परिणाम होगा और देश की इस दुर्दशा पर कौन्से देश हितैषी की आँखों से आँसू न टपकैंगे ."

"अब तो आप हद से आगे बढ़ चले" मुंशी चुन्नीलाल नें कहा

"नहीं, हरगिज़ नहीं मैं जो कुछ कहता हूँ यथार्थ कहता हूँ देखो इसी मदिरा के कारण छप्पन कोटि यादवों का नाश घड़ी भर मैं हो गया, इसी मदिरा के कारण सिकंदर नें भर जवानी मैं अपनें प्राण खो दिये . मनुस्मृति मैं लिखा है—

"मुझ से तो सैकड़ों बार ऐसी नोक झोक हो चुकी है परंतु मैं कभी इन्बातों का विचार नहीं करता" मुंशी चुन्नीलाल नें मिल्ती मैं मिलाई.

"जब वह मेरे पीछै मेरा ठट्टा उड़ाते हैं तो मेरे मित्र कहाँ रहे? जब तक वह मेरे कामों के लिये केवल मुझ से झगड़ते थे मुझको कुछ बिचार न था परंतु जब वह मेरे पास वालों को छेड़नें लगे तो मैं उन्को अपना मित्र कभी नहीं समझ सकता" लाला मदनमोहन बोल उठे.

"सच तो ये है कि सब लोग आपकी इस बरदाश्त पर बड़ा आश्चर्य करते हैं" मुंशी चुन्नीलाल ने अवसर पाकर बात आगै बढ़ाई.

"आप को लाला ब्रजकिशोर का इतना क्या दबाव है? उन्सै आप इतने क्यों दबते हैं?" मास्टर शिंभूदयाल ने कहा.

"सच है मैं अपनी दौलत ख़र्च करता हूं इस्मैं उन्की गाँठ का क्या जाता है? और वह बीच, बीच मैं बोलनें वाले कौन हैं?" लाला मदन-मोहन तेज़ होकर कहने लगे.

"इस्तरह पर हर बात मैं रोक टोक होने सै बात का गुमर नहीं रहता; नोक़रों को मुक़ाबला करने का होसला बढ़ता जाता है और आगै चल कर काम काज मैं फ़र्क़ आने की सूरत हो चली है" मुंशी चुन्नीलाल लै बढ़ाने लगे.

"मैं अब उन्सै हरगिज़ नहीं दबूँगा; मैंने अब तक दब, दब कर बृथा उन्को सिर चढ़ा लिया." लाला मदनमोहन ने प्रतिज्ञा की.

"जो वह झरनें के सरोवरों मैं अपना तैरना और तिबारी के ऊपर सै कलामुंडी खा खाकर कूदना देखैंगे तो फिर घंटों तक उन्का राग काहे को बंद होगा?" पंडित पुरुषोत्तम दास बड़ी देर सै बोलने के लिये उमाह रहे थे वह झटपट बोल उठे.

"उन्का वहाँ चलनें का क्या काम है ? उन्को चार दोस्तों मैं बैठ कर हँसनें बोलनें की आदत ही नहीं है वह तो. शाम सबेरे हवा खा लेते हैं और दिन भर अपनें काम मैं लगे रहते हैं या पुस्तकों के पन्ने उलट पुलट किया करते हैं ! वह संसार का सुख भोगनें के लिए पैदा नहीं हुये फिर उन्हें ले जाकर हम क्या अपना मज़ा मट्टी करें ?" लाला मदनमोहन नें कहा .

"बरसात मैं तो वहाँ झूलों की बड़ी बहार रहती है" हकीम अहमद हुसैन बोले .

"परंतु यह ऋतु झूलों की नहीं है आज कल तो होली की बहार है" पंडित पुरुषोत्तम दास नें जवाब दिया .

"अच्छा फिर कब चलनें की ठैरी और मैं कितनें दिन की रुखसत ले आऊँ" मास्टर शिंभूदयाल नें पूछा .

"वृथा देर करनें सै क्या फ़ायदा है ? चलना ही ठैरा तो कल सबेरे यहाँ सै चल देंगे और कम सै कम दस बारह दिन वहाँ रहैंगे" लाला मदनमोहन नें जवाब दिया .

लाला मदनमोहन केवल सैर के लिए कुतब नहीं जाते ऊपर सै यह केवल सैर का बहाना करते हैं परंतु इन्के जी मैं अब तक हरकिशोर की धमकी का खटका बन रहा है. मुंशी चुन्नीलाल और बाबू बैजनाथ वगैरे नें इन्को हिम्मत बँधानें मैं कसर नहीं रक्खी परंतु इन्का मन कमज़ोर है इस्सै इन्की छाती अब तक नहीं ठुकती यह इस अवसर पर दस पांच दिन के लिए यहाँ सै टल जाना अच्छा समझते हैं इन्का मन आज दिन भर बेचैन रहा है इसलिए और कुछ फ़ायदा हो या न हो यह अपना मन बहलानें के लिए, अपनें मन सै यह डरावनें विचार दूर करनें के लिए दस पाँच दिन यहाँ सै बाहर चले जाना अच्छा समझते हैं और इसी वास्तै ये झट पट दिल्ली सै बाहर जानें की तैयारी कर रहे हैं .

———

प्रकरण १७.

स्वतंत्रता और स्वेच्छाचार.

जो कहुँ सब प्राणीन सों होय सरलता भाव।
सब तीरथ अभिषेक ते ताको अधिक प्रभाव ॥*

(विदुर प्रजागरे)

लाला मदनमोहन कुतब जानें की तैयारी कर रहे थे इतने मैं लाला ब्रजकिशोर भी आ पहुँचे.

"आपनें लाला हरकिशोर का कुछ हाल सुना ?" ब्रजकिशोर के आते ही मदनमोहन नें पूछा.

"नहीं ! मैं तो कचहरी सै सीधा चला आया हूँ."

"फिर आप नित्य तो घर होकर आते थे आज सीधे कैसे चले आए ?" मास्टर शिंभूदयाल नें संदेह प्रगट करके कहा.

"इस्मैं कुछ दोष हुआ ? मुझको कचहरी मैं देर हो गई थी इस्वास्तै सीधा चला आया तुम अपना मतलब कहो"

"मतलब तो आप का और मेरा लाला साहब खुद समझते होंगे परंतु मुझको यह बात कुछ नई, नई सी मालूम होती है" मास्टर शिंभूदयाल नें संदेह बढ़ानें के वास्तै कहा.

"सीधी बात को बे मतलब पहेली बनाना क्या ज़रूर है ? जो कुछ कहना हो साफ़ कहो."

"अच्छा ! सुनिये" लाला मदनमोहन कहनें लगे "लाला हरकिशोर

---

*सर्वतीर्थेषु वा स्नानं सर्वभूतेषु चार्जवम् ॥
उभे त्वेते समे स्याता मार्जवं वा विशिष्यते ॥

के स्वभाव को तो आप जान्ते ही हैं आपके और उन्के बीच बचपन सै झगड़ा चला आता है—"

"वह झगड़ा भी आप ही की बदौलत है परंतु खैर, इससमय आप उस्का कुछ विचार न करें अपना वृत्तांत सुनायँ औरों के काम मैं अपनी निज की बातों का संबंध मिलाना बड़ी अनुचित बात है!" लाला ब्रज-किशोर नें कहा.

"अच्छा! आप हमारा वृत्तांत सुनिये" लाला मदनमोहन कहनें लगे. "कई दिन सै लाला हरकिशोर रूठे रूठे से रहते थे कल बेसबब हरगोविंद सै लड़ पड़े उस्की जिद पर आप पांच, पांच रुपे के घाटे सै टोपियें देनें लगे! शाम को बाग़ मैं गए तो लाला हरदयाल साहब सै वृथा झगड़ पड़े, आज यहाँ आए तो मुझको और चुन्नीलाल को सैकड़ों कहनी न कहनी सुना गए!"

"बेसबब तो कोई बात नहीं होती आप इस्का अस्ली सबब बताइये! और लाला हरकिशोर पाँच, पाँच रुपे के घाटे पर प्रसन्नता सै आप को टोपियाँ देते थे तो आपनें उनमैं सै दस पाँच क्यों नहीं ले लीं? इन्मैं आप सै आप हरकिशोर पर पांच पचीस रुपे का जुर्माना हो जाता" लाला ब्रजकिशोर नें मुस्करा कर कहा.

"तो क्या मैं हरकिशोर की जिद पर उस्की टोपियें ले लेता और दस बीस रुपे के वास्तै हरगोविंद को नीचा देखनें देता? मैं हरगोविंद की भूल अपनें ऊपर लेनें को तैयार हूँ परंतु अपने आश्रितुओं की ऐसी बेइज्जती नहीं किया चाहता" लाला मदनमोहन नें ज़ोर देकर कहा.

"यह आप का झूंटा पक्षपात है" लाला ब्रजकिशोर स्वतंत्रता सै कहनें लगे "पापी आप पाप करनें सै ही नहीं होता. पापियों की सहायता करनें वाले, पापियों को उत्तेजन देनें वाले, बहुत प्रकार के पापी होते हैं;

कोई अपने स्वार्थ से, कोई अपराधी की मित्रता से कोई औरों की शत्रुता से, कोई अपराधी के संबंधियों की दया से, कोई अपने निज के संबध से, कोई खुशामद से, महान् अपराधियों का पक्ष करने वाले बन जाते हैं परंतु वह सब पापी समझे जाते हैं और वह प्रगट मैं जाहे जैसे धर्मात्मा, दयालु, कोमल चित्त हों, भीतर से वह भी बहुधा वैसे ही पापी और कुटिल होते हैं ."

"तो क्या आप की राह मैं किसी की सहायता नहीं करनी चाहिये ?" लाला मदनमोहन ने तेज़ होकर पूछा .

"नहीं, बुरे कामों के लिये बुरे आदमियों की सहायता कभी नहीं करनी चाहिये" लाला ब्रजकिशोर कहने लगे . "रशिया का शाहन्शाह पीटर एक बार भर जवानी मैं ज्वर से मरने लायक़ हो गया था उस समय उस्के वज़ीर ने पूछा कि "नो अपराधियों को अभी लूट मार के कारण कठोर दंड दिया गया है क्या वह भी ईश्वर प्रार्थना के लिए छोड़ दिये जायँ ?" पीटर नें निर्बल आवाज से कहा "क्या तुम यह समझते हो कि इन अभागों को क्षमा करनें और इंसाफ की राह मैं कांटे बोनें से मैं कोई अच्छा काम करूँगा ? और जो अभागे माया जाल मैं फँसकर उस सर्वशक्तिमान ईश्वर को ही भूल गए हैं मेरे फ़ायदे के लिए ईश्वर उन्की प्रार्थना अंगीकार करैगा ? नहीं हरगिज़ नहीं; जो कोई काम मुझ से ईश्वर की प्रसन्नता लायक बन पड़े तो वह यही इंसाफ़ का शुभ काम है"

"मैं तो आपके कहनें से इंसाफ के लिए परमार्थ करना कभी नहीं छोड़ सक्ता" लाला मदनमोहन तमक कर कहनें लगे .

"जो जिस्के लिये करना चाहिये सो करना इंसाफ मैं आ गया परंतु स्वार्थ का काम परमार्थ कैसै हो सक्ता है ? एक के लाभ के लिये दूसरों की अनुचित हानि परमार्थ मैं कैसै समझी जा सक्ती है ? किसी तरह के स्वार्थ बिना अपनें ऊपर परिश्रम उठा कर, आप दुःख सह कर,

अपना मन मार कर औरों को सुखी करना सच्चा धर्म समझा जाता है जैसे यूनान मैं कोडर्स नामी बादशाह राज करता था उस्समय यूनानियों पर हेरेकडिली लोगों नें चढ़ाई की. उस्समय के लोग ऐसे अवसर पर मंदिर मैं जाकर हार जीत का प्रश्न किया करते थे इसी तरह कोडर्स नें प्रश्न किया तब उसै यह उत्तर मिला कि "तू शत्रु के हाथ सै मारा जायगा तो तेरा राज स्वदेशियों के हाथ बना रहैगा और तू जीता रहैगा तो शत्रु प्रबल होता जायगा" कोडर्स देशोपकार के लिए प्रसन्नता सै अपनें प्राण देनें को तैयार था परंतु कोडर्स के शत्रु को भी यह बात मालूम हो गई इस लिये उसनें अपनी सेना मैं हुक्म दे दिया कि कोडर्स को कोई न मारे. तथापि कोडर्स नें यह बात लोग दिखाई के लिए नहीं की थी इस सै वह साधारण सिपाही का भेष बना कर लड़ाई मैं लड़ मरा परंतु अपनें देशियों की स्वतंत्रता शत्रु के हाथ न जानें दी."

"जब आप स्वतंत्रता को ऐसा अच्छा पदार्थ समझते हैं तो आप लाला साहब को इच्छानुसार काम करनें सै रोक कर क्यों पिंजरे का पंछी बनाया चाहते हैं?" मास्टर शिंभूदयाल नें कहा.

"यह स्वतंत्रता नहीं स्वेच्छाचार है; और इन्को एक समझनें सै लोग बारंबार धोखा खाते हैं" लाला ब्रजकिशोर कहनें लगे "ईश्वर नें मनुष्य को स्वतंत्र बनाया है पर स्वेच्छाचारी नहीं बनाया क्योंकि उस्को प्रकृति के नियमों मैं अदल बदल करनें की कुछ शक्ति नहीं दी गई वह किसी पदार्थ की स्वाभाविक शक्ति मैं तिल भर घटा बढ़ी नहीं कर सक्ता; जिन पदार्थों मैं अलग, अलग रहनें अथवा रसायनिक संयोग होनें सै जो, जो शक्ति उत्पन्न होनें का नियम ईश्वर नें बना दिया है बुद्धि द्वारा उन पदार्थों की शक्ति पहचान कर केवल उन्सै लाभ लेनें के लिये मनुष्य को स्वतंत्रता मिली है इसलिये जो काम ईश्वर के नियमानुसार स्वाधीन भाव से किया जाय वह स्वतंत्रता मैं समझा जाता है और जो काम उसके नियमों के विपरीत स्वाधीन भाव सै किया जाय वह

स्वेच्छाचार और उस्का स्पष्ट दृष्टांत यह है कि शतरंज के खेल मैं दोनों खिलाड़ियों को अपनी मर्ज़ी मूजिब चाल चलनें की स्वतंत्रता दी गई है परंतु वह लोग घोड़े को हाथी की चाल या हाथी को घोड़े की चाल नहीं चल सक्ते और जो वे इस्तरह चलैं तो उन्का चलना शतरंज के खेल सै अलग होकर स्वेच्छाचार समझा जायगा यह स्वेच्छाचार अत्यंत दूषित है और इस्का परिणाम महा भयंकर होता है इसलिये वर्तमान समय के अनुसार सब के फ़ायदे की बातों पर सत् शास्त्र और शिष्टाचार की एकता सै बरताव करना सच्ची स्वतंत्रता है और बड़े लोगों नें स्वतंत्रता की यह हद बाँध दी है. मनु महाराज कहते हैं—

"बिना सताए काहु के धीरे धर्म बटोर।
ज्यों मृतिका दीमक हरत क्रम क्रम सों चँहु ओर॥"*

महाभारत कर्णपर्व मैं युधिष्ठिर और अर्जुन का बिगाड़ हुआ उससमय श्रीकृष्ण नें अर्जुन सै कहा है कि

"धर्म ज्ञान अनुमान ते अतिशय कठिन लखाय।
एक धर्म है वेद यह भाषत जन समुदाय॥"†

तामैं कछु संशय नहीं, पर लख धर्म अपार।
स्पष्ट करन हित कहुँ कहूँ पंडित करत विचार॥‡

---

* धर्म्मं शनस्सं चिनुयाद्वल्मीकमिव पुत्तिका।
परलोक सहायार्थं सर्व भूतान्य पीडयन्॥

† दुष्करं परमं ज्ञानं तर्केणानु व्यवस्यति।
श्रुतेर्धर्म इतित्येके वदंति वहवोजनाः॥

‡ तत्तेन प्रत्यसूयामि न च सर्वं विधीयते।
प्रभवार्थाय भूतानां धर्मं प्रवचनं कृतं॥

जहाँ न पीड़ित होय कोउ, सो सुधर्म्म निरधार।
हिंसक हिंसा हरन हित भयो सुधर्म्म प्रचार॥ *

प्राणिन कों धारण करे ताते कहियत धर्म।
जासों जन रक्षित रहैं सों निश्चय शुभ कर्म॥ †

जे जन पर संतोष हित करैं पाप शुभ जान।
तिन सों कबहुँ न बोलिये श्रुति विरुद्ध पहिचान॥ ‡

इसलिये दूसरे की प्रसन्नता के हेतु अधर्म करनें का किसी को अधिकार नहीं है इसी तरह अपनें या औरों के लाभ के लिये दूसरे के वाजबी हक़ों मैं अंतर डालनें का भी किसी को अधिकार नहीं है. जिस्समय महाराज रामचंद्र जी नें निर्दोष जनकनंदनी का परित्याग किया जानकी जी को कुछ थोड़ा दुःख था? परंतु वह गर्भ नाश के भय से अपना शरीर न छोड़ सकीं हाँ जिस्तरह उन्नें अकारण अत्यंत दुःख पानें पर भी कभी रघुनाथ जी के दोष नहीं विचारे थे इस तरह सब प्राणियों को अपनें विषय में अपराधी के अपराध क्षमा करनें का पूरा अधिकार है और इस तरह अपनें निज के अपराधों का क्षमा करना मनुष्य मात्र के लिए अच्छे से अच्छा गुण समझा जाता है परंतु औरों को किसी तरह की अनुचित हानि हो वहाँ यह रीति काम मैं नहीं लाई जा सक्ती."

---

* यतस्याद हिंसा संयुक्तं सधर्म इति निश्चयः।
अहिंसार्थाय हिंस्राणां धर्म प्रवचनं कृतं॥

† धारणाद्धर्म मित्याहुर्धर्मो धारयते प्रजाः।
यत्स्याद्धारण संयुक्तं सधर्म इति निश्चयः॥

‡ येन्यायेन जिहीर्षंतो धर्ममिच्छंति कर्हिचित।
अकूजनेन मोक्षं वा नानुकूजेत् कथंचन॥

"मैं तो यह समझता हूँ कि मुझ सै एक मनुष्य का भी कुछ उपकार हो सके तो मेरा जन्म सफल है" लाला मदनमोहन नें कहा .

"जिस्मैं नामवरी आदि स्वार्थ का कुछ अंश हो वह परोपकार नहीं और परोपकार करनें मैं भी किसी खास मनुष्य का पक्ष किया जाय तो बहुधा उस्के पक्षपात सैं औरों की हानि होनें का डर रहता है इसलिये अशक्त अपाहजों का पालनपोषण करना, इंसाफ़ का साथ देना और हर तरह का स्वार्थ छोड़ कर सर्वसाधारण के हित मैं तत्पर रहना मेरे जान सच्चा परोपकार है" लाला ब्रजकिशोर नें जवाब दिया .

प्रकरण १८

क्षमा

नर को भूषण रूप है रूपहु को गुण जान ।
गुण को भूषण ज्ञान है क्षमा ज्ञान को मान ॥*

सुभाषित रत्नाकरे ।

"आप चाहे स्वार्थ समझैं चाहे पक्षपात समझैं हरकिशोर नें तो मुझे ऐसा चिड़ाया है कि मैं उस्सै बदला लिये बिना कभी नहीं रहूंगा" लाला मदनमोहन नें गुस्से सै कहा .

"उस्का कसूर क्या है? हरेक मनुष्य सै तीन तरह की हानि हो सक्ती है एक अपवाद करके दूसरे के यश मैं धब्बा लगाना, दूसरे शरीर की चोट, तीसरे माल का नुक्सान करना इन्मैं हरकिशोर नें आपकी कौन सी हानि की?" लाला ब्रजकिशोर नें कहा .

---

* नरस्याभरणं रूपं रूपस्याभरणं गुणः ।
गुणस्याभरणं ज्ञानं ज्ञानस्याभरणं क्षमा ॥

लाला मदनमोहन के मन मैं यह बात निश्चय समा रही थी कि हरकिशोर नें कोई बड़ा भारी अपराध किया है परंतु ब्रजकिशोर नें तीन तरह के अपराध बताकर हरकिशोर का अपराध पूछा तब वह कुछ न बता सके क्योंकि मदनमोहन की वाक़फ़ियत मैं ऐसा कोई अपराध हरकिशोर का न था. मदनमोहन को लोगों नें आस्मान पर चढ़ा रक्खा था इसलिये केवल हरकिशोर के जवाब देनें सै उस्के मन मैं इतना गुस्सा भर रहा था.

"उस्नें बड़ी ढिठाई की वह अपनें रुपे तत्काल माँगनें लगा और रुपया लिये बिना जानैं सै साफ़ इन्कार किया" लाला मदनमोहन नें बड़ी देर सोच विचार कर कहा.

"बस उस्का यही अपराध है? इस्मैं तो उस्नें आप की कुछ हानि नहीं की मनुष्य को अपना सा जी सबका समझना चाहिये. आप का किसी पर रुपया लेना हो और आप को रुपे की ज़रूरत हो अथवा उस्की तरफ़ सै आपके जी मैं किसी तरह का शक आ जाय अथवा आप के और उस्के दिल मैं किसी तरह का अंतर आ जाय तो क्या आप उस्सै व्यवहार बंद करनें के लिये अपनें रुपे का तक़ाज़ा न करेंगे? जब ऐसी हालतों मैं आप को अपनें रुपे के लिये औरों पर तक़ाज़ा करनें का अधिकार है तो औरों को आप पर तक़ाज़ा करनें का अधिकार क्यों न होगा? आप तो बेसबब ज़रा, ज़रा सी बातों पर मुँह बनाएँ, वाजबी राह सै ज़रा सी बात ढुलख देनें पर उस्को अपना शत्रु समझनें लगे और दूसरे को वाजबी बात कहनें का भी अधिकार न हो!" लाला ब्रजकिशोर नें ज़ोर देकर कहा.

"साहब! उस्नें लाला साहब को तंग करनें की नीयत सै ऐसा तक़ाज़ा किया था" मुंशी चुन्नीलाल बोले.

"लाला साहब को उस्का स्वभाव पहचान्कर उस्सै व्यवहार डालना चाहिये था अथवा उस्का रुपया बाकी न रखना चाहिये था जब उस्का

रुपया बाक़ी है तो उस्को तक़ाज़ा करने का निस्संदेह अधिकार है और उस्ने कड़ा तक़ाज़ा करने मैं कुछ अपराध भी किया हो तो उस्के पहले कामों का संबंध मिलाना चाहिये" लाला ब्रजकिशोर कहने लगे "प्रल्हाद जी ने राजा बलि से कहा है

"पहलो उपकारी करै जो कहुँ अतिशय हान।
तोहू ताकों छोड़िये पहले. गुण अनुमान ॥*
बिन समझे आश्रित करै, सोऊ क्षमिये तात।
सब पुरुषन मैं सहज नहिं चतुराई की बात ॥†"

यह सच है कि छोटे आदमी पहले उपकार करकै पीछै उस्का बदला बहुधा अनुचित रीति से लिया चाहते हैं परंतु यहाँ तो कुछ ऐसा भी नहीं हुआ."

"उपकार हो या न हो ऐसे आदमिओं को उन्की करनी का दंड तो अवश्य मिलना चाहिये" मास्टर शिंभूदयाल कहने लगे. "जो उन्को उन्की करनी का दंड न मिलेगा तो उन्की देखा देखी और लोग बिगड़ते चले जायँगे और भय बिना किसी बात का प्रबंध न रह सकेगा सुधरे हुए लोगों का यह नियम है कि किसी को कोई नाहक न सतावै और सतावै तो दंड पावै. दंड का प्रयोजन किसी अपराधी से बदला लेने का नहीं है बल्कि आगे के लिये और अपराधों से लोगों को बचाने का है."

"इसी वास्तै मैं चाहता हूँ कि मेरा चाहै जितना नुक्सान हो जाय परंतु हरकिशोर के पल्ले फूटी कौड़ी न पड़ने पावै" लाला मदनमोहन दाँत पीसकर कहने लगे.

---

* पूर्वोपकारी यस्ते स्यादपराध गरीयसी।
उपकारण तत्तस्य क्षंतव्यमपराधिनः ॥

† अबुद्धिमाश्रितानांतु क्षंतव्यमपराधिनां।
नहि सर्वत्र पांडित्यं सुलभं पुरुषेणवै ॥

"अच्छा! लाला साहब नें कहा इस रीति सै क्या मास्टर साहब के कहनें का मतलब निकल आवैगा ?" लाला ब्रजकिशोर पूछनें लगे. "आप जान्ते हैं कि दंड दो तरह का है एक तो उचित रीति सै अपराधी को दंड दिवाकर औरों के मन मैं अपराध की अरुचि अथवा भय पैदा करना, दूसरे अपराधी सै अपना बैर लेना और अपनें जी का गुस्सा निकालना. जिस्नें झूँटी निंदा करके मेरी इज्जत ली उस्को उचित रीति सै दंड करानें मैं मैं अपनें देश की सेवा करता हूं परंतु मैं यह मार्ग छोड़ कर केवल उस्की बरबादी का विचार करूँ अथवा उस्का बैर उस्के निर्दोष संबंधियों सै लिया चाहूं आधीरात के समय चुपके सै उस्के घर मैं आग लगा दूं और लोगों को दिखानें के लिये हाथ मैं पानी लेकर आग बुझानें जाऊँ तो मेरी बराबर नीच कौन होगा ? विदुर जी नें कहा है—

"सिद्ध होत बिनहू जतन मिथ्या मिश्रित काज।
अकर्तव्य से स्वप्न हू मन न धरो महाराज॥"*

ऐसी कारवांई करनेंवाला अपनें मन मैं प्रसन्न होता है कि मैं नें अपनें बैरी को दुखी किया परंतु वह आप महापापी बन्ता है और देश का पूरा नुक्सान करता है, मनु महाराज नें कहा है —

"दुखित होय भाखै न तौ मर्म विभेदक बैन।
द्रोह भाव राखै न चित करै न परहि अचैन॥"†

"जो अपराध केवल मन को सतानेंवाले हों और प्रगट मैं साबित न हो सकैं तो उन्का बदला दूसरे सै कैसे लिया जाय ?" लाला मदन-मोहन नें पूछा.

---

* मिथ्योपेतानि कर्माणि सिद्धयुर्यानि भारत।
अनुपायप्रयुक्तानि मास्म तेषु मनः कृथाः॥

† नारुन्तुदः स्यादार्तोपि न परद्रोहकर्म्मधीः।
ययास्यो द्विजते वाचा नालोक्यान्तामुदीरयेत॥

"प्रथम तो ऐसा अपराध हो ही नहीं सक्ता और थोड़ा बहुत हो भी तो वह खयाल करनें लायक़ नहीं है क्योंकि संदेह का लाभ सदा अपराधी को मिल्ता है इस्के सिवाय जब कोई अपराधी सच्चे मन सै अपनें अपराध का पछतावा कर ले तो वह भी क्षमा करनें योग्य हो जाता है और उस्सै भी दंड देनें के बराबर ही नतीजा निकल आता है."

"पर एक अपराधी पर इतनी दया करनी क्या ज़रूर है?" लाला मदनमोहन नें ताज्जुब सै पूछा.

"जब हम लोग सर्वशक्तिमान परमेश्वर के अत्यंत अपराधी हो कर उस्सै क्षमा करानें की आशा रखते हैं तो क्या हमको अपनें निज के कामों के लिये, अपनें अधिकार के कामों के लिये आगे की राह दुरुस्त हुए पीछै, अपराधी के मन मैं शिक्षा की बराबर पछतावा हुए पीछै, क्षमा करना अनुचित है? यदि मनुष्य के मन मैं क्षमा और दया का लेश भी न हो तो उस्मैं और एक हिंसक जंतु मैं क्या अंतर है? पोप कहता है "भूल करना मनुष्य का स्वभाव है परंतु उस्को क्षमा करना ईश्वर का गुण है"* एक अपराधी अपना कर्तव्य भूल जाय तो क्या उस्की देखा देखी हमको भी अपना कर्तव्य भूल जाना चाहिये? सादी नें कहा है—

"होत हुमा याही लिये सब पक्षिन को राय।
अस्थि भक्ष रक्षै तनहि काहू कौं न सताय॥"†

दूसरे का उपकार याद रखना वाजबी बात है परंतु अपकार याद रखनें मैं या यों कहो कि अपनें कलेजे का घाव हरा रखने मैं कौन्सी तारीफ़ है? जो दैवयोग सै किसी अपराधी को औरों के फ़ायदे के लिये

---

* To err is human, to forgive divine.

† हुमाय बरसरे मुर्गां अज़ाँ शरफ़ दारद।
किउस्तुख्वां खुरदो तायरे नयाज़ारद॥

दंड दिवानें की ज़रूरत हो तो भी अपनें मन.मैं उस्की तरफ़ दया और करुणा ही रखनी चाहिये."

"ये सब बातें हँसी खुशी मैं याद आती हैं क्रोध मैं बदला लिये बिना किसी तरह चित्त को संतोष नहीं होता" लाला मदनमोहन नें कहा.

"बदला लेनें का तो इस्सै अच्छा दूसरा रस्ता ही नहीं है कि वह अपकार करे और उस्के बदले आप उपकार करो" लाला ब्रजकिशोर कहनें लगे "जब वह अपनें अपराधों के बदले आप की मेहरबानी देखेगा तो आप लज्जित होगा और उस्का मन ही उस्को धिक्कारनें लगेगा. बैरी के लिये इस्सै कठोर दंड दूसरा नहीं है परंतु यह बात हर किसी सै नहीं हो सक्ती. तरह तरह का दुःख, नुक्सान और निंदा सहनें के लिये जितनें साहस, धैर्य और गंभीरता की ज़रूरत है बैरी सै बैर लेनें के लिये उन्की कुछ भी ज़रूरत नहीं होती. यह काम बहुत थोड़े आदमियों सै बन पड़ता है पर जिन्सै बन पड़ता है वही सच्चे धर्मात्मा हैं:—

"जिस्समय साइराक्यूज़वालों नें एथेन्स को जीत लिया साइराक्यूज़ की कौंसिल मैं एथीनियन्स को सज़ा देनें की बाबत विवाद होनें लगा इतनें मैं निकोलास नामी एक प्रसिद्ध गृहस्थ बुढ़ापे के कारण नौकरों के कंधे पर बैठकर वहाँ आया और कौंसिल को समझा कर कहनें लगा "भाइयो! मेरी ओर दृष्टि करो मैं वह अभागा बाप हूँ जिस्की निस्बत ज्यादः नुक्सान इस लड़ाई मैं शायद ही किसी को हुआ होगा मेरे दो जवान बेटे इस लड़ाई मैं देशोपकार के लिये मारे गए उन्सै मानो मेरे सहारे की लकड़ी छिन गई, मेरे हाथ पाँव टूट गए. जिन एथेन्सवालों नें यह लड़ाई की उन्को मैं अपनें पुत्रों के प्राणघातक समझ कर थोड़ा नहीं धिक्कारता तथापि मुझको अपनें निज के हानि लाभ के बदले अपनें देश की प्रतिष्ठा अधिक प्यारी है. बैरियों सै बदला लेनें के लिये जो कठोर सलाह इस्समय हुई है वह अपनें देश के यश को सदा सर्वदा के

लिये कलंकित कर देगी .. क्या अपने बैरियों को परमेश्वर की ओर सै कठिन दंड नहीं मिला ? क्या उनको युद्ध मैं इस तरह हारने सै अपना बदला नहीं भुगता ? क्या शत्रुओं नें अपने प्राण रक्षा के भरोसे पर तुमको हथियार नहीं सोंपे ? और अब तुम उन्सै अपना बचन तोड़ोगे तो क्या तुम विश्वासघाती न होगे ? जीतने सै अविनाशी यश नहीं मिल सक्ता परंतु जीते हुए शत्रुओं पर दया करने सै सदा सर्वदा के लिये यश मिल्ता है" . साइराक्यूज़ की कौंसिल के चित्त पर निकोलास के कहने का ऐसा असर हुआ कि सब एथीनियन्स तत्काल छोड़ दिये गए" .

"आप जान्ते हैं कि शरीर के घाव औषधि सै रुज जाते हैं परंतु दुखती बातों का घाव कलेजे पर सै किसी तरह नहीं मिटता" मुंशी चुन्नीलाल नें कहा .

"क्षमाशील के कलेजे पर ऐसा घाव क्यों होने लगा है ? वह अपने मन मैं समझता है कि जो किसी ने मेरा सच्चा दोष कहा तो बुरे मान्नें की कौन्सी बात हुई ? और मेरे मतलब को बिना पहुँचे कहा तो नादान के कहने सै बुरा मानने की कौन्सी बात रही ? और जान बूझ कर मेरा जी दुखाने के वास्तै मेरी झूँटी निंदा की तो मैं उचित रीति सै उस्को झूंटा डाल सक्ता हूँ सज़ा दिवा सक्ता हूं फिर मन मैं द्वेष और प्रगट मैं गाली गलौज लड़ने की क्या ज़रूरत है ? आप बुरा हो और लोग अच्छा कहैं इस्की निस्बत आप अच्छा हो और लोग बुरा कहैं यह बहुत अच्छा है" लाला ब्रजकिशोर ने जवाब दिया .

प्रकरण १६

स्वतंत्रता.

स्तुति निंदा कोऊ करहि लक्ष्मी रहहि की जाय ।
मरै कि जियै न धीर जन धरै कुमारग पाय ॥*

(प्रसंग रत्नावली)

"सच तो यह है कि आज लाला ब्रजकिशोर साहब नें बहुत अच्छी तरह भाई चारा निभाया इन्की बातचीत मैं यह बड़ी तारीफ़ है कि जैसा काम किया चाहते हैं वैसा ही असर सबके चित्त पर पैदा कर देते हैं" मास्टर शिंभूदयाल नें मुस्करा कर कहा.

"हरगिज़ नहीं, हरगिज़ नहीं, मैं इंसाफ के मामले मैं भाई चारे को पास नहीं आनें देता जिस रीति सै बरतनें के लिये मैं और लोगों को सलाह देता हूँ उस रीति सै बरतना मैं अपनें ऊपर फ़र्ज़ समझता हूं. कहना कुछ और, करना कुछ और नालायकों का काम है और सचाई की अमिट दलीलों को दलील करनें वाले पर झूंटा दोषारोप करके उड़ा देनें वाले और होते हैं" लाला ब्रजकिशोर नें शेर की तरह गरज कर कहा और क्रोध के मारे उन्की आँखें लाल हो गईं.

लाला ब्रजकिशोर अभी मदनमोहन को क्षमा करनें के लिये सलाह दे रहे थे इतनें मैं एकाएक शिंभूदयाल की ज़रा सी बात पर गुस्से मैं कैसे भर गए ? शिंभूदयाल नें तो कोई बात प्रगट मैं ब्रजकिशोर के अप्रसन्न होनें लायक़ नहीं कही थी ! निस्संदेह प्रगट मैं नहीं कही परंतु भीतर

---

* निन्दन्तु नीतिनिपुणा यदिवास्तुवन्तु लक्ष्मीः समाविशतुगच्छतुवा यथेष्टम् ।
अद्यैव वा मरणमस्तु युगान्तरे वा न्याय्यात् पथः प्रविचलन्ति पदं न धीरा ॥

सै ब्रजकिशोर का हृदय विदीर्ण करनें के लिये यह साधारण वचन सब सै अधिक कठोर था ब्रजकिशोर और सब बातों मैं निरभिमानी थे परंतु अपनी ईमान्दारी का अभिमान रखते थे इसलिये जब शिंभूदयाल नें उन्की ईमान्दारी मैं बट्टा लगाया तब उन्को क्रोध आये बिना न रहा. ईमान्दार मनुष्य को इतना खेद और किसी बात सै नहीं होता जितना उस्को बेईमान बतानें सै होता है.

"आप क्रोध न करें. आप को यहाँ की बातों मैं अपना कुछ स्वार्थ नहीं है तो आप हरेक बात पर इतना ज़ोर क्यों देते हैं? क्या आप की ये सब बातें किसी को याद रह सक्ती हैं? और शुभचिंतकी के विचार सै हानि लाभ जतानें के लिये क्या एक इशारा काफ़ी नहीं है?" मुंशी चुन्नीलाल नें शिंभूदयाल की तरफ़दारी करके कहा.

"मैं नें अब तक लाला साहब सै जो स्वार्थ की बात की होगी वह लाला साहब और तुम लोग जान्ते होगे. जो इशारे मैं काम हो सक्ता तो मुझको इतनें बढ़ा कर कहनें सै क्या लाभ था? मैं नें कही है वह सब बातें निस्संदेह याद नहीं रह सक्तीं परंतु मन लगाकर सुन्नें सै बहुधा उन्का मतलब याद रह सक्ता है और उस्समय याद न भी रहै तो समय पर याद आ जाता है. मनुष्य के जन्म सै लेकर वर्तमान समय तक जिस, जिस हालत मैं वह रहता है उन सबका असर बिना जानें उस्की तबियत मैं बना रहता है इस वास्ते मैं नें ये बातें जुदे, जुदे अवसर पर यह समझ कर कह दी थीं कि अब कुछ फ़ायदा न होगा तो आगे चल कर किसी समय काम आवेंगी" लाला ब्रजकिशोर नें जवाब दिया.

"अपनी बातों को आप अपनें ही पास रहनें दीजिये क्योंकि यहाँ इन्का कोई गाहक नहीं है" लाला मदनमोहन कहनें लगे "आप के कहनें का अभिप्राय यह मालूम होता है कि आप के सिवाय सब लोग अनसमझ और स्वार्थपर हैं."

"मैं सबके लिये कुछ नहीं कहता परंतु आपके पास रहने वालों मैं तो निस्संदेह बहुत लोग नालायक़ और स्वार्थपर हैं" लाला ब्रजकिशोर कहनें लगे "ये लोग दिन रात आपके पास बैठे रहते हैं, हर बात मैं आप की बड़ाई किया करते हैं, हर काम मैं अपनी जान हथेली पर लिये फिरते हैं पर यह आप के नहीं; आप के रुपे के दोस्त हैं, परमेश्वर न करे जिस दिन आपके रुपे जाते रहैंगे इन्का कोसों पता न लगेगा. जो इज्जत, दौलत और अधिकार के कारण मिल्ती है वह उस मनुष्य की नहीं होती. जो लोग रुपे के कारण आप को झुक झुक कर सलाम करते हैं वही अपनें घर बैठ कर आप की बुद्धिमानी का ठट्टा उड़ाते हैं ! कोई काम पूरा नहीं होता जब तक उस्मैं अनेक प्रकार के नुक्सान होने की संभावना रहती है पूरे होनें की उम्मेद पर दस काम उठाये जाते हैं जिन्मैं मुश्किल सै दो पूरे पड़ते हैं परंतु आप के पास वाले खाली उम्मेद पर बल्कि भीतर की नाउम्मेदी पर भी आप को नफ़े का सब्ज़बाग़ दिखा कर बहुत सा रुपया खर्च करा देते हैं ! मैं पहले कह चुका हूँ कि आदमी की पहचान ज़ाहिरी बातों सै नहीं होती उस्के बरताव सै होती है. इन्मैं आपका सच्चा शुभचिंतक कौन है ? आपके हानि लाभ का दर्सानें वाला कौन है ? आप के हानि लाभ का विचार करनें वाला कौन है ? क्या आप की हाँ मैं हाँ मिलानें सै सब हो गया ? मुझको तो आप के मुसाहिबों मैं सिवाय मसखरापन के और किसी बात की लियाक़त नहीं मालूम होती कोई फबतियाँ कह कर इनाम पाता है, कोई छेड़छाड़ कर गालियें खाता है, कोई गानें बजानें का रंग जमाता है, कोई धोलधप्पे लड़ कर हँसता हँसाता है पर ऐसे आदमियों सै किसी तरह की उम्मेद नहीं हो सक्ती."

"मेरी दिल्लगी की आदत है मुझ सै तो हँसी दिल्लगी बिना रोती सूरत बना कर दिन भर नहीं रहा जाता परंतु इन बातों सै काम की बातों में कुछ अंतर आया हो तो बताइये" लाला मदनमोहन नें पूछा.

"आप के पिता का परलोक हुआ जब से आप की पूँजी मैं क्या घटा बढ़ी हुई ? कितनी रकम पैदा हुई ? कितनी अहँड हुई कितनी ग़लत हुई, कितनी खर्च हुई इन बातों का किसी नें विचार किया है ? आमदनी से अधिक खर्च करनें का क्या परिणाम है ? कौन्सा खर्च वाजबी है, कौन्सा ग़ैरवाजबी है, मामूली खर्च के बराबर बँधी आमदनी कैसे हो सक्ती है ? इन बातों पर कोई दृष्टि पहुँचाता है ? मामूली आमदनी पर किसी की निगाह है ? आमदनी देखकर मामूली खर्च के वास्ते हरेक सीगे का अंदाजा पहले से कभी किया है, ग़ैर मामूली खर्चों के वास्ते मामूली तौर पर सीगेवार कुछ रक़म हर साल अलग रक्खी जाती है ? बिना जानें नुक्सान, खर्च और आमदनी क़म होनें के लिए कुछ रक़म हर साल बचा कर अलग रक्खी जाती है ? पैदावार बढ़ानें के लिये वर्तमान समय के अनुसार अपनें बराबर वालों की कारवाई, देश देशांतर का बृत्तांत और होनहार बातों पर निगाह पहुँचा कर अपनें रोज़गार धंदे की बातों मैं कुछ उन्नति की जाती है ? व्यापार के तत्व क्या हैं. थोड़े खर्च, थोड़ी महनत और थोड़े समय मैं चीज़ तैयार होने से कितना फ़ायदा होता है, इन बातों पर किसी नें मन लगाया है ? उगाही मैं कितनें रुपे लेने हैं, पटनें की क्या सूरत है, देनदारों की कैसी दशा है, मयाद के कितनें दिन बाक़ी हैं इन बातों पर कोई ध्यान देता है ? व्योपार सीगा के माल पर कितनी रक़म लगती है, माल कितना मोजूद है किस्समय बेचनें मैं फ़ायदा होगा इन्बातों पर कोई निगाह दौड़ाता है ? खर्च सीगा के माल की कभी बिध मिलाई जाती है ? उस्की कमी बेशी के लिये कोई जिम्मेदार है ? नौकर कितनें हैं, तनख्वाह क्या पाते हैं, काम क्या करते हैं, उन्की लियाक़त कैसी है, नीयत कैसी है, कारवाई कैसी है, उन्की सेवा का आप पर क्या हक़ है, उन्के रखनें न रखनें मैं आप का क्या नफ़ा नुक्सान है इन्बातों को कभी आपनें मन लगाकर सोचा है ?"

"मैं पहले ही जान्ता था कि आप फिर फिर कर मेरे पास के आदमियों पर चोट करेंगे परंतु अब मुझको यह बात असह्य है. मैं अपना

नफ़ा नुक्सान समझता हूँ आप इस विषय मैं अधिक परिश्रम न करैं." लाला मदनमोहन नें रोक कर कहा.

"मैं कहूँगा पहलै सै बुद्धिमान कहते चले आए हैं" लाला ब्रजकिशोर कहनें लगे "वलियम कूपर कहता है:—

"जिन नृपन को शिशुकाल सै सेवहिं छली तन मन दिये।
तिनकी दशा अविलोक करुणा होत अति मेरे हिये॥
आजन्म सों अभिषेक लों मिथ्या प्रशंसा जन करैं।
बहु भांत अस्तुति गाय, गाय सराहि सिर स्हेरा धरैं॥
शिशुकाल ते सीखत सदा सज धज दिखावन लोक मैं।
तिनको जगावत मृत्यु बहुतिक दिन गए इह लोक मैं॥
मिथ्याप्रशंसी बैठ घुटनन, जोड़ कर, मुस्कावहीं।
छल की सुहाती बात कहि पापहि धरम दरसावहीं॥
छबिशालिनी, मृदुहासिनी अरु धनिक नित घेरै रहैं।
झूँटी झलक दरसाय मनहि लुभाय कछु दिन मैं लहैं॥
जे हेमचित्रित रथन चढ़, चंचल तुरंग भजावहीं।
सेना निरख अभिमान कर, यों व्यर्थ दिवस गमावहीं॥
'तिनकी दशा अविलोक' भाखत फेरहूं मन दुख लिये।
नृप की अधम गति देख 'करुणा होत अति मेरे हिये' ॥"*

---

* I Pity kings, whom worship waits upon
Obsequious from the cradle to the throne;
Before whose infant eyes the flatterer bows,
And binds a wreath about their baby brows;
Whom education stiffens into state,
And death awakens from that dream too late,
Oh ! if servility with supple knees,

"लाला साहब अपनें सरल स्वभाव सै कुछ नहीं कहते इस वास्तै आप चाहे जो कहते चले जायँ परंतु कोई तेज़ स्वभाव का मनुष्य होता तो आप इस तरह हरगिज़ न कहनें पाते" मास्टर शिभूदयाल नें अपनी जात दिखाई.

"सच है ! विदुर जी कहते हैं—

"दयावंत लज्जा सहित मृदु अरु सरल सुभाइ।
ता नर को असमर्थ गिन लेत कुबुद्धि दबाइ ॥"*

Whose trade it is to smile, to crouch, to please;
If smooth dissimulation, skill'd to grace
A devil's purpose with an angel's face ;
If smiling peeresses, and simp'ring peers,
Encompassing his throne a few short year's;
If the gilt carriage, and the pamper'd steed,
That wants no driving, and disdains the lead;
If guards, mechanically form'd in ranks,
Playing, at beat of drum, their martial pranks,
Should'ring and standing as if stuck to stone,
While condescending majesty looks on—
If monarchy consist in such base things,
Sighing I say again, I pity kings !

(William Cowper).

* आर्जवन नरं युक्त मार्जवात् सव्यपत्रपम् ।
अशक्तं मन्यमानास्तु घर्षयन्ति कुबुद्धयः ॥

इसलिये इन् गुणों के साथ सावधानी की बहुत जरूरत है सादगी और सीधेपन से रहने मैं मनुष्य की सच्ची अशराफ़त मालूम होती है, मनुष्य की उन्नति का यह सीधा मार्ग है परंतु चालाक आदमियों की चालाकी से बचने के लिये हर तरह की वाक़फ़ियत भी जरूर होनी चाहिये" लाला ब्रजकिशोर नें जवाब दिया.

"दोषदर्शी मनुष्यों के लिये सब बातों मैं दोष मिल सक्ते हैं क्योंकि लाला साहब के सरल स्वभाव की बड़ाई सब संसार मैं हो रही है परंतु लाला ब्रजकिशोर को उस्मैं भी दोष ही दिखाई दिया!" पंडित पुरुषोत्तम दास बोले.

"द्रव्य के लालूचियों की बड़ाई पर मैं क्या विश्वास करूँ? विदुर जी कहते हैं कि—

"जाहि सराहत हैं सब ज्वारी। जाहि सराहत चंचल नारी॥
जाहि सराहत भाट वृथा ही। मानहु सो नर जीवत नाहीं॥"*

लाला ब्रजकिशोर नें जवाब दिया.

"मैं अच्छा हूँ या बुरा हूँ आप का क्या लेता हूँ? आप क्यों हात धो कर मेरे पीछे पड़े हैं? आप को मेरी रीति भाँति अच्छी नहीं लगती तो आप मेरे पास न आँय" लाला मदनमोहन नें बिगड़ कर कहा.

"मैं आप का शत्रु नहीं, मित्र हूँ परंतु आप को ऐसा ही जचता है तो अब मैं भी आपको अधिक परिश्रम नहीं दिया चाहता मेरी इतनी ही लालसा है कि आपके बड़ों की बदौलत मैं नें जो कुछ पाया है वह मैं आपकी भेंट करता जाऊँ" लाला ब्रजकिशोर लायक़ी से कहनें लगे "मैं नें आपके बड़ों की कृपा से बिद्या धन पाया जिस्का बड़ा हिस्सा मैं आपके सन्मुख रख चुका तथापि जो कुछ बाकी रहा है उस्को आप कृपा करके और अंगीकार कर लें. मैं चाहता हूँ कि मुझ से आप भले ही अप्रसन्न

---

* यं प्रशंसन्ति कितवः यं प्रशंसन्ति चारणाः।
यं प्रशंसन्ति बन्धक्यो न सजीवति मानवः॥

रहैं मुझको हरगिज़ अपनें पास न रक्खें परंतु आपका मंगल हो. यदि इस बिगाड़ सै आपका कुछ मंगल होता हो तो मैं इसै ईश्वर की कृपा समझूँगा. आप मेरे दोषों की ओर दृष्टि न दें, मेरी थोथी बातों मैं जो कुछ गुण निकल्ता हो उसे ग्रहण करें. हज़रत सादी कहते हैं—

"भींत लिख्यो उपदेश जु कोऊ।
सादर ग्रहण कीजिये सोऊ॥"*

इसलिये आप स्वपक्ष और बिपक्ष का विचार छोड़ कर गुण संग्रह करनें पर दृष्टि रक्खैं.. आपका बरताव अच्छा होगा तो मैं क्या हूँ? बड़े बड़े लायक़ आदमी आपको सहज मैं मिल जायँगे परंतु आपका बरताव अच्छा न हुआ तो जो होंगे वह भी जाते रहेंगे. एक छोटे से पखेरू की क्या है? जहाँ रात हो जाय वहीं उस्का रैन बसेरा हो सक्ता है परंतु वह फलदार बृक्ष सदा हरा भरा रहना चाहिये जिस्के आश्रय बहुत से पक्षी जीते हों."

"बहुत कहने सै क्या है? आपको हम सै संबंध रखना हो तो हमारी मर्ज़ी के मूजिब बरताव रक्खो नहीं तो अपना रस्ता लो हम सै अब आप के तानें नहीं सहे जाते" लाला मदनमोहन नें ब्रजकिशोर को नरम देख कर ज्यादः दबानें की तजवीज़ की.

"बहुत अच्छा! मैं जाता हूँ; बहुत लोग जाहरी इज्जत बनानें के लिये भीतरी इज्जत खो बैठते हैं परतु मैं उन्मैं का नहीं हूं. तुलसी कृत रामायण मैं रघुनाथ जी नें कहा है—

"जो हम निदरहि बिप्र बर सत्य सुनहु भृगुनाथ।
तो अस को जग सुभट तिहिं भय बस नावहिं माथ॥"

सोई प्रसंग इस्समय मेरे लिये बर्तमान है. एथेन्स मैं जिन दिनों

---

* मर्द्र बायद कि गीरद अंदरगोश।
बर नबिश्तस्द पंदबर दीवार॥

तीस अन्याइयों की कौन्सिल का अधिकार था एक बार कौन्सिल नें सेक्रिटीज़ को बुलाकर हुक्म दिया कि "तुम लिओं नामी धनवान को पकड़ लाओ जिस्सै उस्का माल जप्त किया जाय" सेक्रिटीज़ नें जवाब दिया कि "एक अनुचित काम मैं मैं अपनी प्रसन्नता सै कभी सहायता न करूँगा." कौन्सिल के प्रेसिडेंट नें धँमकी दी कि "तुमको आज्ञा उल्लंघन करनें के कारण कठोर दंड मिलेगा" सेक्रिटीज़ नें कहा कि "यह तो मैं पहले ही सै जान्ता हूँ परंतु मेरे निकट अनुचित काम करनें के बराबर कोई कठोर दंड नहीं है" लाला ब्रजकिशोर बोले.

"जब आप हमको छोड़नें ही का पक्का विचार कर चुके तो फिर इतना वादाविवाद करनें सै क्या लाभ है? हमारे प्रारब्ध मैं होगा वह हम भुगत लेंगे, आप अधिक परिश्रम न करैं" लाला मदनमोहन नें त्योरी बदल कर कहा.

"अब मैं जाता हूं ईश्वर आपका मंगल करे. बहुत दिन पास रहनें के कारण जानें बिना जानें अब तक जो अपराध हुए हों वह क्षमा करना" यह कह कर लाला ब्रजकिशोर तत्काल अपनें मकान को चले गए.

लाला ब्रजकिशोर के गए पीछै मदनमोहन के जी मैं कुछ, कुछ पछतावा सा हुआ वह समझे कि "मैं अपनें हट सै आज एक लायक़ आदमी को खो बैठा परंतु अब क्या? अब तो जो होना था हो चुका. इस्समय हार मान्नें सै सबके आगे लज्जित होना पड़ेगा और इस्समय ब्रजकिशोर के बिना कुछ हर्ज भी नहीं, हाँ, ब्रजकिशोर नें हरकिशोर को सहायता दी तो कैसी होगी? क्या करैं? हमको लज्जित होना न पड़े और सफ़ाई की कोई राह निकल आवै तो अच्छा हो" लाला मदनमोहन इसी सोच विचार मैं बड़ी देर बैठे रहे परंतु मन की निर्बलता सै कोई बात निश्चय न कर सके.

प्रकरण २०

कृतज्ञता

तृणहु उतारे जन गनत कोटि मुहर उपकार।
प्राण दियेहू दुष्ट जन करत बैर व्यवहार ॥*

(भोजप्रबंध सार)

लाला ब्रजकिशोर मदनमोहन के पास सै उठ कर घर को जानें लगे उस्समय उन्का मन मदनमोहन की दशा देख कर दुःख सै बिबस हुआ जाता था वह बारम्बार सोचते थे कि मदनमोहन नें केवल अपना ही नुक्सान नहीं किया, अपनें बाल बच्चों का हक़ भी डबो दिया, मदनमोहन नें केवल अपनी पूँजी ही नहीं खोई अपनें ऊपर क़र्ज़ भी कर लिया.

भला! लाला मदनमोहन को क़र्ज़ करनें की क्या ज़रूरत थी? जो यह पहलै ही सै प्रबंध करनें की रीति जान्कर तत्काल अपनें आमद खर्च का बंदोबस्त कर लेते तो इन्को क्या इन्के बेटे पोतों को भी तंगी उठानें की कुछ ज़रूरत न थी. मैं आप तकलीफ़ सै रहनें को, निर्लज्ज़ता सै रहनें को, बदइंतज़ामी सै रहनें को, अथवा किसी हक़दार के हक़ मैं कमी करनें को पसंद नहीं करता, परंतु इन्को तो इन बातों के लिये उद्योग करनें की भी कुछ ज़रूरत न थी यह तो अपनी आमदनी का बंदोबस्त करके असल पूँजी के हाथ लगाए बिना अमीरी ठाठ सै उमर भर चैन कर सक्ते थे. विदुर जी नें कहा है—

---

* सन्त स्तृणोत्तारणमृतमांगात् सुवर्णकोट्यर्पणभां मनंति।
प्राणव्ययेनापि कृतोपकाराः खलाः परम्बैरमिवोद्वहन्ति ॥

"फल अपक्क जो वृत्त ते तोर लेत नर कोय।
फल को रस पावै नहीं नास बीज को होय॥
नास बीज को होय यहै निज चित्त बिचारै।
पके, पके फल लेइ समय परिपाक निहारै॥
पके पके फल लेइ स्वाद रस लहै बुद्धि बल।
फल ते पावै बीज, बीज ते होइ बहुरि फल॥"*

यह उपदेश सब नीति का सार है परंतु जहाँ मालिक को अनुभव न हो, निकटवर्ती स्वार्थपर हों वहाँ यह बात कैसे हो सक्ती है!

"जैसै माली बाग को राखत हित चित चाहि।
तैसै जो कोला करत कहा दरद है ताहि?"

लाला मदनमोहन अब तक क़र्ज़दारी की दुर्दशा का वृत्तांत नहीं जान्ते. जिससमय क़र्ज़दार वादे पर रुपया नहीं दे सक्ता उसी समय सै लेनदार को अपने क़र्ज़ के अनुसार क़र्ज़दार की जायदाद और स्वतंत्रता पर अधिकार हो जाता है. वह क़र्ज़दार को कठोर से कठोर वाक्य "बेई-मान" कह सक्ता है, रस्ता चल्ते मैं उस्का हाथ पकड़ सक्ता है. यह कैसी लज्जा की बात है कि एक मनुष्य को देखते ही डर के मारे छाती धड़कने लगे और शर्म के मारे आँखें नीची हो जायँ, सब लोग लाला मदनमोहन की तरह फ़िज़ूलख़र्ची और झूँटी ठसक दिखाने मैं बरबाद नहीं होते सौ मैं दो, एक समझवार भी किसी का काम बिगड़ जाने सै, या किसी की जामनी कर देने सै या किसी और उचित कारण सै

* बनस्पतेरपक्वानि फलानिप्रचिनोति यः।
सनाप्नोति रसं तेभ्यो बीजं चास्य विनश्यति॥
यस्तु पक्कमुपादत्ते काले परिणतं बलं।
फलाद्रसं सलभते बीजच्चैव फलं पुनः॥

इस आफ़त मैं फँस जाते हैं परंतु बहुधा लोग अमीरों की सी ठसक दिखाने मैं और अपने बूते से बढ़ कर चलने मैं क़र्ज़दार होते हैं.

क़र्ज़दारी मैं सब से बड़ा दोष यह है कि जो मनुष्य धर्मात्मा होता है वह भी क़र्ज मैं फँसकर लाचारी से अधर्म की राह चलनें लगता है. जब से कर्ज लेने की इच्छा होती है तब ही से क़र्ज़ लेनेंवाले को ललचाने, और अपनी साहूकारी दिखाने के लिये तरह तरह की बनावट की जाती है. एक बार क़र्ज़ लिये पीछे क़र्ज़ लेने का चस्का पड़ जाता है और समय पर क़र्ज़ नहीं चुका सक्ता तब लेनदार को धीर्य देने और उस्की दृष्टि मैं साहूकार दीखने के लिये ज्यादः ज्यादः क़र्ज़ मैं जकड़ता जाता है और लेनदार का कड़ा तक़ाज़ा हुआ तो उस्का क़र्ज़ चुकाने के लिये अधर्म करने की भी रुचि हो जाती है. क़र्ज़दार झूँट बोलने से नहीं डरता और झूँट बोले पीछे उस्की साख नहीं रहती वह अपने बाल बच्चों के हक़ मैं दुश्मन से अधिक बुराई करता है. मित्रों को तरह तरह की जोखों मैं फँसाता है अपनी घड़ी भर की मौज के लिये आप जन्म भर के बंधन मैं पड़ता है और अपनी अनुचित इच्छा को सजीवन करने के लिये आप मर मिटता है.

बहुत से अविचारी लोग क़र्ज़ चुकाने की अपेक्षा उदारता को अधिक समझते हैं इस्का कारण यह है कि उदारता से यश मिल्ता है, लोग जगह जगह उदार मनुष्य की बड़ाई करते फिरते हैं परंतु क़र्ज़ चुकाना केवल इंसाफ़ है इसलिये उस्की तारीफ़ कोई नहीं करता; इंसाफ़ को लोग साधारण नेकी समझते हैं इस कारण उस्की निस्बत उदारता की ज्यादः क़दर करते हैं जो बहुधा स्वभाव की तेज़ी और अभिमान से प्रगट होती है परंतु बुद्धिमानी से कुछ संबंध नहीं रखती. किसी उदार मनुष्य से उस्का नौकर जाकर कहे कि फ़लाना लेनदार अपने रुपे का तक़ाज़ा करने आया है और आप के फ़लाने ग़रीब मित्र अपने निर्बाह के लिये आप

की सहायता चाहते हैं तो वह उदार मनुष्य तत्काल कह देगा कि लेनदार को टाल दो और उस ग़रीब को रुपे दे दो क्योंकि लेनदार का क्या ? वह तो अपने लेने लेता है इस्के देने सै वाह वाह होगी.

परंतु इंसाफ़ का अर्थ लोग अच्छी तरह नहीं समझते क्योंकि जिस्के लिये जो करना चाहिये वह करना इंसाफ़ है इसलिये इंसाफ़ मैं सब नेकियें आ गईं. इंसाफ़ का काम वह है जिस्मैं ईश्वर की तरफ़ का कर्तव्य, संसार की तरफ़ का कर्तव्य और अपनी आत्मा की तरफ़ का कर्तव्य अच्छी तरह संपन्न होता हो. इंसाफ़ सब नेकियों की जड़ है और सब नेकियाँ उस्की शाखा प्रशाखा हैं इंसाफ़ की सहायता बिना कोई बात मध्यम भाव सै न होगी तो सरलता अविवेक, बहादुरी दुराग्रह, परोपकार अनसमझी और उदारता फ़िज़ूलखर्ची हो जायँगीं.

कोई स्वार्थरहित काम इंसाफ़ के साथ किया जाय तो उस्की सूरत ही बदल जाती है और उस्का परिणाम बहुधा भयंकर होता है. सिवाय की रक़म मैं सै अच्छे कामों मैं लगाए पीछै कुछ रुपया बचै और वो निर्दोष दिल्लगी की बातों मैं ख़र्च किया जाय तो उस्को कोई अनुचित नहीं बता सक्ता परंतु कर्तव्य कामों को अटका कर दिल्लगी की बातों मैं रुपया या समय ख़र्च करना कभी अच्छा नहीं हो सक्ता. अपने बूते मूजिब उचित रीति सै औरों की सहायता करनी मनुष्य का फ़र्ज़ है परंतु इस्का यह अर्थ नहीं है कि अपने मन की अनुचित इच्छाओं को पूरी करने का उपाय करै अथवा ऐसी उदारता पर कमर बाँधे कि आगै को अपना कर्तव्य संपादन करनें के लिये और किसी अच्छे काम मैं ख़र्च करनें के लिये अपने पास फूटी कौड़ी न बचें बल्कि सिवाय मैं क़र्ज़ हो जाय.

अफ़सोस ! लाला मदनमोहन की इस्समय ऐसी ही दशा हो रही है. इन्पर चारों तरफ़ सै आफ़त के बादल उमड़े चले आते हैं. परंतु इन्हें कुछ ख़बर नहीं है. विदुर जी ने सच कहा है—

"बुद्धिभ्रंश ते लहत बिनासहि।
ताहि अनीति नीति सी भासहि।*"

इस तरह सै अनेक प्रकार के सोच विचार मैं डूबे हुए लाला ब्रजकिशोर अपनें मकान पर पहुँचे परंतु उन्के चित्त को किसी बात सै ज़रा भी धैर्य न हुआ.

लाला ब्रजकिशोर कठिन सै कठिन समय मैं अपनें मन को स्थिर रख सक्ते थे परंतु इस्समय उन्का चित्त ठिकानें न था उन्नें यह काम अच्छा किया कि बुरा किया? इस बात का निश्चय वह आप नहीं कर सक्ते थे वह कहते थे; कि इस दशा मैं मदनमोहन का काम बहुत दिन नहीं चलेगा और उस्समय ये सब रुपे के मित्र मदनमोहन को छोड़ कर अपनें अपनें रस्ते लगेंगे परंतु मैं क्या करूँ? मुझको कोई रस्ता नहीं दिखाई देता और इस्समय मुझ सै मदनमोहन की कुछ सहायता न हो सकी तो मैं नें संसार मैं जन्म लेकर क्या किया?

फ्रांस के चौथे हेनूरी नें डी ला ट्रेमाइल को देशनिकाला दिया था और काउंट डी आविग्नी उस्सै मेल रखता था इस्पर एक दिन चौथे हेनूरी नें डी आविग्नी सै कहा कि "तुम अब तक डी ला ट्रेमाइल की मित्रता कैसे नहीं छोड़ते?" डी आविग्नी नें जवाब दिया कि "मैं ऐसी हालत मैं उस्की मित्रता नहीं छोड़ सक्ता क्योंकि मेरी मित्रता के उपयोग करनें का काम तो उस्को अभी पड़ा है."

पृथ्वीराज महोबे की लड़ाई मैं बहुत घायल होकर मुर्दों के शामिल पड़े थे और संजमराय भी उन्के बराबर उसी दशा मैं पड़ा था. उस्समय एक गिद्ध आके पृथ्वीराज की आँख निकालनें लगा परंतु पृथ्वीराज को उसके रोकनें की सामर्थ्य न थी इस्पर संजमराय पृथ्वीराज को बचानें के लिये

---

* बुद्धौ कलुष भूतायां विनाशे प्रत्युपस्थिते।
अनयो नयसंकाशो हृदयान्नापसर्पति॥

अपने शरीर का मांस काट काट कर गिद्ध के आगे फैंकनें लगा जिस्सै पृथ्वीराज की आँखैं बच गईं और थोड़ी देर मैं चंद वगैरे आ पहुँचे.

हेनूरी रिचमन्ड पीटर के भय सैं ब्रीटनी छोड़ कर फ्रांस को भागनें लगा उस्समय उस्के सेवक सीमार नें उस्के वस्त्र पहन कर उस्की जोखों अपनें सिर ली और उस्को साफ़ निकाल दिया.

क्या इस्तरह सै मैं मदनमोहन की कुछ सहायता इस्समय नहीं कर सक्ता? यदि इस काम मैं मेरी जान भी जाती रहै तो कुछ चिंता नहीं जब मैं उन्को अनसमझ जान कर उन्के कहनें सै उन्हें छोड़ आया तो मैंनें कौन्सी बुद्धिमानी की? पर मैं रह कर क्या करता? हाँ मैं हाँ मिला कर रहना रोगी को कुपथ्य देनें सै कम न था और ऐसे अवसर पर उन्का नुकसान देख कर चुप हो रहना भी स्वार्थपरता सै क्या कम था? मेरा विचार सदैव सै यह रहता है कि काम करना तो बिधीपूर्वक करना. न हो सके तो चुप हो रहना, बेगार तक को बेगार न समझना, परंतु वहाँ तो मेरे वाजबी कहनें सै उल्टा असर होता था और दिन पर दिन जिद बढ़ती जाती थी मैं नें बहुत धैर्य सै उन्को राह पर लानें के अनेक उपाय किये पर उन्नें किसी हालत मैं अपनी हद्द सै आगै बढ़ना मंजूर न किया.

असल तो ये है कि अब मदनमोहन बच्चे नहीं रहे उन्की उम्र पक गई, किसी का दबाव उन्पर नहीं रहा, लोगों ने हाँ मैं हाँ मिला कर उन्की भूलों को और दृढ़ कर दिया रुपे के कारण उन्को अपनी भूलों का फल न मिला और संसार के दुःख सुख का अनुभव भी न होनें पाया बस रंग पक्का हो गया. बिदुर जी कहते हैं कि—

"सन्त असंत तपस्वी चोर, पापी सुकृती हृदय कठोर।
तैसो होय बसै जिहि संग, जैसो होत बसन मिल रंग॥"*

---

* यदि सन्तं सेवति यद्यसन्तं तपस्विनं यदि वा स्तनमेव।
वासो यथा रंग वशं प्रयाति तथा सतेषां वशमभ्युपैति॥

यदि वह सावधान हों तो अंगद हनुमान की तरह उन्की आज्ञा पालन करने में सब कर्तव्य संपादन हो जाते हैं परंतु जहाँ ऐसा नहीं होता वहाँ बड़ी कठिनाई पड़ती है. सकड़ी गली में हाथी नहीं चल्ता तब महावत कूद जाता है. वृंद कहता है कि—

"ताकों त्यों समझाइये जो समझे जिहिं बानि।
बैन कहत मग अन्ध कों अरु बहरे कों पानि॥"

जिस तरह सुग्रीव भोग बिलास मैं फँस गया तब रघुनाथ जी केवल उस्को धमकी देकर राह पर ले आए थे इस तरह लाला मदनमोहन के लिये क्या कोई उपाय नहीं हो सक्ता? हे जगदीश! इस कठिन काम मैं तूँ मेरी सहायता कर.

लाला ब्रजकिशोर इन्बातों के बिचार मैं ऐसे डूबे हुए थे कि उन्को अपना देहानुसंधान न था. एक बार वह सहसा कलम उठाकर कुछ लिखने लगे और किसी जगह को पूरा महसूल देकर एक ज़रूरी तार तत्काल भेज दिया. परंतु फिर उन्हीं बातों के सोच बिचार मैं मग्न हो गए. इस्समय उन्के मुख से अनायास कोई, कोई शब्द बेजोड़ निकल जाते थे जिन्का अर्थ कुछ समझ मैं नहीं आता था. एक बार उन्ने कहा "तुलसीदास जी सच कहते हैं—

"षट् रस बहु प्रकार व्यंजन कोउ दिन अरु रैन बखानें।
बिन बोले संतोष जनित सुख खाय सोई पै जानें॥"

थोड़ी देर पीछे कहा—"मुझको इस्समय इस बचन पर बरताव रखना पड़ेगा—

(वृंद) झूंटहु ऐसो बोलिये साँच बराबर होय।
जों अँगुरी सों भीत पर चंद्र दिखावे कोय॥"

परंतु पानी जैसा दूध से मिल जाता है तेल से नहीं मिल्ता. विक्रमोर्वशी नाटक मैं उर्वशी के मुख से सच्ची प्रीति के कारण पुरुषोत्तम को

जगह पुरूरवा का नाम निकल गया था इसी तरह मेरे मुख सै कुछ का कुछ निकल गया तो क्या होगा? थोड़ी देर पीछै कहा "लोक निंदा सै डरना तो वृथा है जब वह लोग जगत-जननी जनक-नंदिनी की झूँटी निंदा किए बिना नहीं रहे! श्रीकृष्णचंद्र को जाति वालों के अपवाद का उपाय नारद जी सै पूछना पड़ा! तो हम जैसे तुच्छ मनुष्यों की क्या गिन्ती है? सादी ने लिखा है "एक विद्वान सै पूछा गया था कि कोई मनुष्य ऐसा होगा जो किसी रूपवान सुंदरी के साथ एकांत मैं बैठा हो, दरवाज़ा बंद हो, पहरे वाला सोता हो मन ललचा रहा हो काम प्रबल हो × × और वह अपने शम दम के बल सै निर्दोष चल सकै?" उसने कहा कि "हाँ वह रूपवान सुंदरी से बच सक्ता हैं परंतु निंदकों की निंदा सै नहीं बच सक्ता" फिर लोक-निंदा के भय सै अपना कर्तव्य न करना बड़ी भूल है. धर्म औरों के लिए नहीं अपने लिये और अपने लिए भी फल की इच्छा सै नहीं, अपना कर्तव्य पूरा करने के लिये करना चाहिये परंतु धर्म करते अधर्म हो जाय, नेकी करते बुराई पल्ले पड़े, औरों को निकालती बार आप गोता खानें लगें तो कैसा हो? रुपे का लालच बड़ा प्रबल है और निर्धनों को तो उन्के काम निकालनें की चाबी होने के कारण बहुत ही ललचाता है." थोड़ी देर पीछै कहा "हलधर दास ने कहा है—

"बिन काले मुख नहिं पलाश को अरुणाई है।
बिन बूड़े न समुद्र काहु मुक्ता पाई है॥"

इसी तरह गोल्डस्मिथ कहता है कि "साहस किये बिना अलभ्य वस्तु हाथ नहीं लग सक्ती." इसलिये ऐसे साहसी कामों मैं अपनी नीयत अच्छी रखनी चाहिये यदि अपनी नीयत अच्छी होगी तो ईश्वर अवश्य सहायता करैगा और डूब भी जायँगे तो अपनी स्वरूप हानि न होगी."

———

प्रकरण २१

पतिब्रता

पति के सँग जीवन मरण पति हर्षे हर्षाय।
स्नेहमयी कुल नारि की उपमा लखी न जाय ॥ *
(शार्ङ्गधरे)

लाला ब्रजकिशोर न जानें कब तक इसी भँवर जाल मैं फँसे रहते परंतु मदनमोहन की पतिब्रता स्त्री के पास सै उस्के दो नन्हें, नन्हें बच्चों को लेकर एक बुढ़िया आ पहुँची इस्सै ब्रजकिशोर का ध्यान बट गया.

उन बालकों की आँखों मैं नींद घुल रही थी उन्को आते ही ब्रजकिशोर नें बड़े प्यार सै अपनी गोद मैं बिठा लिया और बुढ़िया सै कहा "इन्को इस्समय क्यों हैरान किया? देख इन्की आँखों मैं नींद घुल रही है जिस्सै ऐसा मालूम होता है कि मानों यह भी अपनें बाप के काम काज की निर्बल अवस्था देखकर उदास हो रहे हैं" उन्को छाती सै लगा कर कहा "शाबास! बेटे शाबास!! तुम अपनें बाप की भूल नहीं समझते तो भी उदास मालूम होते हो परंतु वह सब कुछ समझता है तो भी तुम्हारी हानि लाभ का कुछ बिचार नहीं करता झूँटी ज़िद अथवा हठधर्मी सै तुम्हारा वाजबी हक़ खोए देता है तुम्हारे बाप को लोग बड़ा उदार और दयालु बताते हैं परंतु वह कैसा कठोर चित्त है कि अपनें गुलाब जैसे कोमल और गंगाजल जैसे निर्मल बालकों के साथ विश्वासघात

---

* जीवति जीवति नाथे मृतेमृता या मुदायुता मुदिते।
सहजस्नेह रसाला कुलबनिता केन तुल्यास्यात् ॥

करके उन्को जन्म भर के लिये दरिद्री बनाये देता है वह नहीं जान्ता कि एक हक़दार का हक़ छीन कर मुफ्तखोरों को लुटा देनें मैं कितना पाप है ! कहो अब तुम्हारे वास्तै क्या मंगवायँ ?"

"खिनोंने" (खिलौने) छोटे नें कहा "बप्फी" (बर्फ़ी) बड़े बोले और दोनों ब्रजकिशोर की मूँछें पकड़ कर खेंचनें लगे. ब्रजकिशोर नें बड़े प्यार सै उन्के गुलाबी गालों पर एक, एक मीठी चूमी ले ली और नौकरों को आवाज़ देकर खिलौनें और बरफ़ी लानें का हुक्म दिया.

"जी ! इन्की माँ नें ये बच्चे आप के पास भेजे हैं" बुढ़िया बोली "और कह दिया है कि इन्को आप के पांओं मैं डाल कर कह देना कि मुझ को आप के क्रोधित हो कर चले जानें का हाल सुन्कर बड़ी चिंता हो रही है मुझ को अपनें दुःख सुख का कुछ बिचार नहीं मैं तो उन्के साथ रहनें मैं सब तरह प्रसन्न हूँ, परंतु इन छोटे, छोटे बच्चों की क्या दशा होगी ? इन्को बिद्या कौन पढ़ायगा ? नीति कौन सिखायगा ? इन्की उमर कैसे कटेगी ? मैं नहीं जान्ती कि आप को इस कठिन समय मैं अपना मन मार कर उन्की बुद्धि सुधारनी चाहिये थी अथवा उन्को अघर धार मैं लटका कर घर चले जाना चाहिये था ? खैर ! आप उन्पर नहीं तो अपनें कर्तव्य पर दृष्टि करें, अपनें कर्तव्य पर नहीं तो इन छोटे बच्चों पर दया करें ये अपनी रक्षा आप नहीं कर सक्ते इन्का बोझ आप के सिर है आप इन्की खबर न लेंगे तो संसार मैं इन्का कहीं पता न लगेगा और ये बिचारे यों ही झुर झुर कर मर जायँगे !"

यह बात सुन कर ब्रजकिशोर की आँखें भर आईं थोड़ी देर कुछ नहीं बोला गया फिर चित्त स्थिर कर के कहनें लगे "तुम बहन सै कह देना कि मुझको अपना कर्तव्य अच्छी तरह याद है परंतु क्या करूँ ? मैं बिबस हूं काल की कुटिल गति सै मुझ को अपनें मनोर्थ के विपरीत आचरण (बरताव) करना पड़ता है तथापि वह चिंता न करें. ईश्वर का कोई काम भलाई सै खाली नहीं होता उस्नें इस्मैं भी अपना कुछ न

कुछ हित ही सोचा होगा" लड़कों की तरफ़ देख कर कहा "बेटे ! तुम कुछ उदास मत हो जिस तरह सूर्य चंद्रमा को ग्रहण लग जाता है इसी तरह निर्दोष मनुष्यों पर भी कभी, कभी अनायास विपत्ति आ पड़ती है परंतु उस्समय उन्हें अपनी निर्दोषता का बिचार करके मन मैं धैर्य रखना चाहिये" .

उन अनसमझ बच्चों को इन्बातों की कुछ परवा न थी बरफ़ी और खिलोनों के लालच सै उन्की नींद उड़ गई थी इस वास्तै वह तो हरेक चीज़ की उठाया धरी मैं लग रहे थे और ब्रजकिशोर पर तक़ाज़ा जारी था .

थोड़ी देर मैं बरफ़ी और खिलोने भी आ पहुँचे इस्समय उन्की खुशी की हद न रही . ब्रजकिशोर दोनों को बरफ़ी बांटा चाहते थे इतनें मैं छोटा हाथ मार कर सब ले भागा और बड़ा उस्सै छीन्नें लगा तो सब की सब एक बार मुँह मैं रख गया . मुँह छोटा था इसलिये वह मुँह मैं नहीं समाती थी परंतु यह खुशी भी कुछ थोड़ी न थी कनअँखियों सै बड़े की तरफ़ देख कर मुस्कराता जाता था और नाचता जाता था. वह भोली भोली सूरत, ठुमक ठुमक कर नाचना, छिप छिप कर बड़े की तरफ़ देखना, सैन मारना , उस्के मुस्कराने मैं दूध के छोटे, छोटे दांतों की मोती की सी झलक देख कर थोड़ी देर के लिये ब्रजकिशोर अपनें सब चारा बिचार भूल गए परंतु इस्को नाचता कूदता देख कर अब बड़ा मचल पड़ा उस्नें सब खिलोनें अपनें क़ब्जे मैं कर लिये और ठिनक, ठिनक कर रोनें लगा . ब्रजकिशोर उस्को बहुत समझाते थे कि "वह तुम्हारा छोटा भाई है तुम्हारे हिस्से की बरफ़ी खा ली तो क्या हुआ ? तुम ही जानें दो" परंतु वहाँ इन्बातों की कुछ सुनाई न थी इधर छोटे खिलौनों की छीना झपटी मैं लग रहे थे ! निदान ब्रजकिशोर को बड़े के वास्तै बरफ़ी और छोटे के वास्तै खिलौने फिर मगानें पड़े . जब दोनों की रज़ामंदी हो गई तो ब्रजकिशोर नें बड़े प्यार सै दोनों की

एक, एक मिठ्ठी (मीठी चूमी) लेकर उन्हें बिदा किया और जाती बार बुढ़िया को समझा दिया कि "बहन को अच्छी तरह समझा देना वह कुछ चिंता न करें ."

परंतु बुढ़िया मकान पर पहुँची जितनें वहाँ की तो रंगत ही बदल गई थी मदनमोहन के साले जगजीवन दास अपनी बहन को लिवा ले जानें के लिये मेरठ सै आए थे वह अपनी मा (अर्थात् मदनमोहन की सास) की तबीयत अच्छी नहीं बताते थे और आज ही रात की रेल मैं अपनी बहन को मेरठ लिवा ले जानें की तैयारी करा रहे थे, मदनमोहन की स्त्री के मन मैं इस्समय मदनमोहन को अकेले छोड़ कर जानें की बिल्कुल न थी परंतु एक तो वह अपनें भाई सै लज्जा के मारे कुछ नहीं कह सक्ती थी दूसरे मा की माँदगी का मामला था तीसरे मदनमोहन हुक्म दे चुके थे इस लिये लाचार होकर उस्नें दो, एक दिन के वास्ते जानें की तैयारी की थी .

मदनमोहन की स्त्री अपनें पति की सच्ची प्रीतिमान, शुभचिंतक, दुःख सुख की साथन, और आज्ञा मैं रहनें वाली थी और मदनमोहन भी प्रारंभ मैं उस्सै बहुत ही प्रीति रखता था परंतु जब सै वह चुन्नीलाल और शिंभूदयाल आदि नए मित्रों की संगति मैं बैठनें लगा नाच रंग की धुन लगी, बेश्याओं के झूंटे हाव भाव देख कर लोट पोट हो गया ! "अय ! सुभानअल्लाह ! क्या जोबन खिल रहा है !" "वल्लाह ! क्या बहार आ रही है !" "चश्मबद्दूर क्या भोली, भोली सूरत है !" "अय ! परे हटो !" "मैं सदकै ! मैं कुर्बान मुझे न छेड़ो !" "खुदा की क़सम ! मेरी तरफ़ तिरछी नज़र सै न देखो !" बस यह चोचले की बातें चित्त मैं चुभ गईं . किसी बात का अनुभव तो था ही नहीं तरुणाई की तरंग, शिंभूदयाल और चुन्नीलाल आदि की संगति, द्रव्य और अधिकार के नशे मैं ऐसा चकचूर हुआ कि लोक परलोक की कुछ खबर न रही .

यह बिचारी सीधी सादी सुयोग्य स्त्री अब गंवारी मालूम होने लगी, पहले पहले कुछ दिन यह बात छिपी रही परंतु प्रीति के फूल मैं कीड़ा लगे पीछे वह रस कहाँ रह सक्ता है ? उस्समय परस्पर के मिलाप सै किसी का जी नहीं भरता था, बातों की गुलझटी कभी सुलझनें नहीं पाती थी, आधी बात मुख मैं और आधी होटों ही मैं हो जाती थी, आँख सै आँख मिल्ते ही दोनों को अपनें आप हँसी आ जाती थी केवल हँसी नहीं उस हँसी मैं धूप छाया की तरह आधी प्रीति और आधी लज्जा की झलक दिखाई देती थी और सच्ची प्रीति के कारण संसार की कोई वस्तु सुंदरता मैं उस्सै अधिक नहीं मालूम होती थी. एक की गुप्त दृष्टि सदा दूसरे की ताक झाक मैं लगी रहती थी क्या चित्रपट देखनें मैं, क्या रमणीक स्थानों की सैर करनें मैं, क्या हँसी दिल्लगी की बातों मैं कोई मौक़ा नोक झोक सै खाली नहीं जाता था और संसार के सब सुख अपनें प्राण जीवन बिना उन्को फीके लगते थे परंतु अब वह बातें कहाँ हैं ? उस्की स्त्री अब तक सब बातों मैं वैसी ही दृढ़ है बल्कि अज्ञान अवस्था की अपेक्षा अब अधिक प्रीति रखती है परंतु मदनमोहन का चित्त वह न रहा वह उस बिचारी सै कोसों भागता है उस्को आफ़त समझता है क्या इन्बातों सै अन्समझ तरुणों की प्रीति केवल आँखों मैं नहीं मालूम होती ? क्या यह उस्की बेक़दरी और झूँटी हिर्स का सब सै अधिक प्रमाण नहीं है ? क्या यह जानें पीछै कोई बुद्धिमान ऐसे अन्समझ आदमियों की प्रतिज्ञाओं का विश्वास कर सक्ता है ? क्या ऐसी पवित्र प्रीति के जोड़े मैं अंतर डालनें वालों को बाल्मीकि ऋषि का शाप * भस्म न करेगा ? क्या एक हक़दार की सच्ची प्रीति के ऐसे चोरों को परमेश्वर के यहाँ सै कठिन दंड न होगा ?

---

* मा निषाद प्रतिष्ठां त्वमगमः शाश्वतीः समाः ।
यत्क्रौंच मिथुनादेकमवधीः काममोहितम् ॥

मदनमोहन की पतिव्रता स्त्री अपनें पति पर क्रोध करना तो सीखी ही नहीं है मदनमोहन उस्की दृष्टि मैं एक देवता है वह अपनें ऊपर के सब दुःखों को मदनमोहन की सूरत देखते ही भूल जाती है और मदन-मोहन के बड़े से बड़े अपराधों को सदा जाना न जाना करती रहती है. मदनमोहन महीनों उस्की याद नहीं करता परंतु वह केवल मदनमोहन को देखकर जीती है वह अपना जीवन अपनें लिये नहीं, अपनें प्राण-पति के लिये समझती है. जब वह मदनमोहन को कुछ उदास देखती है तो उस्के शरीर का रुधिर सूख जाता है जब उस्को मदनमोहन के शरीर मैं कुछ पीड़ा मालूम होती है तो वह उस्की चिंता सै बावली बन जाती है, मदनमोहन की चिंता सै उस्का शरीर सूख कर कांटा हो गया है उस्को अपनें खानें पीनें की बिल्कुल लालसा नहीं है परंतु वह मदनमोहन के खानें पीनें की सब सै अधिक चिंता रखती है वह सदा मदनमोहन की बड़ाई करती रहती है और जो लोग मदनमोहन की ज़रा भी निंदा करते हैं वह उन्की शत्रु बन जाती है, वह सदा मदनमोहन को प्रसन्न रखनें के लिये उपाय करती है उस्के सन्मुख प्रसन्न रहती है अपना दुःख उस्को नहीं जताती और सच्ची प्रीति सै बड़प्पन का बिचार रख कर भय और सावधानी के साथ सदा उस्की आज्ञा प्रतिपालन करती रहती है.

थोड़े खर्च मैं घर का प्रबंध ऐसी अच्छी तरह कर रक्खा है कि मदनमोहन को घर के कामों मैं ज़रा परिश्रम नहीं करना पड़ता जिस्पर फ़ुर्सत के समय खाली बैठ कर और लोगों की पंचायत और स्त्रियों के गहनें गाँठे की थोथी बातों के बदले कुछ, कुछ लिखनें पढ़नें, कसीदा काढ़नें और चित्रादि बनानें का अभ्यास रखती है, बच्चे बहुत छोटे हैं परंतु उन्को खेल ही खेल मैं अभी सै नीति के तत्व समझाए जाते हैं और बेमालूम रीति सै धीरे, धीरे हरेक वस्तु का ज्ञान बढ़ाकर ज्ञान बढ़ानें की उन्की स्वाभाविक रुचि को उत्तेजन दिया जाता है परंतु उन्के

मन पर किसी तरह का बोझ नहीं डाला जाता उन्के निर्दोष खेल कूद और हँसनें बोलनें की स्वतंत्रता मैं किसी तरह की बाधा नहीं होनें पाती .

मदनमोहन की स्त्री अपने पति को किसी समय मौके सै नेक सलाह भी देती है परंतु बड़ों की तरह दबा कर नहीं, बराबर वालों की तरह झगड़ कर नहीं, छोटों की तरह अपनें पति की पदवी का विचार करके, उन्के चित्त दुःखित होनें का विचार करके, अपनी अज्ञानता प्रगट करके, स्त्रियों की ओछी समझ जता कर धीरज सै अपना भाव प्रगट करती है परंतु कभी लोट कर जवाब नहीं देती, विवाद नहीं करती . वह बुद्धिमती चुन्नीलाल और शिंभूदयाल इत्यादि की स्वार्थपरता सै अच्छी तरह भेदी है परंतु पति को ताबेदारी करना अपना कर्तव्य समझ कर समय की बाट देख रही है और ब्रजकिशोर को मदनमोहन का सच्चा शुभचिंतक जान्कर केवल उसी सै मदनमोहन को भलाई की आशा रखती है. वह कभी ब्रजकिशोर सै सन्मुख होकर नहीं मिली परंतु उस्को धर्म का भाई मान्ती है और केवल अपने पति की भलाई के लिये जो कुछ नया वृत्तांत कह-लानें के लायक़ मालूम होता है वह गुपचुप उससै कहला भेजती है. ब्रजकिशोर भी उस्को धर्म की बहन समझता है इस्कारण आज ब्रज-किशोर के अनायास क्रोध करके चले जाने पर उस्नें मदनमोहन के हक़ मैं ब्रजकिशोर को दया उत्पन्न करनें के लिये इस्समय अपनें नन्हें नन्हें बच्चों को टहलनी के साथ ब्रजकिशोर के पास भेज दिया था परंतु वह लोट कर आए जितनें अपनी ही मेरठ जानें की तैयारी हो गई और रातों रात वहाँ जांना पड़ा .

प्रकरण २२

संशय

अज्ञ पुरुष श्रद्धारहित संशययुत बिनशाय ।
बिन श्रद्धा दुहुँ लोक मैं ताकों सुख न लखाय ॥*
(श्रीमद्भगवद्गीता)

लाला ब्रजकिशोर उठकर कपड़े नहीं उतारनें पाये थे इतनें मैं हरकिशोर आ पहुँचा .

"क्यों ! भाई ! आज तुम अपनें पुरानें मित्र सै कैसै लड़ आए ?" ब्रजकिशोर नें पूछा .

"इस्सै आपको क्या ? आपके हाँ तो घी के दिये जल गए होंगे" हरकिशोर नें जवाब दिया .

"मेरे हाँ घी के दिये जलनें की इस्मैं कौन्सी बात थी ?" ब्रजकिशोर नें पूछा .

"आप हमारी मित्रता देख कर सदैव जला करते थे आज वह जलन मिट गई ."

"क्या तुम्हारे मन मैं अब तक यह झूँटा वहम समा रहा है ?" ब्रजकिशोर नें पूछा .

"इस्मैं कुछ संदेह नहीं" हरकिशोर हुज्जत करनें लगा . "मैं ठेठ सै देखता आता हूँ कि आप मुझको देखकर जल्ते हैं मेरी और मदनमोहन की मित्रता देख कर आपकी छाती पर सांप लोटता है . आपनें हमारा परस्पर बिगाड़ करानें के लिए कुछ थोड़े उपाय किये ? मदनमोहन के

---

* अज्ञश्चाश्रद्दधानश्च संशयात्मा बिनश्यति ।
नायंलोकोस्तिनपरो न सुखं संशयात्मनः ॥

पिता को थोड़ा भड़काया ? जिस दिन मेरे लड़के की बरात मैं शहर के सब प्रतिष्ठित मनुष्य आए थे उन्को देख कर आपके जी मैं कुछ थोड़ा दुःख हुआ ? शहर के सब प्रतिष्ठित मनुष्यों सै मेरा मेल देख कर आप नहीं कुढ़ते ? आप मेरी तारीफ़ सुन्कर कभी अपनें मन मैं प्रसन्न हुए ? आपनें किसी काम मैं मुझको सहायता दी ? जब मैं नें अपनें लड़के के विवाह मैं मजलिस की थी आपने मजलिस करनें सै मुझे नहीं रोका ? लोगों के आगे मुझको बावला नहीं बताया ? बहुत कहनें सै क्या है ? आज ही मदनमोहन का मेरा बिगाड़ सुन्कर कचहरी से वहाँ झटपट दोड़ गए और दो घंटे एकांत मैं बैठकर उस्को अपनी इच्छानुसार पट्टी पढ़ा दी परंतु मुझको इन बातों की क्या परवा है ? आप और वह दोनों मिल्कर मेरा क्या कर सक्ते हो ? मैं सब समझ लूँगा ."

लाला ब्रजकिशोर ये बातें सुन सुन कर मुस्कराते जाते थे . वह अब धीरज सै बोले "भाई ! तुम बृथा वहम का भूत बनाकर इतना डरते हो . इस वहम का कुछ ठिकाना है ? तुम तत्काल इन बातों की सफ़ाई करते चले जाते तो मन मैं इतना वहम सर्वथा नहीं रहता . क्या स्वच्छ अंतःकरण का यही अर्थ है ? मुझको जलन किस बात पर होती ? तुम अपना सब काम छोड़ कर दिन भर लोगों की हाज़री साधते फिरोगे , उन्की चाकरी करोगे, उन्को तोहफ़ा तहायफ़ दोगे ? दस, दस बार मसाल लेकर उन्के घर बुलानें जाओगे तो वह क्यों न आवेंगे ? अपनें गांठ की दौलत खर्च करके उन्को नाच दिखाओगे तो वह क्यों न तारीफ़ करेंगे ? परंतु यह तारीफ़ कितनी देर की, वाह वाह कितनी देर की ? कभी तुम पर आफ़त आ पड़ेगी तो इन्मैं सै कोई तुम्हारी सहायता को आवेगा ? इस खर्च सै देश का कुछ भला हुआ ? तुम्हारा कुछ भला हुआ ? तुम्हारी संतान का कुछ भला हुआ ? यदि इस फ़िज़ूलखर्चा के बदले लड़के के पढ़ानें लिखानें मैं यह रुपया लगाया जाता, अथवा किसी देश हितकारी काम मैं खर्च होता तो निस्संदेह बड़ाई की बात थी परंतु मैं

इस्मैं क्या तारीफ़ करता, क्या प्रसन्न होता, क्या सहायता करता, मुझको तुम्हारी भोली, भोली बातों पर बड़ा आश्चर्य था इसी वास्ते मैं नें तुमको फ़िजूलखर्ची सै रोका था, तुमको बावला बताया था परंतु तुम्हारी तरफ़ की मेरी मन की प्रीति मैं कुछ अंतर कभी नहीं आया. क्या तुम यह बिचारते हो कि जिस्सै संबंध हो उस्की उचित अनुचित हरेक बात का पक्षपात करना चाहिये ? इंसाफ़ अपने वास्ते नहीं केवल औरों के वास्ते है ? क्या हाथ मैं डिमडिमी लेकर सब जगह डोंडी पीटे बिना सच्ची प्रीति नहीं मालूम होती ? इन सब बातों मैं कोई बात तुम्हारी बड़ाई के लायक़ हो तो घर फूँक तमाशा देखना है. इसी तरह इन सब बातों मैं कोई बात मेरे प्रसन्न होने लायक़ हो तो तुमको प्रसन्न देख कर प्रसन्न होना है मैं यह नहीं कहता कि मनुष्य ऐसे कुछ काम न करे समय, समय पर अपनें बूते मूजिब सब काम करनें योग्य हैं परंतु यह मामूली कारवाई है जितना वैभव अधिक होता है उतनी ही धूम धाम बढ़ जाती है इसलिये इस्मैं कोई ख़ास बात नहीं पाई जाती है. मैं चाहता हूं कि तुम सै कोई देशहितैषी ऐसा काम बनें जिस्मैं मैं अपनें मन की उमंग निकाल सकूँ. मनुष्य को जलन उस मौक़े पर हुआ करती है जब वह आप उस लायक़ न हो परंतु तुमको जो बड़ाई बड़े परिश्रम सै मिली है वह ईश्वर की कृपा सै मुझको बेमहनत मिल रही है फिर मुझ को जलन क्यों हो ? तुम्हारी तरह ख़ुशामद कर के मदनमोहन सै मेल किया चाहता तो मैं सहज मैं कर लेता परंतु मैं नें आप यह चाल पसंद न की तो अपनी इच्छा सै छोड़ी हुई बातों के लिये मुझको जलन क्यों हो ? जलन की वृत्ति परमेश्वर नें मनुष्य को इसलिए दी है कि वह अपनें सै ऊँची पदवी के लोगों को देखकर उचित रीति सै अपनी उन्नति का उद्योग करे परंतु जो लोग जलन के मारे औरों का नुक्सान करके उन्हें अपनी बराबर का बनाया चाहते हैं वह मनुष्य के नाम को धब्बा लगाते हैं. मुझको तुम सै केवल यह शिकायत थी और इसी विषय मैं तुम्हारे विपरीत चर्चा करनी पड़ी थी कि तुमनें मदन-

मोहन सै मित्रता करके मित्र के करनें का काम न किया, तुम को मदन-मोहन के सुधारनें का उपाय करना चाहिये था परंतु मैं नें तुम्हारे बिगाड़ की कोई बात नहीं की . हाँ इस वहम का क्या ठिकाना है ? खाते, पीते, बैठते, उठते, बिना जानें ऐसी सैकड़ों बातें बन जाती हैं कि जिन्का बिचार किया करें तो एक दिन मैं बावले बन जायँ . आए तो आए क्यों, गए तो गए क्यों, बैठे तो बैठे क्यों, हँसे तो हँसे क्यों, फ़लानें सै क्या बात की फ़लानें सै क्यों मिले ? ऐसी निरर्थक बातों का बिचार किया करें तो एक दिन काम न चले . छुटभैये सैंकड़ों बातें बीच की बीच मैं बनाकर नित्य लड़ाई करा दिया करें पर नहीं अपनें मन को सदैव दृढ़ रखना चाहिए निर्बल मन के मनुष्य जिस तरह की ज़रा ज़रा सी बातों मैं बिगड़ खड़े होते हैं दृढ़ मन के मनुष्य को वैसी बातों की ख़बर भी नहीं होती इसलिये छोटी, छोटी बातों पर विशेष बिचार करना कुछ तारीफ़ की बात नहीं है और निश्चय किए बिना किसी की निंदित बातों पर विश्वास न करना चाहिये; किसी बात मैं संदेह पड़ जाय तो स्वच्छ मन सै कह सुनकर उस्की तत्काल सफ़ाई कर लेनी अच्छी है क्योंकि ऐसे झूंटे, झूंटे वहम संदेह और मनःकल्पित बातों सै अब तक हज़ारों घर बिगड़ चुके हैं ."

"ख़ैर ! और बातों में आप चाहैं जो कहैं परंतु इतनी बात तो आप भी अंगीकार करते हैं कि मदनमोहन की और मेरी मित्रता के विषय मैं आप नें मेरे बिपरीत चर्चा की बस इतना प्रमाण मेरे कहनें की सचाई प्रगट करनें के लिए बहुत है" हरकिशोर कहनें लगा "आप का यह बरताव केवल मेरे संग नहीं है बल्कि सब संसार के संग है आप सबकी नुक्ताचीनी किया करते हैं ."

"अब तो तुम अपनी बात को सब संसार के साथ मिलानें लगे परंतु तुम्हारे कहनें सै यह बात अंगीकार नहीं हो सक्ती . जो मनुष्य आप जैसा होता है वैसा ही सब संसार को समझता है . मैं नें अपना

कर्तव्य समझ कर अपने मन के सच्चे, सच्चे विचार तुम से कह दिये अब उन्को मानों या न मानों तुम्हें अधिकार है" लाला ब्रजकिशोर नें स्वतंत्रता से कहा.

"आप सच्ची बात के प्रगट होने से कुछ संकोच न करैं संबंधी हो अथवा बिगाना हो जिस्सै अपनी स्वार्थ-हानि होती है उस्सै मन मैं अंतर तो पड़ ही जाता है" हरकिशोर कहने लगा "स्यमन्तक मणि के संदेह पर श्रीकृष्ण बलदेव जैसे भाइयों मैं भी मन चाल पड़ गई ब्रह्मसभा मैं अपमान होने पर दक्ष और महादेव (ससुर जँवाई) के बीच भी विरोध हुए बिना न रहा."

"तो यों साफ़ क्यों नहीं कहते कि मेरी तरफ़ से अब तक तुम्हारे मन मैं वही विचार बन रहे हैं. मुझको कहना था वह कह चुका अब तुम्हारे मन मैं आवे जैसे समझते रहो" लाला ब्रजकिशोर नें बेपरवाई से कहा.

"चालाक आदमियों की यह तो रीति ही होती है कि वह जैसी हवा देखते हैं वैसी बात करते हैं. अब तक मदनमोहन से आप की अनबन रहती थी अब मुकदमों का समय आते ही मेल हो गया! अब तक आप मदनमोहन से मेरी मित्रता छुड़ानें का उपाय करते थे अब मुझको मित्रता रखनें के लिए समझानें लगे! सच है बुद्धिमान मनुष्य जो करना होता है वही करता है परंतु औरों का ओलंभा मिटानें के लिए उन्के सिर मुफ़्त का छप्पर ज़रूर घर देता है. अच्छा! आप को लाला मदनमोहन की नई मित्रता के लिए बधाई है और आप के मनोर्थ सफल करनें का उपाय बहुत लोग कर रहे हैं" हरकिशोर नें भरमा भरमी कहा.

"यह तुम क्या बक्ते हो मेरा मनोर्थ क्या है? और मैं नें हवा देख कर कौन्सी चाल बदली?" लाला ब्रजकिशोर कहनें लगे "जैसे नाव मैं बैठनें वाले को किनारे के वृक्ष चल्ते दिखाई देते हैं इसी तरह तुम्हारी

चाल बदल जानें सै तुमको मेरी चाल मैं अंतर मालूम पड़ता है . तुम्हारी तबियत को जाचनें के लिये तुमनें पहले सै कुछ नियम स्थिर कर रक्खे होते तो तुमको ऐसी भ्रांति कभी न होती. मैं ठेठ सै जिस्तरह मदनमोहन को चाहता था, जिस्तरह तुमको चाहता था, जिस्तरह तुम दोनों की परस्पर प्रीति चाहता था उसी तरह अब भी चाहता हूँ परंतु तुम्हारी तबियत ठिकानें नहीं है इस्सै तुमको बारबार मेरी चाल पर संदेह होता है, सो खैर ! मुझै तो चाहै जैसा समझते रहो परंतु मदनमोहन के साथ बैर भाव मत रक्खो, तुच्छ बातों पर कलह करना अनुचित है और बैरी सै भी बैर बढ़ानें के बदले उस्के अपराध क्षमा करनें मैं बड़ाई मिल्ती है ."

"जी हाँ ! पृथ्वीराज नें शहाबुद्दीन ग़ोरी को क्षमा करके जैसी बड़ाई पाई थी वह सबको प्रगट है" हरकिशोर नें कहा .

"आगे की हानि का संदेह मिटे पीछे पहले के अपराध क्षमा करनें चाहियें परंतु पृथ्वीराज नें ऐसा नहीं किया था इसी सै धोका खाया और—"

"बस, बस यहीं रहनें दीजिये . मेरा मतलब निकल आया आप अपनें मुख से ऐसी दशा मैं क्षमा करना अनुचित बता चुके उस्सै आगै सुन्कर मैं क्या करूँगा ?" यह कह कर हरकिशोर, ब्रजकिशोर के बुलाते बुलाते उठ कर चला गया .

और ब्रजकिशोर भी इन्हीं बातों के सोच विचार मैं वहाँ सै उठ कर पलंग पर जा लेटे .

प्रकरण २३

प्रामाणिकता.

"एक प्रामाणिक मनुष्य परमेश्वर की सर्वोत्कृष्ट रचना है"*

(पोप)

ब्रजकिशोर कौन हैं? मदनमोहन की क्यों इतनी सहानुभूति (हमदर्दी) करते हैं? अच्छा! अब थोड़ी देर और कुछ काम नहीं है जितने थोड़ा सा हाल इन्का सुनिये.

लाला ब्रजकिशोर ग़रीब मा बाप के पुत्र हैं परंतु प्रामाणिक, सावधान, विद्वान और सरल स्वभाव हैं इन्की अवस्था छोटी है तथापि अनुभव बहुत है यह जो कहते हैं उसी के अनुसार चलते हैं इन्की बहुत सी बातें अब तक इस पुस्तक में आ चुकी हैं इसलिए कुछ विशेष लिखनें की ज़रूरत नहीं है तथापि इतना कहे बिना नहीं रहा जाता कि यह परमेश्वर की सृष्टि का (के) एक उत्तम पदार्थ हैं. यह वकील हैं परंतु अपनी तरफ़ के मुक़द्दमेवालों का झूंटा पक्षपात नहीं करते, झूंटे मुक़द्दमे नहीं लेते बूते से ज्याद: काम नहीं उठाते, परंतु जो मुक़द्दमे लेते हैं उन्की पैरवी वाजबी तौर पर बहुत अच्छी तरह करते हैं. और बहुधा अन्याय से सताए हुए ग़रीबों के मुक़द्दमों में बे महन्ताना लिये पैरवी किया करते हैं, हाकिम और नगरनिवासियों को इन्की बात पर बहुत विश्वास है. यह स्वतंत्र मनुष्य हैं परंतु स्वेच्छाचारी और अहंकारी नहीं हैं अपनी स्वतंत्रता को उचित मर्यादा से आगे नहीं बढ़नें देते, परमेश्वर और स्वधर्म पर दृढ़ विश्वास रखते हैं. बात सच कहते हैं परंतु ऐसी चतुराई

---

* An honest man's the noblest work of God.
Alexander Pope.

से कहते हैं कि इन्का कहना किसी को बुरा नहीं लगता और किसी की हक़ तल्फ़ी भी नहीं होने पाती. यह थोथी बातों पर विवाद नहीं करते और इन्के कर्तव्य मैं अंतर न आता हो तो ये दूसरे की प्रसन्नता के लिए अकारण भी चुप हो रहते हैं अथवा केवल संकेत सा कर देते हैं. जहाँ तक औरों के हक़ मैं अंतर न आय; ये अपने ऊपर दुःख उठा कर भी परोपकार करते हैं बैरी से सावधान रहते हैं परंतु अपने मन मैं उस्की तरफ़ का बैर भाव नहीं रखते. अपनी ठसक किसी को नहीं दिखलाया चाहते. यह मध्यम भाव से रहनें को पसंद करते हैं और इनकी भलमनसात सै सब लोग प्रसन्न हैं परंतु मदनमोहन को इन्की बातें अच्छी नहीं लगतीं और लोगों से यह केवल इतनी बात करते हैं जिस्मैं वह प्रसन्न रहैं और इन्हें झूंट न बोलनी पड़े परंतु मदनमोहन से ऐसा संबंध नहीं है. उस्की हानि लाभ को यह अपनी हानि लाभ से अधिक समझते हैं इसी वास्तै इन्की उस्सै नहीं बन्ती. यह कहते हैं कि "जब तक कुछ काम न हो अपने पल्ले मैं किसी तरह का दाग लगाए बिना हर तरह के आदमी सै अच्छी तरह मित्रता निभ सक्ती है परंतु काम पड़े पर उचित रीति बिना काम नहीं चल्ता."

यह अपनी भूल जान्ते ही प्रसन्नता से उस्को अंगीकार कर के उस्के सुधारनें का उद्योग करते हैं इसी तरह जो बात नहीं जान्ते उस्मैं अपनी झूंटी निपुणता दिखानें पर काम पड़नें पर उस्का अभ्यास करके जेम्सवाट की तरह अपनी सच्ची सावधानी सै लोगों को आश्चर्य मैं डालते हैं.

(बहुधा लोग जान्ते होंगे कि जेम्सवाट कलों के काम मैं एक प्रसिद्ध मनुष्य हो गया है उस्के समान काल मैं उस्की अपेक्षा बहुत लोग अधिक विद्वान थे परंतु अपने ज्ञान को काम मैं लानें के वास्ते जेम्सवाट नें जितनी महनत की उतनी और किसी नें नहीं की. उस्नें हरेक पदार्थ की बारीकियों पर दृष्टि पहुँचानें के लिए खूब अभ्यास बढ़ाया. वह बढ़ई का

पुत्र था जब वह बालक था तब ही अपनें खिलोनों मैं सै विद्या विषय ढूँढ़ निकालता था. उस्के बाप की दुकान मैं ग्रहों के देखनें की कलें रक्खी थीं जिस्सै उस्को प्रकाश और जोतिष विद्या का व्यसन हुआ. उस्के शरीर मैं रोग उत्पन्न होनें सै उसको वैद्यक सीखनें की रुचि हुई और बाहर गाँव मैं एकांत फिरनें की आदत सै उस्नें वनस्पति विद्या और इतिहास का अभ्यास किया. गणित शास्त्र के औजार बनाते, बनाते उस्को एक आर्गन बाजा बनानें की फ़र्मायश हुई परंतु उस्को उस्समय तक गाना नहीं आता था इसलिये उस्नें प्रथम संगीत विद्या का अभ्यास करके पीछे सै एक आर्गन बाजा बहुत अच्छा बना दिया. इसी तरह एक बाफ़ की कल उस्की दुकान पर सुधरनें आई तब उस्नें गर्मी और बाफ़ विषयक वृत्तांत सीखने पर मन लगाया और किसी तरह की आशा अथवा किसी के उत्तेजन बिना इस काम मैं दस बरस परिश्रम करके बाफ़ की एक नई कल ढूंढ़ निकाली जिस्सै उस्का नाम सदा के लिए अमर हो गया.)

लाला ब्रजकिशोर को संसारी सुख भोगनें की तृष्णा नहीं है और द्रव्य की आवश्यकता यह केवल सांसारिक कार्य निर्वाह के लिये समझते हैं इस वास्तै संसारी कामों की ज़रूरत के लायक़ परिश्रम और धम सै रुपया पैदा किये पीछे बाक़ी का समय यह विद्याभ्यास और देशोपकारी बातों मैं लगाते हैं.

इन्के निकट उन ग़रीबों की सहायता करनें मैं सच्चा पुन्य है जो सच-मुच अपना निर्वाह आप नहीं कर सक्ते, या जिन रोगियों के पास इलाज करानें के लिए रुपया अथवा सेवा करनें के लिये कोई आदमी नहीं होता. ये उन अन्समझ बच्चों को पढ़ानें लिखानें मैं, अथवा कारीगरी इत्यादि सिखा कर कमानें खानें के लायक़ बना देनें मैं, सच्चा धर्म समझते हैं जिन्के मा बाप दरिद्रता अथवा मूर्खता सै कुछ

नहीं कर सक्ते. ये अपनें देश मैं उपयोगी विद्याओं की चर्चा फैलानें, अच्छी अच्छी पुस्तकों का और भाषाओं सै अनुवाद करवा कर अथवा नई बनवा कर अपनें देश मैं प्रचार करनें, और देश के सच्चे शुभचिंतक और योग्य पुरुषों को उत्तेजन देनें, और कलों की अथवा खेती आदि की सच्ची देश हितकारी बातों के प्रचलित करनें मैं सच्चा धर्म समझते हैं. परंतु शर्त यह है कि इन सब बातों मैं अपना कुछ स्वार्थ न हो, अपनी नामवरी का लालच न हो, किसी पर उपकार करनें का बोझ न डाला जाय बल्कि किसी को ख़बर ही न होनें पाय.

इन्नें थोड़ी आमद मैं अपनें घर का प्रबंध बहुत अच्छा बांध रक्खा है इन्की आमदनी मामूली नहीं है तथापि जितनी आमदनी आती है उस्सै खर्च कम किया जाता है और उसी खर्च मैं भावी विवाह आदि का खर्च समझ कर उन्के वास्तै क्रम क्रम सै सीगेवार रक़म जमा होती जाती है. विवाहादि के खर्चों का मामूल बंध रहा है उन्मैं फ़िजूलखर्ची सर्वथा नहीं होनें पाती परंतु वाजबी बातों मैं कसर भी नहीं रहती. इन्के सिवाय जो कुछ थोड़ा बहुत बचता है वह बिना बिचारे खर्च और नुक्सानादि के लिए अमानत रक्खा जाता है और विश्वास योग्य फ़ायदे के कामों मैं लगानें सैं उस्की वृद्धि भी की जाती है.

इन्के दो छोटे भाइयों के पढ़ानें लिखानें का बोझ इन्के सिर है इसलिए ये उन्को प्रचलित बिद्याभ्यास की रूढ़ी के सिवाय उन्के मानसिक बिचारों के सुधारनें पर सब सै अधिक दृष्टि रखते हैं. ये कहते हैं कि "मनुष्य के मन के बिचार न सुधरे तो पढ़नें लिखनें सै क्या लाभ हुआ?" इन्नें इतिहास और वर्तमान काल की दशा दिखा दिखा कर भले बुरे कामों के परिणाम और उन्की बारीकी उन्के मन पर अच्छी तरह बैठा दी है तथापि ये अपनी दूर दृष्टि से अपनी सम्हाल मैं ग़फ़लत नहीं करते उन्हें कुसंगति मैं नहीं बैठनें देते. यह उन्के संग ऐसी

युक्ति सै बरतते हैं जिस्मैं न वो उद्धत होकर ढिठाई करनें योग्य होनें पावैं न भय सै उचित बात करनें मैं संकोच करैं. ये जान्ते हैं कि बच्चों के मन मैं गुरु के उपदेश सै इतना असर नहीं होता जितना अपनें बड़ों का आचरण देखनें सै होता है इस लिये ये उन्को मुख सै उपदेश देकर उतनी बात नहीं सिखाते जितनी अपनी चाल चलन सै उनके मन पर बैठाते हैं.

ब्रजकिशोर को सच्ची सावधानी सै हरेक काम मैं सहायता मिल्ती है. सच्ची सावधानी मानों परमेश्वर की तरफ़ सै इन्को हरेक काम की राह बतानेंवाली उपदेष्टा है परंतु लोग सच्ची सावधानी और चालाकी का भेद नहीं समझते. क्या सच्ची सावधानी और चालाकी एक है?

मनुष्य की प्रकृति मैं बहुत सी उत्तमोत्तम वृत्ति मोजूद हैं परंतु सावधानी के बराबर कोई हितकारी नहीं है. सावधान मनुष्य केवल अपनी तबियत पर ही नहीं औरों की तबियत पर भी अधिकार रख सक्ता है वह दूसरे सै बात करते ही उसका स्वभाव पहचान जाता है और उस्सै काम निकालनें का ढंग जान्ता है. यदि मनुष्य मैं और गुण साधारण हों और सावधानी अधिक हो तो वह अच्छी तरह काम चला सक्ता है परंतु सावधानी बिना और गुणों से काम निकालना बहुत कठिन है.

जिस्तरह सावधानी उत्तम पुरुषों के स्वभाव मैं होती है इसी तरह चालाकी तुच्छ और कमीनें आदमियों की तबियत मैं पाई जाती है. सावधानी हमको उत्तमोत्तम बातें बताती है और उन्के प्राप्त करनें के लिये उचित मार्ग दिखाती है वह हर काम के परिणाम पर दृष्टि पहुँचाती है और आगे कुछ बिगाड़ की सूरत मालूम हो तो झूँटे लालच के कामों को प्रारंभ सै पहले ही अटका देती है परंतु चालाकी अपनें आसपास की छोटी, छोटी चीज़ों को देख सक्ती है और केवल वर्तमान समय के फ़ायदों का विचार रखती है. वह सदा अपनें स्वार्थ की तरफ़

झुकती है और जिस्तरह हो सके, अपनें काम निकाल लेनें पर दृष्टि रखती है . सावधानी आदमी की दृढ़ बुद्धि को कहते हैं और वह जों, जों लोगों मैं प्रगट होती जाती है, सावधान मनुष्य की प्रतिष्ठा बढ़ती जाती है परंतु चालाकी प्रगट हुए पीछै उसकी बात का असर नहीं रहता . चालाकी होशियारी की नक़ल है और बहुधा जान्वरों मैं अथवा जान्वरों की सी प्रकृति के मनुष्यों मैं पाई जाती है इसलिए उस्मैं मनुष्य जन्म को भूषित करनें के लायक़ कोई बात नहीं है वह अज्ञानियों के निकट ऐसी समझी जाती है जैसे ठट्ठेबाजी, चतुराई और भारी भरकमपना बुद्धिमानी समझे जायँ .

लाला ब्रजकिशोर सच्ची सावधानी के कारण किसी के उपकार का बोझ अपनें ऊपर नहीं उठाया चाहते, किसी सै सिफ़ारश आदि की सहायता नहीं लिया चाहते, कोई काम अपनें आग्रह सै नहीं कराया चाहते, किसी को कच्ची सलाह नहीं देते, ईश्वर के सिवाय किसी के भरोसे पर काम नहीं उठाते, अपनें अधिकार सै बढ़ कर किस काम मैं दस्तंदाज़ी नहीं करते . औरों की मारफ़त मामला करनें के बदले रोबरू बातचीत करनें को अधिक पसंद करते हैं; वह लेन देन मैं बड़ेखरे हैं परंतु ईश्वर के नियमानुसार कोई मनुष्य सब के उपकारों सै अनृणीय (उऋण) नहीं हो सक्ता . ईश्वर, गुरु और माता पितादि के उपकारों का बदला किसी तरह नहीं दिया जा सक्ता परंतु ब्रजकिशोर पर केवल इन्हीं के उपकार का बोझ नहीं है वह इन्सै सिवाय एक और मनुष्य के उपकार मैं भी बँध रहे हैं .

ब्रजकिशोर का पिता अत्यंत दरिद्री था अपनें पास सै फ़ीस देकर ब्रजकिशोर को मदरसे मैं पढ़ानें की उस्की सामर्थ्य न थी और न वह इतनें दिन खाली रख कर ब्रजकिशोर को विद्या मैं निपुण किया चाहता था, परंतु मदनमोहन के पिता नें ब्रजकिशोर की बुद्धि और आचरण देख कर उसै अपनी तरफ़ सै ऊँचे दर्जे तक विद्या पढ़ाई थी उस्की फ़ीस

अपनें पास सै दी थी उस्को पुस्तकैं अपनें पास सै ले दी थीं बल्कि उस्के घर का खर्च तक अपनें पास सै दिया था और यह सब बातैं ऐसी गुप्त रीति सै हुईं कि इन्का हाल स्पष्ट रीति सै मदनमोहन को भी मालूम न होनें पाया था . ब्रजकिशोर उसी उपकार के बंधन सै इस्समय मदनमोहन के लिए इतनी कोशिश करते हैं .

प्रकरण २४

हाथ सै पैदा करनें वाले और पोतड़ों के अमीर

अमिल द्रव्यहू यत्न ते मिलै सु अवसर पाय ।
संचित हू रक्षा बिना स्वतः नष्ट हो जाय ॥*

(हितोपदेशे)

मदनमोहन का पिता पुरानी चाल का आदमी था वह अपना बूता देख कर काम करता था और जो करता था वह कहता नहीं फिरता था . उस्नें केवल हिंदी पढ़ी थी वह बहुत सीधा सादा मनुष्य था परंतु व्यापार मैं बड़ा निपुण था साहूकारे मैं उस्की बड़ी साख थी . वह लोगों की देखा देखी नहीं, अपनी बुद्धि सै व्यापार करता था . उस्ने थोड़े व्यापार मैं अपनी सावधानी से बहुत दौलत पैदा की थी इस्समय जिस्तरह बहुधा मनुष्य तरह, तरह की बनावट और अन्याय सै औरों की जमा मार कर साहूकार बन बैठते हैं सोने चाँदी के जगमगाहट के नीचे अपने घोर

---

* अलब्धमिच्छतोर्थं योगादर्थस्य प्राप्तिरेव ।
लब्धस्याप्यरक्षितस्य निधेरपिस्वयं विनाशः ॥

पापों को छिपाकर सज्जन बन्नें का दावा करते हैं धन को अपनी पाप वासना पूरी करनें का एक साधन समझते हैं ऐसा उस्नें नहीं किया था. वह व्यापार मैं किसी को कसर नहीं देता था पर आप भी किसी सै कसर नहीं खाता था. उन दिनों कुछ तो मार्ग की कठिनाई आदि के कारण हरेक धुने जुलाहे को व्यापार करनें का साहस न होता था इसलिये व्यापार मैं अच्छा नफ़ा था दूसरे वह वर्तमान दशा और होनहार बातों का प्रसंग समझ कर अपनी सामर्थ्य मूजिब हर बार नए रोज़गार पर दृष्टि पहुँचाया करता था इसलिए मक्खन उस्के हाथ लग जाता था, छाछ मैं और रह जाते थे. कहते हैं कि एक बार नई खान के पन्नें की खड़ बाज़ार मैं बिकनें आई परंतु लोग उस्की असलियत को न पहचान सके और उसै खरीद कर नगीना बनवानें का किसी को हौसला न हुआ परंतु उस्की निपुणाई सै उस्की दृष्टि मैं यह माल जच गया था इसलिए उस्नें बहुत थोड़े दामों मैं खरीद लिया और उस्के नगीनें बनवा कर भली भाँत लाभ उठाया उसी समय सै उस्की जड़ जमी और पीछै वह उसै और, और व्यापार मैं बढ़ाता गया. परंतु वह आप कभी बढ़कर न चला. वह कुछ तकलीफ़ सै नहीं रहता था, परंतु लोगों को झूंटी भड़क दिखानें के लिए फ़िजूलखर्ची भी नहीं करता था उस्की सवारी मैं नागोरी बैलों का एक सुशोभित तांगा था और वह ख़ासे मलमल सै बढ़कर कभी वस्त्र नहीं पहनता था; वह अपनें स्थान को झाड़ पोंछकर स्वच्छ रखता था परंतु झाड़-फ़ानूस आदि को फ़िजूलखर्ची मैं समझता था उस्के हाँ मकान और दुकान पर बहुत थोड़े आदमी नोकर थे परंतु हरेक मनुष्य का काम बट रहा था इस लिये बड़ी सुगमता सै सब काम अपनें अपनें समय पर होता चला जाता था. वह अपनें धर्म पर दृढ़ था ईश्वर मैं बड़ी भक्ति रखता था. प्रति दिन प्रातःकाल घंटा डेढ़ घंटा कथा सुन्ता था और दरिद्री, दुखिया, अपाहजों की सहायता करनें मैं बड़ी अभिरुचि रखता था परंतु वह अपनी उदारता किसी को प्रगट नहीं होनें देता था. वह अपने

काम धंदे मैं लगा रहता था इसलिये हाकिमों और रहीसों सै मिलनें का उसे समय नहीं मिल सक्ता था परंतु वह वाजबी राह सै चल्ता था इस लिये उसे बहुधा उन्सै मिलनें की कुछ आवश्यकता भी न थी क्योंकि देशोन्नति का भार पुरानी रूढ़ी के अनुसार केवल राजपुरुषों पर समझा जाता था. वह महनती था इसलिए तन्दुरुस्त था वह अपनें काम का बोझ हरगिज़ औरों के सिर नहीं डालता था; हां यथाशक्ति वाजबी बातों मैं औरों की सहायता करनें को तैयार रहता था.

परंतु अब समय बदल गया इससमय मदनमोहन के विचार और ही हो रहे हैं, जहां देखो अमीरी ठाठ, अमीरी कारखानें, बाग़ की सजावट का कुछ हाल हम पहले लिख चुके हैं. मकान मैं कुछ उस्सै अधिक चमत्कार दिखाई देता है, बैठक का मकान अंग्रेज़ी चाल का बनवाया गया है उस्मैं बहुमूल्य शीशे बरतन के सिवाय तरह, तरह का उम्दा सै उम्दा सामान मिसल सै लगा हुआ है. सहन इत्यादि मैं चीनी की ईंटों का सुशोभित फ़र्श कश्मीर के ग़लीचों को मात करता है. तबेले मैं अच्छी से अच्छी विलायती गाड़ियें और अरबी, केप, वेलर, आदि की उम्दा जोड़ियें अथवा जीन सवारी के घोड़े बहुतायत सै मौजूद हैं. साहब लोगों की चिठियें नित्य आती जाती हैं. अंग्रेजी तथा देसी अख़बार और मासिकपत्र बहुत से लिये जाते हैं और उन्मैं सै खबरें अथवा आर्टिकलों को कोई देखे या न देखे परंतु सौदागरों के इश्तहार अवश्य देखे जाते हैं, नई फ़ैशन की चीज़ें अवश्य मंगाई जाती हैं, मित्रों का जल्सा सदैव बना रहता है और कभी कभी तो अंग्रेज़ों को भी बाल दिया जाता है, मित्रों के सत्कार करनें मैं यहां किसी तरह की कसर नहीं रहती और जो लोग अधिक दुनियादार होते हैं उन्की तो पूजा बहुत ही विश्वासपूर्वक की जाती है. मदनमोहन की अवस्था पचीस, तीस बरस सै अधिक न होगी. वह प्रगट मैं बड़ा विवेकी और बिचारवान मालूम होता है नए आदमियों सै बड़ी अच्छी तरह मिल्ता

है उस्के मुख पर अमीरी झलकती है वह वस्त्र सादे परंतु बहुमूल्य पहनता है उस्के पिता को व्यापारी लोगों के सिवाय कोई नहीं जान्ता था परंतु उस्की प्रशंसा अखबारों मैं बहुधा किसी न किसी बहानें छपती रहती है और वह लोग अपनी योग्यता सै प्रतिष्ठित होनें का मान उसे देते हैं.

अच्छा! मदनमोहन नें उन्नति की अथवा अवनति की इस विषय मैं हम इस्समय विशेष कुछ नहीं कहा चाहते परंतु मदनमोहन नें यह पदवी कैसे पाई ? पिता पुत्र के स्वभाव मैं इतना अंतर कैसे हो गया ? इस्का कारण इस्समय दिखाया चाहते हैं.

मदनमोहन का पिता आप तो हरेक बात को बहुत अच्छी तरह समझता था परंतु अपनें विचारों को दूसरे के मन मैं (उस्का स्वभाव पहिचान कर) बैठा देनें की सामर्थ्य उसे न थी उस्नें मदनमोहन को बचपन मैं हिंदी, फ़ारसी और अंग्रेज़ी भाषा सिखानें के लिये अच्छे अच्छे उस्ताद नौकर रख दिए थे परंतु वह क्या जान्ता था कि भाषा ज्ञान विद्या नहीं, विद्या का दरवाज़ा है; विद्या का लाभ तो साधारण रीति सै बुद्धि के तीक्ष्ण होनें पर और मुख्य करके विचारों के सुधरनें पर मिल्ता है. जब उस्को यह भेद प्रगट हुआ उस्नें मदनमोहन को धमका कर राह पर लानें की युक्ति बिचारी परंतु वह नहीं जान्ता था कि आदमी धमकानें सै आँख और मुख बंद कर सक्ता है, हाथ जोड़ सक्ता है, पैरों मैं पड़ सक्ता है, कहो जैसे कह सक्ता है, परंतु चित्त पर असर हुए बिना चित्त नहीं बदलता और सत्संग बिना चित्त पर असर नहीं होता जब तक अपनें चित्त मैं अपनी हालत सुधारनें की अभिलाषा न हो औरों के उपदेश सै क्या लाभ हो सक्ता है ? मदनमोहन का पिता मदनमोहन को धमका कर उस्के चित्त का असर देखनें के लिए कुछ दिन चुप हो जाता था परंतु मदनमोहन के मन दुखनें के विचार सै आप प्रबंध न करता था और इस

देरदार का असर उल्टा होता था. हरकिशोर, शिंभूदयाल, चुन्नीलाल, वगैरे मदनमोहन की बाल्यावस्था को इसी झमेले मैं निकाला चाहते थे क्योंकि एक तो इस अवकाश मैं उन लोगों के संग का असर मदनमोहन के चित्त पर दृढ़ होता जाता था दूसरे मदनमोहन की अवस्था के संग उस्की स्वतंत्रता बढ़ती जाती थी इसलिये मदनमोहन के सुधरनें का यह रस्ता न था. मदनमोहन के विचार प्रति दिन दृढ़ होते जाते थे परंतु वह अपनें पिता के भय सै उन्हें प्रगट न करता था. खुलासा यह है कि मदनमोहन के पिता ने अपनी प्रीति अथवा मदनमोहन की प्रसन्नता के विचार सै मदनमोहन के बचपन मैं अपनें रक्षक भाव पर अच्छी तरह बरताव नहीं किया अथवा यों कहो कि अपना कुदरती हक़ छोड़ दिया इस लिये इन्के स्वभाव मैं अंतर पड़नें का मुख्य ये ही कारण हुआ.

ब्रजकिशोर ठेठ सै मदनमोहन के विरुद्ध समझा जाता था. ब्रजकिशोर को वह लोग कपटी, चुग़ल, द्वेषी और अभिमानी बताते थे, उन्के निकट मदनमोहन के पिता का मन बिगाड़नें वाला वह था. चुन्नीलाल और शिंभूदयाल उस्की सावधानी सै डर कर मदनमोहन का मन उस्की तरफ़ सै बिगाड़ते रहते थे और मदनमोहन भी उस्पर पिता की कृपा देख कर भीतर से जल्ता था. हरकिशोर जैसे मुँहफट तो कुछ, कुछ भरमा भरमी उस्को सुना भी दिया करते थे परंतु वह उचित जवाब देकर चुप हो जाता था और अपनी निर्दोष चाल के भरोसे निश्चिंत रहता था हाँ उस्को इन्की चाल अच्छी नहीं लगती थी और इन्के मन का पाप भी मालूम था इसलिये वह इन्सै अलग रहता था इन्का वृत्तांत जान्नें सै जान बूझ कर बेपरवाई करता था; उस्नें मदनमोहन के पिता सै इस विषय मैं बातचीत करना बिल्कुल बंद कर दिया था. मदनमोहन के पिता का परलोक हुये पीछे निस्संदेह उस्को मदनमोहन के सुधारनें की चटपटी लगी उस्नें मदनमोहन को राह पर लानें के लिये समझानें मैं कोई बात बाकी नहीं छोड़ी परंतु उस्का सब श्रम व्यर्थ गया उस्के समझानें सै कुछ काम न निकला.

अब आज हरकिशोर और ब्रजकिशोर दोनों इज्जत खोकर मदनमोहन के पास सै दूर हुए हैं इन्मैं सै आगै चलकर देखैं कौन् कैसा बरताव करता है ?

प्रकरण २५

साहसी पुरुष

सानुबन्ध कारज करे सब अनुबन्ध निहार ।
करै न साहस, बुद्धि बल पंडित करै बिचार ॥*
(विदुर प्रजागरे)

हम प्रथम लिख चुके हैं कि हरकिशोर साहसी पुरुष था और दूर के संबंध मैं ब्रजकिशोर का भाई लगता था . अब तक उस्के काम उस्की इच्छा-नुसार हुए जाते थे वह सब कामों मैं बड़ा उद्योगी और दृढ़ दिखाई देता था उस्का मन बढ़ता जाता था और वह लड़ाई झगड़े वगैरे के भयंकर और साहसिक कामों मैं बड़ी कारगुज़ारी दिखलाया करता था . वह हरेक काम के अंग प्रत्यंग पर दृष्टि डालनें या सोच विचार के कामों मैं माथा खाली करनें और परिणाम सोचनें वा काग़ज़ी और हिसाबी मामलों मैं मन लगानें के बदले ऊपर, ऊपर सै इन्को देख भाल कर केवल बड़े बड़े कामों मैं अपनें ताईं लगाये रखनें और बड़े आदमियों मैं प्रतिष्ठा पानें की विशेष रुचि रखता था . उस्नें हरेक अमीर के हाँ अपनी

---

* अनुबन्धानपेक्षेत सानुबन्धेषु कर्म्मसु ।
संप्रधार्य च कुर्वीत न वेगेन समाचरेत् ॥

आवा जाई कर ली थी और वह सब से मेल रखता था . उस्के स्वभाव मैं जल्दी होनें के कारण वह निर्मूल बातों पर सहसा विश्वास कर लेता था और झटपट उन्का उपाय करनें लगता था उस्के बिना बिचारे कामों से जिस्तरह बिना बिचारा नुक्सान हो जाता था इसी तरह बिना बिचारे फ़ायदे भी इतने हो जाते थे जो बिचार कर करनें से किसी प्रकार संभव न थे . जब तक उस्के काम अच्छी तरह संपन्न हुए जाते थे, उस्को प्रतिदिन अपनी उन्नति दिखाई देती थी, सब लोग उस्की बात मान्ते थे, उस्का मन बढ़ता जाता था और वो अपना काम संपन्न करनें के लिए अधिक, अधिक परिश्रम करता था परंतु जहां किसी बात मैं उस्का मन रुका उस्की इच्छानुसार काम न हुआ किसी नें उस्की बात दुलख दी अथवा उस्को शाबासी न मिली वहां वह तत्काल आग हो जाता था, हरेक काम को बुरी निगाह से देखनें लगता था, उस्की कारगुज़ारी मैं फ़र्क आ जाता था और वह नुक्सान से खुश होनें लगता था इसलिये उस्की मित्रता भय से खाली न थी .

कोई साहसी पुरुष स्वार्थ छोड़ कर संसार के हितकारी कामों मैं प्रबृत्त हो तो कोलम्बस की तरह बहुत उपयोगी हो सक्ता है और अब तक संसार की बहुत कुछ उन्नति ऐसे ही लोगों से हुई है इसलिये साहसी पुरुष परित्याग करनें के लायक़ नहीं हैं परंतु युक्ति से काम लेनें के लायक़ हैं . हां ! ऐसे मनुष्यों से काम लेनें मैं उन्का मन बराबर बढ़ाते जांय तो आगै चल कर क़ाबू से बाहर हो जानें का भय रहता है इसलिये कोई बुद्धिमान तो उन्का मन ऐसी रीति से घटाते बढ़ाते रहते हैं कि न उन्का मन बिगड़नें पावै न हद्द से आगै बढ़नें पावै कोई अनुभवी मध्यम प्रकृति के मनुष्यों को बीच मैं रखते हैं कि वह उन्को वाजबी राह बताते रहैं . परंतु लाला मदनमोहन के यहां ऐसा कुछ प्रबंध न था दूसरे उस्के बिचार मूजिब मदनमोहन नें अपने झूंटे अभिमान से भलाई के बदले जान बूझ कर उस्की इज्जत ली थी इस्कारण हरकिशोर इस्समय

क्रोध के आवेश मैं लाल हो रहा था और बदला लेनें के लिए उस्के मन मैं तरंगैं उठती थीं। उस्नें मदनमोहन के मकान सै निकलते ही अपनें जी का गुबार निकालना आरंभ किया.

पहलै उस्को निहालचंद मोदी मिला उस्नें पूछा "आज कितनें की बिक्री की ?"

"खरीदारी की तो यहां कुछ हद ही नहीं है परंतु माल बेच कर दाम किस सै लें जिस्को बहुत नफ़े का लालच हो वह भले ही बेचै मुझको तो अपनी रक़म डबोनी मंजूर नहीं" हरकिशोर नें जवाब दिया.

"हैं ! यह क्या कहते हो ? लाला साहब की रक़म मैं कुछ धोका है ?"

"धोके का हाल थोड़े दिन मैं खुल जायगा मेरे जान तो जो होना था वह हो चुका."

"तुम यह बात क्या समझ कर कहते हो ?" मोदी नें घबरा कर पूछा "कम सै कम लाख, पचास हज़ार का तो शीशा बर्तन इससमय इन्के मकान मैं होगा."

"समय पर शीशे बर्तन को कोई नहीं पूछता उस्की लागत मैं रुपे के दो आनें नहीं उठते इन्हीं चीजों की ख़रीदारी मैं तो सब दौलत जाती रही. मैं नें निश्चय सुना है कि इन चीज़ों की क़ीमत बाबत पचास हज़ार रुपे तो ब्राइट साहब के देनें हैं और कल एक अँग्रेज़ दस हज़ार रुपे माँगनें आया था न जानें उस्के लेनें थे कि क़र्ज़ मांगता था परंतु लाला साहब न किसी सै उधार मँगा कर देनें का क़रार किया है ? फिर जहाँ उधार के भरोसे सब काम भुगतनें लगा वहाँ बाकी क्या रहा ? मैं नें अपनी रक़म के लिए अभी बहुत तक़ाज़ा किया पर वे फूटी कौड़ी नहीं देते इस लिये मैं तो अपनें रुपों की नालिश अभी दायर करता हूँ तुम्हारी तुम जानो."

यह बात सुन्ते ही मोदी के होश उड़ गए वह बोला "मेरे भी पाँच हज़ार लेनें हैं मैं नें कई बार तगादा किया पर कुछ सुनाई न हुई मैं अभी

जाकर अपनी रक़म माँगता हूँ जो सूधी तरह दे देंगे तो ठीक है नहीं तो मैं भी नालिश कर दूँगा. ब्योहार मैं मुलाहिज़ा क्या ?

इस्तरह बतला कर दोनों अपनें, अपने रस्ते लगे. आगै चल कर हरकिशोर को मिस्टर ब्राईट का मुंशी मिला वह अपने घर भोजन करने जाता था उसै देख कर हरकिशोर अपनें आप कहने लगा "मुझै क्या है ? मेरे तो थोड़े से रुपे हैं मैं तो अभी नालिश करके पटा लूँगा. मुश्किल तो पचास, पचास हज़ार वालों की है देखैं वह क्या करते हैं ?"

"लाला हरकिशोर किस्पर नालिश की तैयारी कर रहे हैं ?" मुंशी ने पूछा. "कुछ नहीं साहब ! मैं आप सै कुछ नहीं कहता. मैं तो बिचारे मदनमोहन का बिचार कर रहा हूँ. हा ! उस्की सब दौलत थोड़े दिन मैं लुट गई अब उसके काम मैं हलचल हो रही है लोग नालिश करने को तैयार हैं मैं ने भी कम्बख्ती के मारे हज़ार दो एक का कपड़ा दे दिया था इसलिये मैं भी अपने रुपे पटाने की राह सोच रहा हूं. बिचारा मदनमोहन कैसा सीधा आदमी था ?"

"क्या सचमुच उस्पर तक़ाज़ा हो गया ? उस्पर तो हमारे साहब के भी पचास हज़ार रुपे लेने हैं आज सबेरे तो लाला मदनमोहन की तरफ़ सै बड़े काचों की एक जोड़ी खरीदनें के लिए मास्टर शिंभूदयाल हमारे साहब के पास गए थे फिर इतनी देर मैं क्या हो गया ? तुमने यह बात किस्सै सुनी ?"

"मैं आप वहाँ सै आता हूं कल सै गड़बड़ हो रही है कल एक साहब दस हज़ार रुपे माँगने आये थे इस्पर मदनमोहन ने स्पष्ट कह दिया कि मेरे पास कुछ नहीं है मैं कहीं सै उधार लेकर दो एक दिन मैं आप का बंदोबस्त कर दूंगा. मैं ने अपनें रुपे के लिये बहुत ताकीद की पर मुझ को भी कोरा जवाब ही मिला अब मैं नालिश करने जाता हूं और निहालचंद मोदी अभी पाँच हज़ार के लिए पेट पकड़े गया है वह कहता

था कि मेरे रुपे इस्समय न दैंगे तो मैं भी अभी नालिश कर दूंगा जिस्की नालिश पहलै होगी उस्को पूरे रुपे मिलैंगे ."

"तो मैं भी जाकर साहब सैं यह हाल कह दूँ तुम्हारी रक़म तो खेरीज है परंतु साहब का क़र्ज़ा बहुत बड़ा है जो साहब की इस रक़म मैं कुछ धोका हुआ तो साहब का काम चलना कठिन हो जायगा" ये कह कर मिस्टर ब्राइट का मुंशी घर जानें के बदले साहब के पास दोड़ गया .

लाला हरकिशोर आगे बढ़े तो मार्ग मैं लाला मदनमोहन की पचपन सो की खरीद के तीन घोड़े लिए हुए आग़ा हसन जान लाला मदनमोहन के मकान की तरफ़ जाता मिला उस्को देख कर हरकिशोर कहनें लगे "ये ही घोड़े मदनमोहन नें कल खरीदे थे माल तो बड़े फ़ायदे सै बिका पर दाम पट जायं तब जानिये ."

"दामों की क्या है ? हमारा हज़ारों रुपे का काम पहलै पड़ चुका है" आग़ा हसन जान नें जवाब दिया और मन मैं कहा "हमारी रक़म तो अपनें लालच सैं चुन्नीलाल और शिंभूदयाल घर बैठे पहुँचा जायंगे ."

"वह दिन गए आज लाला मदनमोहन का काम डिगमिगा रहा है . उस्के ऊपर लोगों का तगादा जारी है जो तुम किसी के भरोसे रहोगे तो धोका खाओगे जो काम करो अच्छी तरह सोच समझ कर करना ."

"कल शाम को तो लाला साहब नें हमारे यहाँ आकर ये घोड़े पसंद किए थे फिर इतनी देर मैं क्या हो गया ?"

जब तेल चुक जाता है तो दिये बुझनें मैं क्या देर लगती है ? चुन्नीलाल, शिंभूदयाल सब तेल चाट गये ऐसे चूहों की घात लगे पीछै भला क्या बाकी रह सक्ता था ?"

"मैं जान्ता हूं कि लाला साहब का बहुत सा रुपया लोग खा गए परंतु उन्के काम बिगड़नें की बात मेरे मन मैं अब तक नहीं बैठती तुमनें यह हाल किस्सै सुना है ?"

"मैं आप वहाँ से आया हूं मुझको झूंट बोलने से क्या फ़ायदा है? मैं तो अभी जाकर नालिश करता हूं निहालचंद मोदी नालिश करने को तैयार है ब्राइट साहब का मुंशी अभी सब हक़ीक़त निश्चय करके साहब के पास दौड़ा गया है तुमको भरोसा न हो निस्संदेह न मानो तुम न मानोगे इस्सै मेरी क्या हानि होगी" यह कह कर हरकिशोर वहाँ से चल दिया.

पर अब मदनमोहन की तरफ़ सै आग़ा हसन जान को चैन न रहा. असल रुपे का लालच उस्को पीछै हटाता था और नफ़े का लालच आगै बढ़ाता था. पहले रुपे के बिचार सै तबियत और भी घबराई जाती थी निदान यह राह ठैरी कि इस्समय घोड़ों को फेर ले चलो मदनमोहन का काम बना रहैगा तो पहले रुपे वसूल हुए पीछै ये घोड़े पहुँचा दैंगे नहीं तो कुछ काम नहीं.

इधर हरकिशोर को मार्ग मैं जो मिल्ता था उस्सै वह मदनमोहन के दिवाले का हाल बराबर कहता चला जाता था और यह सब बातैं बाज़ार मैं होती थीं इसलिए एक सै कहनें मैं पांच और सुन लेते थे और उन पांच के मुख सै पचासों को यह हाल तत्काल मालूम हो जाता था फ़िर पचास सै पांच सौ मैं और पांच सौ सै पांच हज़ार मैं फैलते क्या देर लगती थी? और अधिक आश्चर्य की बात यह थी कि हरेक आदमी अपनी तरफ़ सै भी कुछ, न कुछ नोंन मिर्च लगा ही देता था जिस्को एक के कहनें सै भरोसा न आया दो के कहनें से आ गया, दो के कहनें सै न आया चार के कहनें सै आ गया. मदनमोहन के चाल चलन सै अनुभवी मनुष्य तो यह परिणाम पहले ही सै समझ रहे थे जिस्पर मास्टर शिंभूदयाल ने मदनमोहन की तरफ़ सै एक दो जगह उधार लेने की बातचीत की थी इसलिये इस चर्चा मैं किसी को संदेह न रहा. वारूद बिछ रही थी बत्ती दिखाते ही तत्काल भभक उठी.

परंतु लाला मदनमोहन या ब्रजकिशोर वगैरे को अब तक इस्का कुछ हाल मालूम न था.

प्रकरण २९

दिवाला

कीजे समझ, न कीजिए बिन बिचार व्यवहार ।
आय रहत जानत नहीं ? सिर को पायन भार ॥ बृंद

लाला मदनमोहन प्रातःकाल उठते ही कुतब जाने की तैयारी कर रहे थे . साथ जानेंवाले अपनें, अपनें कपड़े लेकर आते जाते थे इतने मैं निहालचंद मोदी कई तक़ाज़गीरों को साथ लेकर आ पहुंचा .

इस्नें हरकिशोर सै मदनमोहन के दिवाले का हाल सुना था उसी समय सै इस्को तलामली लग रही थी कल कई बार यह मदनमोहन के मकान पर आया पर किसी नें इस्को मदनमोहन के पास तक न जानें दिया और न इस्के आने की इत्तला की . संध्या समय मदनमोहन के सवार होनें के भरोसे वह दरवाज़े पर बैठा रहा परंतु मदनमोहन सवार न हुए इस्सै इस्का संदेह और भी दृढ़ हो गया . शहर मैं तरह, तरह की हज़ारों बातें सुनाई देती थीं इस्सै वह आज सबेरे ही कई लेनदारों को साथ लेकर एकदम मदनमोहन के मकान मैं घुस आया और पहुंचते ही कहनें लगा "साहब ! अपना हिसाब कर के जितनें रुपे हमारे बाकी निकलें हम को इसी समय दे दीजिये हमें आप का लेन देन रखना मंजूर नहीं है कल सै हम कई बार यहां आए परंतु पहरे वालों नें आप के पास तक नहीं पहुंचनें दिया ."

"हमारा रुपया खर्च करके हमारे तक़ाज़े सै बचनें के लिए यह तो अच्छी युक्ति निकाली !" एक दूसरे लेनदार नें कहा "परंतु इस्तरह रक़म नहीं पच सक्ती नालिश करके दम भर मैं रुपया धरा लिया जायगा ."

"बाहर पहरे चोकी का बंदोबस्त करके भीतर आप अस्बाब बांध रहे हैं !" तीसरे मनुष्य नें कहा 'जो दो, चार घड़ी हम लोग और न आते तो दरवाज़े पर पहरा ही पहरा रह जाता लाला साहब का पता भी न लगता ."

"इस्मैं क्या संदेह है ? कल रात ही को लाला साहब अपनें बाल बच्चों को तो मेरठ भेज चुके हैं" चोथे नें कहा "इन्सालवन्सी के सहारे से लोगों को जमा मारनें का इन दिनों बहुत होसला हो गया है."

"क्या इस जमानें मैं रुपया पैदा करनें का लोगों ने यही ढंग समझ रक्खा है ?" एक और मनुष्य कहनें लगा "पहले अपनी साहूकारी, मातबरी, और रसाई दिखाकर लोगों के चित्त मैं विश्वास बैठाना, अंत मैं उन्की रक़म मारकर एक किनारे हो बैठना ."

"मेरी तो जन्म भर की कमाई यही है मैं ने समझा था कि थोड़ी सी उमर बाकी रही है सो इस्मैं आराम सै कट जायगी परंतु अब क्या करूँ ?" एक बुड्ढा आँखों मैं आँसू भर कर कहनें लगा "न मेरी उमर महनत करनें की है न मुझको किसी का सहारा दिखाई देता है जो तुम सै मेरी रक़म न पटेगी तो मेरा कहाँ पता लगेगा ?"

"हमारे तो पाँच हज़ार रुपे लेनें हैं परंतु लाओ इस्समय हम चार हज़ार मैं फैसला करते हैं" एक लेनदार नें कहा .

"औरों की जमा मार कर सुख भोगनें मैं क्या आनंद आता होगा ?" एक और मनुष्य बोल उठा .

इतने मैं और बहुत से लोगों की भीड़ आ गई . वह चारों तरफ़ सै मदनमोहन को घेर कर अपनी, अपनी कहनें लगे . मदनमोहन की ऐसी दशा कभी काहे को हुई थी ? उस्के होश उड़ गये . चुन्नीलाल, शिभू-दयाल वगैरे लोगों को धैर्य देनें की कोशिश करते थे परंतु उन्को कोई बोलनें ही नहीं देता था . जब कुछ देर ख़ूब गड़बड़ हो चुकी लोगों का

जोश कुछ नरम हुआ तब चुन्नीलाल पूछनें लगा "आज क्या है ? सब के सब एकाएक ऐसी तेज़ी मैं कैसे आ गये ? ऐसी गड़बड़ सै कुछ भी लाभ न होगा जो कुछ कहना हो धीरे सै समझा कर कहो."

"हमको और कुछ नहीं कहना हम तो अपनी रक़म चाहते हैं." निहालचंद नें जवाब दिया .

हमारी रक़म हमारे पल्ले डालो फिर हम कुछ गड़बड़ न करेंगे" दूसरे नें कहा .

"तुम पहले अपने लेने का चिठ्ठा बनाओ, अपनी अपनी दस्तावेज़ दिखाओ, हिसाब करो, उस समय तुम्हारा रुपया तत्काल चुका दिया जायगा" मुंशी चुन्नीलाल नें जवाब दिया .

"यह लो हमारे पास तो यह रुक्का है" "हमारा हिसाब यह रहा" "इस रसीद कौ देखिये" "हमनें तो अभी रक़म भुगताई है" इस तरह पर चारों तरफ़ सै लोग कहनें लगे .

"देखो जी ! तुम बहुत हल्ला करोगे तो अभी पकड़ कर कोतवाली मैं भेज दिये जाओगे और तुम पर हतक इज्ज़त की नालिश की जायगी नहीं तो जो कुछ कहना हो धीरज सै कहो" मास्टर शिंभूदयाल नें अवसर पाकर दबाने की तजवीज़ की .

"हम को लड़ने झगड़ने की क्या ज़रूरत है ? हम तो केवल जवाब चाहते हैं जवाब मिले पीछे आप सै पहले हम नालिश कर देंगे" निहाल-चंद नें सबकी तरफ़ सै कहा .

"तुम वृथा घबराते हो हमारा सब माल मता तुम्हारे साम्हने मौजूद है हमारे घर मैं घाटा नहीं है व्याज समेत सब को कौड़ी कौड़ी चुका दी जायगी" लाला मदनमोहन नें कहा .

"कोरी बातों सै जी नहीं भरता" निहालचंद कहने लगा "आप अपना बही खाता दिखा दें . क्या लेना है ? क्या देना है ? कितना

माल मौजूद है ? जो अच्छी तरह हमारा मन भर जायगा तो हम नालिश नहीं करेंगे ."

"काग़ज़ तो इस्समय तैयार नहीं है" लाला मदनमोहन नें लजा कर कहा.

"तो खातरी कैसे हो ? ऐसी अँधेरी कोठरी मैं कौन रहै ?

जो पहले करिये जतन, तो पीछे फल होय ।
आग लगे खोदे कुआ, कैसे पावे तोय ॥ (वृन्द)

इस काठ कबाड़ के तो समय पर रुपे मैं दो आने भी नहीं उठते" एक लेनदार नें कहा .

"ऐसे ही अनसमझ आदमी जल्दी करके बेसबब्र दूसरों का काम बिगाड़ दिया करते हैं ." मास्टर शिंभूदयाल कहनें लगे .

इतनें मैं हरकिशोर.अदालत के एक चपरासी को लेकर मदनमोहन के मकान पर आ पहुँचे और चपरासी नें सम्मन पर मदनमोहन सै क़ायदे मूजिब इत्तला लिखा ली .

उस्को गए थोड़ी देर न बीतनें पाई थी कि आग़ा हसन जान के वकील की नोटिस आ पहुँची उस्मैं लिखा था कि "आग़ा हसन जान की तरफ़ सै मुझ को आप के जतानें के लिए यह फ़र्मायश हुई है कि आप उसके पहले की ख़रीद के घोड़ों की क़ीमत का रुपया तत्काल चुका दें और कल की ख़रीद के तीन घोड़ों की क़ीमत चौबीस घंटे के भीतर भेज कर अपने घोड़े मँगवा लें जो इस मयाद के भीतर कुल रुपया न चुका दिया जायगा तो ये घोड़े नीलाम कर दिये जायँगे और इन्की क़ीमत मैं जो कमी रहैगी पहले की बाक़ी समेत नालिश करके आप सै वसूल की जायगी ."

थोड़ी देर पीछे मिस्टर ब्राइट का सम्मन और कच्ची कुरकी एक साथ आ पहुँची इस्सै लोगों के घबराट की कुछ हद न रही . घर मैं मामला होनें की आशा जाती रही सबको अपनी, अपनी रक़म ग़लत

मालूम होनें लगी और सब नालिश करनें के लिए कचहरी को दोड़ गए .

"यह क्या है ? किस दुष्ट की दुष्टता सै हम पर यह ग़ज़ब का गोला एक साथ आ पड़ा ?" लाला मदनमोहन आँखों मैं आँसू भर कर बड़ी कठिनाई सै इतनी बात कह सके .

"क्या कहूँ ? कोई बात समझ मैं नहीं आती" मुंशी चुन्नीलाल कहनें लगे "कल लाला ब्रजकिशोर यहाँ सै ऐसे बिगड़ कर गए थे कि मेरे मन मैं इसी समय खटका हो गया था शायद उन्हीं ने यह बखेड़ा उठाया हो. बाज़े आदमियों को अपनी बात का ऐसा पक्ष होता है कि यह औरों की तो क्या अपनी बरबादी का भी कुछ विचार नहीं करते . परमेश्वर ऐसे हटीलों सै बचाय . हरकिशोर का ऐसा होसला नहीं मालूम होता और वह कुछ बखेड़ा करता तो उसका असर कल मालूम होना चाहिए था अब तक क्यों न हुआ ?"

प्रथम तो निहालचंद कल सै अपनें मन मैं घबराहट होनें का हाल आप कह चुका था, दूसरे हरकिशोर की तरफ़ सै नालिश दायर होकर सम्मन आ गया, तीसरे चुन्नीलाल ब्रजकिशोर के स्वभाव को अच्छी तरह जान्ता था इसलिये उसके मन मैं ब्रजकिशोर की तरफ़ सै ज़रा भी संदेह न था परंतु वह हरकिशोर की अपेक्षा ब्रजकिशोर सै अधिक डरता था इसलिए उसनें ब्रजकिशोर ही को अपराधी ठैरानें का विचार किया . अफ़सोस ! जो दुराचारी अपनें किसी तरह के स्वार्थ सै निर्दोष और धर्मात्मा मनुष्यों पर झूँटा दोष लगाते हैं अथवा अपना क़सूर उन्पर बरसाते हैं उन्के बराबर पापी संसार मैं और कौन होगा ?

लाला मदनमोहन के मन मैं चुन्नीलाल के कहनें का पूरा विश्वास हो गया उसनें कहा कि "मैं अपनें मित्रों को रुपे की सहायता के लिये चिट्ठी लिखता हूं मुझको विश्वास है कि उन्की तरफ़ सै पूरी सहायता मिलेगी

परंतु सब सै पहले ब्रजकिशोर के नाम चिट्ठी लिखूँगा कि अब वह मुझ को अपना काला मुँह जन्म भर न दिखलाय" यह कह कर लाला मदनमोहन चिट्ठियाँ लिखनें लगे .

प्रकरण २७

लोक चर्चा (अफ़वाह)

निन्दा, चुगली, झूट अरु पर दुखदायक बात ।
जे न करहिं तिन पर द्रवहिं सर्वेश्वर बहु भाँत ॥*

(विष्णुपुराणे)

उस तरफ़ लाला ब्रजकिशोर नें प्रातःकाल उठ कर नित्य नियम सै निश्चिंत होते ही मुंशी हीरालाल को बुलाने के लिये आदमी भेजा .

हीरालाल मुंशी चुन्नीलाल का भाई है यह पहले बंदोबस्त के महकमे मैं नौकर था जब सै वह काम पूरा हुआ, इस्की नौकरी कहीं नहीं लगी थी .

"तुमनें इतनें दिन सै आकर सूरत तक नहीं दिखाई घर बैठे क्या किया करते हो?" हीरालाल को आते ही ब्रजकिशोर कहनें लगे "दफ्तर मैं जाते थे जब तक तो खैर अवकाश ही न था परंतु अब क्यों नहीं आते?"

"हुज़ूर ! मैं तों हर वक्त हाज़िर हूँ परंतु बेकाम आनें मैं शर्म आती थी आज आप नें याद किया तो हाज़िर हुआ फ़रमाइये क्या हुक्म है?" हीरालाल नें कहा .

---

* परापवादपैशुन्यमनृतं च न भाषते ।
अन्याद्वेगकरं चापि तोष्यते तेन केशवः ॥

"तुम खाली बैठे हो इस्की मुझे बड़ी चिंता है तुम्हारे विचार सुधरे हुए हैं इस्सै तुमको पुरानें हक़ का कुछ खयाल हो या न हो परंतु मैं तो नहीं भूल सक्ता. तुम्हारा भाई जवानी की तरंग मैं आकर नौकरी छोड़ गया परंतु मैं तो तुम्हैं नहीं छोड़ सक्ता. मेरे यहाँ इन दिनों एक मुहर्रिर की चाह थी सब सै पहले मुझको तुम्हारी याद आई (मुस्करा कर) तुम्हारे भाई को दस रुपे महीना मिल्ता था परंतु तुम उस्सै बड़े हो इस लिये तुमको उस्सै दूनी तनख्वाह मिलेगी".

"जी हाँ! फिर आप को चिन्ता न होगी तो और किस्को होगी? आप के सिवाय हमारा सहायक कौन है? चुन्नीलाल नें निस्संदेह मूर्खता की परंतु फिर भी तो जो कुछ हुआ आप ही के प्रताप सै हुआ."

"नहीं मुझ को चुन्नीलाल की मूर्खता का कुछ विचार नहीं है मैं तो यही चाहता हूँ कि वह जहाँ रहै सन्न रहै. हाँ मेरी उपदेश की कोई, कोई बात उस्को बुरी लगती होगी परंतु मैं क्या करूँ? जो अपना होता है उस्का दर्द आता ही है".

"इस्मैं क्या संदेह है? जो आप को हमारा दर्द न होता तो आप इससमय मुझको घर सै बुलाकर क्यों इतनी कृपा करते? आप का उपकार मान्नें के लिए मुझको कोई शब्द नहीं मिल्ते परंतु चुन्नीलाल की समझ पर बड़ा अफ़सोस आता है कि उस्नें आप जैसे प्रतिपालक के छोड़ जानें की ढिठाई की. अब वह अपने किये का फल पावेगा तब उस्की आँखें खुलेंगी".

"मैं उस्के किसी, किसी काम को निस्संदेह नापसन्द करता हूँ परंतु यह सर्वथा नहीं चाहता कि उस्को किसी तरह का दुःख हो".

"यह आपकी दयालुता है परंतु कार्य कारण के संबंध को आप कैसे रोक सक्ते हैं? आज लाला मदनमोहन पर तक़ाज़ा हो गया. जो ये लोग आप का उपदेश मान्ते तो ऐसा क्यों होता?"

"हाय ! हाय ! तुम यह क्या कहते हो ? मदनमोहन पर तक़ाज़ा हो गया ? तुमनें यह बात किस्सै सुनी ? मैं चाहता हूं कि परमेश्वर करे यह बात झूंट निकले" लाला ब्रजकिशोर इतनी बात कह कर दुःख-सागर मैं डूब गए उन्के शरीर मैं बिजली का सा एक झटका लगा, आँखों मैं आँसू भर आए, हाथ पाँव शिथिल हो गए . मदनमोहन के आचरण सै बड़े दुःख के साथ वह यह परिणाम पहले ही समझ रहे थे इसलिये उन्को उस्का जितना दुःख होना चाहिये पहले हो चुका था तथापि उन्को ऐसी जल्दी इस दुखदाई खबर के सुन्नें की सर्वथा आशा न थी इसलिये यह खबर सुन्ते ही उन्का जी एक साथ उमड़ आया परंतु वह थोड़ी देर मैं अपनें चित्त का समाधान करके कहनें लगे—

"हा ! कल क्या था ! आज क्या हो गया !! शृंगार रस का सुहावनाँ समां एकाएक करुणा सै बदल गया ! बेलजिअम की राजधानी ब्रसेल्स पर नैपोलियन नें चढ़ाई की थी उससमय की दुर्दशा इससमय याद आती है. लार्ड बायरन लिखता है—

"निशि मैं बरसेलस गाजि रह्यो । बल रूप बढ़ाय बिराजि रह्यो ।
अति रूपवती युवती दरसैं । बलवान सुजान जवान लसैं ।
सबके मुख दीपन सों दमकैं । सबके हिय आनंद सों धमकैं ।
बहु भांति बिनोद प्रमोद करैं । मधुरे सुर गाय उमंग भरैं ।
जब रागन की मृदु तान उड़ैं । प्रिय प्रीतम नैनन सैन जुड़ैं ।
चहुँ ओर सुखो सुख छाय रह्यो । जनु ब्याहन घंट निनाद भयो ।
पर मौन गहो ! अबिलोक इतै । यह होत भयानक शब्द कितै ?
डरपौ जिन चंचल बायु बहै । अथवा रथ दौरत आवत है ।
प्रिय नाचहु, नाचहु ना ठहरो । अपनें सुख की अवधी न करो ।
जब जोबन और उमंग मिलैं । सुख लूटन को दुहु दोर चलैं ।
तब नींद कहूँ निश आवत है ? कुछ औरहु बात सुहावत है !
पर कान लगा अब फेर सुनो । वह शब्द भयानक है दुगनो !

घनघोर घटा गरजी अबही। तिहँ गूँज मनो दुहराय रही।
यह तोप दनादन आवत हैं। ढिंग आवत भूमि कँपावत हैं।
"सब शस्त्र सजो, सब शस्त्र सजो"। घबराट बढ़ो सुख दूर भजो।
दुख सों बिलपैं कलपैं सबही। तिनकी करुणा नहिं जाय कही।
निज कोमलता सुनि लाज गए। सुकपोल ततच्छण पीत भए।
दुख पाय कराहि वियोग लहैं। जनु प्राण वियोग शरीर सहैं।
किहि भांति करों अनुमान यहू। प्रिय प्रीतम नैन मिलैं कबहूँ?
जब वा सुख चैनहि रात गई। इहिं भांत भयंकर प्रात भई !!!"❀

❀ There was a sound of revelry by night,
And Belgium's Capital had gathered then
Her beauty and her chivalry, and bright
The lamps shone o'er fair women and brave men;
A thousand hearts beat happily; and when
Music arose with its voluptuous swell,
Soft eyes look'd love to eyes which spake again,
And all went merry as a marriage bell.
But, hush! hark! a deep sound strikes like a rising knell.
Did ye not hear it?—No; 't was but the wind,
Or the car rattling over the stony street;
On with the dance! let joy be unconfined
No sleep till morn, when Youth and Pleasure meet
To chase the glowing hours with flying feet

"हाँ यह खबर तुमने किस्सै सुनी ?"

"चुन्नीलाल अभी घर भोजन करने आया था वह कहता था".

"वह अब तक घर हो तो उसे एक बार मेरे पास भेज देना हम लोग खुशी प्रसन्नता मैं चाहे जितने लड़ते झगड़ते रहें परंतु दुःख दर्द मैं सब एक हैं. तुम चुन्नीलाल सै कह देना कि मेरे पास आने मैं कुछ संकोच न करे मैं उस्सै ज़रा भी अप्रसन्न नहीं हूँ."

But hark ! that heavy sound breaks in once more,
As if the clouds its echo would repeat;
And nearer, clearer, deadlier, than before !
Arm ! arm! it is—it is the cannon's opening roar !
Ah ! then and there was hurrying to and fro,
And gathering tears and tremblings of distress,
And cheeks all pale, which but an hour ago
Blush'd at the praise of their own loveliness
And there were sudden partings, such as press
The life from out young hearts, and choking sighs
Which ne'er might be repeated, who would guess
If ever more should meet those mutual eyes,
Since upon night so sweet such awful morn should rise !

Lord Byron.

"राम, राम ! यह हज़ूर क्या फ़रमाते हैं ? आपकी अप्रसन्नता का बिचार कैसे हो सक्ता है ? आप तो हमारे प्रतिपालक हैं. मैं जाकर अभी चुन्नीलाल को भेजता हूँ वह आकर अपना अपराध क्षमा करायगा और चला गया होगा तो शाम को हाज़िर होगा" हीरालाल नें उठते उठते कहा.

"अच्छा ! तुम कितनी देर मैं आओगे ?"

"मैं अभी भोजन करके हाज़िर होता हूँ" यह कह कर हीरालाल रुखसत हुआ.

लाला ब्रजकिशोर अपनें मन मैं बिचारनें लगे कि "अब चुन्नीलाल सै सहज मैं मेल हो जायगा परतु यह तक़ाज़ा कैसे हुआ ? कल हरकिशोर क्रोध मैं भर रहा था इस्सै शायद उसी नें यह अफ़वा फैलाई हो उस्नें ऐसा किया तो उस्के क्रोध नें बड़ा अनुचित मार्ग लिया और लोगों नें उस्के कहनें मैं आकर बड़ा धोका खाया.

"अफ़वा वह भयंकर वस्तु है जिस्सै बहुत सै निर्दोष दूषित बन जाते हैं. बहुत लोगों के जी मैं रंज पड़ जाते हैं बहुत लोगों के घर बिगड़ जाते हैं. हिंदुस्थानियों मैं अब तक विद्या का ब्यसन नहीं है समय की क़दर नहीं है भले बुरे कामों की पूरी पहचान नहीं है इसी से यहाँ के निवासी अपना बहुत समय औरों के निज की बातों पर हाशिया लगानें मैं और इधर उधर की ज़टल्ल हाँकनें मैं खो देते हैं जिस्सै तरह, तरह की अफ़वाएँ पैदा होती हैं और भलेमानसों की झूँटी निंदा अफ़वा की ज़हरी पवन मैं मिल्कर उन्के सुयश को धूंधला करती है इन अफ़वा फैलानें वालों मैं कोई कोई दुर्जन खानें कमानें वाले हैं, कोई कोई दुष्ट बैर और जलन सै औरों की निंदा करनें वाले हैं और कोई पापी ऐसे भी हैं जो आप किसी तरह की योग्यता नहीं रखते इसलिए अपना भरम बढ़ानें को बड़े बड़े योग्य मनुष्यों की साधारण भूलों पर टीका कर कै आप उन्के बराबर के बना चाहते हैं अथवा अपना दोष छिपानें के लिये

दूसरे के दोष ढूँड़ते फिरते हैं या किसी की निंदित चर्चा सुन्कर आप उस्सै जुदे बन्ने के लिए उस्की चर्चा फैलाने में शामिल हो जाते हैं या किसी लाभदायक वस्तु सै केवल अपना लाभ स्थिर रखने के लिए औरों के आगे उस्की निंदा किया करते हैं, पर बहुत सै ठिलुए अपना मन बहलानें के लिए औरों की पंचायत ले बैठते हैं. बहुत से अन्समझ भोले भाव सै बात का मर्म जानें बिना लोगों की बनावट मैं आकर घोका खाते हैं. जो लोग औरों की निंदा सुन्कर काँपते हैं वह आप भी अपनें अजानपनें मैं औरों की निंदा करते हैं. जो लोग निर्दोष मनुष्यों की निंदा सुन्कर उन्पर दया करते हैं वह आप भी धीरे सै, कान मैं झुक कर, औरों से कहने के वास्तै मनै कर कर, औरों की निंदा करते हैं! जिन लोगों के मुख सै यह वाक्य सुनाई देते हैं कि "बड़े खेद की बात है" "बड़ी बुरी बात है" "बड़ी लज्जा की बात है" "यह बात मान्ने योग्य नहीं" "इस्मैं बहुत संदेह है" "इन्बातों से हाथ उठाओ" वह आप भी औरों की निंदा करते हैं. वह आप भी अफ़्वा फैलानें वालों की बात पर थोड़ा बहुत विश्वास रखते हैं. झूँटी अफ़्वा सै केवल भोले आदमियों के चित्त पर ही बुरा असर नहीं होता वह सावधान सै सावधान मनुष्यों को भी ठगती है. उस्का एक एक शब्द भलेमानसों की इज्जत लूटता है. कल्पद्रुम में कहा है—

> "होत चुगल संसर्ग ते सज्जन मनहुँ बिकार।
> कमल गंधवाही गलिन धूर उड़ावत ब्यार॥"*

जो लोग असली बात निश्चय किए बिना केवल अफ़्वा के भरोसे किसी के लिए मत बांध लेते हैं वह उस्के हक़ मैं बड़ी बेइन्साफ़ी करते हैं. अफ़्वा के कारण अब तक हमारे देश को बहुत कुछ नुक्सान हो चुका

---

* सुजनानामपि हृदयं पिशुनपरिष्वंगलितमिह भवति।
पवनः परागवाही रथ्यासुवहन् रजस्वलो भवति॥

क्योंकि वह्र लोग स्वभाव पहचानें बिना मित्रता नहीं करते पर मित्रता हुए पीछै भी दूसरे की निज की बातों सै अजान रहना अधिक पसंद करते हैं उन्के यहाँ निज की बातों के पूछनें की रीति नहीं है उन्को देश संबंधी बातैं करनें का इतना अभ्यास होता है कि निज के वृत्तांत पूछनें का अवकाश ही नहीं मिल्ता परंतु निज की बातों सै अजान रहनें के कारण उन्की प्रीति मैं कुछ अंतर नहीं आता . मनुष्य का दुराचार साबित होनें पर वह उसै तत्काल छोड़ देते हैं परंतु केवल अफ़वा पर वह कुछ ख्याल नहीं करते बल्कि उस्का अपराध साबित न हो जब तक वह उस्को अपना बचाव करने के लिये पूरा अवकाश देते हैं और उचित रीति सै उस्का पक्ष करते है ."

प्रकरण २८

फूट का काला मुँह

फूट गए हीरा की बिकानी कनी हाट हाट,
काहू घाट मोल काहू बाढ़ मोल कों लयो ।
टूट गई लंका फूट मिल्यो जो बिभीषण है,
रावन समेत बंस आसमान कों गयो ॥
कहे कवि गंग दुर्योधन सों छत्रधारी,
तनक के फूटे ते गुमान वाको नै गयो ।
फूटे ते नर्द उठ जात बाजी चौपर की
आपस के फूटे कहु कौन को भलो भयो ? ॥

गंग ।

थोड़ी देर पीछे मुंशी चुन्नीलाल आ पहुँचा परंतु उस्के चहरे का रंग उड़ रहा था लाज सै उस्की आँख ऊँची नहीं होती थी . प्रथम तो उस्की सलाह सै मदनमोहन का काम बिगड़ा दूसरे उस्की कृतघ्नता पर ब्रजकिशोर नें उस्के साथ ऐसा उपकार किया इसलिए वह संकोच के मारे धरती मैं समाया जाता था .

"तुम इतनें क्यों लजाते हो ? मैं तुम सै ज़रा भी अप्रसन्न नहीं हूँ बल्कि किसी किसी बात मैं तो मुझको अपनी ही भूल मालूम होती है; मैं लाला मदनमोहन की हरेक बात पर हद सै ज्याद: ज़िद करनें लगता था परंतु मेरी वह ज़िद अनुचित थी . हरेक मनुष्य अपनें बिचार का आप धनी है . मैं चाहता हूँ कि आगे को ऐसी सूरत न हो और हम सब एक चित्त होकर रहैं परंतु मैं ने तुमको इस्समय इस सलाह के लिए नहीं बुलाया इस विषय मैं तो जब तुम्हारी तरफ़ सै चाहना मालूम होगी देखा जायगा" लाला ब्रजकिशोर कहनें लगे "इस्समय तो मुझको तुम सै हीरा-लाला की नौकरी बाबत सलाह करनी है . यह बहुत दिन सै खाली है और मुझको अपनें यहाँ इस्समय एक मुहर्रिर की ज़रूरत मालूम होती है तुम कहो तो इन्हें रख लूँ ?"

"इस्मैं मुझ सै क्या पूछते हैं ? इस्के लिये आप मालिक हैं" मुंशी चुन्नीलाल कहने लगा "मेरी तो इतनी ही प्रार्थना है कि आप मेरी मूर्खता पर दृष्टि न करैं अपनें बड़प्पन का बिचार रक्खें . पहली बातों के याद करने सै मुझको अत्यंत लज्जा आती है आप नें इस्समय लाला हीरालाल को नौकर रखकर मुझे मात कर दिया ."

"मैं तुम को लज्जित करनें के लिए यह बात नहीं कहता मैं ने अपनें मन का निज भाव तुम को इसलिये समझा दिया है कि तुम मुझे अपना शत्रु न समझो" लाला ब्रजकिशोर कहने लगे "हिंदुस्थान के सत्यानाश की जड़ प्रारंभ सै यही फूट है इसी के कारण कौरवों पांडवों का घोर युद्ध हुआ, इसी के कारण नंद वंश की जड़ उखड़ी, पृथ्वीराज और जय-

चंद की फूट से हिंदुस्थान मैं मुसल्मानों का राज आया और मुसल्मानों का राज भी अंत मैं इसी फूट के कारण गया. सौ सवा सौ बरस सै लेकर अब तक हिंदुस्थान मैं कुछ ऐसे अप्रबंध, फूट और स्वेच्छाचार की हवा चली कि बहुधा लोग आपस मैं कट मरे. साहूजी नें ईस्ट इंडियन कंपनी को देवीकोटे का क़िला और ज़िला देकर उस्के द्वारा अपनें भाई प्रतापसिंह सै तंजौर का राज छीन लिया. बंगाल के सूबेदार सिराजुद्दौला सै अधिकार छीन्नें के लिये उस्के बख्शी मीर जाफ़र और दीवान राय दुर्लभ आदि नें कंपनी को दक्षिण काल्पी तक की जमीं- दारी एक किरोड़ रुपया नक़द और कलकत्ते के अंग्रेजों को पचास लाख, फौज को पचास लाख और और लोगों को चालीस लाख अनुमान देनें किये. जब मीर जाफ़र सूबेदार हुआ तब उस्सै अधिकार छीन्नें के लिये उस्के जँवाई क़ासम अली खाँ ने कंपनी को बर्दवान, मेदनीपुर, चटगाँव के ज़िले, पांच लाख रुपे नक़द और कौंसिल वालों को बीस लाख रुपे देनें किये, जब क़ासम अली खाँ सूबेदार हो गया और महसूल बरबत उस्का कंपन सै बिगाड़ हुआ तब मीर जाफ़र नें कंपनी को तीस लाख रुपे नक़्द और बारह हज़ार सवार और बारह हज़ार पैदलों का खर्च देकर फिर अपना अधि कार जमा लिया. उधर अवध का सूबेदार शुजाउद्दौला कंपनी को चालीस लाख रुपे नक़्द और लड़ाई का खर्च देना कर के उस्की फौज रुहेलों पर चढ़ा ले गया. दखन मैं बालाजी राव पेशवा के मरते ही पेशवाओं के घरानें मैं फूट पड़ी, दो थोक हो गए. अब तक पंजाब बच रहा था रणजीत- सिंह की उन्नति होती जाती थी परंतु रणजीतसिंह के मरते ही वहां फूट नें ऐसे पांव फैलाए कि पहले सब झगड़ों को मात कर दिया. राजा ध्यान- सिंह मंत्री और उस्के बेटे हीरासिंह आदि की स्वार्थपरता, लहनसिंह और अजीतसिंह सिंधावालों का छल अर्थात् कुँवर शेरसिंह और राजा ध्यानसिंह के जी में एक दूसरे की तरफ़ सै संदेह डालकर विरोध बढ़ाना और अंत मैं दोनों के प्राण लेना, राजकुमार खड़गसिंह उस्का बेटा नोनि-

हालसिंह राजकुमार शेरसिंह उस्का बेटा प्रतापसिंह आदि की अनूसमझी सै आपस मैं वह कटमकटा हुई कि पाँच बरस के भीतर भीतर उस्के वंश मैं सिवाय दिलीपसिंह नामी एक बालक के कोई न रहा और उस्का राज भी कंपनी के राज मैं मिल गया. किसी नें सच कहा है—

"अल्पसार हू बहुत मिल करैं बड़ों सो जोर।
जों गज को बंधन करे तृण की निर्मित डोर॥"*

इसलिये मैं आपस की फूट को सर्वथा अच्छी नहीं समझता तुम मेरे पास सै गए थे इसलिये मुझको तुम्हारे कामों पर विशेष दृष्टि रखनी पड़ती थी परंतु तुम अपनें जी मैं कुछ और ही समझते रहे. चलो खैर! अब इन बातों की चर्चा करनें सै क्या लाभ है."

"आप यह क्या कहते हैं? आप मेरे बड़े हैं मैं आपका बरताव और तरह कैसे समझ सक्ता था?" चुन्नीलाल कहनें लगा "आप नें बचपन सै मेरा पालन किया, मुझ को पढ़ा लिखा कर आदमी बनाया इस्सै बढ़ कर कोई क्या उपकार करेगा? मैं अच्छी तरह जान्ता हूँ कि आप नें मुझ सै जो कुछ भला बुरा कहा, मेरी भलाई के लिए कहा. क्या मैं इतना भी नहीं जान्ता कि दंगा करनें सै माँ अपनें बालक को मारती है दूसरे सै कुछ नहीं कहती. यदि आप को हमारे प्रतिपालन की चिंता मन सै न होती तो ऐसे कठिन समय मैं लाला हीरालाल को घर सै बुला कर क्यों नौकर रखते?"

"भाई! अब तो तुम नें वही खुशामद की लच्छेदार बातैं छेड़ दीं" लाला ब्रजकिशोर नें हँस कर कहा.

आप के जी मैं मेरी तरफ़ का संदेह हो रहा है इस्सै आप को ऐसा ही भ्यासता होगा परंतु इन्मैं सै कौन्सी बात आप को खुशामद की मालूम हुई?"

---

* बहूनामल्प साराणां समवायोहि दुर्जयः।
तृणैर्विधीयते रज्जुर्बध्यन्ते दन्तिनरतया॥

"मनुस्मृति में कहा है—

"आकृति, चेष्टा, भाव, गति, बचन रीति, अनुमान।
नैन, सैन, मुख कांति लख मन की रुचि पहिचान॥"*.

लाला ब्रजकिशोर कहने लगे "तुम कहते हो कि 'आप नें जो कुछ भला बुरा कहा मेरी भलाई के लिये कहा' परंतु उस्समय तुम यह सर्वथा नहीं समझते थे तुम्हारे कामों सै यह स्पष्ट जाना जाता था कि तुम मेरी बातों सै अप्रसन्न हो और तुम्हारा अप्रसन्न होना अनुचित न था क्योंकि मेरी बातों सै तुम्हारा नुक्सान होता था मुझ को इस्बात का पीछै बिचार आया. मुझ को इस्समय इन बातों के जतानें की ज़रूरत न थी परंतु मैं नें इसलिये जता दी कि मैं भी सच झूँट को पहचान्ता हूं सचाई बिना मुझ सै सफ़ाई न होगी."

"आप की मेरी सफ़ाई क्या? सफ़ाई और बिगाड़ बराबर वालों मैं हुआ करता है, आप तो मेरे प्रतिपालक हैं आप की बराबरी मैं कैसे कर सक्ता हूं"? मुंशी चुन्नीलाल नें गंभीरता सै कहा.

यह तो बहानेंसाज़ी की बातैं हैं सफ़ाई के ढंग और ही हुआ करते हैं मुझ को तुम्हारा सब भेद मालूम है परंतु तुम नें अब तक कौन्सी बात खुल के कही?" लाला ब्रजकिशोर कहने लगे "मैं पूछता हूँ कि तुम ने मदनमोहन के हाँ सै सिवाय तनख्वाह के और कुछ नहीं लिया तो तुम्हारे पास आठ दस हज़ार रुपे कहाँ सै आ गए? मिस्टर ब्राइट इत्यादि सै तुम जो कमीशन लेते हो उस्का हाल मैं उन्के मुख सै सुन चुका हूं तुम्हारी और शिंभूदयाल की हिस्सा पत्ती का हाल मुझे अच्छी तरह मालूम है. हरकिशोर और निहालचंद गली गली तुम्हारी धूल उड़ाते फिरते हैं. मैं नहीं जान्ता कि

---

* आकारै रिङ्गितैर्गत्या चेष्टया भाषितेन च।
नेत्रवक्त्र विकारेश्च गृह्यतेन्तर्गतम्मनः॥

जब इस्की चर्चा अदालत तक पहुँचेगी तो तुम्हारे लिए क्या परिणाम होगा ? मैं ने केवल तुम सै सलाह करनें के लिए यह चर्चा छेड़ी थी परंतु तुम इस्के छिपानें मैं अपनी सब अकलमंदी खर्च करनें लगे तो मुझ को पूछनें सै क्या प्रयोजन है ? जो कुछ होना होगा समय पर अपनें आप हो रहैगा."

"आप क्रोध न करैं मैं नें हर काम मैं आप को अपना मालिक और प्रतिपालक समझ रक्खा है मेरी भूल क्षमा करैं और मुझ को इससमय सै अपना सच्चा सेवक समझते रहैं" मुंशी चुन्नीलाल नें कुछ कुछ डर कर कहा "आप जान्ते हैं कि कुन्बे का बड़ा खर्च है इस्के वास्तै मनुष्य को हज़ार तरह के झूंट सच बोलनें पड़ते हैं

"उदर भरन के कारनें प्राणी करत इलाज।
नाचे बाँचे रण भिरे, राचे काज अकाज ।।" (वृन्द)

"संसार की यही रीति है. प्रसंग रत्नावली मैं लिखा है—

"ज्ञान वृद्ध तपवृद्ध अस वय के वृद्ध सुजान।
धनवानन के द्वार कों सेवैं भृत्य समान ।।*"

लाला ब्रजकिशोर कहनें लगे "तुमको मेरी एकाएक राय पलटनें का आश्चर्य होगा परंतु आश्चर्य न करो. जिस तरह शतरंज मैं एक एक चाल चलनें सै बाज़ी का नक्शा पलटता जाता है इसी तरह संसार मैं हरेक बात सै काम काज की रीति भांति बदलती रहती है मैं अब तक यह समझता था कि मुझ को मदनमोहन सै अवश्य इंसाफ़ मिलेगा परंतु वह समय निकल गया अब मैं फ़ायदा उठाऊँ या न उठाऊँ मदनमोहन को फ़ायदा पहुँचाना सहज नहीं. मेरा हाल तुम अच्छी तरह जान्ते हो

---

* वयोवृद्धास्तपोवृद्धा ज्ञानवृद्धास्तथापरे ।
ते सर्वे धनवृद्धस्य द्वारि तिष्ठंति किंकराः ।।

मैं केवल अपनी हिम्मत के सहारे सब तरह का दुःख झेल रहा हूं परंतु मेरे कर्तव्य काम मुझको ज़रा भी नहीं उभरनें देते. कहते हैं कि अत्यंत विपत्ति काल मैं महर्षि विश्वामित्र नें भी चंडाल के घर सै कुत्ते का मांस चुराया था! फिर मैं क्या करूँ क्या न करूँ? कुछ बुद्धि काम नहीं करती."

"समय बीते पीछे आप इन सब बातों की याद करते हैं अब तो जो होना था हो चुका यदि आप पहले इन बातों को (का) विचार करते तो केवल आप को ही नंहीं आप के कारण हम लोगों को भी बहुत कुछ फ़ायदा हो जाता."

"तुम अपने फ़ायदे के लिए तो बृथा खेद करते हो!" लाला ब्रजकिशोर नें हँस कर जवाब दिया "अलबत्ता मैं मदनमोहन सै साफ़ जवाब पाए बिना कुछ नहीं कर सक्ता था क्यों कि मुझको प्रतिज्ञा भंग करना मंजूर न था. क्या तुम को मेरी तरफ़ सै अब तक कुछ संदेह है?"

"जी नहीं, आप की तरफ़ का तो मुझ को कुछ संदेह नहीं है परंतु इतना ही विचार है कि खल मैं सै तेल आप किस तरह निकालैंगे!" मुंशी चुन्नीलाल नें जी मैं संदेह कर के कहा.

"इस्की चिंता नहीं, ऐसे कामों के लिये लोग यह समय बहुत अच्छा समझते हैं"

"बहुत अच्छा! अब मैं जाता हूँ परंतु......" मुंशी चुन्नीलाल कहते. कहते रुक गया.

"परंतु क्या? स्पष्ट कहो, मैं जान्ता हूँ कि तुम्हारे मन का संदेह अब तक नहीं गया. तुम्हारी हज़ार बार राज़ी हो तो तुम सफ़ाई करो नहीं तो न करो अभी कुछ नहीं बिगड़ा मेरा कौन्सा काम अटक रहा है? तुम अपना नफ़ा नुक्सान आप समझ सक्ते हो."

"आप अप्रसन्न न हों, मुझ को आप पर पूरा भरोसा है मैं इस कठिन समय मैं केवल आप पर अपनें निस्तार का आधार समझता हूं, मेरी

लायक़ी, नालायक़ी मेरे कामों सै आप को मालूम हो जायगी परंतु मेरी इतनी ही विनती है कि आप भी ज़रा नरम ही रहैं इन्को बातों मैं बढ़ावा दे कर इन्सै सब तरह का काम ले सक्ते हैं परंतु इन पर एतराज़ करनें सै यह चिड़ जाते हैं. कल के झगड़े के कारण आज के तक़ाज़े का संदेह इन्को आप पर हुआ है परंतु अब मैं जाते ही मिटा दूँगा" मुंशी चुन्नी-लाल नें बात पलट कर कहा और उठ कर जानें लगा.

"तुम किया चाहोगे तो सफ़ाई होनी कौन कठिन है?

प्रेरक ही ते होत है कारज सिद्ध निदान।
चढ़े धनुष हू ना चले, बिना चलाये बान ॥ १ ॥
सुजन बीच पर दुहुन को हरत कलह रस पूर।
करत देहरी दीप जों घर आँगन तम दूर ॥ २ ॥ (बृंद)

यह कह कर लाला ब्रजकिशोर नें चुन्नीलाल को रुख़सत किया.

चुन्नीलाल के चित्त पर ब्रजकिशोर की कहन और हीरालाल की नौकरी से बड़ा असर हुआ था परंतु अब तक ब्रजकिशोर की तरफ़ से उस्का मन पूरा साफ़ न था. यह बातें ब्रजकिशोर के स्वभाव से इतनी उल्टी थीं कि ब्रजकिशोर के इतनें समझानें पर भी चुन्नीलाल का मन न भरा. वह संदेह के झूले मैं झोटे खा रहा था और बड़ा बिचार कर के उस्नें यह युक्ति सोची थी कि 'कुछ दिन दोनों को दम मैं रक्खूँ, ब्रजकिशोर को मदनमोहन की सफ़ाई की उम्मेद पर ललचाता रहूं और इस काम की कठिनाई दिखा, दिखा कर अपना उपकार जताता रहूँ. मदनमोहन को अदालत के मुकद्दमों मैं ब्रज-किशोर सै मदद लेनें की पट्टी पढ़ाऊँ पर बेपरवाई जतानें के बहानें सै दोनों मैं परस्पर काम की बात खुल कर न होनें दूं जिस्मैं दोनों का मिलाप होता रहै उन्के चित्त को धैर्य मिलनें के लिये सफ़ाई के आसार, शिष्टाचार की बातें दिन दिन बढ़ती जायं पर चित्त की सफ़ाई न होनें पाए, और दोनों की कुंजी मेरे हाथ रहै."

ब्रजकिशोर चुन्नीलाल की मुखचर्या से उस्के मन की धुकड़ पुकड़

पहचान्ता था इस लिए उस्नें जाती बार हीरालाल के भेजनें की ताकीद कर दी थी . वह जान्ता था कि हीरालाल बेरोज़गारी सै तंग है वह अपनें स्वार्थ सें चुन्नीलाल को सच्ची सफ़ाई के लिए बिबस करेगा और उस्की ज़िद के आगे चुन्नीलाल की कुछ न चलेगी . निदान ऐसा ही हुआ . हीरालाल नें ब्रजकिशोर की सावधानी दिखा कर चुन्नीलाल को बनावट के बिचार सें अलग रक्खा, ब्रजकिशोर की प्रामाणिकता दिखा कर उसै ब्रजकिशोर सै सफ़ाई रखनें के वास्तै पक्का किया, मदनमोहन के काम बिगड़नें की सूरत बता कर आगे को ब्रजकिशोर का ठिकाना बनानें की सलाह दी और समझा कर कहा कि "एक ठिकानें पर बैठे हुए दस ठिकानें हाथ आ सक्ते हैं जैसे एक दिया जल्ता हो तो उस्सै दस दिये जल सक्ते हैं परंतु जब यह ठिकाना जाता रहैगा तो कहीं ठिकाना न लगेगा ." अदालत मैं मदनमोहन पर नालिश होनें सै चुन्नीलाल के भेद खुलनें का भय दिखाया और अन्त मैं ब्रजकिशोर सै चुन्नीलाल नें सच्ची सफ़ाई न की तो हीरालाल नें आप ब्रजकिशोर के साथ होकर चुन्नीलाल की चोरी साबित करनें की धमकी दी और इन् बातों सै परबस हो कर चुन्नीलाल को ब्रजकिशोर सै मन की सफ़ाई रखनें के लिए दृढ़ प्रतिज्ञा करनी पड़ी .

परंतु आज ब्रजकिशोर की वह सफ़ाई और सचाई कहाँ है ? हरकिशोर का कहना इससमय क्या झूँट है ? इस्के आचरण सै इस्को धर्मात्मा कोन बता सक्ता है ? और जब ऐसे खर्तल मनुष्य का अंत मैं यह भेद खुला तो संसार मैं धर्मात्मा किस्को कह सक्ते हैं ? काम, क्रोध, लोभ, मोह का बेग कौन रोक सक्ता है ? परंतु ठैरो ! जिस मनुष्य के ज़ाहिरी बरताव पर हम इतना धोका खा गए कि सबेरे तक उस्को मदनमोहन का सच्चा मित्र समझते रहे हर जगह उस्की सावधानी, योग्यता, चित्त की सफ़ाई और धर्मप्रवृत्ति की बड़ाई करते रहे उस्के चित्त मैं और कितनी बातें गुप्त होंगी यह बात सिवाय परमेश्वर के और कौन जान सक्ता है ? और निश्चय जानें बिना हम लोगों को पक्की राय लगानें का क्या अधिकार है ?

प्रकरण २६

बातचीत

सीख्यो धन धाम सब काम के सुधारिबे को
सीख्यो अभिराम बाम राखत हजूर मैं ।
सीख्यो सराजाम गढ़ कोट के गिराइबे को
सीख्यो समसेर बाँधि काटि अरि ऊर मैं ॥
सीख्यो कुल जंत्र मंत्र तंत्रहू की बात सीख्यो
पिंगल पुरान सीख बह्यो जात कूर मैं ।
कहै कृपाराम सब सीखबो गयो निकाम
एक बोलबो न सीख्यो सीख्यो गयो धूर मैं ॥
(शृंगार संग्रह)

"आज तो मुझ सै एक बड़ी भूल हुई" मुंशी चुन्नीलाल नें लाला मदनमोहन के पास पहुँचते ही कहा "मैं (ने) समझा था कि यह सब बखेड़ा लाला ब्रजकिशोर नें उठाया है परंतु वह तो इस्सै बिल्कुल अलग निकले यह सब करतूत तो हरकिशोर की थी . क्या आप नें लाला ब्रज-किशोर के नाम चिट्ठी भेज दी ?"

"हाँ चिट्ठी तो मैं भेज चुका" मदनमोहन नें जवाब दिया .

"यह बड़ी बुरी बात हुई . जब एक निरपराधी को अपराधी समझ कर दंड दिया जायगा तो उसके चित्त को कितना दुःख होगा" मुंशी चुन्नीलाल नें दया करके कहा .

"फिर क्या करें ? जो तीर हाथ सै छुट चुका वह लौट कर नहीं आ सक्ता" लाला मदनमोहन नें जवाब दिया .

"निस्संदेह नहीं आ सक्ता परंतु जहाँ तक हो सके उस्का बदला देना चाहिए" मुंशी चुन्नीलाल कहनें लगा "कहते हैं कि महाराज दशरथ नें धोके सै श्रवण के तीर मारा परंतु अपनी भूल जान्ते ही बड़े पस्तावे के साथ उस्सै अपना अपराध क्षमा कराया उसै उठा कर उस्के माता पिता के पास पहुँचाया उन्को सब तरह धैर्य दिया और उन्का शाप प्रसन्नता सै अपनें सिर चढ़ा लिया."

"ब्रजकिशोर की यह भूल हो या न हो परंतु उस्नें पहलै जो ढिठाई की है वह कुछ कम नहीं है. गई बला को फिर घर मैं बुलाना अच्छा नहीं मालूम होता. जो कुछ हुआ सो हुआ चलो अब चुप हो रहो" मास्टर शिंभूदयाल नें कहा.

"इस्समय ब्रजकिशोर सै मेल करना केवल उन्की प्रसन्नता के लिए नहीं है बल्कि उन्सै अदालत मैं बहुत काम निकलनें की उम्मेद की जाती है" मुंशी चुन्नीलाल नें मदनमोहन को स्वार्थ दिखा कर कहा.

"कल तो तुम नें मुझ सै कहा था कि उन्की विकालत अपनें लिए कुछ उपकारी नहीं हो सक्ती" मदनमोहन नें याद दिवाई.

यह बात सुन्कर चुन्नीलाल एक बार ठिठका परंतु फिर तत्काल सम्हल कर बोला "वह समय और था यह समय और है. मामूली मुक़द्दमों का काम हम हरेक वकील सै ले सक्ते थे परंतु इस्समय तो ब्रजकिशोर के सिवाय हम किसी को अपना विश्वासी नहीं बना सक्ते."

"यह तुम्हारी लायक़ी है परंतु ब्रजकिशोर का दाव लगे तो वह तुमको घड़ी भर जीता न रहनें दे" मास्टर शिंभूदयाल नें कहा.

"मैं अपनें निज के संबंध का बिचार कर के लाला साहब को कच्ची सलाह नहीं दे सक्ता" चुन्नीलाल खरे बनें.

"अच्छा तो अब क्या करें? ब्रजकिशोर को दूसरी चिट्ठी लिख भेजें या यहाँ बुलाकर उन्की खातिर कर दें?" निदान लाला मदनमोहन नें चुन्नीलाल की राह सै राह मिला कर कहा.

"मेरे निकट तो आपको उन्के मकान पर चलना चाहिये और कोई क़ीमती चीज़ तोहफ़ा मैं देकर ऐसी प्रीति बढ़ानी चाहिये जिस्सै उन्के मन मैं पहली गांठ बिल्कुल न रहै और आप के मुकद्द्मों मैं सच्चे मन सै पैरवी करें ऐसे अवसर पर उदारता सै बड़ा काम निकलता है. सादी नें कहा है—

"द्रव्य दीजिये बीर कों तासों दे वह सीस।
प्राण बचावैगो सदा बिन पाये बखशीश ॥"*

मुंशी चुन्नीलाल नें कहा.

"लाला साहब को ऐसी क्या गरज़ पड़ी है जो ब्रजकिशोर के घर जायँ और कल जिसै बेइज्जत करके निकाल दिया था आज उस्की खुशामद करते फिरें ?" मास्टर शिंभूदयाल बोले.

"असल मैं अपनी भूल है और अपनी भूल पर दूसरे को सताना बहुत अनुचित है" मुंशी चुन्नीलाल संकेत सै शिंभूदयाल को धमका कर कहनें लगा "बैठनें उठनें, और आनें जानें की साधारण बातों पर अपनी प्रतिष्ठा, अप्रतिष्ठा का आधार समझना, संसार मैं अपनी बराबर किसी को न गिन्ना, एक तरह का जंगली विचार है. इस्की निस्बत सादगी और मिलनसारी सै रहनें को लोग अधिक पसंद करते हैं. लाला ब्रजकिशोर कुछ ऐसे अप्रतिष्ठित नहीं हैं कि उन्के हाँ जानें सै लाला साहब की स्वरूप हानि हो."

"यह तो सच है परंतु मैं नें उन्का दुष्ट स्वभाव समझ कर इतनी बात कही थी" मास्टर शिंभूदयाल चुन्नीलाल का संकेत समझ कर बोले.

---

* ज़रबिदह मर्दे सिपाहीरा तासर बिदिहद।
बगरश ज़र नांदिही सर ननिहद दरआलम ॥

"ब्रजकिशोर के मकान पर जानें मैं मेरी कुछ हानि नहीं है परंतु इतना ही विचार है कि मेल के बदले कहीं अधिक बिगाड़ न हो जाय" लाला मदनमोहन नें कहा .

"जी नहीं, लाला ब्रजकिशोर ऐसे अन्समझ नहीं हैं मैं जान्ता हूं कि वह क्रोध सै आग हो रहे होंगे तो भी आप के पहुँचते ही पानी हो जायँगे क्योंकि गरमी मैं धूप के सताए मनुष्य को छाया अधिक प्यारी होती है" मुंशी चुन्नीलाल नें कहा .

निदान सबकी सलाह सै मदनमोहन का ब्रजकिशोर के हाँ जाना ठैर गया . चुन्नीलाल नें पहले सै खबर भेज दी . ब्रजकिशोर वह खबर सुन कर आप आनें को तैयार होते थे इतनें मैं चुन्नीलाल के साथ लाला मदनमोहन वहाँ जा पहुँचे ब्रजकिशोर नें बड़ी उमंग सै इन्का आदर सत्कार किया .

"आप नें क्यों तकलीफ की ? मैं तो आप आनें को था" लाला ब्रजकिशोर नें कहा .

"हरकिशोर के धोके मैं आज आप के नाम एक चिठ्ठी भूल सै भेज दी गई थी इसलिये लाला साहब चलकर यह बात कहनें आए हैं कि आप उस्का कुछ खयाल न करें ." मुंशी चुन्नीलाल नें कहा .

"जो बात भूल सै हो और वह भूल अंगीकार कर ली जाय तो फिर उस्मैं ख़याल करने की क्या बात है ? और इस छोटे से काम के वास्तै लाला साहब को परिश्रम उठा कर यहाँ आने की क्या ज़रूरत थी ? लाला ब्रजकिशोर नें कहा .

"केवल इतना ही काम न था मुझ सै कल भी कुछ भूल हो गई थी . और मैं उस्का भी एवज़ दिया चाहता था" यह कह कर लाला मदनमोहन नें एक बहुमूल्य पाकटचेन (जो थोड़े दिन पहले हमल्टन कंपनी के हाँ

से फ़र्मायशी बन कर आई थी), अपने हाथ से ब्रजकिशोर की घड़ी में लगा दी.

"जी! यह तो आप मुझ को लज्जित करते हैं मेरा एवज़ तो मुझ को आप के मुख से यह बात सुन्ते ही मिल चुका. मुझ को आपके कहने का कभी कुछ रंज नहीं होता इसके सिवाय मुझे इस अवसर पर आप की कुछ सेवा करनी चाहिये थी सो मैं उल्टा आप से कैसे लूँ? जिस मामले में आप अपनी भूल बताते हैं केवल आप ही की भूल नहीं है आप से बढ़ कर मेरी भूल है और मैं उसके लिये अंतःकरण से क्षमा चाहता हूं" लाला ब्रजकिशोर कहनें लगे "मैं हर बात में आप से अपनी मर्ज़ी मूजिब काम कराने के लिये आग्रह करता था परंतु वह मेरी बड़ी भूल थी. वृद नें सच कहा है—

"सबको रस में राखिये अंत लीजिये नाहिं।
विष निकस्यो अति मथन ते रत्नाकर हू मांहिं॥"

मुझको विकालत के कारण बढ़ाकर बात करने की आदत पड़ गई है और मैं कभी, कभी अपना मतलब समझाने के लिये हरेक बात इतनी बढ़ाकर कहता चला जाता हूं कि सुन्नेंवाले उखता जाते हैं. मुझ को उस अवसर पर जितनीं बातें याद आती हैं मैं सब कह डाल्ता हूं परंतु मैं जान्ता हूं कि यह रीति बातचीत के नियमों से विपरीत है और इन्का छोड़ना मुझ पर फ़र्ज़ है बल्कि इन्हें छोड़ने के लिए मैं कुछ, कुछ उद्योग भी कर रहा हूं."

"क्या बातचीत के भी कुछ नियम हैं?" लाला मदनमोहन ने आश्चर्य से पूछा.

"हाँ! इसको बुद्धिमानों नें बहुत अच्छी तरह बरण किया है" लाला ब्रजकिशोर कहनें लगे "सुलभा नाम तपस्विनी नें राजा जनक से बचन के यह लक्षण कहे हैं—

"अर्थसहित, संशयरहित, पूर्वापर अविरोध।
उचित, सरल, संक्षिप्त पुनि कहों बचन परिशोध ॥*
प्राय कठिन अक्षर रहित, घृणा अमंगल हीन।
सत्य, काम, धर्मार्थयुत शुद्ध नियम आधीन ॥†
संभव कूट न अरुचिकर, सरस, युक्ति दरसाय।
निष्कारण अक्षर रहित, खंडितहू न लखाय ॥"‡

संसार में देखा जाता है कि कितनें ही मनुष्यों को थोड़ी सी मामूली बातें याद होती हैं जिन्हें वह अदल बदल कर सदा सुनाया करते हैं जिस्सै सुन्नें-वाला थोड़ी देर मैं उखता जाता है. बातचीत करनें की उत्तम रीति यह है कि मनुष्य अपनी बात को मौके सै पूरी कर के उस्पर अपना अपना विचार प्रगट करनें के लिए औरों को अवकाश दे और पीछे सै कोई नई चर्चा छेड़े; और किसी विषय मैं अपना विचार प्रगट करे तो उस्का कारण भी साथ हीं समझाता जाय, कोई बात सुनी सुनाई हो तो वह भी स्पष्ट कह दे हँसी की बातों मैं भी सचाई और गंभीरता को न छोड़े, कोई बात इतनी दूर तक खेंच कर न ले जाय जिस्सै सुन्नेंवालों को थकान मालूम हो; धर्म, दया, और प्रबंध की बातों मैं दिल्लगी न करे. दूसरे की मर्म की बातों को दिल्लगी में ज़बान पर न लाय. उचित अवसर पर वाजबी राह सै पूछ, पूछ कर साधारण बातों का जान लेना कुछ दूषित नहीं है परंतु टेढ़े और निरर्थक प्रश्न करके लोगों को तंग करना अथवा बकवाद कर के

---

*उपेतार्थमभिन्नार्थं न्यायवृत्तं न चाधिकं।
नाश्लक्ष्णं नचसंदिग्धं वक्ष्यामि परमंततः ॥

†नगुर्वक्षर संयुक्तं पराङ्मुख सुखंनच।
नानृतं नत्रिवर्गेण विरुद्धं नाप्यसंस्कृतम् ॥

‡नन्यूनं कष्टशब्दंवा विक्रमाभिहितं न च।
न शेषमनुकल्पेन निष्कारणमहेतुकम् ॥

औरों के प्राण खा जाना बहुत बुरी आदत है . बातचीत करनें की तारीफ़ यह है कि सबका स्वभाव पहिचान कर इस ढब सै बात कहै जिस्मैं सब सुन्नेंवाले प्रसन्न रहैं . जची हुई बात कहना मधुर भाषण सै बहुत बढ़ कर है खास कर जहाँ मामले की बात करनी हो . शब्द विन्यास के बदले सोच बिचार कर बातचीत करना सदैव अच्छा समझा जाता है और सवाल जवाब बिना मेरी तरह लगातार बात कहते चले जाना कहनेंवालों की सुस्ती और अयोग्यता प्रगट करता है . इसी तरह असल मतलब पर आनें के लिए बहुत सी भूमिकाओं सै सुन्नेंवाले का जी घबरा जाता है परंतु थोड़ी सी भूमिका बिना भी बात का रंग नहीं जमता इसलिए अब मैं बहुत सी भूमिकाओं के बदले आप सै प्रयोजन मात्र कहता हूं कि आप गई बीती बातों का कुछ खयाल न करें ?"

"जो कुछ भी खयाल होता तो लाला साहब इस तरह उठ कर क्या चले आते ? अब तो सब का आधार आप की कारगुज़ारी (अर्थात् कार्य-कुशलता) पर है ." मुंशी चुन्नीलाल नें कहा ।

"मेरे ऐसे भाग्य कहाँ ?" लाला ब्रजकिशोर प्रेम बिबस होकर बोले

"देखो हरकिशोर नें कैसा नीचपन किया है !" लाला मदनमोहन नें आँसू भर कर कहा .

"इस्सै बढ़ कर और क्या नीचपन होगा ?" लाला ब्रजकिशोर कहने लगे . "मैं नें कल उस्के लिए आप को समझाया था इस्सै मैं बहुत लज्जित हूँ मुझको उससमय तक उस्के यह गुन मालूम न थे अब ये अफ़वा किसी तरह झूंट हो जाय तो मैं उसै मज़ा दिखाऊँ ."

"निस्संदेह आप की तरफ़ सै ऐसी ही उम्मेद है ऐसे समय मैं आप साथ न दोगे तो और कौन देगा ?" लाला मदनमोहन नें करुणा सै कहा .

इससमय सब सै पहले अदालत की जवाबदिही का बंदोबस्त होना चाहिये

क्योंकि मुकद्दमों की तारीखें बहुत पास, पास लगी हैं" मुंशी चुन्नीलाल नें कहा .

"अच्छा आप अपना काग़ज़ तैयार करानें के वास्तै तीन चार गुमाश्ते तत्काल बढ़ा दें और अदालत की कारवाई के वास्तै मेरे नाम एक मुख़्त्यारनामा लिखते जायँ बस फिर मैं समझ लूँगा" लाला ब्रजकिशोर नें कहा .

निदान लाला मदनमोहन ब्रजकिशोर के नाम मुख़्त्यारनामा लिख कर अपनें मकान को रवाने हुए .

प्रकरण ३०

नैराश्य (नाउम्मेदी)

फलहीन महीरुह कों खगबृन्द तजैं बन कों मृग भस्म भए ।
मकरन्द पिए अरविन्द मिलिन्द तजैं सर सारस सूख गए ॥
धनहीन मनुष्य तजैं गणिका नृप कों सठ सेवक राज हए ।
बिन स्वारथ कौन सखा जग मैं ? सब कारज के हित हीत भए ॥*

(भर्तृहरि)

संध्या समय लाला मदनमोहन भोजन करनें गए तब मुंशी चुन्नीलाल

---

*वृक्षं क्षीणफलं त्यजन्ति विहगा दग्धं बनान्तं मृगाः ।
पुष्पं पीतरसं त्यजन्ति मधुपा शुष्कं सरः सारसाः ॥
निर्द्रव्यं पुरुषं त्यजन्ति गणिका भ्रष्टं नृपं मन्त्रिणः ।
सर्वः कार्यवशाज्जनो भिरमते कः कस्यनें बल्लभः ॥

और मास्टर शिंभूदयाल को खुल कर बात करने का अवकाश मिला. वह दोनों धीरे, धीरे बतलानें लगे.

"मेरे निकट तुम नें ब्रजकिशोर से मेल करनें में कुछ बुद्धिमानी नहीं की. बैरी के हाथ मैं अधिकार दे कर कोई अपनी रक्षा कर सक्ता है?" मास्टर शिंभूदयाल नें कहा.

"क्या करूँ? इस्समय इस युक्ति के सिवाय अपने बचाव का कोई रस्ता न था. लोगों की नालिशें हो चुकीं, अपनें भेद खुलने का समय आ गया. ब्रजकिशोर सब बातों सै भेदी थे इसलिये मैं ने उन्हीं के ज़िम्मे इन्बातों के छिपानें का बोझ डाल दिया कि वह अपनें विपरीत कुछ न करने पायँ." मुंशी चुन्नीलाल ने शिंभूदयाल की बात उड़ाकर कहा.

"परंतु अब ब्रजकिशोर तुम्हारा भेद खोल दें तो तुम कैसे अपना बचाव करो? हर काम मैं आदमी को पहले अपने निकास का रस्ता सोचना चाहिये. अभिमन्यु की तरह धुन बाँधकर चकाबू मैं घुसे चले जाओगे तो फिर निकलना बहुत कठिन होगा. पतंग उड़ा कर डोर अपने हाथ न रक्खोगे तो उसके हाथ लगने की क्या उम्मेद रहेगी?" मास्टर शिंभूदयाल ने कहा.

मैं ने अपने निकास की उम्मेद केवल ब्रजकिशोर के विश्वास पर बांधी है परंतु उन्की दो एक बातों सै मुझ को अभी संदेह होने लगा. प्रथम तो उन्होंनें इस गए बीते समय मैं मदनमोहन से मेल करने मैं क्या फ़ायदा बिचारा? और महन्ताने के लालच सै मेल किया भी था तो ऐसी जल्दी काग़ज़ तैयार करने की क्या ज़रूरत थी? मैं जान्ता हूँ कि वह नालिश करने वालों सै जवाबदिही करने के वास्तै यह उपाय करते होंगे परंतु जब वह जवाबदिही करैंगे तो नालिश करनेंवालों की तरफ़ सै हमारा भेद अपने आप खुल जायगा और जिस बात को हम दूर फेंका चाहते हैं वही पास आ जावेगी" मुंशी चुन्नीलाल ने कहा.

वकीलों के यही तो पेंच होते हैं जिस बात को वह अपनी तरफ़ से

नहीं कहा चाहते उल्टे सीधे सवाल करके दूसरे के मुख से कहा लेते हैं और आप भले के भले बनें रहते हैं. बिचारो तो सही हमनें ब्रजकिशोर के साथ कौन्सी भलाई की है जो वह हमारे साथ भलाई करेंगे? वकीलों के ढंग बड़े पेचीदा होते हैं वह एक मुकद्दमे मैं तुम्हारे वकील बनते हैं तो दूसरे मैं तुम्हारे बैरी के वकील बन जाते हैं परंतु अपना मतलब किसी तरह नहीं जानें देते ."

"सच है इस काम मैं लाला ब्रजकिशोर की चाल पर अवश्य संदेह होता है परंतु क्या करें? अपने वकील न करेंगे तो वह प्रतिपक्षी के वकील हो जायंगे और अपना भेद खोलनें मैं किसी तरह की कसर न रक्खेंगे" मुंशी चुन्नीलाल कहने लगा "असल तो यह है कि अब यहाँ रहनें मैं कुछ मज़ा नहीं रहा प्रथम तो आगे को कोई बुर्द नहीं दिखाई देती फिर जिन लोगों सै हज़ारों रुपे खाये पीये हैं उन्हीं के सामनें होकर विवाद करना पड़ेगा और जब हम उन्सै विवाद करेंगे तो वह हम सै मुलाहज़ा क्यों रक्खेंगे, हमारा भेद क्यों छिपावेंगे? कभी कभी हम उन्सै लाला साहब के हिसाब मैं लिखाकर बहुत सी चीज़ें घर ले गए हैं इसी तरह उन्के यहाँ जमा करानें के वास्ते लाला साहब से जो रुपे ले गए थे वह उन्के यहाँ जमा नहीं कराए. ऐसी रक़मों की बाबत पहले, पहले तो यह बिचार था कि इस्समय अपना काम चला लें फिर जहाँ की तहाँ पहुँचा देंगे परंतु पीछे सै न तो अपनें पास रुपे की समाई हुई न कोई देखनें भालनें वाला मिला बस सब रक़में जहाँ की तहाँ रह गईं अब अदालत मैं यह भेद खुलेगा तो कैसी आफ़त आवेगी? और हम लाला साहब की तरफ़ सै विवाद करेंगे तो यह भेद कैसे छिप सकेगा? क्या करें? कोई सीधा रस्ता नहीं दिखाई देता ."

यदि ऐसै ही पाप करके लोग बच जाया करते तो संसार मैं पाप पुण्य का बिचार काहे को रहता?

"मुझ को तो अब सीधा रस्ता यही दिखाई देता है कि जो हाथ लगे

ले लिवा कर यहाँ से रफूचक्कर हो. ब्रजकिशोर तुम्हारे भाग्य से इस्समय आ फंसा है इस्के सिर मुफ्त का छप्पर रख कर अलग हो बैठो" मास्टर शिंभूदयाल कहने लगा "जिस तरह अलिफ़लैला मैं अबुलहसन और शम्सुलून्निहार के परस्पर प्रेम बिबस हुए पीछे बखेड़ा उठने की सूरत मालूम हुई तब उन्का मध्यस्थ इब्नतायर उन्को छिटका कर अलग हो बैठा और एक जौहरी नें मुफ्त मैं वह आफ़त अपने सिर लेकर अपने आप को जंजाल मैं फँसा दिया. इसी तरह इस्समय तुम्हारी और ब्रजकिशोर की दशा है. ब्रजकिशोर को काम सोंप कर तुम इस्समय अलग हो जाओ तो सब बदनामी का ठीकरा ब्रजकिशोर के सिर फूटेगा और दूध मलाई चखनेंवाले तुम रहोगे."

"यह तो बड़े मज़े की बात है ब्रजकिशोर पर तो हम यह बोझ डालेंगे कि तुम्हारे लिए हम अलग होते हैं पीछे से हमारा भेद न खुलने पाय. लेनदारों से यह कहेंगे कि तुम्हारे वास्ते लाला साहब से हमारी तकरार हो गई उन्होंनें हमारा कहा नहीं माना अब तुम भी कहीं हम को धोका न देना" मुंशी चुन्नीलाल नें कहा.

"आज तो दोनों मैं बड़ी घूट घूट कर बातें हो रही हैं" लाला मदनमोहन नें आते ही कहा. "तुम्हारी सलाह कभी पूरी नहीं होती न जानें कौन्से किले लेनें का बिचार किया करते हो!"

"जी हुज़ूर! कुछ नहीं, मिस्टर रसल के मामले की चर्चा थी उस्की जायदाद के नीलाम की तारीख मैं केवल दो दिन बाकी हैं परंतु अब तक रुपे का कुछ बंदोबस्त नहीं हुआ" मुंशी चुन्नीलाल नें तत्काल बात पलट कर कहा.

"इस बिना बिचारी आफ़त का हाल किस्को मालूम था? तुम उन्हें लिख दो कि जिस्तरह हो सके थोड़े दिन की मुहलत ले लें, हम उस्के भीतर भीतर रुपे का प्रबंध अवश्य कर देंगे" लाला मदनमोहन नें कहा

"मुहलत पहले कई बार ले चुके हैं इस्सै अब मिलनी कठिन है परंतु इस्समय कुछ गहना गिरवी रख कर रुपे का प्रबंध कर दिया जाय तो उस्की जायदाद बनी रहै और धीरे धीरे रुपया चुका कर गहना भी छुड़ा लिया जाय" मास्टर शिंभूदयाल नें जाते जाते सिप्पा लगानें की युक्ति की. उस्का मनोर्थ था कि यह रक़म हाथ लग जाय तो किसी लेनदार को देकर भली भाँति लाभ उठायें. अथवा मदनमोहन मांगनें योग्य न रहै तो सब की सब रक़म आप ही प्रसाद कर जायें, अथवा किसी के यहाँ गिरवी भी धरें तो लेनदारों को कुर्की करानें के लिये उस्का पता बता कर उन्सै भली भाँति हाथ रंगैं, अथवा माल अपनें नीचे दबे पीछे और किसी युक्ति सै भरपूर फ़ायदे की सूरत निकालें. परंतु मदन-मोहन के सौभाग्य सै इस्समय लाला ब्रजकिशोर आ पहुँचे इसलिये उस्की कुल दाल न गली.

'क्या है? किस काम के लिये गहना चाहते हो?" लाला ब्रज-किशोर नें शिंभूदयाल की उछटती सी बात सुनी थी इस्पर आते ही पूछा.

"जी कुछ नहीं, यह तो मिस्टर रसल की चर्चा थी" मुंशी चुन्नी-लाल नें बात उड़ानें के वास्ते गोल कहा.

"उस्का क्या देन लेन है? उस्का मामला अब तक अदालत मैं तो नहीं पहुँचा?" लाला ब्रजकिशोर पूछनें लगे.

"वह एक नील का सौदागर है और उस्पर बीस, पचीस हज़ार रुपे अपनें लेनें हैं. इस्समय उस्की नील की कोठी और कुछ बिस्वे बिस्वांसी दूसरे की डिक्री मैं नीलाम पर चढ़े हैं, और नीलाम की तारीख़ मैं केवल दो दिन बाकी हैं नीलाम हुए पीछै अपनें रुपे पटनें की कोई सूरत नहीं मालूम होती इसलिए ये लोग कहते थे कि गहना गिरवी रखकर उस्का क़र्ज़ चुका दो परंतु इतना बंदोबस्त तो इस्समय किसी तरह नहीं हो सक्ता" लाला मदनमोहन नें लजाते लजाते कहा.

"अभी आप को अपने क़र्ज़ का प्रबंध करना है और यह मामला केवल मुहलत लेनें सै कुछ दिन टल सक्ता है" लाला ब्रजकिशोर नें अपने मन का संदेह छिपा कर कहा.

"मैं जान्ता हूँ कि मेरा क़र्ज़ चुकानें के लिए तो मेरे मित्रों की तरफ़ सै आजकल मैं बहुत रुपया आ पहुँचेगा" लाला मदनमोहन नें अपनी समझ मूजिब जवाब दिया.

"और मुहलत कई बार ले ली गई है इस्सै अब मिलनी कठिन है" मास्टर शिंभूदयाल बोले.

"मैं खयाल करता हूँ कि अदालत के विश्वास योग्य कारण बता दिया जायगा तो मुहलत अवश्य मिल जायगी" लाला ब्रजकिशोर नें कहा.

"और जो न मिली ?" शिंभूदयाल हुज्जत करनें लगा.

"तो मैं अपनी ज़ामिनी देकर जायदाद नीलाम न होनें दूंगा" लाला ब्रजकिशोर नें जवाब दिया. और अब शिंभूदयाल को बोलनें की कोई जगह न रही.

"कल कई मुकद्मों की तारीखैं लग रही हैं और अब तक मैं उन्के हाल सै कुछ भेदी नहीं हूँ तुमको अवकाश हो तो लाला साहब सै आज्ञा लेकर थोड़ी देर के लिए मेरे साथ चलो" लाला ब्रजकिशोर नें मुंशी चुन्नीलाल सै कहा.

"हाँ, हाँ तुम साथ जाकर सब बातें अच्छी तरह समझा आओ" लाला मदनमोहन नें मुंशी चुन्नीलाल को हुक्म दिया.

"आप इससमय किसी काम के लिए किसी को अपना गहना न दें, ऐसे अवसर पर ऐसी बातों म तरह तरह का डर रहता है" लाला ब्रजकिशोर नें जाती बार मदनमोहन सै संकेत मैं कहा और मुंशी चुन्नीलाल को साथ लेकर रुखसत हुए.

आज लाला मदनमोहन की सभा मैं वह शोभा न थी केवल चुन्नीलाल शिंभूदयाल आदि दो चार आदमी दृष्टि आते थे परंतु उन्के मन भी बुझे हुए थे . हँसी चुहल की बातें किसी के मुख सै नहीं सुनाई देती थीं खास्कर ब्रजकिशोर और चुन्नीलाल के गए पीछे तो और भी सुस्ती छा गई मकान सुन्सान मालूम होनें लगा . शिंभूदयाल ऊपर के मन सैं हँसी चुहल की कुछ कुछ बातें बनाता था परंतु उन्मैं मोम के फूल की तरह कुछ रस न था . निदान थोड़ी देर इधर उधर की बातें बना कर सब अपनें अपनें रस्ते लगे और लाला मदनमोहन भी मुर्झाए पलँग पर जा लेटे .

प्रकरण ३१

चालाक की चूक

सुख दिखाय दुख दीजिए खल सों लरिये काहि ।
जो गुर दीये ही मरै क्यों विष दीजे ताहि ? ॥ वृंद

"लाला मदनमोहन का लेन देन किस्तरह पर है ?" ब्रजकिशोर नें मकान पर पहुँचते ही चुन्नीलाल सै पूछा .

"बिगत वार हाल तो कागज़ तैयार होनें पर मालूम होगा परंतु अंदाज़ यह है कि पचास हज़ार के लगभग तो मिस्टर ब्राइट के देनें होंगे, पंदरह बीस हज़ार आगा हसन जान मुहम्मद जान वगैरे खेरीज सौदागरों के देनें होंगे, दस बारह हज़ार कलकत्ते, मुंबई के सौदागरों के देनें होंगे, पचास हज़ार मैं निहालचंद, हरकिशोर वगैरे बाज़ार के

दुकानदार और दिसावरों के आढ़तिये आ गए" मुंशी चुन्नीलाल ने जवाब दिया.

"और लेनें किस, किस पर हैं ?" ब्रजकिशोर नें पूछा.

"बीस पचीस हज़ार तो मिस्टर रसल की तरफ़ बाकी होंगे, दस बारह हज़ार आगरे के एक जौहरी मैं जवाहरात की बिक्री के लेनें हैं, दस पंदरह हज़ार यहाँ के बाज़ार वालों मैं और दिसावरों के आढ़तियों मैं लेने होंगे पाँच, सात हज़ार खेरीज लोगों मैं और नौकरों मैं बाकी होंगे, आठ दस हज़ार का व्यापार सीगे का माल मौजूद है, पाँच हज़ार रुपे अलीपुर रोड के ठेके बाबत सरकार से मिलने वाले हैं और रहने का मकान, बाग़, सवारी, सरसामान वगैरे सब इन्सै अलग है" मुंशी चुन्नीलाल ने जवाब दिया.

"इस्तरह अटकल पच्चू हिसाब बताने सै कुछ काम नहीं चल्ता जब तक लेने देने का ठीक हाल मालूम न हो फैस्ला किस तरह किया जाय ? तुम सबेरे लाला जवाहरलाल को मेरे पास भेज देना मैं उस्सै सब हाल पूछ लूँगा. ऐसे अवसर पर असावधानी रखने सै देना सिर पर बना रहता है और लेना मिट्टी हो जाता है" ब्रजकिशोर ने कहा.

"कागज़ बहुत दिनों का चढ़ रहा है और बहुत से जमा ख़र्च होने बाकी हैं इसलिए काग़ज़ सै कुछ नहीं मालूम हो सक्ता" मुंशी चुन्नीलाल ने बात उड़ाने की तजबीज की.

"कुछ हर्ज़ नहीं, मैं लोगों सै जिरह के सवाल कर के अपना मतलब निकाल लूँगा मुझको अदालत मैं हर तरह के मनुष्यों सै नित्य काम पड़ता है" लाला ब्रजकिशोर कहने लगे "तुम ने आज सबेरे मुझ से सफ़ाई करनें की बात की थी परंतु अभी से उस्मैं अंतर आने लगा मैं वहाँ पहुँचा उस्समय तुम लोग लाला साहब सै गहना लेने की तजबीज कर रहे थे परंतु मेरे पहुँचते ही वह बात उड़ानें लगे मुझ को कुछ का कुछ

समझानें लगे सो मैं ऐसा अनसमझ नहीं हूँ . यदि मेरा रहना तुम को असह्य है, मेरे मेल सै तुम्हारी कमाई मैं फ़र्क़ आता है, मेरे मेल करानें का तुम को पछतावा होता है तो मैं तुम्हारी मारफ़त मेल कर के तुम्हारा नुक्सान हरगिज़ नहीं किया चाहता, लाला साहब सै मेल नहीं रक्खा चाहता तुम अपना बंदोबस्त आप कर लेना".

"आप बृथा खेद करते हैं . मैं नें आप सै छिप कर कोन्सा काम किया ? आप के मेल सै मेरी अप्रसन्नता कैसे मालूम हुई ? आप पहुँचे जब निस्संदेह शिंभूदयाल नें मिस्टर रसल के लिए गहनें की चर्चा छेड़ी थी परंतु वह कुछ पक्की बात न थी और आप की सलाह बिना किसी तरह पूरी नहीं पड़ सक्ती थी आप सै पहले बात करनें का समय नहीं मिला था इसी लिये आप के साम्ने बात करनें मैं इतना संकोच हुआ था परंतु आप को हमारी तरफ़ सै अब तक इतना संदेह बन रहा है तो आप लाला साहब के छोड़नें का बिचार क्यों करते हैं आप के लिए हम ही अपनी आवाजाई बंद कर देंगे". मुंशी चुन्नीलाल नें कहा .

"सादी नें सच कहा है "वृद्धा वेश्या तपस्विनी न होय तो और क्या करे ? उतरा सेनक किसी का क्या बिगाड़ कर सक्ता है कि साधु न बनें ?"* लाला ब्रजकिशोर मुस्करा कर कहनें लगे "मैं किसी काम मैं किसी का उपकार नहीं सहा चाहता यदि कोई मुझ पर थोड़ा सा उपकार करे तो मैं उस्सै अधिक करनें की इच्छा रखता हूँ फिर मुझ को इस थोथे काम मैं किसी का उपकार उठानें की क्या ज़रूरत है ? जो तुम महरबानी कर के मेरा पूरा महन्ताना मुझ को दिवा दोगे तो मैं इसी मैं तुम्हारी बड़ी सहायता समझूँगा और प्रसन्नता सै तुम्हारा कमीशन

* क़हबए पीर अज़ नाबकारी चे कुनद कि तोबा नकुद ?
ब शहनए माज़ूल अज़ मर्दुम आज़ारी .

तुम्हारी नज़र करूँगा." लाला ब्रजकिशोर इस बातचीत मैं ठेठ सै अपनी सच्ची सावधानी के साथ एक दाव खेल रहे थे . उन्नें इस युक्ति सै बातचीत की थी जिस्सै उन्का कुछ स्वार्थ न मालूम पड़े और चुन्नीलाल आप सै आप मदनमोहन को छोड़ जानें के लिए तैयार हो जाय, पास रहनें मैं अपनी हानि, और छोड़ जानें मैं अपना फ़ायदा समझे बल्कि जाते, जाते अपनें फ़ायदे कें लालच सै ब्रजकिशोर का महन्ताना भी दिवाता जाय .

"आप अपना महन्ताना भी लें और लाला मदनमोहन के हां का कुल अख़्त्यार भी लें हम को तो हर भाँति आप की प्रसन्नता करनी है हम,नें तो आप की शरण ली है हमारा तो यही निवेदन है कि इस्समय आप हमारी इज्जत बचा लें" मुंशी चुन्नीलाल नें हार मान कर कहा . वह भीतर सै चाहे जैसा पापी था परंतु प्रगट मैं अपनी इज्जत खोनें सै बहुत डरता था, संसार मैं बड़ा भलामानस बना फिरता था और इसी भलमनसात के नीचे उस्नें अपनें सब पाप छिपा रक्खे थे .

"इन बातों सै इज्जत का क्या संबंध है ! मुझ सै हो सकेगा जहाँ तक मैं तुम्हारी इज्जत पर घब्बा न आनें दूंगा परंतु इस कठिन समय मैं तुम मदनमोहन के छोड़नें का विचार करते हो इस्मैं मुझ को तुम्हारी भूल मालूम होती है ऐसा न हो कि पीछे सै तुम्हें पछताना पड़े . चारों तरफ़ दृष्टि रखकर बुद्धिमान मनुष्य काम किया करते हैं". लाला ब्रजकिशोर ने युक्ति सै कहा .

"तो क्या इस्समय आप की राय मैं लाला मदनमोहन के पास सै हमारा अलग होना अनुचित है ?" चुन्नीलाल नें ब्रजकिशोर पर बोझ डाल कर पूछा .

"मैं साफ़ कुछ नहीं कह सक्ता क्योंकि औरों की निस्बत वह अपना हानि लाभ आप अधिक समझ सक्ते हैं" लाला ब्रजकिशोर नें भरम मैं कहा .

"तो खैर ! मेरी तुच्छ बुद्धि मैं इस्समय हमारी निस्बत आप लाला मदनमोहन की अधिक सहायता कर सक्ते हैं और इसी मैं हमारी भी भलाई है" मुंशी चुन्नीलाल बोले.

"तुम नें इन दिनों मैं नवल और जुगल (ब्रजकिशोर के छोटे भाई) की भी परीक्षा ली या नहीं ! तुम गए तब वह बहुत छोटे थे परंतु अब कुछ, कुछ होशियार होते चले हैं" लाला ब्रजकिशोर नें पहली बात बदल कर घर बिध की चर्चा छेड़ी.

मैं ने आज उन्को नहीं देखा परंतु मुझ को उन्की तरफ़ सै भली भाँत विश्वास है भला आप की शिक्षा पाए पीछै किसी तरह की कसर रह सक्ती है !" मुंशी चुन्नीलाल नें कहा.

"भाई ! तुम तो फिर खुशामद की बातें करनें लगे यह रहनें दो घर मैं खुशामद की क्या ज़रूरत है ?" लाला ब्रजकिशोर नें नरम ओलंभा दिया और चुन्नीलाल उन सै रुखसत होकर अपनें घर गया.

प्रकरण ३२

अदालत

काम परे ही जानिए जो नर जैसो होय।
बिन ताये खोटो खरो गहनों लखै न कोय॥ बृंद।

अदालत मैं हाकिम कुर्सी पर बैठे इजूलास कर रहे हैं. सब अहलकार अपनी, अपनी जगह बैठे हैं निहालचंद मोदी का मुकद्दमा हो रहा है. उस्की तरफ़ सै लतीफ़ हुसैन वकील हैं. मदनमोहन की तरफ़ सै लाला ब्रजकिशोर जवाबदिही करते हैं. ब्रजकिशोर ने बचपन मैं

मदनमोहन के हां बैठकर हिंदी पढ़ी थी इस वास्तै वह सराफ़ी काग़ज़ की रीति भांति अच्छी तरह जान्ता था और उस्नें मुकद्दमा छिड़नें सै पहले मामूली फ़ीस देकर निहालचंद के बही खाते अच्छी तरह देख लिये थे. इस मुकद्दमें मैं कानूनी बहस कुछ न थी केवल लेन देन का मामला था.

ब्रजकिशोर नें निहालचंद को गवाह ठैरा कर उस्सै जिरह के सवाल पूछनें शुरू किये "तुम्हारा लेन देन रुक्के पर्चों सै है ?"

जवाब "नहीं".

"तो तुम किस तरह लेन देन रखते हो ?"

ज० "नोकरों की मारफ़त"

"तुमको कैसे मालूम होता है कि यह आदमी लाला मदनमोहन की तरफ़ सै माल लेनें आया है और उन्हीं के हां ले जायगा ?"

"हम यह नहीं जान सक्के परंतु लाला साहब का हुक्म है कि वह लोग जो जो सामान मांगें तत्काल दे दिया करो"

"अच्छा ! वह हुक्म दिखाओ !"

ज० "वह हुक्म लिखकर नहीं दिया था. ज़बानी है"

"अच्छा ! वह हुक्म किस्के आगे दिया था ?"—"किस किस के लिए दिया था !"—"कितनें दिन हुए ?"—"कौन्सा समय था ?"—कौन्सी जगह थी ?"—"क्या कहा था ?"

"बहुत दिन की बात है मुझ को अच्छी तरह याद नहीं".

"अच्छा ! जितनी बात याद हो वही बतलाओ !"

ज० "मैं इस्समय कुछ नहीं कह सक्ता."

"तो क्या किसी सै पूछ कर कहोगे ?"

ज० "जी नहीं याद करके कहूंगा."

"अच्छा ! तुम्हारा हिसाब होकर बीच मैं बाकी निकल चुकी है ?"

ज० "नहीं"

"तो तुमनें साल की साल बाकी निकाल कर ब्याज पर ब्याज कैसे लगा लिया ?"

"साहूकारे का दस्तूर यही है."

"साहूकारे मैं तो साल की साल हिसाब होकर ब्याज लगाया जाता है फिर तुम नें हिसाब क्यों नहीं किया ?"

ज० "अवकाश नहीं मिला"

"तुम्हारी बहियों मैं उदरत खाते सै. क्या मतलब है ?"

"लाला मदनमोहन के लेन देन सिवाय आप और किसी खाते का सवाल न करें" निहालचंद के वकील नें कहा .

"मुझ को इस खाते सै लाला मदनमोहन के लेन देन का विशेष संबंध मालूम होता है इसी से मैं नें यह सवाल किया है" लाला ब्रजकिशोर नें जवाब दिया और परिणाम मैं हाकिम के हुक्म सै यह सवाल पूछा गया .

"जो रक़में बही खाते मैं हिसाब पक्का कर के लिखी जानें के लायक़ होती हैं और तत्काल उन्का हिसाब पक्का नहीं हो सक्ता वह रक़में हिसाब की सफ़ाई होनें तक इस खाते मैं रहती हैं और सफ़ाई होनें पर जहां की तहां चली जाती हैं" निहालचंद नें जवाब दिया .

"अच्छा ! तुम्हारे हां जिन मितियों मैं बहुत करके लाला मदनमोहन के नाम बड़ी बड़ी रक़में लिखी गई हैं उन्हीं मितियों मैं उदरत खाते कुछ रक़म जमा की गई है और फिर कुछ दिन पीछे उदरत खाते नाम लिखकर वह रक़में लोगों को हाथों हाथ दे दी गई हैं या उन्के खाते मैं जमा कर दी गई हैं इस्का क्या सबब है ?" लाला ब्रजकिशोर नें पूछा .

"मैं पहले कह चुका हूं कि जिन लोगों की रक़में अलल हिसाब आती जाती हैं या जिन्का लेन देन थोड़े दिन के वास्तै हुआ करता है उन्की रक़म कुछ दिन के लिए इस तरह पर उदरत खाते मैं रहती है परंतु मैं किसी ख़ास रक़म का हाल बही देखे बिना नहीं बता सक्ता." निहालचंद नें जवाब दिया .

"और यह भी ज़रूर है कि जिस दिन लाला मदनमोहन का काम पड़े उस दिन की यह कारवाई अयोग्य समझी जाय ?" निहालचंद के वकील नें कहा.

"तो ये क्या ज़रूर है कि जिस मिती मैं लाला मदनमोहन के नाम बड़ी रक़म लिखी जाय उसी मिती मैं कुछ रक़म उदरत खाते जमा हो और थोड़े दिन पीछे वह रक़म जैसी की तैसी लोगों को बांट दी जाय ?" लाला ब्रजकिशोर नें जवाब दिया.

"देखो जी ! इस मुकद्दमे मैं किसी तरह का फ़रेब साबित होगा तो हम उसै तत्काल फ़ौजदारी सुपुर्द कर देंगे" हाकिम नें संदेह करके कहा.

"हजूर हम को एक दिन की मुहलत मिल जाय हम इन सब बातों के लिए लाला ब्रजकिशोर साहब की दिलजमई अच्छी तरह कर देंगे" निहालचंद के वकील नें हाकिम सै अर्ज़ की और ब्रजकिशोर नें इस बात को खुशी सै मंजूर किया.

उदरत खाते सै लाला मदनमोहन के नोकरों की कमीशन वगैरे का हाल खुल्ता था, जहाँ रक़म जमा थी किस्सै आई ? किस बाबत आई ? इस्का कुछ पता न था परंतु जहाँ रक़म दी गई मदनमोहन के नोकरों का अलग अलग नाम लिखा था और हिसाब लगानें सै उस्का भेद भाव अच्छी तरह मिल सक्ता था. जिन नोकरों के खाते थे उन्के खातों मैं यह रक़में जमा हुई थीं और कानून के अनुसार ऐसे मामलों मैं रिश्वत लेनें देनें वाले दोनों अपराधी थे परंतु ब्रजकिशोर के मन मैं इन्के फँसानें की इच्छा न थी वह केवल नमूना दिखा कर लेनदारों की हिम्मत घटाया चाहता था. उस्नें ऐसी लपेट सै सवाल किये थे कि हाकिम को भारी न लगे और लेनदारों के चित्त मैं गढ़ जाँय सो ब्रजकिशोर की इतनी ही पकड़ सै बहुत से लेनदारों के छक्के छूट गये.

कितनें ही छिपे लुच्चे मदनमोहन की बेखबरी और काग़ज़ का अंधेर लेनदारों का हुल्लड़, मुकदमों के झटपट हो जाने की उम्मेद, मदनमोहन

के नोकरों की स्वार्थपरता के भरोसे पर कुछ कुछ बढ़ाकर दावे कर बैठे थे यह सूरत देखते ही उन्के पाँव तले की ज़मीन निकल गई . मिस्टर ब्राइट की कुर्की मैं सब माल अस्बाब के कुर्क हो जानें सै लेनदारों को अपनी रक़म के पटने का संदेह तो पहले ही हो गया था . अब किसी तरह की लपेट आ जानें पर अपनी इज्जत खो बैठने का डर मालूम होनें लगा "नमाज़ को गए थे रोज़े गले पड़े" .

सिवाय मैं यह चर्चा सुनाई दी कि मदनमोहन को और, और दिसावरों का बहुत देना है यदि सब माल जायदाद नीलाम होकर हिस्सै रसदी सब लेनदारों को दिया गया तो भी बहुत थोड़ी रक़म पल्ले पड़ेगी . ब्रजकिशोर सै लोग इस्का हाल पूछते थे तब वह अजान बन्कर अलग हो जाता था इस्सै लोगों की और भी छाती बैठी जाती थी. जिस्तरह पल भर मैं मदनमोहन के दिवाले की चर्चा चारों तरफ़ फैल गई थी इसी तरह अब यह सब बातें अफ़वा की ज़हरी हवा मैं मिलकर चारों तरफ़ उड़ने लगीं .

मोदी के मुकद्मे सिवाय आज कोई पेदचार मुकद्मा अदालत मैं न हुआ जिन्के मुकद्मों मैं आज की तारीख़ लगी थी उन्नें भी निहालचंद के मुकद्में का परिणाम देखने के लिये अपने मुकद्में एक, एक दो, दो दिन आगे बढ़वा दिये .

जब इस काम सै अवकाश मिला तो लाला ब्रजकिशोर नें अदालत सै अर्ज़ करके मिस्टर रसल की जायदाद नीलाम होने की तारीख़ आगे बढ़वा दी परंतु यह बात ऐसी सीधी थी कि इस्के लिये कुछ विशेष परिश्रम न उठाना पड़ा .

लाला ब्रजकिशोर की इस्समय की चाल देखकर बड़ा आश्चर्य होता है . सब लेनदार चारों तरफ़ सै निराश होकर उस्के पास आते हैं परंतु वह आप उन्सै अधिक निराश मालूम होता है वह उन्के साथ बड़ी बेपरवाई सै बातचीत करता है उन्को हर तरह के चढ़ाव उतार दिखाता है जब वह लोग अपना पीछा छुड़ानें के लिये उस्सै बहुत आधीनता करते हैं तो

वह बड़ी बेपरवाई से उन्के साथ लगाव की बात करता है परंतु जब वह किसी बात पर जमते हैं तो वह आप कच्चा पक्का होनें लगता है उल्टी सीधी बात करके अपनी बात से निकला चाहता है और जब कोई बात मंजूर करता है तो बड़ी आनाकानी से ज़बान निकलनें के कारण उस्को यह बोझ उठाना पड़ता हो ऐसा रूप दिखाई देता है. कचहरी से लौटती बार उस्नें घंटे डेढ़ घंटे मिस्टर ब्राइट से एकांत मैं बातचीत की. अदालत के कामों मैं उस्का वैसा ही उद्योग दिखाई देता है परंतु दर असल वह किसी अत्यंत कठिन काम मैं लग रहा हो ऐसा ढंग मालूम होता है उस्के पहले सब काम नियमानुसार दिखाई देते थे परंतु इस्समय कुछ क्रम नहीं रहा इस्समय उस्के सब काम परस्पर विपरीत दिखाई देते हैं इसलिए उस्का निज भाव पहचान्ना बहुत कठिन है परंतु हम केवल इतनी बात पर संतोष बाँध बैठे हैं कि जब उस्की कारवाई का परिणाम प्रगट हो जायगा तो वह अपना भाव सर्व साधारण की दृष्टि से कैसे गुप्त रख सकेगा ?

प्रकरण ३३

मित्र परीक्षा.

धन न भये हू मित्र की सज्जन करत सहाय ।
मित्र भाव जाचे बिना कैसे जान्यो जाय ॥*

(विदुर प्रजागरे)

---

* अर्चयेदेव मित्राणि सनिवासतिवां घने ।
नानर्थं यन् प्रजानाति मित्राणां सारफल्गुतां ॥

आज तो लाला ब्रजकिशोर की बातों मैं लाला मदनमोहन की बात ही भूल गए थे .

लाला मदनमोहन के मकान पर वैसी ही सुस्ती छा रही है केवल मास्टर शिंभूदयाल और मुंशी चुन्नीलाल आदि तीन, चार आदमी दिखाई देते हैं, परंतु उन्का भी होना न होना एक सा है वह भी अपने निकास का रस्ता ढूँढ़ रहे हैं . हम अब तक लाला मदनमोहन के बाकी मुसाहबों की पहचान करानें के लिए अवकाश देख रहे थे इतनें मैं उन्नें मदनमोहन का साथ छोड़ कर अपनी पहिचान आप बता दी . हरगोविंद और पुरुषोत्तमदास नें भी कल-सै सूरत नहीं दिखाई थी . बाबू बैजनाथ को बुलानें के लिए आदमी गया था परंतु उन्हैं आनें का अवकाश न मिला . लाला हरदयाल साहब के नाम कुछ दिन के लिए थोड़े रुपे हाथ उधार देनें को लिखा गया था परंतु उन्का भी जवाब नहीं आया . लाला मदनमोहन का ध्यान सब सै अधिक डाक की तरफ़ लग रहा था उन्को विश्वास था कि मित्रों की तरफ़ सै अवश्य अवश्य सहायता मिलेगी बल्कि कोई, कोई तो तार की मारफ़त रुपे भिजवायँगे .

"क्या करें ? बुद्धि काम नहीं करती" मास्टर शिंभूदयाल नें समय देख कर अपने मतलब की बात छेड़ी "इन्हीं दिनों मैं यहाँ काम है और इन्हीं दिनों मदरसे मैं लड़कों का इम्तहान है कल मुझ को वहाँ पहुँचनें मैं पाव घंटे की देर हो गई थी इस्पर हेडमास्टर सिर हो गए . वहाँ न जायँ तो रोज़गार जाता है यहाँ न रहैं तो मन नहीं मान्ता (मदनमोहन सै) आप आज्ञा दें जैसा किया जाय".

"ख़ैर ? यहाँ का तो होना होगा सो हो रहैगा तुम अपना रोज़गार न खोओ" लाला मदनमोहन नें रुखाई सै जवाब दिया .

"क्या करूँ ? लाचार हूँ" मास्टर शिंभूदयाल बोले "यहाँ आए बिना तो मन नहीं मानेंगा परंतु हाँ कुछ कम आना होगा आठ पहर की हाज़री न सध सकेगी मेरी देह मदरसे मैं रहेगी परंतु मेरा मन यहाँ लगा रहैगा".

"बस आप की इतनी ही महरबानी बहुत है" लाला मदनमोहन नें ज़ोर देकर कहा. निदान मास्टर शिंभूदयाल मदरसे जानें का समय बता कर रुख़सत हुए .

"आज निहालचंद का मुकद्दमा है देखैं ब्रजकिशोर कैसी पैरवी करते हैं" मुंशी चुन्नीलाल नें कहा" कल आप के पाकटचेन देनें सै उन्का मन बढ़ गया परंतु वह उसै अपनें महन्तानें मैं न समझैं मेरे निकट अब उन्का महन्ताना तत्काल भेज देना चाहिये जिस्सै उन्को यह संदेह न रहै और मन लगा कर अपनें मुकद्दमों मैं अच्छी जवाबदिही करें . मैं इन्के पास रह कर देख चुका हूँ कि यह अपनें मुख सै तो कुछ नहीं कहते परंतु इन्के साथ जो जितना उपकार करता है यह उस्सै बढ़ कर उस्का काम कर देते हैं".

"अच्छा ! तो आज शाम को कोई क़ीमती चीज़ इन्के महन्तानें मैं दे देंगे और काम अच्छा किया तो शुक्राना जुदा देंगे" लाला मदन-मोहन नें कहा .

इतनें मैं डाक आई उस्मैं एक रजिस्ट्री चिठ्ठी मेरठ सै एक मित्र की आई थी जिस्मैं दस हज़ार की दर्शनी हुंडी निकली और यह लिखा था कि "जितने रुपे चाहियें और मँगा लेना . आप का घर है" लाला मदन-मोहन यह चिठ्ठी देखते ही उछल पड़े और अपनें मित्रों की बडाई करनें लगे . हुंडी तत्काल सकारनें को भेज दी परंतु जिस्के नाम हुंडी थी उस्नें यह कह कर हुंडी सिकारनें सें इन्कार किया कि जिस साहूकार के हाँ सै लाला मदनमोहन के पास हुंडी आई है उसी ने तार देकर मुझको हुंडी सिकारनें की मनाई की है इस्सै सब भेद खुल गया . असल बात यह थी कि जिस्समय मदनमोहन की चिठ्ठी उस्के पास पहुँची उस्को मदनमोहन के बिगड़ने का ज़रा भी संदेह न था इसलिये मदनमोहन की चिठ्ठी पहुँचते ही उस्नें सच्ची प्रीति दिखानें के लिए दस हज़ार की हुंडी खाम दी परतु पीछे सै और लोगों की ज़बानी मदनमोहन के बिगड़नें का हाल सुन्कर घबराया और तत्काल तार देकर हुंडी खड़ी रखवा दी .

लाला मदनमोहन इस तरह अपनें एक मित्र के छल सै निराश हो कर तीसरे पहर अपनें शहर के मित्रों सै सहायता माँगनें के लिए आप सवार हुए. पहलै रस्ते मैं जो लोग झुक झुक कर सलाम करते थे वही आज इन्हैं देख कर मुख फेरनें लगे बल्कि कोई कोई तो आवाज़ें कसनें लगे. मदनमोहन को सब सै अधिक विश्वास लाला हरदयाल का था इस-लिए वह पहलै उसी के मकान पर पहुँचे.

हरदयाल को मदनमोहन के काम बिगड़ने का हाल पहले मालूम हो चुका था और इसी वास्तै उस्नें मदनमोहन की चिठी का जवाब नहीं भेजा था. अब मदनमोहन के आने का हाल सुन्ते ही वह जरा सी देर मैं मदनमोहन के पास पहुँचा और बड़े सत्कार सै मदनमोहन को लिवा ले जा कर अपनी बैठक मैं बिठाया.

लाला मदनमोहन नें कल सहायता माँगने के लिए चिठी भेजी थी उस्को पहलै उस्ने हँसी की बात ठैराई और जवाब न भेजनें का भी यही कारण बताया परंतु जब मदनमोहन नें यह बात सच्ची बताई और उस्के पीछे का सब वृत्तांत कहा तो लाला हरदयाल अत्यंत दुखित हुए और बड़ी उमंग सै अपनी सब दौलत लाला मदनमोहन पर न्योछावर करनें लगे. लाला हरदयाल की यह बातें केवल कहनें के लिए न थी वह दौड़ कर अपने गहनें का कलमदान उठा लाए और उस्मैं सै एक, एक रक़म निकाल कर लाला मदनमोहन को देनें लगे इतनें मैं एकाएक दरवाज़ा खुला हरदयाल का पिता भीतर पहुँचा और वह हरदयाल को जवाहरात की रक़में मदनमोहन के हाथ में देते देख कर क्रोध सै लाल हो गया.

"अभागे हटधर्मी! मैं नें तुझको इतनी बार बरजा परंतु तू अपना हट नहीं छोड़ता आजकल के कपूत लड़के इतनी बात को सच्ची स्वतंत्रता समझते हैं कि जहाँ तक हो सके बड़ों का निरादर और अपमान किया

जाय, उन्को मूर्ख और अनूसमझ बताया जाय, परंतु मैं इन बातों को कभी नहीं सहूँगा मेरे बैठे तुझको घर बरबाद करने का क्या अधिकार है? निकल यहाँ सै काला मुँह कर तेरी इच्छा होय जहाँ चला जा मेरा तेरा कुछ संबंध नहीं रहा" यह कह कर एक तमाचा जड़ दिया और गहना सम्हाल सम्हालकर संदूक मैं रखनें लगा. थोड़ी देर पीछे लाला मदनमोहन की तरफ़ देख के कहा. "संसार के सब काम रुपे सै चल्ते हैं फिर जो लोग अपनी दौलत खोकर बैरागी बन बैठें और औरों की दौलत उड़ाकर उन्को भी अपनी तरह बैरागी बनाना चाहें वह मेरे निकट, सर्वथा दया करने के योग्य नहीं हैं और जो लोग ऐसे अज्ञानियों की सहायता करते हैं वह मेरे निकट ईश्वर का नियम तोड़ते हैं और संसारी मनुष्यों के लिए बड़ी हानि का कांम करते हैं. मेरे निकट ऐसे आदमियों को उन्की मूर्खता का दंड अवश्य होना चाहिये जिस्सै और लोगों की आँखें खुलें. क्या मित्रता का यही अर्थ है कि आप तो डूबें सो डूबें अपने साथ औरों को भी ले डूबें! नहीं, नहीं आप ऐसे बिचार छोड़ दीजिये और चुपचुपाते अपने घर की राह लीजिये यह समय अपनें मित्रों को देने का है अथवा उल्टा उन्सै लेने का है?"

बुरे वक्त मैं एक मित्र का जी दुखाना, और दया के समय क्रूरता करनी, किसी की दुखती चोट पर हँसना, एक ग़रीब को उस्की ग़रीबी के कारण तुच्छ समझना, अथवा उस्की ग़रीबी की याद दिवाकर उसै सताना, दूसरे का बदला भुगताती बार अपने मतलब का खयाल करना, कैसा ओछापन और घोर पाप है! जहाँ सज्जन धनवानों की खुशामद सै दूर रह कर ग़रीबों का साथ देनें और सहायता करने में सच्ची सज्जनता समझते हैं कठोर बचन दो तरह सै कहा जाता है जो लोग अपनायत की रीति सै कहते हैं उन्कीं कहन सै तो अपनें चित्त मैं वफ़ादारी और आधीनता बढ़ती है पर जो अभिमान की राह सै दूसरे को तुच्छ बनाते हैं उन्की कहन सै चित्त मैं क्रोध और धिःकार बढ़ता जाता है.

हर तरह का घाव औषधि सै अच्छा हो सक्ता है परंतु मर्मबेधी बात का नासूर किसी तरह नहीं रुझता . विदुर जी ने सच कहा है—

"नावक सर धनु तीर काढ़े कढ़त शरीर ते ।
कुबचन तीर गभीर कढ़त न क्यों हूँ उर गढ़े ॥"

निदान लाला मदनमोहन को यह कहन अत्यंत असह्य हुई . वह तत्काल उठ कर वहाँ सै चल दिये परंतु बैठक सै बाहर जाते, जाते उन्हैं पीछै सै हरदयाल का यह बचन सुन्कर बड़ा आश्चर्य हुआ कि "चलो यह स्वांग (अभिनय) हो चुका अब अपना काम करो".

लाला मदनमोहन वहाँ सै चलकर एक दूसरे मित्र के मकान पर पहुँचे और उस्सै अपने आने की खबर कराई. वह उस्समय कमरे मैं मोजूद था परंतु उस्नें लाला मदनमोहन को थोड़ी देर अपनें दरवाज़े पर बाट दिखानें मैं और अपने कमरे को ज़रा मेज़ कुरसी, किताब, अखबार आदि सै सजाकर मिलने मैं अधिक शोभा समझी इसलिए कहला भेजा कि "आप ठैरें लाला साहब भोजन करने गए हैं अभी आकर आप सै मिलेंगे" देखिए आजकल के सुधरे बिचारों का नमूना यह है ! थोड़ी देर पीछे वह लाला मदनमोहन को लिवानें आया और बड़े शिष्टाचार सै लिवा ले जाकर उन्हैं तकिये के सहारे बिठाया . लाला मदनमोहन को थोड़ी देर उस्की बाट देखनी पड़ी थी इस्की क्षमा चाही और इधर उधर की दो चार बातें करके मानों कुछ चिठ्ठियाँ अत्यंत आवश्यकीय लिखनी बाकी रह गई हों इस्तरह चिठ्ठी लिखने लगा परंतु दो चार पल पीछे फिर क़लम रोककर बोला "हाँ यह तो कहिये आप नें इस्समय किस्तरह परिश्रम किया ?"

"क्यों भाई ! आने जाने का कुछ डर है ? क्या मैं पहले कभी तुम्हारे यहाँ नहीं आया ? या तुम मेरे यहाँ नहीं गए ?" लाला मदनमोहन नें कहा ."

"यह हाल सुन्कर मुझको अत्यंत खेद हुआ परमेश्वर आप पर कृपा करे वह सर्वशक्तिमान दीनदयाल सर्व का दुःख दूर करता है उस्पर विश्वास रखनें सै आप के सब दुःख दूर हो जायँगे आप धैर्य रक्खें. मुझ को इस्समय सचमुच ज़रूरी काम है इसलिए मैं अधिक नहीं ठैर सक्ता परंतु मैं आजकल मैं आप के पास हाज़िर होऊँगा और सलाह करके जो बात मुनासिब मालूम होगी उस्के अनुसार बरताव किया जायगा" यह कह कर वह मनुष्य तत्काल वहाँ सै चल दिया.

लाला मदनमोहन और एक मित्र के मकान पर पहुंचे. बाहर खबर मिली कि "वह मकान के भीतर हैं" भीतर सै जबाब आया कि "बाहर गये". लाचार मदनमोहन को वहाँ सै भी खाली हाथ फिरना पड़ा. और अब मित्रों के हाँ जानें का समय नहीं रहा इसलिये निराश होकर सीधे अपनें मकान को चले गये.

प्रकरण ३४

हीनप्रभा (बद्रोबी)

नीचन के मन नीति न आवै । प्रीति प्रयोजन हेतु लखावै ॥
कारज सिद्ध भयो जब जानैं । रंचकहू उर प्रीति न मानैं ॥
प्रीति गए फलहू बिनसावै । प्रीति बिषै सुख नैक न पावै ॥
जा दिन हाथ कछू नहीं आवै । भाखि कुबात कलंक लगावै ॥
सोइ उपाय हिये अवधारै । जासु बुरो कछु होत निहारै ॥
रंचक भूल कहूँ लख पावै । भाँति अनेक बिरोध बढ़ावै ॥*
विदुर प्रजागरे ।

---

* निवर्तमाने सौहार्दे प्रीतिर्नीचे प्रणश्यति ।
याचैव फलनिर्वृत्तिः सौहृदे चैव यत्सुखम् ॥

लाला मदनमोहन मकान पर पहुँचे उस्समय ब्रजकिशोर वहाँ मोजूद थे . लाला ब्रजकिशोर नें अदालत का सब बृत्तांत कहा उस्मैं मदनमोहन मोदी के मुकद्मे का हाल सुन्कर बहुत प्रसन्न हुए उस्समय चुन्नीलाल नें संकेत मैं ब्रजकिशोर के महन्ताने की याद दिवाई जिस्पर लाला मदन-मोहन नें अपनी अँगुली सै हीरे की एक बहुमूल्य अँगूठी उतार कर ब्रज-किशोर को दी और कहा "आप की महनत के आगे तो यह महन्ताना कुछ नहीं है परंतु अपना पुराना घर और मेरी इस दशा का बिचार करके क्षमा करिये."

यह बात सुन्ते ही एक बार लाला ब्रजकिशोर का जी भर आया परंतु फिर तत्काल सम्हल कर बोले "क्या आप नें मुझको ऐसा नीच समझ रक्खा है कि मैं आप का काम महन्ताने के लालच सै करता हूं ? सच तो यह है कि आप के वास्ते मेरी जान जाय तो भी कुछ चिंता नहीं परंतु मेरी इतनी ही प्रार्थना है कि आपनें अँगूठी देकर मुझ सै अपना मित्र भाव प्रगट किया सो मैं आप की बराबर का नहीं बना चाहता मैं आप को अपना मालिक समझता हूं इसलिये आप मुझे अपना 'हल्कः बगोश' (सेवक) बनायँ ."

"यह क्या कहते हो . तुम मेरे भाई हो क्योंकि तुम को पिता सदा मुझ सै अधिक समझते थे हाँ तुम्हैं बाली पहन्नें की इच्छा हो तो यह लो मेरी अपेक्षा तुम्हारे कान मैं यह बहुमूल्य मोती देख कर मुझको अधिक सुख होगा परंतु ऐसे अनुचित बचन मुख सै न कहो" यह कह कर लाला मदनमोहन नें अपने कान की बाली ब्रजकिशोर को दे दी .

"कल हरकिशोर आदि के मुकद्मे होंगे उन्की जवाबदिही का बिचार करना है काग़ज़ तैयार करा कर उस्सै रहत (बदर) छाँटनी है इसलिये

यतते चापवादाय यत्नमारभते क्षये ।
अल्पेप्यपकृते मोहन् न शान्तिमधिगच्छति ॥

अब आज्ञा हो" यह कह कर ब्रजकिशोर रुख़सत हुए और लाला मदन-मोहन भोजन करनें गए.

लाला मदनमोहन भोजन करके आये उस्समय मुंशी चुन्नीलाल नें अपनें मतलब की बात छेड़ी.

"मुझको हर बार अर्ज़ करनें मैं बड़ी लज्जा आती है परंतु अर्ज़ किये बिना भी काम नहीं चल्ता" मुंशी चुन्नीलाल कहनें लगा "ब्याह का काम छिड़ गया परंतु अब तक रुपे का कुछ बंदोबस्त नहीं हुआ आप नें दो सौ के नोट दिये थे वह जाते ही चटनी हो गए. इस्समय एक हज़ार रुपे का भी बंदोबस्त हो जाय तो खैर कुछ दिन काम चल सक्ता है नहीं तो काम नहीं चल्ता".

"तुम जान्ते हो कि मेरे पास इस्समय नक़द कुछ नहीं है और गहना भी बहुत सा काम मैं आ चुका है" लाला मदनमोहन बोले "हां मुझको अपनें मित्रों की तरफ़ सै सहायता मिल्नें का पूरा भरोसा है और जो उन्की तरफ़ सै कुछ भी सहायता मिली तो मैं प्रथम तुम्हारी लड़की के ब्याह का बंदोबस्त अच्छी तरह कर दूंगा."

"और जो मित्रों सै सहायता न मिली तो मेरा क्या हाल होगा?" मुंशी चुन्नीलाल नें कहा "ब्याह का काम किसी तरह नहीं रुक सक्ता और बड़े आदमियों की नौकरी इसी वास्ते तन तोड़ कर की जाती है कि ब्याह शादी मैं सहायता मिले, बराबर वालों मैं प्रतिष्ठा हो परंतु मेरे मंद भाग्य सै यहां इस्समय ऐसा मौक़ा नहीं रहा इसलिए मैं आप को अधिक परिश्रम नहीं दिया चाहता. अब मेरी इतनी ही अर्ज़ है कि आप मुझको कुछ दिन की रुख़्सत दे दें जिस्सै मैं इधर उधर जाकर अपना कुछ सूझता करूं".

"तुमको इस्समय रुख़सत का सवाल नहीं करना चाहिए मेरे सब कामों का आधार तुम पर है फिर तुम इस्समय धोका दे कर चले जाओगे तो काम कैसे चलेगा?" लाला मदनमोहन नें कहा.

"वाह ! महाराज वाह ! आप नें हमारी अच्छी कदर की !" मुंशी चुन्नीलाल तेज हो कर कहनें लगा "धोका आप देते हैं या हम देते हैं ? हम लोग दिन रात आप की सेवा मैं रहैं तो ब्याह शादी का खर्च लेनें कहां जायं ? आप नें अपनें मुख सै इस ब्याह मैं भली भाँति सहायता करनें के लिये कितनी ही बार आज्ञा की थी, परंतु आज वह सब आस टूट गई तो भी हमनें आप को कुछ ओलंभा नहीं दिया आप पर कुछ बोझ नहीं डाला केवल अपनें कार्य निर्वाह के लिए कुछ दिन की रुख़सत चाही तो आप के निकट बड़ा अधर्म हुआ, बड़ा धोका हुआ. खैर ! जब आप के निकट हम धोकेबाज ही ठैरे तो अब हमारे यहां रहनें सै क्या फ़ायदा है ? यह आप अपनी तालियाँ लें और अपना अस्बाब सम्हाल लें पीछे घटे बढ़ेगा तो मेरा ज़िम्मा नहीं है. मैं जाता हूँ." यह कह कर तालियों का झूमका लाला मदनमोहन के आगे फेंक दिया और मदनमोहन के ठंडा करते करते क्रोध की सूरत बना कर तत्काल वहाँ से चल खड़ा हुआ.

सच है नीच मनुष्य के जन्म भर पालन पोषण करनें पर भी एक बार थोड़ी कमी रह जानें सै जन्म भर का किया कराया मट्टी मैं मिल जाता है लोग कहते हैं कि अपनें प्रयोजन मैं किसी तरह का अंतर आनें सै क्रोध उत्पन्न होता है अपनें काम मैं सहायता करनें सै बिरानें अपनें हो जाते हैं और अपनें काम मैं विघ्न करनें सै अपनें बिराने समझे जाते हैं परंतु नहीं, क्रोध निर्बल पर विशेष आता है और नाउम्मेदी की हालत मैं. उस्की कुछ हद नहीं रहती. मुंशी चुन्नीलाल पर लाला मदनमोहन कितनी ही बार इस्सै बढ़ बढ़ कर क्रोधित हुए थे परंतु चुन्नीलाल को आज तक कभी गुस्सा नहीं आया ! और आज लाला मदनमोहन उस्को ठंडा करते रहे तो भी वह क्रोध कर के चल दिया. बृंद नें सच कहा है—

"बिन स्वारथ कैसे सहे कोऊ करुए बैन ।
लात खाय पुचकारिए होय दुधारू धेन ।।"

मुंशी चुन्नीलाल के जानें सै लाला मदनमोहन का जी टूट गया परंतु आज उन्को धैर्य देनें के लिए भी कोई उन्के पास न था, उन्के यहाँ सैकड़ों आदमियों का जमघट हर घड़ी बना रहता था सो आज चिड़िया तक न फटकी. लाला मदनमोहन इसी सोच बिचार मैं रात के नौ बजे तक बैठे रहे परंतु कोई न आया तब निराश होकर पलंग पर जा लेटे.

अब लाला मदनमोहन का भय नोकरों पर बिल्कुल नहीं रहा था सब लोग उन्के माल को मुफ्त का माल समझनें लगे थे. किसी नें घड़ी हथियाई, किसी नें दुशाले पर हाथ फैंका चारों तरफ़ लूट सी होनें लगी. मोजे, गुलूबंद, रूमाल आदि की तो पहले ही कुछ पूछ न थी. मदनमोहन को हर तरह की चीज़ खरीदनें की धत थी परंतु खरीदे पीछे उस्को कुछ याद नहीं रहती थी और जहाँ सैकड़ों चीज़ें नित्य खरीदी जायँ वहाँ याद क्या धूल रहै? चुन्नीलाल, शिंभूदयाल आदि क़ीमत मैं दुगुनें चौगनें कराते थे परंतु यहाँ असल चीज़ों ही का पता न था. बहुधा चीज़ें उधार आती थीं इस्सै उन्का जमाखर्च उस्समय नहीं होता था और छोटी छोटी चीज़ों के दाम तत्काल खर्च मै लिख दिये जाते थे इस्सै उन्की किसी को याद नहीं रहती थी. सूचीपत्र बनानें की वहाँ चाल न थी और चीज़ बस्त की झड़ती कभी नहीं मिलाई जाती थी. नित्य प्रति की तुच्छ, तुच्छ बातों पर कभी, कभी वहां बड़ा हल्ला होता था परंतु सब बातों के समूह पर दृष्टि करके उचित रीति सै प्रबंध करनें की युक्ति कभी नहीं सोची जाती थी और दैवयोगेन किसी नालायक़ सै कोई काम निकल आता था तो वह अच्छा समझ लिया जाता था परंतु काम करनें की प्रणाली पर किसी की दृष्टि न थी. लाला साहब दो तीन वर्ष पहलै आगरे लखनऊ की सैर को गए थे वहाँ के रस्ते खर्च के हिसाब का जमाखर्च अब तक नहीं हुआ था और जब इस तरह कोई जमाखर्च हुए बिना बहुत दिन पड़ा रहता था तो अंत मैं उस्का कुछ हिसाब किताब देखे बिना यों ही

खर्च मैं रक़म लिख कर खाता उठा दिया जाता था. कैसे ही आवश्यक काम क्यों न हो लाला साहब की रुचि के विपरीत होनें सै वह सब बेफ़ायदे समझे जाते थे और इस ढब की वाजबी बात कहना गुस्ताखी मैं गिना जाता था. निकम्मे आदमियों के हर वक्त घेरे बैठे रहनें सै काम के आदमियों को काम की बात करनें का समय नहीं मिल्ता था, "जिस्की लाठी उस्की भैंस" हो रही थी जो चीज़ जिस्के हाथ लगती थी वह उस्को खुर्द बुर्द कर जाता था भाड़े और उघाई आदि की भूली भुलाई रक़मों को लोग ऊपर चट कर जाते थे आधे परदे पर क़र्ज़दारों को उनकी दस्तावेज़ फेर दी जाती थी. देशकाल के अनुसार उचित प्रबंध करनें मैं लोकनिंदा का भय था! जो मनुष्य कृपापात्र थे उनका तन्तना तो बहुत ही बढ़ रहा था उन्के सब अपराधों सै जान बूझ कर दृष्टि बचाई जाती थी. वह लोग सब कामों मैं अपना पाँव अड़ाते थे और उन्के हुक्म की तामील सबको करनी पड़ती थी. यदि कोई अनुचित समझ कर किसी काम मैं उज्र करता तो उस्पर लाला साहब का कोप होता था और इस दुफसली कारवाई के कारण सब प्रबंध बिगड़ रहा था.

"दुसह दुराज प्रजान को क्यों न बढ़ै दुख दंद।
अधिक अँधेरो जग करै मिल मावस रवि चंद॥"

बिहारी

ऐसी दशा मैं मदनमोहन की स्त्री के पीछे चुन्नीलाल और शिंभूदयाल के छोड़ जानें पर सब माल मते की लूट होनें लगे जो पदार्थ जिस्के पास हो वह उस्का मालिक बन बैठे इस्मैं कौन आश्चर्य है!

———

प्रकरण ३५

स्तुति निंदा का भेद

बिनसत बार न लाग ही ओछे जन की प्रीति ।
अंबर डंबर साँझ के अरु बारू की भीति ।।

सभाबिलास

दूसरे दिन सबेरे लाला मदनमोहन नित्य कृत्य सै निबट कर अपने कमरे मैं बैठे थे. मन मुर्झा रहा था किसी काम मैं जी नहीं लगता था. एक एक घड़ी एक एक बरस के बराबर बीतती थी इतनें मैं अचानक घड़ी देखने के लिये मेज़ पर दृष्टि गई तो घड़ी का पता न पाया. हैं! यह क्या हुआ! रात को सोती बार जेब सै निकाल कर घड़ी रक्खी थी फिर इतनी देर मैं कहाँ चली गई! नौकरों सै बुला कर पूछा तो उन्होंने साफ़ जवाब दिया कि "हम क्या जानें आप नें कहाँ रक्खी थी? जो मौकूफ़ करना हो तो यों ही कर दें वृथा चोरी क्यों लगाते हैं." लाचार मदनमोहन को चुप होना पड़ा क्योंकि आप तो किसी जगह आने जाने लायक़ ही न थे सहायता को कोई आदमी पास न रहा लाला जवाहरलाल की तलाश कराई तो वह भी घर सै अभी नहीं आए थे. लाला मदनमोहन को अपाहजों की तरह अपनी पराधीन दशा देख कर अत्यंत दुःख हुआ परंतु क्या कर सक्ते थे? उन्के भाग्य सै उन्का दुःख बटाने के लिये इस्समय बाबू बैजनाथ आ पहुँचे उन्को देख कर लाला मदनमोहन के शरीर मैं प्राण आ गया. लाला मदनमोहन नें आँखों सै आँसू बहा कर अपना दुःख कहा और अंत मैं अपनी घड़ी जाने का हाल कह कर इस काम मैं सहायता चाही.

"आप का हाल सुन्कर मुझको बहुत खेद होता है मुझे चुन्नीलाल

आदि की तरफ़ से सर्वथा ऐसा भरोसा न था इसी तरह आप अपनें काम काज से इतनें बेखबर होंगे यह भी उम्मेद न थी" बाबू बैजनाथ ने काम बिगड़े पीछे अपनी आदत मूजिब सब की भूल निकाल कर कहा "मैं नें तो अखबारों में आप के नाम की धूम मचा दी थी परंतु आप अपनें काम ही की सम्हाल न रक्खें तो मैं क्या करूँ ? महाजनी काम मुझको नहीं आता और इतना अवकाश भी नहीं मिल्ता. मैं घड़ी का पता लगानें के लिए उपाय करता परंतु आजकल रेल पर काम बहुत है इस्सै मैं लाचार हूँ. मेरे निकट इस्समय आप के लिये यही मुनासिब है कि आप इन्सालवंट होनें की दरखास्त दे दैं."

"अच्छा ! बाबू साहब ! आप से और कुछ नहीं हो सक्ता तो आप केवल इतनी ही कृपा करें कि मेरी घड़ी जानें की रपट कोतवाली मैं लिखाते जायँ" लाला मदनमोहन नें गिड़गिड़ा कर कहा.

"मैं रेलवे कंपनी का नौकर हूं इस वास्ते कोतवाली मैं रिपोर्ट नहीं लिखा सक्ता बल्कि प्रगट होकर किसी काम मैं आप को कुछ सहायता नहीं दे सक्ता मुझ से निज मैं आप की कुछ सहायता हो सकेगी तो मैं बाहर नहीं हूं परंतु आप मुझ से किसी जाहरी काम के वास्तै कह कर मुझे अधिक लज्जित न करें और अंत मैं मैं आप को इतनी सलाह देता हूं कि आप लाला ब्रजकिशोर पर विश्वास रख कर उस्के बस में न हो जायं बल्कि उस्को अपनें बस मैं रखकर अपना काम आप करते रहैं".

"सच है यह समय किसी पर विश्वास रखनें का नहीं है जो लोग अपनें मतलब की बार सच्चे मित्र बनकर मेरे पसीनों की जगह खून डालनें को तैयार रहते थे मतलब निकल जानें से आज उन्की छाया भी नहीं दिखाई देती. सत्सम्मति देना तो अलग रहा मेरे पास खड़े रहने तक के साथी नहीं होते. जो लोग किसी समय मेरी मुलाक़ात के लिए तरस्ते थे वह अब तीन तीन बार बुलानें से नहीं आते. मेरे पास आनें जानें से जिन् लोगों की इज्जत बढ़ती थी वह आज मुझ से किसी तरह

संबंध रखनें मैं लजाते हैं" लाला मदनमोहन नें भरमा भरमी इतनी बात कहकर अपनी छाती का बोझ हल्का किया.

"यह तो सच है जिस्का प्रयोजन होता है उसै उचित अनुचित बातों का कुछ बिचार नहीं रहता" बाबू बैजनाथ नें जैसे का तैसा जवाब दिया और थोड़ी देर इधर उधर की बातें कर के रुखसत हुआ.

लाला मदनमोहन बड़े चकित थे कि हे परमेश्वर! यह क्या भेद है मेरी दशा बदलते ही सब संसार के बिचार कैसे बदल गए. और जिन्से मेरा किसी तरह का संबंध न था वह भी मुझको अकारण क्यों तुच्छ समझनें लगे? मेरे नर्म होने पर भी बेप्रयोजन मुझ सै क्यों लड़ाई झगड़ा करनें लगे? जिन लोगों को मेरी योग्यता और सावधानी के सिवाय अब तक कुछ नहीं दिखाई देता था उन्को अब क्यों मेरे दोष दृष्टि आने लगे? लाला मदनमोहन इन बातों का बिचार कर रहे थे इतने मैं लाला ब्रजकिशोर वहाँ जा पहुँचे और मदनमोहन ने अपने मन का सब संदेह उन्हें कह सुनाया.

"एक तो जो लोग प्रथम स्वार्थ बस प्रीति करते हैं उन्की कलई ऐसे अवसर पर खुल जाती है. दूसरे साधारण लोगों की स्तुति निंदा कुछ भरोसे लायक़ नहीं होती वह किसी बात का तत्व नहीं जान्ते प्रगट मैं जैसी दशा देखते हैं वैसा ही कहने लगते हैं बल्कि उसी के अनुसार बरताव करते हैं इस्सै साधारण लोगों की प्रतिष्ठा योग्यता के अनुसार नहीं होती द्रव्य अथवा जाहरदारी के अनुसार होती है और द्रव्य अथवा जाहरदारी के परदे तले घोर पापी अपने पापों को छिपा कर क्रम, क्रम सै प्रतिष्ठित लोगों मैं मिल सक्ता है बल्कि प्रतिष्ठित लोगों मैं मिलना क्या? कोई पूँरा चालाक मनुष्य हो तब तो वह द्रव्य के भरम और जाहरदारी के बरताव सै द्रव्य तक पैदा कर सक्ता है! ऐसा मनुष्य पहले अपने द्रव्य अथवा योग्यता का झूठा प्रपंच फैला कर लोगों के मन मैं

अपना विश्वास बैठाता है और विश्वास हुए पीछे कमाई की अनेक राह सहज मैं उस्के हाथ आ जाती है. लोग उस्को अपने आप घीरने लगते हैं कभी कभी ऐसे मनुष्य अपनी धूर्तता से सच्चे योग्य अथवा धनवानों से बढ़ कर काम बना लेते हैं यद्यपि अंत मैं उन्की कलई बहुधा खुल जाती है परंतु साधारण लोग केवल बर्तमान दशा पर दृष्टि रखते हैं. जिस्समय जिस्की उन्नति देखते हैं उन्नति का मूल कारण निश्चय किये बिना उस्की बड़ाई करने लगते हैं उस्के सब काम बुद्धिमानी के समझते हैं इसी तरह जब किसी की प्रगट मैं अवनति दिखाई देती है तो वह उस्की मूर्खता समझते हैं और उस्के गुणों मैं भी दोषारोप करने लगते हैं! उस्समय उन्को उस्की भूल ही भूल दृष्टि आती है सो आप प्रत्यक्ष देख लीजिए कि जब तक सर्व साधारण को प्रगट मैं आप की उन्नति का रूप दिखाई देता था, आप का द्रव्य, आप का वैभव, आप का यश, आप की उदारता, आप का सीधापन, आप की मिलन्सारी, देख कर वह आप का आचरण अच्छा समझते थे आप की बुद्धिमानी की प्रशंसा करते थे आप से प्रीति रखते थे. जब आप को यह झटका लगा प्रगट मैं आप की अवनति का सामान दिखाई देने लगा झट उन्की राह बदल गई आप के बड़प्पन के बदले उन्के मन मैं धिक्कार उत्पन्न हुआ आप की अतिव्ययशीलता, अदूरदृष्टि, अप्रबंध, और आत्मसुखपरायणता आदि दोष उन्को दिखाई देनें लगे. आप के बनें रहने पर उन लोगों को आप से जो, जो आशाएँ थीं और उन आशाओं के कारण आप से स्वार्थपरता की जितनी प्रीति थी वह उन आशाओं के नष्ट होते ही सहसा छाया के समान उन्के हृदय से जाती रही बल्कि आशा भग होनें का एक प्रकार खेद हुआ फिर जब साधारण लोगों का यह अभिप्राय हो, मुंशी चुन्नीलाल, शिंभूदयाल आदि आप को यों अकेला छोड़ कर चले जायँ तब आप के छोटे नौकर निडर होकर आप के माल की लूट मचानें लगें

जो चीज़ जिस्के पास हो वह उस्का मालिक बन बैठे इस्मैं कौन आश्चर्य है ?"

"अच्छा ! अब आगे के लिए आप कहैं जैसे करूँ इस्का कुछ प्रबंध तो अवश्य होना चाहिये" लाला मदनमोहन नें गिड़गिड़ा कर कहा .

इस्पर लाला ब्रजकिशोर घर के सब नौकरों को धमका कर बड़े क्रोध सै कहने लगे "आज सबेरे सै इस कमरे के भीतर कौन, कौन आया था उन सबके नाम लिखवाओ मैं अभी कोतवाली को रुक्का लिखता हूँ वह सब हवालात मैं भेज दिये जायँगे और उन्के मकानों की उन्के संबंधियों समेत तलाशी ली जायगी जिन्के घर सै कोई चीज़ चोरी की निकलेगी या जिन्पर किसी तरह चोरी का अपराध साबित होगा उन्को ताजीरात हिन्द की दफ़ै ४०८ के अनुसार सात बरस तक की क़ैद और जुर्मानें का दंड भी हो सकेगा ."

"अजी महाराज ! एक मनुष्य के अपराध सै सबको दंड हो यह तो बड़ा अनर्थ है" बहुत से नौकर गिड़गिड़ा कर कहनें लगे "हम लोग अब तक लाला साहब के यहाँ बेटा बेटी की तरह पले हैं इस्सै अब ऐसी ही मर्ज़ी हो तो हमको मौक़ूफ़ कर दीजिये परंतु बदनामी का टीका लगा कर और जगह के कमानें खानें का रस्ता तो बंद न कीजिए ."

"हाँ हाँ यह तो सफ़ाई सै निकल जानें का अच्छा ढंग है परंतु इस्तरह तुम्हारा पीछा नहीं छुटेगा जो तुम लाला साहब के यहाँ बेटा बेटी की तरह पले हो तो तुमको इस्समय यह बात कहनी चाहिये ? तुम इस्समय लाला साहब सै अलग होनें मैं अपना लाभ समझते हो परंतु यह तुम्हारी भूल है इस्मैं तुम उल्टे फँस जाओगे" लाला ब्रजकिशोर ने सिंह की तरह गर्ज कर कहा .

"अच्छा ! हम को सांझ तक की छुट्टी दीजिये हम सै हो सकैगा जहां तक हम घड़ी का पता लगावेंगे." नौकरों नें जवाब दिया .

"तुम लोग यह बहाना करके अपने घर सै चोरी का माल दूर किया चाहते हो परंतु मैं घड़ी का पता लगाये बिना तुम को कभी ढीला नहीं छोड़ूंगा मैं अभी कोतवाली को रुक्का लिखता हूं" यह कह कर लाला ब्रजकिशोर सचमुच रुक्का लिखने लगे .

जिन लोगों नें सवेरे मदनमोहन की बात पर कुछ ध्यान नहीं दिया था वही इस्समय ब्रजकिशोर की ज़रा सी धमकी सै मदनमोहन के पांव पकड़ कर रोनें लगे . तुलसीदासजी नें सच कहा है—

"शूद्र गमार ढोल पशु नारी । सकल ताड़ना के अधिकारी ।।"

"भाई ! इन्को सांझ तक अवकाश दे दो जो तुम अब करना चाहते हो सांझ को कर लेना" लाला मदनमोहन नें पिगल कर अथवा किसी गुप्त कारण सै दब कर कहा .

"आप को किसी की रिआयत हो तो आप निज मैं भले ही उन्को कुछ इनाम दे दें परंतु प्रबंध के कामों मैं इस तरह अपराधियों पर दया करके अपने हाथ सै प्रबंध न बिगाड़ें ये लोग आप का क्या कर सक्ते हैं ? मनुस्मृति मैं कहा है—

"दंड बिषै संभ्रम भये वर्ण दोष है जाय ।
मचै उपद्रव देश मैं सब मर्याद नसाय ।।*"

सादी कहते हैं—

"पापिन मांहि दया है ऐसी । सज्जन संग क्रूरता जैसी ।।†"

लाला ब्रजकिशोर नें कहा .

---

* दुष्येयुः सर्ववर्णाश्च भिद्यरन् सर्वसेतवः ।
सर्वलोकप्रकोपश्च भवेद्दण्डस्य विभ्रमात् ॥

† निकोई बाबदां कर्दन् चुनानस्त की बदकर्दन् बजाय नेकमदां ॥

"खैर ! कुछ हो आज का दिन तो इन्को छोड़ दीजिये" लाला मदनमोहन नें दबा कर कहा .

"बहुत अच्छा ! जैसी आप की मर्ज़ी" ब्रजकिशोर नें रुखाई सै जवाब दिया .

"मुझको मित्रों की तरफ़ सै सहायता मिलनें का विश्वास है परंतु दैवयोग सै न मिली तो क्या इन्सालवन्ट होनें की दरख्वास्त देनी पड़ेगी ?" लाला मदनमोहन नें पूछा .

"अभी तो कुछ ज़रूरत नहीं मालूम होती परंतु ऐसा बिचार किया भी जाय तो आप के लेन देन और माल अस्बाब का काग़ज़ कहां तैयार है ?" लाला ब्रजकिशोर नें जबाब दिया और कचहरी जानें के लिए मदनमोहन सै रुखसत होकर रवानें हुए .

———

प्रकरण ३६

धोके की टट्टी

बिपत बराबर सुख नहीं जो थोरे दिन होय ।
इष्ट मित्र बन्धू जिते जान परैं सब कोय ॥

लोकोक्ति ।

लाला ब्रजकिशोर के गये पीछे मदनमोहन की फिर वही दशा हो गई. दिन पहाड़ सा मालूम होनें लगा खास कर डाक की बड़ी तलामली लग रही थी . निदान राम, राम करके डाकका समय हुआ डाक आई. उस्मैं दो तीन चिठी और कई अखबार थे .

एक चिठी आगरे के एक जौहरी की आई थी जिस्मैं जवाहरात की

बिक्री बाबत लाला साहब के रुपे लेनें थे और वह यों भी लाला साहब सै बड़ी मित्रता जताया करता था. उस्नें लाला साहब की चिठ्ठी के जवाब मैं लिखा था कि "आप की ज़रूरत का हाल मालूम हुआ मैं बड़ी उमंग सै रुपे भेजकर इस समय आप की सहायता करता परंतु मुझको बड़ा खेद है कि इन दिनों मेरा बहुत रुपया जवाहरात पर लग रहा है इसलिये मैं इससमय कुछ नहीं भेज सक्ता. आप नें मुझको पहले सै क्यों न लिखा ? अब जिससमय मेरे पास रुपया आवेगा मैं प्रथम आप की सेवा मैं ज़रूर भेजूँगा मेरी तरफ़ सै आप भली भाँति विश्वास रखना और अपनें चित्त को सर्वथा अधैर्य न होनें देना परमेश्वर कुशल करेगा". यह चिठ्ठी उस कपटी नें ऐसी लपेट सै लिखी थी कि अजान आदमी को इस्के पढ़नें सै लाला मदनमोहन के रुपे लेनें का हाल सर्वथा नहीं मालूम हो सक्ता था वह अच्छी तरह जान्ता था कि लाला मदनमोहन का काम बिगड़ जायगा तो मुझसै रुपे माँगनेंवाला कोई न रहैगा इस वास्तै उस्नें केवल इतनी ही बात पर संतोष न किया बल्कि वह गुप्त रीति सै मदनमोहन के बिगड़नें की चर्चा फैलानें और उस्के बड़े बड़े लेनदारों को भड़कानें का उपाय करनें लगा. हाय ! हाय !! इस असार संसार मैं कुछ दिन की अनिश्चित आयु के लिये निर्भय होकर लोग कैसे घोर पाप करते हैं !!!

दूसरी चिठ्ठी मदनमोहन के और एक मित्र की थी. वह हर साल आकर महीनें बीस रोज़ मदनमोहन के पास रहते थे इसलिए तरह तरह की सोगात के सिवाय उन्की ख़ातिरदारी मैं मदनमोहन के पाँच सात सौ रुपे सदैव ख़र्च हो जाया करते थे. उस्नें लिखा था कि "मैं नें बहुत सस्ता समझ कर इससमय एक गाँव साठ हज़ार रुपे मैं ख़रीद लिया है और उस्की क़ीमत चुकानें के लिये मेरे पास इससमय पचास हज़ार अंदाज़ मोजूद हैं इसलिये मुझ को महीनें डेढ़ महीनें के वास्ते दस हज़ार रुपे की ज़रूरत होगी जो आप कृपा करके यह रुपया मुझ को साहूकारी ब्याज पर दे देंगे तो मैं आप का बहुत उपकार मानूँगा" यह चिठ्ठी लाला मदनमोहन की चिठ्ठी

पहुँचते ही उस्नें अगमचेती कर के लिख दी थी और मिती एक दिन पहले की डाल दी थी कि जिस्सै. भेद न खुलनें पावै .

मदनमोहन के तीसरे मित्र की चिट्ठी बहुत संक्षेप थी उस्मैं लिखा था कि "आप की चिट्ठी पहुँची उसके पढ़नें सै बड़ा खेद हुआ . मैं रुपे का प्रबंध कर रहा हूँ यदि हो सकेगा तो कुछ दिन मैं आप के पास अवश्य भेजूँगा" इसके पास पत्र भेजनें के समय रुपया मोजूद था परतु इस्नें यह पेंच रक्खा था मदनमोहन का काम बना रहैगा तो पीछे सै इसके पास रुपया भेज कर मुफ्त में अहसान करेंगे और काम बिगड़ जायगा तो चुप हो रहैंगे अर्थात् उस्को रुपे की ज़रूरत होगी तो कुछ न देंगे और ज़रूरत न होगी तो जबरदस्ती गले पड़ेंगे !

इनके पीछे लाला मदनमोहन एक अखबार खोलकर देखनें लगे तो उस्मैं एक यह लेख दृष्टि आया—

"सुसभ्यता का फल"

'हमारे शहर के एक जवान सुशिक्षित रईस की पहली उठान देख कर हमको यह आशा होती थी बल्कि हमनें अपनी यह आशा प्रगट भी कर दी थी कि कुछ दिन मैं उसके कामों सै कोई देशोपकारी बात अवश्य दिखाई देगी परंतु खेद है कि हमारी वह आशा बिल्कुल नष्ट हो गई बल्कि उसके विपरीत भाव प्रतीत होनें लगा, गिन्ती के दिनों मैं तीन चार लाख पर पानी फिर गया . वलायत मैं डरमोडी नामी एक लड़का ऐसा तीक्ष्ण बुद्धि का हुआ था कि वह नौ वर्ष की अवस्था मैं और विद्यार्थियों को ग्रीक और लाटिन भाषा के पाठ पढ़ाता था परंतु आगे चलकर उसका चालचलन अच्छा नहीं रहा इसी तरह यहाँ प्रारंभ सै परिणाम विपरीत हुआ . हिंदुस्थानियों का सुधरना केवल दिखानें के लिए है वह अपनी रीति भाँति बदलनें मैं सब सुसभ्यता समझते हैं परंतु असल मैं अपनें स्वभाव और बिचारों के सुधारनें का कुछ उद्योग नहीं करते . बचपन

में उन्की तबियत का कुछ कुछ लगाव इस तरफ़ को मालूम होता भी है तो मदरसा छोड़े पीछे नाम को नहीं दिखाई देता . दरिद्रियों को भोजन वस्त्र की फ़िकर पड़ती है और धनवानों को भोग विलास सै अवकाश नहीं मिल्ता फिर देशोन्नति का बिचार कौन करे ? बिद्या और कला की चर्चा कौन फैलाय ? हम को अपने देश की दीन दशा पर दृष्टि करके किसी धनवान का काम बिगड़ता देख कर बड़ा खेद होता है परंतु देश के हित के लिये तो हम यही चाहते हैं कि इस तरह पर प्रगट में नए सुधार की झलक दिखा कर भीतर से दीये तले अंधेरा रखने वालों का भंडा जल्दी फूट जाय जिस्सै और लोगों की आँखैं खुलें और लोग सिंह का चमड़ा ओढ़नेंवाले भेड़िए को सिंह न समझैं". इस अखबार के एडीटर को पहलै लाला मदनमोहन से अच्छा फ़ायदा हो चुका था परंतु बहुत दिन बीत जाने सै मानों उस्का कुछ असर नहीं रहा . जिस तरह हरेक चीज़के पुराने पड़ने से उस्के बंधन ढीले पड़ते जाते हैं इसी तरह ऐसे स्वार्थपर मनुष्यों के चित्त मैं किसी के उपकार पर, लेन देन पर, प्रीति व्यवहार पर, बहुत काल बीत जानें सै मानों उस्का असर कुछ नहीं रहता . जब उन्के प्रयोजन का समय निकल जाता है तब उन्की आँखैं सहसा बदल जाती हैं जब वह क़िसी लायक़ होते हैं तब उन्के हृदय पर स्वेच्छाचार छा जाता है जब उन्के स्वार्थ मैं कुछ हानि होती है तब वह पहले के बड़े सै बड़े उपकारों को ताक़ पर रख कर बैर लेने के लिए तैयार हो जाते हैं . सादी नें कहा है—

"करत खुशामद जो मनुज सो कछु दे बहु लेत ।
एक दिवस पावै न तो दो सै दूषण देत ।।"*

---

* अला ता नशन्वी दह सखुन गोए कि अंदक मायः नफ़ए अज़तो दारद ।
अगर रोज़े मुरादश बर नयारी दोसद चन्दा अयूबत बर शुमारद ।।

इस अखबार का एडीटर विद्वान था और विद्या निस्संदेह मनुष्य की बुद्धि को तीक्ष्ण करती है परंतु स्वभाव नहीं बदल सक्ती. जिस मनुष्य को विद्या होती है पर वह उस्पर बरताव नहीं करता वह बिना फल के वृक्ष की तरह निकम्मा है.

लाला मदनमोहन इन लिखावटों को देख कर बड़ा आश्चर्य करते थे परंतु इस्सै भी अधिक आश्चर्य की बात यह थी कि बहुत लोगों नें कुछ भी जवाब नहीं भेजा उन्मैं कोई, कोई तो ऐसे थे कि बड़ों की लकीर पर फकीर बनें बैठे थे. यद्यपि उन्के पास कुछ पूँजी नहीं रही थी उन्का कार ब्योहार थक गया था उन्का हाल सब लोग जान्ते थे इस्सै आगे को भी कोई बुर्द हाथ लगनें की आशा न थी परंतु फिर भी वह खर्च घटानें मैं बेइज्जती समझते थे. संतान को पढ़ानें लिखानें की कुछ चिंता न थी परंतु ब्याह शादियों मैं अब तक उधार लेकर द्रव्य लुटाते थे उन्सै इस अवसर पर सहायता की क्या आशा थी? कितनें ही ऐसे थे जिन्होंनें केवल अपने फ़ायदे के लिए धनवानों का सा ठाठ बना रक्खा था इस वास्तै वह मदनमोहन के मित्र न थे उस्के द्रव्य के मित्र थे वह मदनमोहन पर किसी न किसी तरह का छप्पर रखनें के लिए उस्का आदर सत्कार करते थे इसलिए इस अवसर पर अपना पर्दा ढकनें के हेतु मदनमोहन के बिगाड़नें मैं अधिक उद्योग न करें इसी मैं उन्का विशेष अनुग्रह था इस्सै अधिक सहायता मिलनें की उन्सै क्या आशा हो सक्ती थी? कोई, कोई धनवान ऐसे थे जो केवल हाकमों की प्रसन्नता के लिए उन्की पसंद के कामों मैं अपनी अरुचि होनें पर भी जी खोल कर रुपया दे देते थे परंतु सच्ची देशोन्नति और उदारता के नाम फूटी कौड़ी नहीं खर्ची जाती थी वह केवल हाकमों सै मेल रखनें मैं अपनी प्रतिष्ठा समझते थे परंतु स्वदेशियों के हानि लाभ का उन्हैं कुछ विचार न था, वह केवल हाकमों मैं आनें जानें वाले रईसों सै मेल रखते थे और हाकमों की हां मैं हां मिलाया करते थे, इस वास्ते साधारण लोगों

की दृष्टि मैं उन्का कुछ महत्व न था. हाकमों मैं आनें जानें के हेतु मदनमोहन की उन्सै जान पहचान हो गई थी परंतु वह मदनमोहन का काम बिगड़नें सै प्रसन्न थे क्योंकि वह मदनमोहन की जगह कमेटी इत्यादि मैं अपना नाम लिखाया चाहते थे इस वास्तै वह इस अवसर पर हाकमों सै मदनमोहन के हक़ मैं कुछ उलट पुलट न जड़ते यही उन्की बड़ी कृपा थी इस्सै बढ़ कर उन्की तरफ़ सै और क्या सहायता हो सक्ती थी? कोई कोई मनुष्य ऐसे भी थे जो उन्की रक़म मैं कुछ जोखों न हो तो वह मदनमोहन को सहारा देनें के लिए तैयार थे परंतु अपनें ऊपर जोखों उठाकर इस डूबती नाव का सहारा लगानें वाला कोई न था. बिष्णुपुराण के इस वाक्य सै उन्के सब लक्षण मिलते थे—

"जाचत हू निज मित्र हित करैं न स्वारथ हानि।
दस कौड़ी हू की कसर खायँ न दुखिया जानि *॥"

निदान लाला मदनमोहन आज की डाक देखे पीछे बाहर के मित्रों की सहायता सै कुछ, कुछ निराश हो कर शहर के बाकी मित्रों का माजना (माजरा) देखनें के लिए सवार हुए.

---

* अभ्यर्थितोपि सुहृदा स्वार्थहानिं न मानवः।
पणार्धार्धार्धमात्रेण करिष्यति तदाद्विज॥

प्रकरण ३७

विपत्त मैं धैर्य

प्रिय वियोग को मूढ़जन गिनत गड़ी हिय भालि ।
ताही को निकरी गिनत धीर पुरुष गुणशालि ।।*

रघुवंशे ।

लाला ब्रजकिशोर नें अदालत मैं पहुँच कर हरकिशोर के मुकद्दमे मैं बहुत अच्छी तरह बिबाद किया . निहालचंद आदि के कई छोटे, छोटे मामलों मैं राजीनामा हो गया. जब ब्रजकिशोर को अदालत के काम सै अवकाश मिला तो वह वहाँ सै सीधे मिस्टर ब्राइट के पास चले गये .

हरकिशोर नें इस अवकाश को बहुत अच्छा समझा तत्काल अदालत मैं दरखवास्त की कि "लाला मदनमोहन अपनें बाल-बच्चों को पहलै मेरठ भेज चुके हैं उन्के सब माल अस्बाब पर मिस्टर ब्राइट की कुर्की हो रही है और अब वह आप भी रूपोश (अंतर्धान) हुआ चाहते हैं, मैं चाहता हूँ कि उन्के नाम गिरफ्तारी का वारंट जारी हो" इस बात पर अदालत मैं बड़ा बिबाद हुआ, जवाबदिही के वास्तै लाला ब्रजकिशोर बुलाए गए परंतु उन्का कहीं पता न लगा . हरकिशोर के वकील नें कहा कि लाला ब्रजकिशोर झूँट बोलनें के भय सै जान बूझ कर टल गए हैं . निदान हरकिशोर के हलफ़ी इज़हार (अर्थात शपथपूर्वक वर्णन करनें) पर हाकम को बिबस होकर वारंट जारी करने का हुक्म देना पड़ा हरकिशोर नें अपनी युक्ति सै तत्काल वारंट जारी करा लिया और आप उस्की तामील करनें के लिये

---

* अवगच्छति मूढचेतनः प्रियनाशं हृदिशल्यमर्पितम् ।
स्थिरधी स्तुतदेव मन्यते कुशलद्वारतया समुद्धृतम् ॥

उस्के साथ गया : मदनमोहन सै जिन लोगों का मेल था उन्मैं सै कोई कोई मदनमोहन को ख़बर करनें के लिये दौड़े परंतु मंद भाग्य सै मदनमोहन घर न मिले .

हाँ मदनमोहन की स्त्री अभी मेरठ सै आई थी वह यह ख़बर सुन्कर घबरा गई उस्नें चारों तरफ़ को आदमी दौड़ा दिये . मेरठ मैं मदनमोहन के बिगड़नें की ख़बर कल सै फैल रही थी परंतु उस्के दुःख का बिचार करके उस्के आगे यह बात कहनें का किसी को साहस न हुआ. आज सवेरे अनायास यह बात उस्के कान पड़ गई बस इस बात को सुन्ते ही वह मच्छी की तरह तड़पनें लगी, रेल के समय मैं दो घंटे की देर थी वह उसै दो जुग सै अधिक बीते उस्के घर के बहुत कुछ धैर्य देते थे परंतु उसै किसी तरह कल नहीं पड़ती थी . जब वह दिल्ली पहुँची तो उस्नें अपनें घर का और ही रंग देखा न लोगों की भीड़, न हँसी दिल्लगी की बातें, सब मकान सूना पड़ा था और उस्मैं पाँव रखते ही डर लगता था जिस्पर विशेष यह हुआ कि आते ही यह भयंकर ख़बर सुनी : जब सै उस्नें यह ख़बर सुनी उस्के आँसू पल भर नहीं बंद हुए वह अपनें पति के लिए प्रसन्नता सै अपना प्राण देनें को तैयार थी .

इधर लाला मदनमोहन अपने स्वार्थपर मित्रों सै नए, नए बहानों की बातें सुन्ते फिरते थे इतनें मैं एकाएक कान्स्टेबल नें कोचमैंन को पुकार कर बग्गी खड़ी कराई और नाज़िर नें पास पहुँचते ही सलाम करके वारंट दिखाया, लाला मदनमोहन उस्को देखते ही सफ़ेद हो गए, सिर झुका लिया, चहरे पर हवाइयाँ उड़नें लगीं, मुख सै एक अक्षर न निकला . हरकिशोर नें एक खखार मारी परंतु मदनमोहन की आँख उस्के सामनें न हुई . निदान मदनमोहन नें नाज़िर को संकेत मैं अपनी पराधीन्ता दिखाई इस्पर सब लोग कचहरी को चले .

मदनमोहन अदालत मैं हाकम के सामने खड़े हुए उससमय लाज

सै उन्की आँख ऊँची नहीं होती थी. हाकम को भी इस बात का अत्यंत खेद था परंतु वह क़ानून सै परवस थे.

"हमको आप की दशा देख कर अत्यंत खेद है और इस हुक्म के जारी करनें का बोझ हमारे सिर आ पड़ा इस्सै हम को और भी दुःख होता है परंतु हमारे आप के निज के संबंध को हम अदालत के काम मैं शामिल नहीं कर सक्ते. ताज की वफ़ादारी, ईमान्दारी, मुल्क का इन्तज़ाम सब लोगों की हक़रसी, और हरेक आदमी के फ़ायदे के लिए इन्साफ़ करना बहुत ज़रूरी है" हाकम नें कहा "आप से सीधे सादे आदमियों को अपनें भोलेपन सै इतनी तकलीफ़ उठानी पड़े यह बड़े खेद की बात है और मेरा जी यह चाहता है कि मुझ सै हो सके तो मैं अपनें निज सै आप के क़र्ज़ का इंतज़ाम करके आप को छोड़ दूं परंतु यह बात मेरे बूते सै बाहर है. क्या आप के कोई ऐसे दोस्त नहीं हैं जो इस्समय आप की सहायता करैं ? या आप इन्साल्वन्सी वगैरे की दरख्वास्त रखते हैं ?"

लाला मदनमोहन के मुख सै कुछ अक्षर न निकले इस वास्तै थोड़ी देर पीछे हार कर उन्को हवालात मैं भेजना पड़ा.

इतनें मैं लाला ब्रजकिशोर आ गए. उन्का स्वभाव बड़ा गंभीर था परंतु बिना बादल के इस बिजली गिरनें सै तो वह भी सहम गए उन्को इतनें तूल हो जानें का स्वप्न मैं भी खयाल न था इसलिए वह थोड़ी देर कुछ न समझ सके. वह कभी इन्साल्वन्सी का विचार करते थे कभी हरकिशोर की डिक्री का रुपया दाखिल करके मदनमोहन को तत्काल छुड़ा लिया चाहते थे परंतु इन बातों सै उन्के और प्रबंध मैं अंतर आता था इसलिए इन्मैं सै कोई बात उस्समय न कर सके. वह समझे कि "ईश्वर की कोई बात युक्तिशून्य नहीं होती कदाचित् इसी मैं कुछ हित समझा हो, ईश्वर की अपार महिमा है. सेक्सनी का हेनूरी

नामी अमीर बड़ा दुष्ट, क्रूर और अन्याई था उस्के स्वेच्छाचार सै सब प्रजा त्राहि त्राहि कर रही थी इसलिये उस्को भी प्रजा सै बड़ा भय रहता था. एक बार वह कुछ दुष्कर्म करके निद्रा बस हुआ उस्समय उस्नें यह स्वप्न देखा कि वहाँ का ग्राम्य देवता उस्की ओर कुछ क्रोध और दया की दृष्टि सै देख रहा है और यह कह रहा है कि "ले अधम पुरुष ! तेरे लिए यह आज्ञा हुई है" यह कह कर उस ग्राम देवता नें एक लिपटा हुआ काग़ज़ हेनूरी की तरफ़ फेंक दिया और आप अंतर्धान हो गया हेनूरी नें काग़ज़ खोल कर देखा तो उस्मैं ये शब्द लिखे थे कि "छः के पश्चात्" हेनूरी नें जग कर निश्चय समझा कि मैं छः पहर, छः दिन, छः अठवाड़े, छः मास या छः वर्ष मैं अवश्य मर जाऊंगा . इस्सै हेनूरी को अपनें दुष्कर्मों का बड़ा पछतावा हुआ और छः महीने तक मृत्यु भय सै अत्यंत व्याकुल रहा परंतु फिर मृत्यु की अवधि छटे वर्ष समझ कर समाधानी सै सत्कर्म करनें लगा अपनें कुकर्मों के लिए सच्चे मन सै ईश्वर की क्षमा चाही और उस्सै पीछे केवल सत्कर्म ही सत्कर्म करके प्रजा की प्रीति प्रतिदिन बढ़ाता गया. उस्की पहली चाल सै वह कड़ुआ फल उस्को मिला था कि जिस्सै बेचैन होकर वह गुमराह हुआ जाता था उस्के बदले इस्समय के आनद के मिठास सै उस्का चित्त प्रफुल्लित रहनें लगा और जैसे जैसे वह पहले के कड़ुआपन सै इस्समय के मिठास का मुक़ाबला करता गया वैसे वैसे उस्का आनंद विशेष बढ़ता गया उस्के चित्त मैं कोई बात छिपाने के लायक़ नहीं रही इस्सै उस्के मन पर किसी तरह का बोझ न मालूम होता था. लोगों के जी मैं उस्का विश्वास एक साथ बढ़ गया बड़े बड़े राजा उस्को अपना मध्यस्थ करनें लगे और छः वर्ष पीछे जब वो अपनें मरने की घड़ी समझता था ईश्वर की कृपा सै उसी स्वप्न के कारण वह जर्मनी का राज करनें के लिए सब सै योग्य पुरुष समझा जा कर राज सिंहासन पर बैठाया गया !!!" इसलिये अब यह सूरत हो चुकी है तो लाला मदनमोहन के चित्त पर इस्का पूरा असर हो जाना चाहिए

क्योंकि जो बात सौ बार समझाने से समझ में नहीं आती वह एक बार की परीक्षा सै भली भाँति मन मैं बैठ जाती है और इसी वास्तै लोग "परीक्षा (को) 'गुरु' मान्ते हैं ." बस इतनी बात समझ मैं आते ही लाला ब्रजकिशोर मदनमोहन को धैर्य देनें के लिए उस्के पास हवालात मैं गये. उस्का मुँह उतर गया था, आँसू डबडबा रहे थे, लज्जा के मारे आँख ऊँची नहीं होती थी .

"आप इतनें अधैर्य न हों इस बिना बिचारी आफ़त आनें सै मुझको भी बहुत खेद हुआ परंतु अब गई बीती बातों के याद करनें सै कुछ फ़ायदा नहीं मालूम होता" लाला ब्रजकिशोर कहनें लगे "हर बात के बन्ते बिगड़ते रहनें सै मालूम होता है कि सर्वशक्तिमान परमेश्वर की इच्छा संसार का नकशा एक सा बनाए रखनें की नहीं है देवताओं को भी दैत्यों सै दुःख उठाना पड़ता है, सूर्य चंद्रमा को भी ग्रहण लगता है, महाराज रामचंद्र जी और राजा नल, राजा हरिश्चंद्र, राजा युधिष्ठिर आदि बड़े बड़े प्रतापियों को भी हद्द सै बढ़ कर दुःख झेलने पड़े हैं . अभी तीन सौ साढ़े तीन सौ वर्ष पहलै दिल्ली के बादशाह महम्मद बाबर और हुमायूँ नें कैसी कैसी तक्लीफ़ें उठाईं थीं कभी वह हिंदुस्थान के बादशाह हो जाते थे कभी उन्के पास पानी पीनें तक को लोटा नहीं रहता था और बलायतों मैं देखो फ्रांस का सुयोग्य बादशाह चोथा हेनूरी एक बार भूखों मरनें लगा तब उस्नें एक पादरी सै गवैयों मैं नौकर रखनें की प्रार्थना की परंतु उस्के मंद भाग्य सै वह भी नामंजूर हुई . फ्रांस के सातवें लूई नें एक बार अपना बूट गांठने के लिए एक चमार को दिया तब उस्की गठवाई के पैसे उस्की जेब मैं न निकले इस्सै उसे लाचार हो कर वह बूट चमार के पास छोड़ देना पड़ा . अरस्तातालीस नें लोगों के ज़ुल्म सै विष पी कर अपनें प्राण दिये थे और अनेक बिद्वान बुद्धिमान राजा महाराजाओं को काल चक्र की कठिनाई सै अनेक प्रकार का असह्य क्लेश झेल, झेल कर यह असार संसार छोड़ना पड़ा है इसलिए इस दुःख सागर मैं जो दुःख न भोगना

पड़े उसी का आश्चर्य है जब अपनें जीनें का पल भर का भरोसा नहीं तो फिर कौन्सी बात का हर्ष विषाद किया जाय . यदि संसार मैं कोई बात विचार करनें के लायक़ है तो यह कि हमारी इतनी आयु वृथा नष्ट हुई इस्मैं हम नें कौन्सा शुभ कार्य किया ? परंतु इस विषय मैं भी कोरे पछतावे के निस्बत आगै के लिए सम्हल कर चलना अच्छा है क्योंकि समय निकल जाता है . तुलसीदास जी विनयपत्रिका में लिखते हैं:—

"लाभ कहा मानुष तन पाये ।
काय बचन मन सपनेहुँ कबहुँक घटत न काज पराये ॥
जो सुख सुर पुर नरक गेह बन आवत बिनहिं बुलाये ।
तिह सुख कहुँ बहु यत्न करत मन समुझत नहिं समुझाये ।
पर दारा पर द्रोह मोह बस किये मूढ़ मन भाये ।
गर्भ बास दुख रासि जातना तीव्र बिपति बिसराये ।
भय निद्रा मैथुन अहार सबके समान जग जाये ।
सुर दुर्लभ तन धरि न भजे हरि मद अभिमान गँवाये ।
गई न निज पर बुद्धि शुद्ध ह्वै रहे राम लय लाये ।
तुलसिदास यह अवसर बीते का पुन के पछताये ?"

धर्म का आधार केवल द्रव्य पर नहीं है, हरेक अवस्था मैं मनुष्य धर्म कर सक्ता है अलबत्ता पहले उस्को अपना स्वरूप यथार्थ जान्ना चाहिये यदि अपनें स्वरूप जान्नें मैं भूल रह जायगी तो धर्म अधर्म हो जायगा. और व्यर्थ दुःख उठाना पड़ेगा . विपत्ति के समय घबराहट की बराबर कोई बस्तु हानिकारक नहीं होती बिपत्ति भँवर के समान है जों जों मनुष्य बल करके उस्सै निकला चाहता है अधिक फँसता है और थक कर बिबस होता जाता है परंतु धैर्य सै पानी के बहाव के साथ सहज मैं बाहर निकल सक्ता है . ऐसे अवसर पर मनुष्य को धैर्य सै उपाय सोचना चाहिये और परम दयालु भगवान की कृपा दृष्टि पर पूर्ण विश्वास रखना चाहिये उस्को सब सामर्थ है ."

"यह सब सच है परंतु विपत्ति के समय धैर्य नहीं रहता" लाला मदनमोहन नें आँसू भर कर कहा .

"बिपत्ति मनुष्य की कसोटी है, नीति-शास्त्र मैं कहा है—

"दूरहि सों डरपत रहैं निकट गए तें शूर ।
बिपत पड़े धीरज गहैं सज्जन सब गुण पूर ॥"*

लाला ब्रजकिशोर कहनें लगे "महाभारत मैं लिखा है कि राजा बलि देवताओं सै हार कर एक पहाड़ की कंदरा मैं जा छिपे तब इंद्र नें वहाँ जा कर अभिमान सै उन्को लजित करनें का बिचार किया इस्पर बलि शांति-पूर्वक बोले "तुम इस्समय अपना वैभव दिखा कर हमारा अपमान करते हो परंतु इस्मैं तुम्हारी कुछ भी बड़ाई नहीं है हारे हुए के आगे अपनी ठसक दिखानें सै पहली निर्बलता मालूम होती है, जो लोग शत्रु को जीत कर उस्पर दया करते हैं वही सच्चे वीर समझे जाते हैं . जीत और हार किसी के हाथ नहीं है यह दोनों समयाधीन हैं प्रथम हमारा राज था अब तुम्हारा हुआ आगे किसी और का हो जायगा . दुःख सुख सदा अदलते बदलते रहते हैं होनहार को कोई नहीं मेट सक्ता तुम भूल सै इस बैभव को अपना समझते हो यह किसी का नहीं है . पृथु, ऐल, मय और भीम आदि बहुत से प्रतापी राजा पृथ्वी पर हो गए हैं परंतु काल नें किसी को न छोड़ा इसी तरह तुम्हारा समय आवेगा तब तुम भी न रहोगे इसलिये मिथ्याभिमान न करो . सज्जन सुख दुःख सै कभी हर्ष विषाद नहीं करते वह सब अवस्थाओं मैं परमेश्वर का उपकार मान कर संतोषी रहते हैं, और सब मनुष्यों को अपना समय देख कर उपाय करना चाहिए सो यह समय हमारे बल करनें का नहीं है सहन करनें का है इसी सै हम तुम्हारे कठोर

---

* महतो दूरभीरुत्वमासन्ने शूरता गुणः ।
विपत्तौ हि महांल्लोके धीरता मनुगच्छति ॥

बचन सहन करते हैं . दुःख के समय धैर्य रखना बहुत आवश्यक है क्योंकि अधैर्य होनें सै दुःख घटता नहीं बल्कि बढ़ता जाता है इसलिए हम चिंता और उद्वेग को अपनें पास नहीं आनें देते". ऐसे अवसर पर मनुष्य के मन को स्थिर रखनें के लिए ईश्वर नें कृपा करके आशा उत्पन्न की है और इसी आशा सै संसार के सब काम चलते हैं इसलिये आप निराश न हों परमेश्वर पर विश्वास रख कर इस दुःख की निवृत्ति का उपाय सोचें. यह बिपत्ति आप पर किस तरह एकाएक आ पड़ी इस्का कारण ढूँड़ें ईश्वर शीघ्र कोई सुगम मार्ग दिखावेगा".

"मुझको तो इस्समय कोई राह नहीं दिखाई देती तुम्हें अच्छा लगे सो करो" लाला मदनमोहन नें जवाब दिया.

इतनें मैं लाला ब्रजकिशोर सै आकर एक चपरासी नें कहा कि "आप को कोई बाहर बुलाता है" इस्पर वह बाहर चले गए.

प्रकरण ३८

सच्ची प्रीति

धीरज धर्म मित्र अरु नारी।
आपति काल परखिये चारी॥

तुलसी कृत.

लाला ब्रजकिशोर बाहर पहुँचे तो उन्को कचहरी सै कुछ दूर भीड़ भाड़ सै अलग बृक्षों की छाया मैं एक सेजगाड़ी दिखाई दी. चपरासी उन्हें वहाँ लिवा ले गया तो उस्मैं मदनमोहन की स्त्री बच्चे समेत मालूम हुई. लाला मदनमोहन की गिरफ्तारी का हाल सुन्ते ही वह

बिचारी घबरा कर यहाँ दौड़ आई थी उस्की आँखों सै आँसू नहीं थमते थे और उस्को रोती देख कर उस्के छोटे छोटे बच्चे भी रो रहे थे. ब्रजकिशोर उन्की यह दशा देखकर आप रोनें लगे. दोनों बच्चे भी ब्रजकिशोर के गले सै लिपट गए और मदनमोहन की स्त्री नें अपना और अपनें बच्चों का गहना ब्रजकिशोर के पास भेज कर यह कहला भेजा कि "आप के आगे उन्की यह दशा हो इस्सै अधिक दुःख और क्या है ? खैर ! अब यह गहना लीजिए और जितनी जल्दी हो सके उन्को हवालात सै छुड़ानें का उपाय करिये".

"वह समझदार होकर अन्‌समझ क्यों बन्ती हैं ? इस घबराहट सै क्या लाभ है ? वह मेरठ गईं जब उन्होंनें आप कहवाया था कि ऐसी सूरत मैं इन अज्ञान बालकों की क्या दशा होगी ? फिर वह आप इस बात को कैसे भूली जाती हैं ? उन्को अपनें लिये नहीं तो इन छोटे, छोटे बच्चों के लिये हिम्मत रखनी चाहिये" लाला ब्रजकिशोर कहनें लगे "इंग्लैंड के बादशाह पहले जेम्स की बेटी इलेक्टर पेलेटीन के साथ ब्याही थी. उस्नें अपनें पति को बोहोमिया का बादशाह बनानें की उमंग मैं इन्की तरह अपना सब जेवर खो दिया इस्सै अंत मैं उस्को अपनें निर्वाह के लिये भेष बदल कर भीख माँगनी पड़ी थी".

"अपनें पति के लिए भीख माँगनी पड़ी तो क्या चिंता हुई ? स्त्री को पति सै अधिक संसार मैं और कौन है ? जगत माता जानकी जी नें राज सुख छोड़ कर पति के संग बन मैं रहना बहुत अच्छा समझा था, और यह वाक्य कहा था—

"देत पिता परिमित सदा परिमित सुत और भ्रात ।
देत अमित पति तासु पद नहिं पूजहिं किहिं भाँति ? ॥"*

---

* मितं ददाति हि पिता मितं भ्राता मितं सुतः ।
अमितस्य च दातारं भर्तारं का न पूजयेत् ॥

सती शिरोमणि सावित्री नें पति के प्राण-वियोग पर भी वियोग नहीं सहा था . मनुस्मृति मैं लिखा है—

"शील रहित पर, नारि रत होय सकल गुण हानि।
तदपि नारि पूजै पतिहि देव सदृश जिय जानि॥*
नारिन को ब्रत यज्ञ तप और न कछु जग मांहिं।
केवल पति पद पूज नित सहज स्वर्ग मैं जाहिं॥†"

पति के लिए गहना क्या प्राण तक देनें पड़ें तो मैं बहुत प्रसन्न हूँ. हाय! वह कैद रहैं और मैं गहने का लालच करूँ? वह दुःख सहें और मैं चैन करूँ? हम लोगों की ज़बान नहीं है इस्सै क्या हमारे हृदय भी प्रीतिशून्य हैं? क्या कहूँ? इस्समय मेरे चित्त को जो दुःख है वह मैं ही जान्ती हूँ. हे धरती माता! तू क्यों नहीं फटती जो मैं अभागी उस्मैं समा जाऊँ?" लाला मदनमोहन की स्त्री गद्‌गद् स्वर और रुके हुए कण्ठ सै भीतर बैठी हुई बहुत धीरे धीरे बोली. "भाई! मैं तुम सै आज तक नहीं बोली थी परंतु इस्समय दुःख की मारी बोल्ती हूं सो मेरी ढिठाई क्षमा करना. मुझ सै यह दुःख नहीं सहा जाता मेरी छाती फटी जाती है मुझको इस समय कुछ नहीं सूझता जो तुम अपनी बहन के और इन छोटे, छोटे बच्चों के प्राण बचाया चाहते हो तो यह गहना लो और हो सके जैसे इसी समय उन्को छुड़ा लाओ नहीं तो केवल मैं ही नहीं मरूँगी मेरे पीछे ये छोटे छोटे बालक भी झुर झुर कर—"

"बहन! क्या इस्समय तुम बावली हो गई हो तुम्हैं अपने हानि लाभ का कुछ भी बिचार नहीं है?" लाला ब्रजकिशोर बाहर सै सम-

---

* विशीलः कामवृत्तो वा गुणैर्वा परिवर्जितः।
उपचर्य्यः स्त्रिया साध्व्या सततं देववत्पतिः॥

† नास्ति स्त्रीणां पृथग्यज्ञो न ब्रतन्नाप्युपोषितम्।
पतिं शुश्रूषते येन तेन स्वर्गे महीयते॥

भ्कानें लगे "देखो शकुंतला भी पतिव्रता थी परंतु जब उस्के पति नें उस्को झूठा कलंक लगा कर परित्याग करनें का बिचार किया तब उसै भी क्रोध आए बिना नहीं रहा: क्या तुम उस्सै भी बढ़ कर हो जो अपनें छोटे, छोटे बच्चों के दुःख का कुछ बिचार नहीं करतीं? थोड़ी देर धैर्य रक्खो धीरे धीरे सब हो जायगा".

"भाई! धैर्य तो पहले ही बिदा हो चुका अब मैं क्या करूँ? तुम बार बार बाल बच्चों की याद दिवाते हो परंतु मेरे जान पति सै अधिक स्त्री के लिये कोई भी नहीं है". मदनमोहन की स्त्री लजा कर भीतर सै कहने लगी "पति सै बिबाद करना तो बहुत बात है परंतु शकुंतला के मन मैं दुष्यंत की अत्यंत प्रीति हुए पीछे शकुंतला को दुष्यंत के दोष कैसे दिखाई दिए यही बात मेरी समझ मैं नहीं आती फिर मैं शकुंतला की अधिक नकल कैसे करूँ? मैं बड़ी आधीन्ता सै कहती हूँ कि ऐसे मर्मबेधी बचन कह कर मेरे हृदय को अधिक घायल मत करो और यह सब गहना ले जाकर हो सके जितनी जल्दी इस डूबती नाव को बचानें का उपाय करो. मुझको तुम्हारे साम्नें इस विषय में बात करते अत्यंत लज्जा आती है. हाय! यह पापी प्राण अब भी क्यों नहीं निकलते इस्सै अधिक और क्या दुःख होगा?"

यह बात सुन्ते ही ब्रजकिशोर की आँखों सै आँसू टपकनें लगे, थोड़ी देर कुछ नहीं बोला गया. उस्को उस्समय नारमंडी के अमीरज़ादे रोबर्ट की स्त्री समबिल्ला की सच्ची प्रीति याद आई. रोबर्ट के शरीर मैं एक ज़हरी तीर लगनें सै ऐसा घाव हो गया था कि डाक्टरों के बिचार मैं जब तक कोई मनुष्य उस्का ज़हर न चूसे रोबर्ट के प्राण बचनें की आशा न थी और ज़हर चूसनें सै चूसनें वाले का प्राण भय था. रोबर्ट नें अपनी प्राणरक्षा के लिए एक मनुष्य के प्राण लेनें सर्वथा अंगीकार न किये परंतु उस्की पतिब्रता स्त्री नें उस्के सोते मैं उस्के घाव का विष चूस कर उस्पर अपनें प्राण न्योछावर कर दिये.

"बहन ! मैं तुम्हारे लिए तुम से कुछ नहीं कहता परंतु तुम्हारे छोटे छोटे बालकों को देखकर मेरा दहृय अकुलाता है तुम थोड़ी देर धैर्य धरो ईश्वर सब मंगल करेगा" . लाला ब्रजकिशोर ने जैसे तैसे हिम्मत बांध कर कहा .

"भाई ! तुम कहते हो सो मैं भी समझती हूं यह बालक मेरी आत्मा हैं और बिपत्त मैं धैर्य धरना भी अच्छा है परंतु क्या करूँ ? मेरा बस नहीं चल्ता देखो तुम ऐसे कठोर मत बनो" मदनमोहन की स्त्री बिलाप कर कहने लगी "महाभारत मैं लिखा है कि जिस समय एक कपोत ने अतिथि सत्कार के बिचार सै एक बधिक के लिए प्रसन्नतापूर्वक अपने प्राण दिये तब उस्की कपोती बिलाप कर कहने लगी "हा ! नाथ ! हमने कभी आप का अमंगल नहीं बिचारा संतान के होने पर भी स्त्री पति बिना सदा दुःख-सागर मैं डूबती रहती है भाई बंधु भी उस्को देख कर शोक करते हैं . आप के साथ मैं सब दशाओं मैं प्रसन्न थी पर्वत, गुफा, नदी, झर्ना, वृक्ष और अकाश मैं मुझको आपके साथ अत्यंत सुख मिल्ता था परंतु वह सुख आज कहाँ है ? पति ही स्त्री का जीवन है पति बिना स्त्री को जी कर क्या करना है" यह कह कर वह कपोती आग मैं कूद पड़ी फिर क्या मैं एक पक्षी सै भी गई बीती हूँ ? तुम सै हो सके तो सौ काम छोड़ कर पहलै इस्का उपाय करो न हो सके तो स्पष्ट उत्तर दो मुझ स्त्री की जाति सै जो उपाय हो सकेगा सो मैं ही करूँगी . हाय ! यह क्या ग़ज़ब है ! क्या अभागों को मोत भी माँगी नहीं मिल्ती ?"

"अच्छा ! बहन ! तुमको ऐसा ही आग्रह है तो तुम घर जाओ मैं अभी जा कर उन्को छुड़ाने का उपाय करता हूं" लाला ब्रजकिशोर ने कहा .

"न जाने कैसी घड़ी मैं मैं मेरठ गई थी कि पीछे सै यह ग़ज़ब हुआ जिस्समय मेरे पास रहने की आवश्यकता थी उसी समय मैं अभागी

दूर जा पड़ी ! इस दुःख सै मेरा कलेजा फटता है मुझको तुम्हारे कहने पर पूरा विश्वास है परंतु मैं एक बार अपनी आँख सै भी उन्हैं देख सक्ती हूँ ?" मदनमोहन की स्त्री नें रो कर कहा .

"इससमय तो कचहरी मैं हजारों आदमियों की भीड़ हो रही है संध्या को मौक़ा होगा तो देखा जायगा" ब्रजकिशोर नें जवाब दिया .

"तो क्या संध्या तक भी वह—" मदनमोहन की स्त्री के मुख सै पूरा बचन न निकल सका कंठ रुक गया और उस्को रोते देख कर उस्के बच्चे भी रोनें लगे .

निदान बड़ी कठिनाई सै समझा कर ब्रजकिशोर नें मदनमोहन की स्त्री को घर भेजा परंतु वह जाती बार ज़बरदस्ती अपना सब गहना ब्रजकिशोर को देती गई और उस्के बच्चे भी ब्रजकिशोर को छोड़ कर घर न गए जब ब्रजकिशोर के साथ कचहरी मैं जाते थे तब उन्की दृष्टि एकाएक मदनमोहन पर जा पड़ी और वह उस्को वहाँ देखते ही उस्सै जाकर लिपट गए .

"क्यों जी ! यह कहाँ सै आए ?" मदनमोहन नें आश्चर्य सै पूछा

"इन्की मा के साथ ये अभी मेरठ सै आए हैं वह बिचारी आप का यह हाल सुन्कर यहाँ दौड़ आई थी सो मैं नें उसै बड़ी मुश्किल सै समझा बुझा कर घर भेजा है" ब्रजकिशोर नें जवाब दिया .

"लाला जी घर क्यों नहीं चल्ते ? यहाँ क्यों बैठे हो ?" एक लड़के नें गले सै लिपट कर कहा .

"मैं तो तुम्हारे छंग (संग) आज हवा खानें चलूँगा और अपनें बाग़ मैं चल कर मच्छियों का तमाछा (तमाशा) देखूँगा" दूसरा लड़का गोद मैं बैठ कर कहनें लगा .

"लालाजी तुम बोल्ते क्यों नहीं ? यहाँ इकल्लै क्यों बैठे हो ? चलो छैल (सैर) करनें चलैं" एक लड़का हात पकड़ कर खैंचनें लगा

"जानें चुन्नीआल (लाल) कहाँ हैं ? विन्नें (उन्होंने) हमें एक तछवीर (तस्वीर) देनी कही थी लालाजी ! तुम उछे (उसे) चोकटे मैं लगवा दोगे ?" दूसरे लड़के नें कहा .

"छैल (सैर) करनें नहीं चल्ते तो घर ही चलो, अम्मा आज सबेरे सै न जानें क्यों रो रही है और विन्नें आज कुछ भोजन भी नहीं किया" एक लड़का बोला .

"लालाजी ! तुम बोल्ते क्यों नहीं ? गुच्छा (गुस्सा) हो ? चलो, घर चलो हम मेरठ छे (सै) खिलौनें लायें हैं छो (सो) तुम्हैं दिखावेंगे" दूसरा ठोडी पकड़ कर कहनें लगा .

"तुम तो दंगा करते हो चलो हमारे साथ चलो हम तुमको बरफ़ी मँगा देंगे यहाँ लालाजी को कुछ काम है" ब्रजकिशोर नें कहा .

"आँ आँ हम तो लालाजी के छंग (संग) छैल को जायँगे बाग मैं मच्छियों का तमाछा देखेंगे हमको बफ्फी (बरफ़ी) नहीं चाहिये हम तुम्हारे छंग नहीं चल्ते" दोनों लड़के मचल गये .

"चलो हम तुम्हैं पीतल की एक, एक ऐसी मछली खरीद देंगे जो लोहे की सलाई दिखाते ही तुम्हारे पास दौड़ आया करेगी" लाला ब्रज-किशोर नें कहा .

"हम यों नहीं चल्ते हम तो लालाजी के छंग चलेंगे ."

"और जब तक लालाजी घर नहीं जायँगे हम भी नहीं जायँगे" यह कह कर दोनों लड़के मदनमोहन के गले सै लिपट गए और रोनें लगे उस्समय मदनमोहन की आँखों सै आँसू टपक पड़े और ब्रजकिशोर का जी भर आया .

"अच्छा ! तो तुम लालाजी के पास खेल्ते रहोगे ? मैं जाऊँ ?" लाला ब्रजकिशोर नें पूछा .

"हाँ हाँ तुम भलेई जाओ, हम अपनें लालाजी के पाछ (पास) खेला करेंगे" एक लड़के नें कहा .

"और भूक लगी तो ?" ब्रजकिशोर नें पूछा .

"यह हमें बफ्फी मँगा देंगे" छोटा लड़का अँगुली सै मदनमोहन को दिखा कर मुस्करा दिया .

"महाकवि कालिदास नें सच कहा है वे मनुष्य धन्य हैं जो अपनें पुत्रों को गोद मैं लेकर उन्के शरीर की धूल सै अपनी गोद मैली करते हैं और जब पुत्रों के मुख अकारण हँसी सै खुल जाते हैं तो उन्के उज्वल दाँतों की शोभा देख कर अपना जन्म सफल करते हैं" लाला ब्रजकिशोर बोले और उन लड़कों के पास उन्के रखवाले को छोड़ कर आप अपनें काम को चले गए .

बच्चे थोड़ी देर प्रसन्नता सै खेल्ते रहे परंतु उन्को भूक लगी तब वह भूक के मारे रोनें लगे पर वहाँ कुछ खानें को मौजूद न था इसलिये मदन-मोहन का जी उस्समय बहुत उदास हुआ .

इतनें मैं संध्या हुई इस्सै हवालात का दरवाज़ा बंद करने के लिए पोलिस आ पहुँची अब तक उस्ने दीवानी की हवालात और मदनमोहन ब्रजकिशोर आदि का काम समझ कर विशेष रोक टोक नहीं की थी परंतु अब करनी पड़ी वह छोटे छोटे बच्चे मदनमोहन के साथ घर जानें की ज़िद करते थे और ज़बरदस्ती हटानें सै फूट-फूट कर रोते थे लोगों के हाथों सै छूट छूट कर मदनमोहन के गले सै जा लिपटते थे इसलिए इस्स-मय ऐसी करुणा छा रही थी कि सब की आँखों सै टप टप आँसू टपकनें लगे .

निदान उन बच्चों को बड़ी कठिनाई सै रखवाले के साथ घर भेजा गया और हवालात का दरवाज़ा बंद हुआ .

प्रकरण ३६

प्रेत भय।

पियत रुधिर बेताल बाल निशिचरन साथ पुनि।
करत बमन बिकराल मत्त मन मुदित घोर धुनि॥
सद्य मांस कर लिये भयंकर रूप दिखावत।
रुधिरासव मद मत्त पूतना नाचि डरावत।
मांस मेद बस बिबस मन जोगन नाचहिं बिबिध गति।
बीर जनन की बीरता बहु बिध बरणैं मंद मति * ॥रसिकजीवने.

संध्या का समय है कचहरी के सब लोग अपना, अपना काम बंद करके घर को चल्ते जाते हैं. सूर्य के प्रकाश के साथ लाला मदनमोहन के छूटने की आशा भी कम होती जाती है. ब्रजकिशोर नें अब तक कुछ उपाय नहीं किया. कचहरी बंद हुए पीछे कल तक कुछ न हो सकेगा रात को इसी छोटी सी कोठरी मैं अंधेरे के बीच ज़मीन पर दुपट्टा बिछा कर सोना पड़ेगा. कहां मित्र मिलापियों के वह जल्से! कहां पानी प्यानें के लिये एक खिदमतगार तक पास न हो! इन बातों के विचार सै लाला मदनमोहन का व्याकुल चित्त अधिक, अधिक अकुलानें लगा.

इसी बिचार मैं संध्या हो गई चारों तरफ़ अंधेरा फैल गया मकान मनुष्य-शून्य हो गया आस पास की सब चीज़ें दिखनी बंद हो गईं.

---

* रक्तं नक्तंचरौघैः पिवति चैवमति व्यग्रकुन्तः शकुन्तः।
क्रव्यं नव्यं गृहीत्वा प्रणुदति मुदितो मत्तवेतालबालः।
क्रीडत्यव्रीडमस्मिन् रुधिर मधुवशात् पूतना कुत्सितांगी।
योगिन्यो मांसमेदः प्रमुदितमनसः शूरशक्तिं स्तुवन्ति॥

लाला मदनमोहन के मानसिक बिचारों का प्रगट करना इस्समय अत्यंत कठिन है जब वह अपनें बालकपन्न सै लेकर इस्समय तक के बैभव का बिचार करता है तो उस्की आंखों के आगे अंधेरा आ जाता है. लाला हरदयाल आदि रंगीले मित्रों की रंगीली बातें, चुन्नीलाल, शिंभूदयाल आदि की झूंटी प्रीति, रात के एक, एक बजे तक गाने नाचनें के जल्से, खुशामदियों का आठ पहर घेरे रहना, हर बात पर हाँ मै हाँ, हर बात पर वाह वाह, हर काम मैं प्राण देनें की तैयारी के साथ अपनी इस्समय की दशा का मुक़ाबला करता है और उन लोगों की इन दिनों की कृतघ्नता पर दृष्टि पहुंचाता है तो मन मैं दुःख की हिलोरें उठनें लगती हैं ! संसार केवल धोके की टट्टी मालूम होता है जिन्के ऊपर अपने सब कार्य व्यवहार का आधार था, जिन्को बारंबार हज़ारों रुपे का फ़ायदा कराया गया था, जो हर बात मैं पसीने की जगह खून डालनें को तैयार रहते थे वह सब इस्समय कहां हैं ? क्या उन्मैं सै थोड़े सै कर्ज को चुकाने के लिए कोई भी आगे नहीं आ सक्ता ? जिन्की झूंटी प्रीति मैं आ कर अपनी पतिव्रता स्त्री की प्रीति भूल गया, अपनें छोटे छोंटे बच्चों के लालन पालन का कुछ बिचार नहीं किया वह मुफ्त मैं चैन करनें वाले इस्समय कहां हैं ?

"मेरी इज्जत गई, मेरी दौलत गई, मेरा आराम गया, मेरा नाम गया, मैं लज्जा सै किसी को मुख नहीं दिखा सक्ता, किसी सै बात नहीं कर सक्ता, फिर मुझको संसार मैं जीनें सै क्या लाभ है ? ईश्वर मोत दे तो इस दुःख सै पीछा छुटे परंतु अभागे मनुष्य को मोत क्या मांगे सै मिल सक्ती है ? हाय ! जब मुझको तीस वर्ष की अवस्था मैं यह संसार ऐसा भयंकर लगता है तो साठ वर्ष की अवस्था मैं न जानें मेरी क्या दशा होगी ?

"हा ! मोत का समय किसी तरह नहीं मालूम हो सक्ता सूर्य के उदय अस्त का समय सब जान्ते हैं, चंद्रमा के घटनें बढ़ने का समय

सब जान्ते हैं, ऋतुओं के बदलनें का, फूलों के खिलनें का, फलों के पकनें का समय सब जान्ते हैं परंतु मोत का समय किसी को नहीं मालूम होता . मोत हर वक्त मनुष्य के सिरपर सवार रहती है उस्के अधिकार करनें का कोई समय नियत नहीं है कोई जन्म लेते ही चल बसता है कोई हर्ष विनोद मैं, कोई पढ़नें लिखनें मैं, कोई खाने कमाने मैं, कोई जवानी की उमंग मैं, कोई मित्रों के रस रंग मैं अपनी सब आशाओं को साथ लेकर अचानक चल देता है परंतु फिर भी किसी को मोत की याद नहीं रहती कोई परलोक का भय करके अधर्म नहीं छोड़ता ? क्या देखत भूली का तमाशा ईश्वर नें बना दिया है ?"

लाला मदनमोहन के चित्त मैं मोत का बिचार आते ही भूत प्रेतादि का भय उत्पन्न हुआ. वह अँधेरी रात, छोटी सी कोठरी, एकांत जगह, चित्त की व्याकुलता मैं यह बिचार आते ही सब सुधरे हुए बिचार हवा मैं उड़ गए छाती धड़कनें लगी, रोमांच हो आए, जी दहल गया और मन की कल्पना शक्ति नें अपना चमत्कार दिखाना शुरू किया .

कोई प्रेत उन्की कोठरी मैं मोजूद है उस्के चलनें फिरनें की आवाज़ सुनाई देती है बल्कि कभी, कभी वह अपनी लाल, लाल आँखों सै क्रोध करके मदनमोहन को घुरकता है, कभी अपना भट्टी सा मुँह फैला कर मदनमोहन की तरफ़ दौड़ता है, कभी गुस्से सै दांत पीस्ता है, कभी अपना पहाड़ सा शरीर बढ़ा कर बोझ सै मदनमोहन को पीस डाला चाहता है, कभी कानके पर्दे फाड़ डालनें वाले भयंकर स्वर सै खिलखिला कर हँस्ता है, कभी नाचता है, कभी गाता है, कभी ताली बजाता है, और कभी जम-दूत की तरह मदनमोहन को उस्के कुकर्मों के लिए अनेक तरह के दुर्वचन कहता है ! लाला मदनमोहन नें पुकारनें का बहुत उपाय किया परंतु उन्के मुख सै भय के मारे एक अक्षर न निकल सका, वह प्रेत मानों उन्की छाती पर सवार होकर उन्का गला घोंटनें लगा . उस्के भय सै मदनमोहन

अधमरे हो गए उन्होंनें हाथ पाँव चलानें का बहुत उद्योग किया परंतु कुछ न हो सका . इस्समय लाला मदनमोहन को परमेश्वर की याद आई .

जो मदनमोहन परमेश्वर की उपासना करनें वालों को और धर्म की चर्चा करनें वालों को नास्तिक भाव सै हँसा करता था और मनुष्य देह का फल केवल संसारी सुख बताता था किसी तरह सै छल छिद्र कर कै अपना मतलब निकाल लेनें को बुद्धिमानी समझता था वही मदनमोहन इस्समय सब तरफ़ सै निराश होकर ईश्वर की सहायता माँगता है ! हा ! आज इस रंगीले जवान की क्या दशा हो गई ! इस्का अभिमान कहाँ जाता रहा ! जब इस्का कुछ बस न चल सका तो यह मूर्छित होकर पृथ्वी पर गिर पड़ा और कुछ देर यों ही पड़ा रहा .

जब थोड़ी देर पीछे होश आया चित्त का उद्वेग कुछ कम हुआ तो क्या देखता है कि उस भयंकर प्रेत के बदले एक स्त्री इस्का सिर अपनें गोद मैं लिये बैठी हुई धीरे धीरे इस्के पाँव दबा रही है, अँधेरे के कारण उस्का मुख नहीं दिखाई देता परंतु उस्की आँखों सै गरम, गरम आँसुओं की बूँदें उस्के मुख पर गिर रही हैं और इन आँसुओं ही सै मदनमोहन को चेत हुआ है .

इस्समय लाला मदनमोहन के व्याकुल चित्त को दिलासा मिलनें की बहुत ज़रूरत थी सो यह स्त्री उन्हैं दिलासा देनें के लिए यहाँ आ पहुँची परंतु मदनमोहन को इस्सै कुछ दिलासा न मिला वह इसै देख कर उल्टे डर गये .

"प्राणनाथ ! कैसे हो ! आप के चित्त मैं इस्ससमय अत्यंत व्याकुलता मालूम होती है इसलिये अपनें चित्त का जरा समाधान करो, हिम्मत बाँधो मैं आप के लिए भोजन लाई हूं सो कुछ भोजन करके दो घूँट पानी के पिओ जिस्सै आप के चित्त का समाधान हो इस छोटी सी कोठरी मैं अंधेरे के बीच आप को जमीन पर लेटे देख कर मेरा कलेजा फटता है" उस स्त्री नें कहा .

"यह कोन ? वही मेरी पतिब्रता स्त्री है जिस्ने मुझ से सब तरह का दुःख पाने पर भी कभी मन मैला नहीं किया ! आवाज़ से तो वैसी ही मालूम होती है परंतु उस्का आना संभव नहीं रात के समय कचहरी के बंद मकान मैं पुलिस की पहरे चोकी के बीच वह बिचारी कैसे आ सकैगी ! मैं जान्ता हूं कि मुझको कोई छलावा छलता है" यह कह कर लाला मदनमोहन नें फिर आँखैं बंद कर लीं.

"मेरे प्राणपति के लिए यहाँ क्या मुझको नर्क मैं भी जाना पड़े तो क्या चिंता है ? सच्ची प्रीति का मार्ग कोई रोक सक्ता है ? स्त्री को पति के संग क़ैद, जंगल या समुद्रादि मैं जाने सै कुछ भी भय नहीं है परंतु पति के विना सब संसार सूना है, यदि सुख दुःख के समय उस्की विवाहिता स्त्री उस्के काम न आवैगी तो और कोन आवैगा ?" उस स्त्री नें कहा.

लाला मदनमोहन सै थोड़ी देर कुछ नहीं बोला गया न जानें उन्के चित्त मैं किसी तरह का भय उत्पन्न हुआ, अथवा किसी बात के सोच बिचार मैं अपना आपा भूल गए, अथवा लज्जा सै कुछ न बोल सके, और लज्जा थी तो अपनी मूर्खता सै इस दशा मैं पहुँचनें की थी, अथवा अपनी स्त्री के साथ ऐसे अनुचित व्यवहार करनें की थी ? परंतु लाला मदनमोहन के नेत्रों सै आँसू निस्संदेह टपकते थे वह उस स्त्री की गोद मैं सिर रख, फूट फूट कर रो रहे थे.

"मेरे प्राण प्रीतम ! आप उदास न हों ज़रा हिम्मत रक्खो जो आप की यह दशा होगी तो हम लोगों का पता कहाँ लगेगा ? दुःख सुख वायु के समान सदा अदलते बदलते रहते हैं इस लिये आप अधैर्य न हों आप के चित्त की स्थिरता पर हम सब का आधार है" उस स्त्री नें कहा.

"मुझ सै इससमय तेरे सामनें आँख उठा कर नहीं देखा जाता, एक अक्षर नहीं बोला जाता, मैं अपनी करनी सै अत्यंत लज्जित हूं जिस्पर तू अपनी लायकी सै मेरे घायल हृदय को क्यों अधिक घायल करती है ?

मुझको इतना दुःख उन कृतघ्न मित्रों की शत्रुता से नहीं होता जितना तेरी लायकी और आधीनता सै होता है तू मुझको दुःखी करने के लिए यहाँ क्यों आई ? तैने मेरे साथ ऐसी प्रीति क्यों की ? मैं ने तेरे साथ जैसी क्रूरता की थी वैसी ही तैने भी मेरे साथ क्यों न की ? मैं निस्संदेह तेरी इस प्रीति लायक़ नहीं हूँ फिर तू ऐसी प्रीति करके क्यों मुझको दुःखी करती है ?" लाला मदनमोहन नें बड़ी कठिनाई से आँसू रोक कर कहा .

"प्यारे प्राणनाथ ! मैं आप की हूं और अपनी चीज़ पर उसके स्वामी को सब तरह का अधिकार होता है जिसपर आप इतनी कृपा करते हैं यह तो बड़े ही सौभाग्य की बात है" वह स्त्री मदनमोहन की इतनी सी बात पर न्योछावर होकर बोली "महाभारत मैं एक कपोती नें एक बधिक के जाल मैं अपने पति के फंसे पीछे उसके मुख सै अपनी बड़ाई सुन्कर कहा था कि "आहा ! हम मैं कोई गुण हो या न हो जब हमारे पति हम सै प्रसन्न होकर हमारी बड़ाई करते हैं तो हमारे बड़भागिनी होने मैं क्या संदेह है ? जिस स्त्री सै पति प्रसन्न नहीं रहते वह झुल्सी हुई बेल के समान सदा मुर्झाई रहती है ."

"तेरी ये ही तो बातें हृदय विदीर्ण करनें वाली हैं मुझको क्षमा कर मेरे पिछले अपराधों को भूल जा . मैं जान्ता हूं कि मुझ सै अब तक जितनी भूलें हुई हैं उन्मैं सब सै अधिक भूल तेरे हक़ मैं हुई है मैं एक हीरा को कंकर समझा, एक बहुमूल्य हार को सर्प समझ कर मैं ने अपने पास सै दूर फेंक दिया, मेरी बुद्धि पर अज्ञानता का पर्दा छा गया परंतु अब क्या करूँ ? अब तो पछतानें के सिवाय मेरे हाथ और कुछ भी नहीं है" लाला मदनमोहन आंसू भर कर बोले .

"मुझको तो ऐसी कोई बात नहीं मालूम होती जिस्सै मेरे लिये आप को पछताना पड़े मैं आप की दासी हूँ फिर ऐसे सोच बिचार करनें की

क्या ज़रूरत है ? और मैं आप की मर्ज़ी नहीं रख सकी इस्मैं तो उल्टी मेरी ही भूल पाई जाती है" उस स्त्री नें रुके कठ से कहा .

"सच है सोनें की पहचान कसौटी लगाये बिना नहीं होती परंतु तू यहाँ इस्समय कैसे आ सकी ? किस्के साथ आई ? कैसे पहरेवालों नें तुझे भीतर आनें दिया ? यह तो समझा कर कह" लाला मदनमोहन नें फिर पूछा .

"मैं अपनी गाड़ी मैं अपनी दो टहलनियों के साथ यहाँ आई हूँ और मुझको मेरे भाई के कारण यहाँ तक आनें मैं कुछ परिश्रम नहीं हुआ मैं विशेष कुछ नहीं कह सक्ती वह आप आकर अभी आप सै सब वृत्तांत कहैंगे" यह कहते, कहते वह स्त्री दरवाज़े के पास जाकर अंतर्धान हो गई !!!

प्रकरण ४०

सुधरनें की रीति .

कठिन कला हू आय है करत करत अभ्यास ।
नट ज्यों चालतु वरत पर साधे बरस छ मास ॥

वृंद ।

लाला मदनमोहन बड़े आश्चर्य मैं थे कि यह क्या भेद है जगजीवनदास यहाँ इस्समय कहाँ सै आए ? और आए भी तो उन्के कहनें सै पुलिस कैसे मान गई ? क्या उन्होंनें मुझको हवालात सै छुड़ानें के लिए कुछ उपाय किया ? नहीं उपाय करनें का समय अब कहाँ है ? और आते तो अब तक मुझ सै मिले बिना कैसे रह जाते ?

इतने मैं दूर से एकाएक प्रकाश दिखाई दिया और लाला ब्रजकिशोर पास आ खड़े हुए.

"हैं ! आप इस्समय यहां कहाँ ! मैं नें तो समझा था कि आप अपनें मकान मैं आराम सै सोते होंगे" लाला मदनमोहन नें कहा.

"यह मेरा मंद भाग्य है जो आप ऐसा समझते हैं क्या मुझ को भी आप नें उन्हीं लोगों मैं गिन लिया ?" लाला ब्रजकिशोर बोले.

"नहीं, मैं आप को सच्चा मित्र समझता हूँ परंतु समय आए बिना फल नहीं होता."

"यदि यह बात आप नें अपनें मन से कही है तो मेरे लिये भी आप वैसा ही धोका खाते हैं जैसा औरों के लिए खाते थे. मैं पहले कह चुका हूँ कि मनुष्य का स्वभाव उस्की बातों सै नहीं मालूम होता उस्के कामों सै मालूम होता है फिर आप नें मुझ को किस्तरह सच्चा मित्र समझ लिया ?" लाला ब्रजकिशोर पूछनें लगे. "मैं नें आप के मुकद्मों मैं पैरवी की जिस्के बदले भर पेट महन्ताना ले लिया यदि आप के निकट उन्के मेरे चाल चलन मैं कुछ अंतर हो तो इतना ही हो सक्ता है कि वह कच्चे खिलाड़ी थे ज़रा सी हलचल होते ही भग निकले मैं अपना फ़ायदा समझ कर अब तक ठैरा रहा."

"जो लोग फ़ायदा उठा कर इस्समय मेरा साथ दें उन्को भी मैं कुछ बुरा नहीं समझता क्योंकि जिन्पर मुझ को बड़ा विश्वास था वह सब मुझे अधर धार मैं छोड़ कर चले गए और ईश्वर नें मुझ को किसी लायक़ न रक्खा" लाला मदनमोहन रोकर कहनें लगे.

"ईश्वर को सर्वथा दोष न दो वह जो कुछ करता है सदा अपनें हित ही की बात करता है." लाला ब्रजकिशोर कहनें लगे, "श्रीमद्भागवत मैं राजा युधिष्ठिर सै श्रीकृष्णचंद्र नें कहा है—

"जा नर पर हम हित करैं ताको धन हर लेहिं।
धन दुख दुखिया को स्वतः सकल बन्धु तज देहिं ॥"*

सो निस्संदेह सच है क्योंकि उद्योग की माता आवश्यकता है इसी तरह अनुभव सै उपदेश मिल्ता है. सादी नें गुलिस्तां मैं लिखा है कि "एक बादशाह अपनें एक गुलाम को साथ लेकर नाव मैं बैठा. वह गुलाम, कभी नाव मैं नहीं बैठा था इसलिए भय से रोनें लगा. धैर्य और उपदेश की बातों सै उस्के चित्त का कुछ समाधान न हुआ. निदान बादशाह सै हुक्म लेकर एक बुद्धिमान नें (जो उसी नाव मैं बैठा था) उसै पानी मैं डाल दिया और दो चार गोते खाए पीछे नाव पर ले लिया जिस्सै उस्के चित्त की शांति हो गई. बादशाह ने पूछा इस्मैं क्या युक्ति थी? बुद्धिमान नें जवाब दिया कि पहले यह डूबनें का दुःख और नाव के सहारे बचनें का सुख नहीं जान्ता था. सुख की महिमा वही जान्ता है जिस्को दुःख का अनुभव हो."

"परंतु इस्समय इस अनुभव सें क्या लाभ होगा घोड़ा बिना चाबुक बृथा है." लाला मदनमोहन नें निराश होकर कहा.

"नहीं, नहीं ईश्वर की कृपा से कभी निराश न हो वह कोई बात युक्ति-शून्य नहीं करता" लाला ब्रजकिशोर कहनें लगे "मिस्टर पारनेल नें लिखा है कि "एक तपस्वी जन्म सै बन मैं रह कर ईश्वराराधन करता था एक बार धर्मात्माओं को दुखी और पापियों को सुखी देख कर उस्के चित्त मैं ईश्वर के इंसाफ़ बिषै शंका उत्पन्न हुई और वह इस बात का निर्धार करनें के लिये बस्ती की तरफ़ चला. रस्ते मैं उस्को एक जवान आदमी मिला और यह दोनों साथ साथ चलने लगे. संध्या समय इन्को एक ऊँचा

---

* यस्याहमनुगृह्णामि तस्य वित्तं हराम्यहम्।
ततोधनं त्यजन्त्यस्य स्वजनादुःख दुःखितम्॥

महल दिखाई दिया और वहाँ पहुँचे जब उसके मालिक नें इन दोनों का हद्द सै ज्याद: सत्कार किया. प्रातःकाल जब ये चलनें लगे तो उस जवान नें एक सोने का प्याला चुरा लिया. थोड़ी दूर आगे बढ़े इतनें मैं घनघोर घटा चढ़ आई और मेह बरसनें लगा इस्सैं यह दोनों एक पास की झोपड़ी मैं सहारा लेनें गए. उस झोपड़ी का मालिक अत्यंत डरपोक और निर्दय था इसलिये उस्ने बड़ी कठिनाई सै इन्हैं थोड़ी देर ठैरनें दिया, अनादर सै सूखी रोटी के थोड़े से टुकड़े खानें को दिये और बरसात कम होते ही चलनें का संकेत किया. चल्ती बार उस जवान नें अपनी बगल सै सोनें का प्याला निकाल कर उसै दे दिया जिस्पर तपस्वी को जवान की यह दोनों बातें बड़ी अनुचित मालूम हुईं; खैर, आगे बढ़े संध्या समय एक सद्गृहस्थ के यहाँ पहुँचे जो मध्यम भाव सै रहता था और बड़ाई का भी भूका न था. उस्नें इन्का भली भाँति सत्कार किया और जब ये प्रातःकाल चलनें लगे तो इन्को मार्ग दिखानें के लिये एक अगुआ इन्के साथ कर दिया पर यह जवान सबकी दृष्टि बचा कर चल्ती बार उस सद्गृहस्थ के छोटे से बालक का गला घोंट कर उसै मारता गया. और एक पुल पर पहुंच कर उस अगुए को भी धक्का दे नदी मैं डाल दिया! इन्बातों सै अब तौ तपस्वी के धिःकार और क्रोध की कुछ हद्द न रही. वह उस्को दुर्वचन कहा चाहता था इतनें मैं उस जवान का आकार एकाएक बदल गया उस्के मुख पर सूर्य का सा प्रकाश चमकनें लगा और सब लक्षण देवताओं के से दिखाई दिये. वह बोला "मैं परमेश्वर का दूत हूँ और परमेश्वर तुम्हारी भक्ति सै प्रसन्न हैं, इसलिये परमेश्वर की आज्ञा सै तुम्हारा संशय दूर करनें आया हूँ. जिस काम मैं मनुष्य की बुद्धि नहीं पहुँचती उस्को वह युक्तिशून्य समझनें लगता है परंतु यह उस्की केवल मूर्खता है. देखो मेरे यह सब काम तुम को उल्टे मालूम पड़ते होंगे परंतु इन्हीं सै उसके इंसाफ़ का बिचार करो. जिस मनुष्य का प्याला मैं नें चुराया वह नामवरी का लालच करके हद्द सै ज्याद:

अतिथि सत्कार करता था और इस रीति से थोड़े दिन मैं उस्के भिखारी हो जानें का भय था इस काम से उस्की वह उमंग कुछ कम होकर मुनासिब हद पर आ गई . जिस्को मैंनें प्याला दिया वह पहलै अत्यंन्त कठोर और निठुर था इस फ़ायदे सै उस्को अतिथि सत्कार की रुचि हुई . जिस सद्गृहस्थ का पुत्र मैं ने मार डाला उस्को मेरे मारने का वृत्तांत न मालूम होगा परंतु वह इन दिनों सन्तान की प्रीति मैं फँस कर अपनें और कर्तव्य भूलनें लगा था इस्सै उस्की बुद्धि ठिकाने आ गई . जिस मनुष्य को मैं ने अभी उठा कर नदी मैं डाल दिया वह आज रात को अपनें मालिक की चोरी कर के उसै नाश किया चाहता था इसलिये परमेश्वर के सब कामों पर विश्वास रक्खो और अपना चित्त सर्वथा निराश न होनें दो ."

"मुझ को इस्समय इस्बात सै अत्यंत लज्जा आती है कि मैं नें आपके पहले हितकारी उपदेशों को वृथा समझ कर उन्पर कुछ ध्यान नहीं दिया" लाला मदनमोहन नें मन से पछतावा करके कहा .

"उन सब बातों का खुलासा इतना ही है कि सब पहलू बिचार कर हरेक काम करना चाहिये क्योंकि संसार मैं स्वार्थपर ही स्वार्थपर विशेष दिखाई देते हैं" लाला ब्रजकिशोर नें कहा .

"मैं आप के आगे इस्समय सच्चे मन सै प्रतिज्ञा करता हूँ कि मैं अब कभी स्वार्थपर मित्रों का मुख नहीं देखूँगा झूँटी ठसक दिखानें का बिचार न करूँगा, झूँटे पक्षपात को अपनें पास न आनें दूँगा और अपनें सुख के लिए अनुचित मार्ग पर पाँव न रक्खूँगा" लाला मदनमोहन नें बड़ी दृढ़ता से कहा .

"इस्समय आप यह बातें निस्संदेह मन सै कहते हैं परतु इस तरह प्रतिज्ञा करनेंवाले बहुत मनुष्य परीक्षा के समय दृढ़ नहीं निकलते . मनुष्य का जातीय स्वभाव (आदत) बड़ा प्रबल है तुलसीदासजी नें भगवान से यह प्रार्थना की है :—

"मेरो मन हरिजू हठ न तजै ।
निशि दिन नाथ देउँ सिख बहु बिध करत सुभाव निजै ॥
ज्यों युवती अनुभवति प्रसव अति दारुण दुख उपजै ।
ह्वै अनुकूल बिसारि शूल शठ पुनि खल पतिहि भजै ॥
लोलुप भ्रमत गृह पशू ज्यों जहँ तहँ पद त्राण बजै ॥
तदपि अधम बिचरत तेहि मारग कबहुँ न मूढ़ लजै ॥
हों हार्यौं करि यत्न बिबिध बिधि अतिशय प्रबल अजै ।
तुलसिदास बस होइ तबहि जब प्रेरक प्रभु बरजै ॥"

आदत की यह सामर्थ्य है कि वह मनुष्य की इच्छा न होनें पर भी अपनी इच्छानुसार काम करा लेती है, धोका दे दे कर मन पर अधिकार कर लेती है, जब जैसी बात करानी मंजूर होती है तब वैसीही युक्ति बुद्धि को सुझाती है, अपनी घात पाकर बहुत काल पीछे राख मैं छिपी हुई अग्नि के समान सहसा चमक उठती है . मैं गई बीती बातों की याद दिवा कर आप को इस्समय दुखित नहीं किया चाहता परंतु आप को याद होगी कि उस्समय मेरी ये सब बातें चिकनाई पर बूंद के समान कुछ असर नहीं करती थीं इसी तरह यह समय निकल जायगा तो मैं जान्ता हूं कि यह सब बिचार भी वायु की तरह तत्काल पलट जायँगे हम लोगों का लखोटिया ज्ञान है वह आग के पास जानें सै पिगल जाता है परंतु उस्सै अलग होते ही फिर कठोर हो जाता है इस दशा मैं जब इस्समय का दुःख भूल कर हमारा मन अनुचित सुख भोगनें की इच्छा करे तब हम को अपनी प्रतिज्ञा के भय सैं वह काम छिप कर करनें पड़ें, और उन्को छिपानें के लिये झूंटी ठसक दिखानी पड़े झूंटी ठसक दिखानें के लिए उन्हीं स्वार्थपर मित्रों का जमघट करना पड़े, और उन स्वार्थपर मित्रों का जमघट करनें के लिए वही झूंटा पक्षपात करना पड़े तो क्या आश्चर्य है ?" लाला ब्रजकिशोर नें कहा .

"नहीं, नहीं यह कभी नहीं हो सक्ता . मुझ को उन लोगों सै इतनी

अरुचि हो गई है कि मैं वैसी साहूकारी सै ऐसी ग़रीबी को बहुत अच्छा समझता हूं. क्या अपनी आदत कोई नहीं बदल सक्ता ?" लाला मदन-मोहन नें जोर देकर पूछा .

"क्यों नहीं बदल सक्ता ? मनुष्य के चित्त सै बढ़ कर कोई वस्तु कोमल और कठोर नहीं है वह अपने चित्त को अभ्यास कर के चाहै जितना कम ज्याद: कर सक्ता है कोमल सै कोमल चित्त का मनुष्य कठिन सैं कठिन समय पड़नें पर उसे भी झेल लेता है और धीरै धीरै उस्का अभ्यासी हो जाता है इसी तरह जब कोई मनुष्य अपनें मन मैं किसी बात की पक्की ठान ले और उस्का हर वक्त ध्यान बना रक्खे उस्पर अंत तक दृढ़ रहै तो वह कठिन सै कठिन कामों को सहज मैं कर सक्ता है परंतु पक्का बिचार किये बिना कुछ नहीं हो सक्ता" लाला ब्रजकिशोर कहने लगे :—

"इटली का प्रसिद्ध कवि पीट्रार्क लोरा नामी एक परस्त्री पर मोहित हो गया ईसलिए वह किसी न किसी बहानें सै उस्के सन्मुख जाता और अपनी प्रीति भरी दृष्टि उस्पर डाल्ता परंतु उस्के पतिब्रतापन सै उस्के आगे अपनी प्रीति प्रगट नहीं कर सक्ता था . लोरा नें उस्के आकार सै उस्का भाव समझ कर उस्को अपनें पास सै दूर रहनें के लिए कहा और पीट्रार्क नें भी अपनें चित्त सै लोरा की याद भूलने के लिये दूर देश का सफ़र किया परंतु लोरा का ध्यान क्षण भर के लिये उस्के चित्त सै अलग न हुआ . एक तपस्वी नें बहुत अच्छी तरह उस्को अपना चित्त अपनें बस मैं रखनें के लिये समझाया परंतु लोरा को एक दृष्टि देखते ही पीट्रार्क के चित्त सै वह सब उपदेश हवा मैं उड़ गये . लोरा की इच्छा ऐसी मालूम होती थी कि पीट्रार्क उस्सै प्रीति रक्खे परंतु दूर की प्रीति रक्खे . जब पीट्रार्क का मन कुछ बढ़नें लगता तो वह अत्यंत कठोर हो जाती परंतु जब उस्को उदास और निराश देखती तब कुछ कृपा दृष्टि करके उस्का चित्त

बढ़ा देती इस तरह अपनें पातिव्रत मैं किसी तरह का धब्बा लगाए बिना लोरा नें बीस वर्ष निकाल दिये . पीट्रार्क वेरोना शहर मैं था उस्समय एक दिन लोरा उसै स्वप्न मैं दिखाई दी और बड़े प्रेम सै बोली कि "आज मैं नें इस असार संसार को छोड़ दिया . एक निर्दोष मनुष्य को संसार छोड़ती बार सच्चा सुख मिल्ता है और मैं ईश्वर की कृपा सै उस सुख का अनुभव करती हूँ परंतु मुझको केवल तेरे वियोग का दुःख है" "तो क्या तू मुझ सै प्रीति रखती थी ?" पीट्रार्क नें पूछा "सच्चे मन सै" लोरा नें जवाब दिया और उस्का उस दिन मरना सच निकला . अब देखिए कि एक कोमल चित्त की स्त्री, अपनें प्यार की इतनी आधीनता पर बीस वर्ष तक प्रीति की अग्नि को अपनें चित्त मैं दबा सकी और उसे सर्वथा प्रबल न होनें दिया फिर क्या हम लोग पुरुष होकर भी अपनें मन की छोटी छोटी कामनाओं के प्रबल होनें पर उन्हैं नहीं रोक सक्ते ?

"यूनान के प्रसिद्ध बक्ता डिमास्थिनीस को पहलै पूरा सा बोलना नहीं आता था उस्की ज़बान तोतली थी और ज़रा सी बात कहनें मैं उस्का दम भर जाता था परंतु वह बड़े बड़े उस्तादों की वक्तृता का ढंग देख कर उन्की नक़ल करनें लगा और दरिया के किनारे या ऊँची टेकड़ियों पर मुँह मैं कंकर भर कर बड़ी देर, देर तक लगातार छंद बोलनें लगा जिस्सै उस्का तुतलाना और दम भरना ही नहीं बंद हुआ बल्कि लोगों के हल्ले को दबा कर आवाज़ देनें का अभ्यास हो गया . वह वक्तृता करनें सै पहलै अपनें चेहरे का बनाव देखनें के लिये काच के सामनें खड़े हो कर अभ्यास करता था और उस्को वक्तृता करती बार कंधे उचकानें की आदत पड़ गई थी इस्सै वह अभ्यास के समय दो नोकदार हथियार अपनें कंधों सै ज़रा ऊँचे लटकाए रखता था कि उन्के डर सै कंधे न उचकनें पायँ . उस्नें अपनी भाषा मैं प्रसिद्ध इतिहासकर्ता ट्युसी-डाइगस का सा रस लानें के लिये उस्के लेख की आठ नकल अपनें हाथ सै की थीं .

"इंग्लैंड का बादशाह पाँचवाँ हेनूरी जब प्रेंस आफ़ वेल्स (युवराज) था तब इतनी बद्चलनी मैं फँस गया था और उस्की संगति के सब आदमी ऐसे नालायक़ थे कि उस्के बादशाह होनें पर बड़े जुल्म होनें का भय सब लोगों के चित्त मैं समा रहा था . जिस्समय इंग्लैंड के चीफ़ जस्टिस गासकोइन नें उस्के अपराध पर उसै क़ैद किया तो ख़ास उस्के पिता नें इस बात सै अपनी प्रसन्नता प्रगट की थी कि शायद इस रीति सै वह कुछ सुधरे परंतु जब वह शाहज़ादा बादशाह हुआ और राज का भार उस्के सिर आ पड़ा तो उस्नें अपनी सब रीति भाँति एकाएक ऐसी बदल डाली कि इतिहास मैं वह एक बड़ा प्रामाणिक और बुद्धिमान बादशाह समझा गया . उस्नें राज पाते ही अपनी जवानी के सब मित्रों को बुला कर साफ़ कह दिया था कि मेरे सिर राज का बोझ आ पड़ा है इसलिये मैं अपना चाल चलन सुधारा चाहता हूँ सो तुम भी अपना चाल चलन सुधार लेना आज पीछे तुम्हारी कोई बदचलनी मुझको मालूम होगी तो मैं तुम्हैं अपनें पास न फटकनें दूंगा . उससै पीछे हेनूरी ने बड़े योग्य, धर्मात्मा, अनुभवी और बुद्धिमान आदमियों की एक काउन्सिल बनाई और इंसाफ़ की अदालतों मैं सै संदिग्ध मनुष्यों को दूर करके उन्की जगह बड़े ईमानदार आदमी नियत किये ख़ास कर अपनें क़ैद करनें वाले गासकोइन की बड़ी प्रतिष्ठा करके उससै कहा कि "जिस्तरह तुमनें मुझको स्वतंत्रता सै क़ैद किया था इसी तरह सदा स्वतंत्रता सै इंसाफ़ करते रहना".

"मेरे चित्त पर आपके कहनें का इस्समय बड़ा असर होता है और मैं अपनें अपराधों के लिए ईश्वर सै क्षमा चाहता हूँ मुझको उस अमीरी के बदले इस क़ैद मैं अपनी भूल का फल पानें सै अधिक संतोष मिल्ता है मैं अपनें स्वेच्छाचार का मज़ा देख चुका अब मेरा इतना ही निवेदन है कि आप प्रेम बिबस होकर मेरे लिये किसी तरह का दुख न उठायँ और अपना नीति मार्ग न छोड़ें" लाला मदनमोहन नें दृढ़ता सै कहा

"अब आप के बिचार सुधर गए इसलिये आप के कृतकार्य (कामयाब) होने मैं मुझको कुछ भी संदेह नहीं रहा ईश्वर आप का अवश्य मंगल करेगा" यह कह कर लाला ब्रजकिशोर नें मदनमोहन को छाती सै लगा लिया.

प्रकरण ४१

सुख की परमावधि

जब लग मन के बीच कछु स्वारथ को रस होय ।
सुद्ध सुधा कैसे पियै ! परै बीच मैं तोय ॥

सभाविलास

"मैंने सुना है कि लाला जगजीवनदास यहाँ आए हैं ?" लाला मदनमोहन नें पूछा.

"नहीं इस्समय तो नहीं आये आप को कुछ संदेह हुआ होगा" लाला ब्रजकिशोर नें जवाब दिया.

"आप के आनें सै पहलै मुझको ऐसा आश्चर्य मालूम हुआ कि जानें मेरी स्त्री यहाँ आई थी परंतु यह संभव नहीं कदाचित स्वप्न होगा" लाला मदनमोहन नें आश्चर्य सै कहा.

"क्या केवल इतनी ही बात का आप को आश्चर्य है ? देखिये चुन्नीलाल और शिंभूदयाल पहलै बराबर मेरी निंदा करके आप का मन मेरी तरफ़ सै बिगाड़ते रहते थे बल्कि आप के लेनदारों को बहका कर आप के काम बिगाड़नें तक का दोषारोप मुझ पर हुआ था परंतु फिर उसी चुन्नीलाल नें आप सै मेरी बड़ाई की, आप सै मेरी सफ़ाई कराई, आप को

मेरे मकान पर लिवा लाया, आप की तरफ़ से मुझ से क्षमा मांगी मुझे फ़ायदा पहुँचा कर प्रसन्न रखने के लिए आप को सलाह दी और अंत मैं मेरा आप का मेल करवा कर चुन्नीलाल और शिंभूदयाल दोनों अलग हो गए ! उसी समय मेरठ से जगजीवन दास आकर आप के घर को लिवा ले गया ! मैंने जन्म भर आप से रुपे का लालच नहीं किया था सो तीन दिन मैं ऐसे कठिन अवसर पर ठगों की तरह पाकटचेन, हीरे की अँगूठी और बाली ले ली ! एक छोटे से लेनदार की डिक्री मैं आप को इतनी देर यहाँ रहना पड़ा क्या इन बातों से आप को कुछ आश्चर्य नहीं होता ? इन्मैं कोई बात भेद की नहीं मालूम होती ?" लाला ब्रजकिशोर नें पूछा .

"आप के कहनें से इस मामले मैं इस्समय निस्संदेह बहुत सी बातें आश्चर्य की मालूम होती हैं और किसी किसी बात का कुछ, कुछ मतलब भी समझ मैं आता है परंतु सब बातों के जोड़ तोड़ पूरे नहीं मिल्ते और मन भरने के लायक कोई कारण समझ मैं नहीं आता यदि आप कृपा करके इन बातों का भेद समझा देंगे तो मैं आप का बड़ा उपकार मानूँगा" लाला मदनमोहन नें कहा .

"उपकार मान्नें के लायक मुझ से आप की कौन्सी सेवा बन पड़ी है ?" लाला ब्रजकिशोर नें जवाब दिया और अपनी बगल से बहुत से काग़ज़ और एक पोटली निकाल कर लाला मदनमोहन के आगे रख दी . इन काग़ज़ों मैं मदनमोहन के लेनदारों की तरफ़ से अंदाज़न पचास हज़ार रुपे के राज़ीनामे फ़ारखती, और रसीद वगैरे थी और मिस्टर ब्राइट का फैसलनामा था जिस्मैं पैंतीस हज़ार पर उस्से फ़ैसला हुआ था और मिस्टर रसल की रक़म उस्के देनें मैं लगा दी थी, और मिस्टर ब्राइट की बेची हुई चीज़ों मैं से जो चीज़ फेरनी चाहें बराबर दामों मैं फेर देनें की शर्त ठैर गई थी . उस पोटली मैं पंद्रह बीस हज़ार का गहना था !

लाला मदनमोहन यह देख कर आश्चर्य सै थोड़ी देर कुछ न बोल सके फिर बड़ी कठिनाई सै केवल इतना कहा कि "मुझको अब तक जितनी आश्चर्य की बातें मालूम हुईं थीं उन सब मैं यह बढ़ कर है !"

"जितना असर आप के चित्त पर होना चाहिये था परमेश्वर की कृपा सै हो चुका इसलिये अब छिपानें की कुछ ज़रूरत नहीं मालूम होती" लाला ब्रजकिशोर कहनें लगे "आप किसी तरह का आश्चर्य न करैं. इन सब बातों का भेद यह है कि मैं ठेठ सै आप के पिता के उपकार मैं बंध रहा हूं जब मैंनें आप की राह बिगड़ती देखी तो यथाशक्ति आप को सुधारनें का उपाय किया परंतु वह सब बृथा गया. जब हरकिशोर के झगड़े का हाल आप के मुख सै सुना तो मुझको प्रतीत हुआ कि अब रुपे की तरी नहीं रही लोगों का विश्वास उठता जाता है और गहनें गाँठे के भी ठिकानें लगनें की तैयारी है. आप की स्त्री बुद्धिमान होनें पर भी गहनें के लिये आप का मन न बिगाड़ेगी लाचार होकर उसे मेरठ ले जानें के लिये जगजीवन दास को तार दिया और जब आप मेरे कहनें सै किसी तरह न समझे तो मैं नें पहलै विभीषण और विदुर जी के आचरण पर दृष्टि करके अलग हो बैठनें की इच्छा की परंतु उस सै चित्त को संतोष न हुआ तब मैं इस बात के सोच विचार मैं बड़ी देर डूबा रहा तथापि स्वाभाविक झटका लगे बिना आप के सुधरनें की कोई रीति न दिखाई दी और सुधरे पीछे उस अनुभव सै लाभ उठानें का कोई सुगम मार्ग न मिला. अंत मैं सुग्रीव को धमकी देकर रघुनाथ जी जिस्तरह राह पर ले आये थे इसी तरह मुझको आप के सुधारनें की रुचि हुई और मैं नें आप के वास्तै आप ही सै कुछ रुपया लेकर बचा रखनें का विचार किया पर यह काम चुन्नीलाल के मिलाये बिना नहीं हो सक्ता था इसलिये तत्काल उस्के भाई (हीरालाल) को अपनें हाँ नोकर रख लिया. परंतु इस अवसर पर हरकिशोर की बदोलत

अचानक यह विपत्ति सिर पर आ पड़ी. चुन्नीलाल आदि का हौसला कितना था ? तत्काल घबरा उठे और उन्सै मेल करनें के लिये फिर मुझको कुछ परिश्रम न करना पड़ा. वह सब रुपे के गुलाम थे जब यहां कुछ फ़ायदे की सूरत न रही, उधर लोगों नें आप पर अपनें लेनें की नालशैं कर दीं और आप की तरफ़ सै जवाबदिही करनें मैं उन्को अपनी खायकी प्रगट होनें का भय हुआ तत्काल आप को छोड़, छोड़ किनारे हो बैठे. मैं नें आप सै जो कुछ इनाम पाया था उस्की क़ीमत सै यह सब फैसले घटा, घटा कर किये गए हैं अब दिसावर वालों का कुछ जुजबी सा देना बाकी होगा सो दो, चार हज़ार मैं निबट जायगा परंतु मेरे मन की उमंग इस्समय कुछ नहीं निकली इस्सै मैं अत्यंत लज्जित हूं" लाला ब्रजकिशोर नें कहा.

"आप नें मेरे फ़ायदे के लिए बिचारे लेनदारों को बृथा क्यों दबाया" लाला मदनमोहन बोले.

"न मैं नें किसी को दबाया न धोका दिया न अपनें बस पड़ते कसर दी उन लोगों नें बढ़ा, बढ़ा कर आप के नाम जो रक़मैं लिख ली थीं वही यथाशक्ति कम की गई हैं और वह भी उन्की प्रसन्नता सै कम की गई हैं" लाला ब्रजकिशोर नें अपना बचाव किया.

"इन सब बातों सै मैं आश्चर्य के समुद्र मैं डूबा जाता हूं. भला यह पोटली कैसी है ?" लाला मदनमोहन नें पूछा.

"आप की हवालात की खबर सुन्कर आप की स्त्री यहां दौड़ आई थी और जिस्समय मैं आप सै बातें कर रहा था उस्समय उसी के आनें की खबर मुझको मिली थी मैं नें उसै बहुत समझाया परंतु वह आप की प्रीति मैं ऐसी बावली हो रही थी कि मेरे कहनें सै कुछ न समझी, उस्नें आप को हवालात सै छुड़ानें के लिए यह सब गहना जबरदस्ती मुझै दे दिया. वह उस्समय सै पांच फेरे यहां के कर चुकी है उस्नें सबेरे सै एक दाना मुंह मैं नहीं लिया उस्का रोना पल भर के लिये बंद

नहीं हुआ रोते, रोते उस्की आंखें सूज गईं . हा ! उस्की एक, एक बात याद करनें सै कलेजा फटता है . और आप ऐसी सुपात्र स्त्री के पति होनें सै निस्संदेह बड़े भाग्यशाली हो" लाला ब्रजकिशोर नें आंसू भर कर कहा .

"भाई ! जब उस्नें उसी समय तुमको यह गहना दे दिया था तो फिर मेरे छुड़ाने मैं देर क्यों हुई ?" लाला मदनमोहन नें संदेह करके पूछा .

"एक तो दो एक लेनदारों का फैसला जब तक नहीं हुआ था और हरकिशोर की डिक्री का रुपया दाखिल कर दिया जाता तो फिर उन्के घटनें की कुछ आशा न थी, दूसरे आप के चित्त पर अपनी भूलों के भली भांति प्रतीत हो जानें के लिए भी कुछ ढील की गई थी परंतु कचहरी बरखास्त होनें सै पहलै मैं नें आप के छुड़ानें का हुक्म ले लिया था और इसी कारण सै मेरी धर्म की बहन आपकी सुशीला स्त्री को आप के पास आनें में कुछ अड़चल नहीं पड़ी थी . हां मैं नें आप का अभिप्राय जानें बिना मिस्टर ब्राइट सै उस्की चीजैं फेरनें का बचन कर लिया है यह बात कदाचित आप को बुरी लगी होगी" लाला ब्रजकिशोर नें मदनमोहन का मन देखनें के लिए कहा .

"हरगिज़ नहीं, इस बात को तो मैं मन सै पसंद करता हूं झूंटी भड़क दिखानें मैं कुछ सार नहीं है 'आई बहू आए काम गई बहू गए काम' की कहावत बहुत ठीक है और मनुष्य अपनें स्वरूपानुरूप प्रामाणिकपनें सै रह कर थोड़े खर्च मैं भली भांति निर्वाह कर सक्ता है" लाला मदनमोहन नें संतोष करके कहा .

"अब तो आप के बिचार बहुत ही सुधर गए . एबडोलोमीन्स को गरीबी सै एकाएक साइडोनिया के सिंहासन पर बैठाया गया तब उस्नें सिकंदर से यही कहा था कि "मेरे पास कुछ न था जब मुझको विशेष आवश्यकता भी न थी अब मेरा वैभव बढ़ेगा वैसी ही मेरी आवश्यकता

भी बढ़ जायगी" कच्चे मन के मनुष्यों को अपनें स्वरूपानुरूप बरताव रखनें मैं जाहिरदारी की झूटी झिझक रहती है इसी सै वह लोग जगह जगह ठोकर खाते हैं परंतु प्रामाणिकपनें सै उचित उद्योग करकै मनुष्य हर हालत मैं सुखी रह सक्ता है" लाला ब्रजकिशोर नें कहा.

"क्या अब चुन्नीलाल और शिंभूदयाल आदि को उन्की बदचलनी का कुछ मजा दिखाया जायगा?" लाला मदनमोहन नें पूछा.

"किसी मनुष्य की रीत भांति सुधरे बिना उस्सै आगे को काम नहीं लिया जा सक्ता परंतु जिन लोगों का सुधारना अपने बूते सै बाहर हो उन्सै काम काज का संबंध न रखना ही अच्छा है और जब किसी मनुष्य सै ऐसा संबंध न रक्खा जाय तो उस्के सुधारनें का बोझ सर्वशक्तिमान परमेश्वर अथवा राज्याधिकारियों पर समझ कर उस्सै द्वेष और बैर रखनें के बदले उस्की हीन दशा पर करुणा और दया रखनी सज्जनों को विशेष शोभित करती है" लाला ब्रजकिशोर नें जवाब दिया.

"मेरी मूर्खता सै मुझ पर जो दुख पड़ना चाहिये था पड़ चुका अब अपना झूंटा बचाव करनें सै कुछ फ़ायदा नहीं मालूम होता मैं चाहता हूं कि सब लोगों के ही निमित्त इन दिनों का सब वृत्तांत छपवाकर प्रसिद्ध कर दिया जाय" लाला मदनमोहन नें कहा.

"इस्की क्या ज़रूरत है? संसार मैं सीखने वालों के लिये बहुत से सतशास्त्र भरे पड़े हैं" लाला ब्रजकिशोर नें अपना संबंध बिचार कर कहा.

"नहीं सच्ची बातों मैं लजानें का क्या काम है? मेरी भूल प्रगट हो तो मैं मन सै चाहता हूं कि मेरा परिणाम देख कर और लोगों की आंखैं खुलैं इस अवसर पर जिन जिन लोगों सै मेरी जो, जो बातचीत हुई है वह भी मैं उस्मैं लिखनें के लिए बता दूँगा" लाला मदनमोहन नें उमंग सै कहा.

"धन्य ! लाला साहब ! धन्य ! अब तो आप के सुधरे हुए बिचार हद्द के दरजे पर पहुंच गए" लाला ब्रजकिशोर नें गद्गद बाणी सै कहा "औरों के दोष देखनें वाले बहुत मिल्ते हैं परंतु जो अपनें दोषों को यथार्थ जान्ता हो और जान बूझ कर उन्का झूंटा पक्ष न करता हो बल्कि यथाशक्ति उन्के छोड़नें का उपाय करता हो वही सच्चा सज्जन है".

"सिलसिलेबन्द सीधा, सीधा मामूली काम तो एक बालक भी कर सक्ता है परंतु ऐसे कठिन समय मैं मनुष्य की सच्ची योग्यता मालूम होती है आपनें मुझको इस अथाह समुद्र मैं डूबनें सै बचाया है इस्का बदला तो आप को ईश्वर के हां सै मिलैगा मैं सो जन्म तक लगातार आप की सेवा करूँ तो भी आप का कुछ प्रत्युपकार नहीं कर सक्ता परंतु जिस तरह महाराज रामचंद्र जी नें भिलनी के बेर खाकर उसै कृतार्थ किया था इसी तरह आप भी अपनी रुचि के विपरीति मेरा मन रखनें के लिये मेरी यह प्रार्थना अंगीकार करैं" लाला मदनमोहन ब्रजकिशोर को आठ, दस हज़ार का गहना देनें लगे.

"क्या आप अपनें मन मैं यह समझते हैं कि मैं नें किसी तरह के लालच सै यह काम किया है?" लाला ब्रजकिशोर रुखाई सै बोले "आगे को आप ऐसी चर्चा करके मेरा जी वृथा न दुखावैं. क्या मैं ग़रीब हूं इसी सै आप ऐसा बचन कह कर मुझको लज्जित करते हैं? मेरे चित्त का संतोष ही इस्का उचित बदला है. जो सुख किसी तरह के स्वार्थ बिना उचित रीति सै परोपकार करनें मैं मिल्ता है वह और किसी तरह नहीं मिल सक्ता. वह सुख, सुख की परमावधि है इसलिए मैं फिर कहता हूं कि आप मुझको उस सुख सै वंचित करनें के लिये अब ऐसा बचन न कहैं."

"आप का कहना बहुत ठीक है और प्रत्युपकार करना भी मेरे बूते सै बाहर है परंतु मैं केवल इससमय के आनंद मैं........."

"बस आप इस विषय मैं और कुछ न कहैं. मुझको इस समय जो मिला है उस्सै अधिक आप क्या दे सक्ते हैं? मैं रुपे पैसे के बदले मनुष्य के चित्त पर विशेष दृष्टि रखता हूं और आप को देने ही का आग्रह हो तो मैं यह मांगता हूं कि आप अपना आचरण ठीक रखने के लिए इस्समय जैसे मजबूत हैं वैसे ही सदा बनें रहैं और यह गहना मेरी तरफ़ सै मेरी पतिब्रता बहन और उस्के गुलाब जैसे छोटे छोटे बालकों को पहनावें जिन्के देखनें सै मेरा जी हरा हो" लाला ब्रजकिशोर नें कहा.

"परमेश्वर चाहेंगे तो आगे को आप की कृपा सै कोई बात अनुचित न होगी" लाला मदनमोहन नें जवाब दिया.

"ईश्वर आप को सदा भले कामों की सामर्थ्य दे और सब का मंगल करे" लाला ब्रजकिशोर सच्चे सुख मैं निमग्न होकर बोले.

निदान सब लोग बड़े आनंद सै हिलमिल कर मदनमोहन को घर लिवा ले गए और चारों तरफ़ सै "बधाई" "बधाई" होनें लगी.

जो सच्चा सुख, सुख मिलनें की मृगतृष्णा सै मदनमोहन को अब तक स्वप्न मैं भी नहीं मिला था वही सच्चा सुख इस्समय ब्रजकिशोर की बुद्धिमानी सै परीक्षागुरु के कारण प्रामाणिक भाव सै रहनें मैं मदनमोहन को घर बैठे मिल गया!!!

* समाप्तम् *